भूमिका लेखक—

श्री आचार्य नरेन्द्रदेव,
एम० एल० ए०

लेखक—

श्रीधानन्द पाण्डेय,
बी० ए०, एल० एल० बी०

मार्गशीर्ष, २००३ वि०

प्रथम संस्करण, १०००

मूल्य ५।।) सजिल्द

५) अजिल्द

प्रकाशक—
प्रकाश मन्दिर काशी—आर. एस.

मुद्रक—
पी० घोष—सरला प्रेस, काशी

लेखक की ओर से

देश आजादी के सिंह द्वार पर पहुँच गया है किन्तु विदेशी शासन का जुआ आज भी उसकी गरदन दबा रहा है। बृटिश शासक भली भाँति समझ गये हैं कि भारत की स्वाधीनता रोकना अब सम्भव नहीं। उन्हें अपनी शक्ति का भी पता लग गया है। अस्तु, भारतीय स्वाधीनता का मार्ग अवरुद्ध करने के लिए राजनैतिक मार्गों को सम्प्रदायिक रूप दिया गया है। इसी के फल स्वरूप आज लीग पाकिस्तान के लिये विकल है।

पाकिस्तान के नाम पर आज देश भर में अग्निकाण्ड रक्त-पात, और उपद्रव मचे हुये हैं। सदियों से एक साथ भाई भाई की भाँति रहने वाले हिन्दू मुसलमान एक दूसरे के जान के भूखे हो उठे हैं। कलकत्ता और नोआखाली के पैशाचिक रक्त-ताण्डव से हमारा हृदय भर उठा है। इस क्रूर कृत्य का मूल्य कैसे चुकाया जा सकेगा विचारणीय है। इस प्रकार की भावनाओं और घटनाओं से पारस्परिक द्वेष और घृणा की वृद्धि तो होती है, साथ ही साथ 'द्वयो प्रवृत्ते कलहे तृतीयो लाभवान भवेत्' की कहावत भी चरितार्थ होती है। अंग्रेजी कहावत भी तो ऐसी ही है। (United we Stand. Divided we fall.) एक दूसरे के गला काटने और साम्प्रदायिक कटुता को उत्तेजना देने वालों को यह समझ लेना चाहिये कि इसका नतीजा अन्त में उन्हें ही भुगतना पड़ेगा। मानवता के प्रति किये गये इस क्रूर अमानवी पैशाचिकता का प्रायश्चित क्या होगा अनुमान करना कठिन है! हाँ यह स्पष्ट है कि मियाँ जिन्ना के इशारे पर चल कर मुसलमान अपने पैरों में अपने आप कुल्हाड़ी मार रहे हैं। भारत को बृटिश शृङ्खला में बाँधने के यत्न में सहायक लीग को वह दिन दूर नहीं जब अपनी करनी का प्रायश्चित करना होगा।

ऐसी स्थिति में कोई भी विचारशील व्यक्ति इन परिस्थितियों से अपने को अलग नहीं कर सकता। इसी चिन्तन के फलस्वरूप यह पुस्तक आपके सम्मुख आ रही है। पुस्तक राष्ट्रीय दृष्टिकोण से लिखी गयी है। कांग्रेस की आजादी की माँग और भारत की अखण्डता का प्रतिपादन किया गया है। पुस्तक में जिन पुस्तकों से प्रमाण दिया गया है उनका स्थान स्थान पर उल्लेख कर दिया गया है। विस्तार भय के कारण बहुत सी बातें काट छाँट कर संक्षेप में करदी गई है। इसके सम्बन्ध में करीब १५० हिन्दी, अङ्गरेजी, बंगाली और मराठी पुस्तकों का अध्ययन करना पड़ा है। सामयिक पत्र पत्रिकाओं से भी यथा स्थान सहायता ली गई है, अस्तु लेखक इनका आभारी है। श्री आचार्य नरेन्द्रदेव जी से उऋण होना कठिन है। उन्होंने कृपा पूर्वक अस्वस्थ और व्यस्त होते हुये भी भूमिका लिख कर उत्साहित किया है।

पुस्तक मुद्रण की अनेक कठिनाइयों को पार कर आपके हाथ पहुँच रही है। जिन असाधारण परिस्थितियों में पुस्तक छपी है, अनेक अशुद्धियों का रह जाना स्वभाविक है। पाठक कृपा पूर्वक उन्हें यथा स्थान स्वयम शुद्ध कर लें। छपाई की काफी भूलें हैं। अस्तु शुद्धि-पत्र देना अनावश्यक समझा गया। दूसरे संस्करण में अशुद्धियाँ दूर करदी जायगी कांग्रेस अधिवेशन के अवसर पर प्रकाशन के दृष्टि से जल्दी हुई है। लेखक अन्त में श्रीयुत् परेश घोष स्वामी सरला प्रेस और प्रकाश मन्दिर को पुस्तक के मुद्रण और प्रकाशन के लिये धन्यवाद देता है। वह उन लोगों का भी क्षमा प्रार्थी है जिनकी भावनाओं को परोक्ष अथवा अपरोक्ष रूप में किसी प्रकार का दुख हुआ हो अथवा आघात पहुँचा हो।

कार्त्तिकी पूर्णिमा
२००३

श्रीशचन्द्र पाण्डेय,
बी० ए० एल० एल० बी०।

भूमिका

पाकिस्तान के पक्ष और विपक्ष में इधर अनेक पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। पाकिस्तान के सम्बन्ध में विचार करने में अब तक एक बड़ी कठिनाई यह रही है कि मुसलिम लीग ने अपनी पाकिस्तान की योजना को कभी स्पष्ट रूप से बताया नहीं है। पाकिस्तान योजना को अस्पष्ट रखने में ही उसका लाभ था, किन्तु कैबिनट मिशन के सामने वह अपनी योजना का ठीक ठीक विवरण देने को बाध्य हुये। अब यह साफ होगया है कि लीग समस्त बंगाल, आसाम, पञ्जाब सिन्ध और सीमा प्रान्त चाहती है। यह माँग किसी सिद्धान्त पर आश्रित नहीं है। आसाम में मुसलमानों की संख्या अल्प है तिसपर भी लीग उसे पाकिस्तान में सम्मिलित करना चाहती है। आत्म निर्णय (Self determination) के सिद्धान्त के अनुसार भी उनको यह सब प्रान्त नहीं मिल सकते। यदि मुसलमानों को इस सिद्धान्त के अनुसार किसी प्रदेश पर अपना राज्य कायम करने का अधिकार है तो हिन्दुओं को भी उस प्रदेश पर ऐसा ही अधिकार प्राप्त होना चाहिये जहाँ उनकी आबादी अधिक है। पुनः यह भी स्मरण रखना चाहिये कि धार्मिक सम्प्रदायों को कहीं भी ऐसा अधिकार प्राप्त नहीं है। जिन्ना साहब इस सम्बन्ध में जनता की राय भी नहीं लेना चाहते। अधिक से अधिक वह केवल मुसलमानों के ही वोट से इस प्रश्न का निर्णय करना चाहते हैं।

यद्यपि कांग्रेस पाकिस्तान के विरुद्ध है, क्योंकि उसके विचार में आज के संसार में छोटे छोटे राष्ट्र स्वतन्त्र नहीं रह सकते और वह समस्त देश की इकाई को कायम रखना चाहती है तथापि उसने गृह

कलह को रोकने के लिये यह स्वीकार कर लिया है उत्तर पश्चिम के तथा बंगाल के जिन जिलों में मुसलमानों की आबादी ज्यादा हो वहाँ के सभी वाशिन्दों का मत लेने पर यदि यह पाया जावे कि वहाँ के अधिकांश लोग हिन्दुस्तान से पृथक होना चाहते हैं तो वह अलग हो सकते हैं। इस प्रकार पूर्वी बंगाल, पश्चिमी पञ्जाब सिन्ध और सीमा प्रान्त अलग हो सकते हैं यदि वहाँ का बहुमत पृथक होने के पक्ष में हो कलकत्ता जहाँ की बहुत बड़ी संख्या हिन्दुओं की है पाकिस्तान में शामिल नहीं हो सकता। यही अवस्था आसाम की है। आसाम में केवल सिलहट का जिला ऐसा है जहाँ मुसलमानों की जन संख्या अधिक है।

जिन्ना साहब किस न्याय से इन प्रान्तों को पाकिस्तान में अवगत करना चाहते हैं? उनके पास न तर्क है न युक्ति। उनकी माँग का आधार तो दो राष्ट्र सिद्धान्त है। हम यह नहीं मानते कि हिन्दू और मुसलमान दो राष्ट्र हैं, किन्तु यदि मान लिया जाय कि वह दो पृथक राष्ट्र हैं तो उन प्रदेशों को जहाँ हिन्दू अधिक संख्या में रहते हैं भिन्न राष्ट्र के लोगों को अपने राज्य में सम्मिलित करने का क्या अधिकार है? जब हम दो राष्ट्र का सिद्धान्त मानते हैं तब देश का विभाजन वर्तमान प्रान्तों की दृष्टि रखकर नहीं हो सकता। यह प्रान्त अंग्रेजों की सुविधा के लिये हुये हैं इनका संगठन प्राचीन इतिहास, परम्परा और संस्कृति के आधार पर नहीं हुआ है। यह नहीं कहा जा सकता कि चूँकि पंजाब प्रान्त में मुसलमानों की संख्या कुछ अधिक है इसलिये सारे पञ्जाब को पाकिस्तान में शामिल करना चाहिये। पुनः लीग इसके लिये भी तय्यार नहीं है कि सब बालिगों का मत ले लिया जाय और उसके अनुसार निर्णय किया जाय। वह भयभीत है कि कहीं मत गणना का फल उसके प्रतिकूल न हो। यह भी हमको मालूम है कि बंगाल में यदि केवल बालिगों का ही विचार किया जाय तो मुसलमानों की

अपेक्षा हिन्दुओं की संख्या अधिक निकलेगी। अस्तु केवल लीग के कहने पर बिना सब लोगों की राय के जाने पाकिस्तान की माँग कैसे मानी जा सकती है। और जब राय ली जायगी तब केवल बालिगों की ही राय ली जायगी। पुनः यदि प्रान्तों का संगठन सही आधार पर किया जावे तो विहार के वह हिस्से जहाँ बंगला बोलनेवाले हैं विहार से निकल कर बंगाल में शामिल हो जायेंगे और इससे बंगाल के हिन्दुओं की संख्या बढ़ जायेगी।

आसाम को पाकिस्तान में शामिल करने के लिये तो कोई बहाना नहीं है। किन्तु वह इसको इस आधार पर चाहते हैं कि बिना इसके और कलकत्ते के पूर्वी पाकिस्तान आर्थिक दृष्टि से निकम्मा रह जाता है।

एक तो लीग हिन्दुस्तान के टुकड़े करना चाहती है जिसको देश के अधिकांश लोग नहीं चाहते। मुसलमानों के एक भाग को छोड़कर कोई भी चाहे वह ईसाई हो, सिख हो या पारसी हिन्दुस्तान को टुकड़ों में बाँटना नहीं चाहता। फिर लुत्फ यह कि लीग चाहती है कि ऐसा पाकिस्तान हो जो आर्थिक दृष्टि से उपयुक्त हो। जो हिन्दुस्तान के प्रति गद्दारी करते हैं और जो दो राष्ट्र सिद्धान्त मानते हैं उनको ऐसी माँग पेश करते लज्जा आनी चाहिये। उनके हिस्से में जो भला बुरा पड़े उसे लेकर वह सन्तोष करें।

दो राष्ट्र सिद्धान्त मानने में एक अड़चन और है। यदि मुसलमानों का वतन हिन्दुओं से अलग है और यदि यह ठीक है कि दो राष्ट्र के लोग एक देश और राज्य में नहीं रह सकते तो हिन्दुस्तान के मुसलमानों को पाकिस्तान में जाकर बसना होगा। पाकिस्तान के हिन्दू और सिखों को पाकिस्तान छोड़ना होगा। किन्तु लीग इसकी जरूरत नहीं समझती। इसका कारण यह है कि मुसलमान इसके लिये तय्यार नहीं हैं।

संक्षेप में लीग किसी न्याय संगत बात करने में तय्यार नहीं है और वह हर प्रकार से अपनी ही सुविधा देखती है। किन्तु जब हिन्दू उनके

लिये गैर राष्ट्र के हैं तो वह अन्याय को क्यों मानें और क्यों दूसरों को सुबिधा दें।

प्रस्तुत पुस्तक के लेखक ने एक अध्याय में यह दिखाने का प्रयत्न किया है कि पाकिस्तान की योजना आर्थिक दृष्टि से सफल नहीं हो सकती। हमारा भी यही मत है किन्तु यह मत उस पाकिस्तान के लिये है जिसे हम समझते हैं कि कांग्रेस के प्रस्ताव के अनुसार मुसलमानों को मिलना चाहिये; किन्तु जिन्ना साहब का लोभ तो बहुत बढ़ गया है और इसका कारण भी यही है कि जितना क्षेत्रफल पाकिस्तान के हिस्से में आ सकता है उससे उनका काम नहीं चलता।

मैं पाकिस्तान के विरुद्ध हूँ किन्तु मैं सदा न्यायसंगत बँटवारे के लिये तय्यार हूं। यही नहीं मैं तो समझता हूँ कि बँटवारा ही ज्यादा अच्छा है। मैं नहीं चाहता कि देश की प्रगतिशील शक्तियों को पग पग पर प्रतिक्रियावादी जमातों से समझौता करना पड़े। एक विशाल भू भाग में यदि हमको अपनी इच्छा के अनुसार देश के निर्माण की सुविधा मिले तो यह कहीं ज्यादा अच्छा है। एक ऐसे केन्द्र से जिसको बहुत कम अधिकार प्राप्त है काम नहीं होने का है। देश को इकाई मानकर ही औद्योगिक योजना बनाई जानी चाहिये। मैं मानता हूं कि पाकिस्तान की माँग के आधार में सामन्तवादी जमातों का पूँजीवादी सत्ता से भय और सन्देह काम कर रहा है। उद्योग व्यवसाय के क्षेत्र में मुसलमान बहुत पिछड़े हुये हैं और उनको यह भय है कि हिन्दू पूँजीपति कच्चे माल का अधिकाधिक उपयोग कर उनका शोषण करेंगे। किन्तु इसका इलाज यह है कि लीग देश की राजनीतिक एकता को स्वीकार करते हुये इस बात का आग्रह करे कि प्रत्येक प्रान्त के उद्योग धन्धे, व्यवसाय को समान रूप से उन्नत करने का उत्तरदायित्व केन्द्र पर रहे। हम सब प्रान्तों को उन्नत देखना चाहते हैं।

पाकिस्तान की माँग का एक कारण यह भी है कि लीग के नेताओं

की मनोवृत्ति सामन्तवादी है। वह सामन्तवादी प्रकार से ही सम्पत्ति बढ़ाना चाहते हैं। हिन्दुस्तान और पाकिस्तान का विवाद एक पिछड़ी हुई आर्थिक पद्धति का एक प्रगतिशील आर्थिक पद्धति से मुकाबला है जिस प्रकार कांग्रेस लीग का झगड़ा वास्तव में राष्ट्रीयता का साम्प्रदायिकता से झगड़ा है।

लीग की कार्य्य प्रणाली को भी ध्यान पूर्वक देखना चाहिये। इनकी कार्य्यशैली नाजियों का अनुकरण करती है। मिस्टर जिन्ना ने इस टेकनीक का अच्छा अध्ययन किया है वह यहाँ कि राजनीति में उसका प्रयोग कर रहे हैं। आज के हिन्दू मुसलिम झगड़ों का आधार धार्मिक नहीं है। ईद-बकरीद शान्ति से गुजर जाते हैं किन्तु बलवे और छिट फुट हमले आये दिन हुआ करते हैं। मुसलिम लीग के इशारे पर और जहाँ उनकी विजारत है वहाँ उनके प्रश्रय से यह दंगे फसाद हो रहे हैं। नाजी गुण्डाशाही का आधार धर्म और साम्प्रदायिकता है। यहूदी के स्थान पर हिन्दू हैं। मुसलिम जनता को उभाड़ा जाता है और उनका धर्मोन्माद जागृत कर हिन्दुओं के विरुद्ध प्रयुक्त किया जाता है।

इस राजनीतिक गुण्डाशाही से लोकतन्त्र को बहुत बड़ा खतरा है। जिनका लोकतन्त्र में विश्वास है और जो चाहते हैं कि इस देश में सभ्यता का व्यवहार हो उन सबको चाहे वह किसी धर्म के माननेवाले क्यों न हों—इस गुण्डाशाही का डट कर मुकाबला करना चाहिये। इस गुण्डाशाही के सामने झुकना कायरता होगी और फैसिज्म को प्रोत्साहन देना होगा।

एक ओर लोकतन्त्र और फैसिज्म का मुकाबला है दूसरी ओर राष्ट्रीयता और साम्प्रदायिकता का मुकाबला है। हमको प्रश्न को इस दृष्टि से देखना चाहिये। जो लोग कांग्रेस लीग एकता की बात करते हैं वह भूल करते हैं। कांग्रेस-लीग एकता का अर्थ हिन्दू-मुसलिम एकता नहीं है। ऐसा समझना बड़ी भारी भूल होगी। सम्प्रदायवाद और राष्ट्रवाद

में एकता कैसे हो सकती है और गुण्डाशाही तथा लोकशाही का साथ कैसे हो सकता है। हमको उन सब उपायों से काम लेना होगा जिनका अवलम्बन कर गुण्डाशाही का अन्त हो और साम्प्रदायिक विष का लोप हो।

हिन्दू-मुसलिम ऐक्य के साधन दूसरे हैं। आज हड़तालों की बाढ़-सी आगई है और क्या हम नहीं देखते कि हिन्दू मुसलमान इन हड़तालों में कन्धे से कन्धा लगाकर अपने आर्थिक हितों के लिये लड़ते हैं। हिन्दू मुसलिम ऐक्य की कुञ्जी यही है। आर्थिक आधार पर ही एकता स्थापित हो सकती। समान संस्कृति और परम्परा की बात गौण रूपसे सहायक हो सकती है। हर क्षेत्र में यूनियन बनना चाहिये। यदि यह काम मुस्तैदी से बड़े पैमाने पर किया गया तो लीग का प्रभाव जनता पर से उठने लगेगा। मुसलिम जनता में राजनैतिक चेतना बहुत कम है। यह चेतना संघर्ष से ही उत्पन्न होती है और एक साथ एकही लक्ष्य के लिये काम करने से तथा उसकी प्राप्ति के लिये एक साथ कष्ट उठाने से विविधि सम्प्रदायों में एकता कायम होती है। केवल मौखिक उपदेश देने से अथवा धर्म के नाम से अपील करने से काम नहीं चलेगा। पुराना इतिहास तभी मददगार होता है जब दोनों सम्प्रदाय के लोग यह समझ जायँगे कि साथ मिलकर काम करने में ही हमारी आर्थिक भलाई है। धार्मिक ग्रन्थों में हरएक के मतलब के वाक्य भरे पड़े हैं; और जब मतलब का तकाजा होगा कि हिन्दू मुसलमानों में एका हो तब दोनों अपने अपने धार्मिक ग्रन्थों से उपयुक्त वाक्य निकाल लेंगे। आज का हमारा काम करने का ढंक ही गलत है। इसे बदलना होगा।

लेखक महोदय ने बड़े परिश्रम से पुस्तक लिखी है। मुसलिम राज-नीति का इतिहास भी दिया गया है क्यों कि बिना इस पृष्ठ भूमिके जाने आज की समस्या समझ में नहीं आती। पुस्तक में कांग्रेस लीग के आज तक के सम्बन्ध का इतिहास भी है। पुस्तक कई दृष्टि से उपादेय है।

एक कमी जरूर खटकती है। लेखक महाशय ने यह दिखाने का प्रयत्न नहीं किया है कि पाकिस्तान प्रति आज मुसलिम जनता का इतना आकर्षण क्यों है। यह ठीक है कि जनता को उसका स्वरूप और विवरण ठीक ठीक नहीं बताया गया है और उसके काल्पनिक चित्र ही सामने रखे गये हैं, किन्तु इसके कुछ कारण अवश्य हैं। मैंने इनकी ओर इशारा मात्र किया है। यह समझना कि मिस्टर जिन्ना ही इस सारे फसाद के मूल में हैं भूल होगी। वह तो प्रतीक मात्र हैं। बृटिश शासन का सहारा भी पाकिस्तान की माँग को प्राप्त है पर यह लीग के एक मात्र बढ़ते हुए प्रभाव का एक मात्र कारण नहीं हो सकता। कुछ अन्य कारण भी हैं जिनको जानना और जिनको दूर करने का प्रयत्न करना आवश्यक है पर यह कमी सभी प्रायः ग्रन्थों में पाई जाती है जो पाकिस्तान के विपक्ष में लिखी गई हैं।

बलदेव निवास
फैजाबाद
१०।११।४६

नरेन्द्रदेव

विषय-सूची

परिशिष्ट

प्रथम खण्ड—भारत विभाजन योजनाओं के जन्मदाता—

१—डाक्टर लतीफ की योजना।

२—अलीगढ़ योजना।

३—सर सिकन्दर हयात की योजना।

४—पञ्जाबी की संघ योजना।

५—अब्दुल्ला हारुन की योजना।

द्वितीय खण्ड—जिन्ना की १४ शर्तें और लाहौर प्रस्ताव, राजाजी का प्रस्ताव, जगतनारायण लाल का प्रस्ताव, गान्धीजी का सितम्बर १९४४ का प्रस्ताव, देसाई-लियाकत समझौता।

तृतीय खण्ड—तालिकायें और मान चित्र।
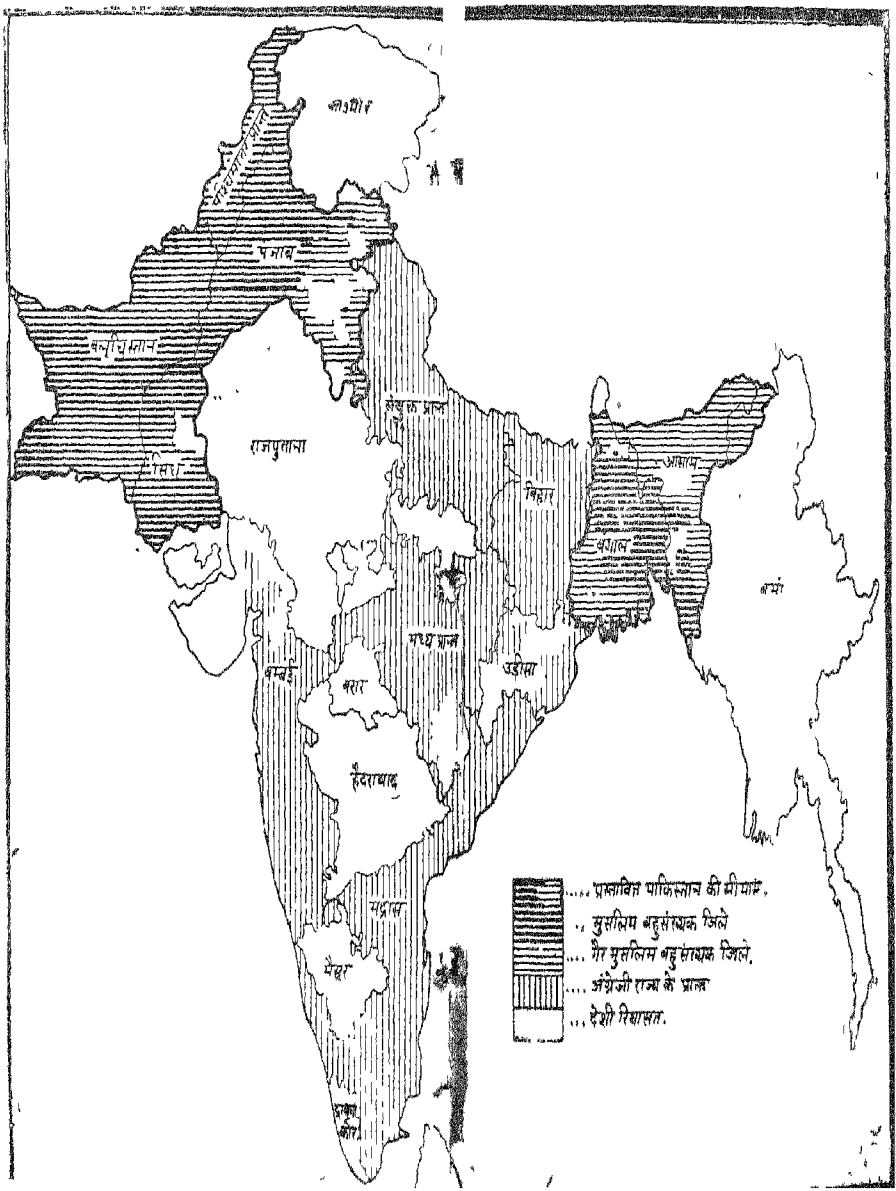
पंजाब
बलूचिस्तान
सिंध
राजपूताना
संयुक्त प्रान्त
बिहार
आसाम
बंगाल
मध्य प्रान्त
उड़ीसा
बम्बई
बरार
हैदराबाद
मद्रास
मैसूर
बर्मा
.... प्रस्तावित पाकिस्तान की सीमायें,
.. मुसलिम बहुसंख्यक जिले
.... गैर मुसलिम बहुसंख्यक जिले,
.... अंग्रेजी राज्य के प्रान्त
... देशी रियासत.

अध्याय १

पूर्वाभास

हमारा अतीत गौरवान्वित है। विश्व इतिहास पर दृष्टि डालने से किसी भी देश की ऐतिहासिक परम्परा इतनी वैभवपूर्ण नहीं। ईसा से हजारों वर्ष पूर्व जब अन्य देश अन्धकार की गर्त में हाथ टटोलते थे, उनके जीवन में प्रकाश की क्षीण रेखा का भी नाम न था। हमारे पूर्वज विकास और उन्नति के शिखर पर थे। हमारी सभ्यता, संस्कृति, वैभव और समृद्धि की पताका आसमुद्र-क्षीतीश लहरा रही थी। व्यापार और धर्म व्यापक रूप से प्रचारित हो रहा था। हमारे धर्म का जीवन स्रोत परिपूर्ण था। उसके प्रवाह से अन्य देश भी प्रवाहित हुये बिना नहीं रह सके। भारतीय नाविक उन दिनों अपना दूसरा सानी नहीं रखते थे। उनका व्यापार सम्बन्ध पूर्व और पश्चिम के देशों से समानरूपेण था। चम्पा, जावा काली, सिंहल, चीन, अरब, मिश्र इत्यादि देश भारतीय नाविक की परिधि से परे नहीं थे। शास्त्र-पुराण, न्याय-दर्शन, मीमांसा, व्याकरण, अर्थशास्त्र, ज्योतिष, कला-कौशल, शिल्प, कहाँ तक गिनाया जाय, सभी अपनी चरम सीमा पर थे। हमारे देश की कला के नमूने मिश्र, चीन तथा उन सभी स्थानों में पहुँच चुके थे जिनसे हमारा सम्पर्क था। नीति-शास्त्र में भी हमारा देश गुरु ही था। रामायण, महाभारत तथा अन्य पुराणों और शास्त्रों के अध्ययन से प्रकट होता है कि उस समय विश्व-संचालन

हमारे नीति पर होता था। इन प्राचीन निधियों को केवल कल्पना और उद्गार की दृष्टि से देखना भ्रम है, उनमें यदि काव्य-प्रवाह है तो तथ्य भी है। इसे आज के इतिहास अध्येता स्वीकार कर रहे हैं। अशोक, चन्द्रगुप्त, विक्रमादित्य, समुद्रगुप्त, हर्षवर्धन इत्यादि सम्राट हमारे गौरव हैं। कालिदास, भवभूति, चरक, सुश्रुत, वाराहमिहिर, अमरसिंह, कर्ण, जैमिनि, बादरायण इत्यादि ने अपनी दैवी प्रतिभा से हमारी कीर्ति का आलोक उज्ज्वल कर रखा है। इनकी काव्य-छटा और प्रतिभा कहाँ पाई जा सकती है। आध्यात्मिक दिशा की ओर जब अन्य देशों की सभ्यता का उदय भी नहीं हुआ था, हमारे उपनिषदों की रचना हो चुकी थी। भारतीय ऋषि-मुनियों को सर्व भौम सत्ता का बोध हो चुका था। ब्रह्म निराकार है, उसी की सत्ता से पृथ्वी, आकाश, जलवायु की सृष्टि हुई है। वही हमारे प्रकाश और ज्ञान का विषय है। भारतीय सभ्यता का एक अपना ही आदर्श है। उसी आदर्श के दृष्टिकोण से हमारा जीवन-पथ बनाया गया है। उसी से हमारा साहित्य, समाज और जीवन प्रभावित हुआ है।

भारत की सांस्कृतिक विजय-पताका रूस से चीन तक फहरा चुकी है। महेञ्जोदारो की सभ्यता संसार की सबसे प्राचीन सभ्यता मानी गयी है। उसके अध्ययन से भारत की प्राग ऐतिहासिक सभ्यता पर नवीन शोध हुये। इस दृष्टि से हमें विश्वास कर लेना चाहिये कि रामायण, महाभारत और अन्य पुराणों में वर्णित बातें बिल्कुल कपोल-कल्पित अथवा कोरी कल्पना नहीं है। भारत की सभ्यता का प्रभाव उसके धर्म की प्राचीनता अथवा साम्राज्य विस्तार के कारण नहीं हुआ। उसकी सफलता का रहस्य तो भिन्नता में एकत्व के समन्वय में है। यह एकत्व का दृष्टिकोण मानव सभ्यताओं में भारत को सबसे उच्च आसन प्रदान करता है। भारत की सभी वस्तुओं में अभिन्न एकत्व का सूत्र हमारे जीवन को बाँधे हुये हैं, उसकी गहराई में एकत्व है, इसीलिये वह भौगोलिक भिन्नता अथवा साम्राज्य-विस्तार से प्रभावित नहीं हुआ। इसका सबसे सुन्दर समन्वय तो यही है कि धर्म, भाषा, जाति,

वर्ण, सम्प्रदाय, आचार-विचार और वेष-भूषा की भिन्नता किसी प्रकार हमारे आदर्श पर कुठाराघात नहीं कर सकी। हमारा आदर्श इसीलिये जीवन, विचार और कर्म्म का सामञ्जस्य और समन्वय उपस्थित करता है।

प्राचीन भारत का इतिहास सहस्रों शताब्दियों के मानव-सभ्यता और प्रगति का चित्रण है। आधुनिक इतिहास से तुलना करने पर भी हमारा एक-एक युग इन आधुनिक प्रगतिशील राष्ट्रों से गौरवमय और उज्ज्वल होगा। हिन्दू-सभ्यता की साधारण त्रुटियाँ रोम और ग्रीस से तुलना करने पर आधुनिक संसार के लिए शिक्षा का एक अध्याय है। अलबेरूनी ने भारतीय रहन-सहन की प्रशंसा की है। उसके विचार से भारतीय सभ्यता का आधार बुद्धि-वाद पर स्थिर है। इसके तत्व जीवन के सूक्ष्म अध्ययन और मानव-मस्तिष्क के विकास की चरम-सीमा पर स्थित हैं। इसके पूर्व भी अनेक चीनी यात्री अशोक से लेकर हर्ष के समय तक भारत में सांस्कृतिक अध्ययन करने के लिये आये और अपने देशों में जाकर हमारे धर्म और संस्कृति तथा सभ्यता की ध्वजा फहराई। गौतम, महावीर और शंकराचार्य हमारी उन निधियों में हैं, जिन्होंने हमारे जीवन को नये साँचे में ढाल दिया। संसार का कौन देश है जो इनसे टक्कर ले सके। मुसलमान विजेताओं के आज से ७०० वर्ष पूर्व भारत में आने से कोई परिवर्तन नहीं हो सका। यद्यपि इसके क्षय के लक्षण अवश्य प्रकट हो रहे थे। आक्रमणकारी पठानों को यदि लोलुप, खून के प्यासे और लुटेरे कहकर सम्बोधित किया जाय तो अतिशयोक्ति न होगी, क्योंकि कुरान के आदेशानुसार काफिरों को कत्ल करना ही अपने लिये यह श्रेयस्कर समझते रहे। यदि हमारी सभ्यता और नीति में क्षय नहीं उत्पन्न हो चुका था, तो क्या भारत की सत्ताओं में इतना बल नहीं उत्पन्न हो सकता था कि वे संगठन द्वारा उन आततायी आक्रमणकारियों को देश से मार भगाते और अपनी परम्परा को अटूट बनाये रखते। किन्तु हमारे इतिहास के भविष्य के पृष्ठ तो स्वर्ण के अक्षरों के स्थान पर कालिमामय होनेवाले थे। अस्तु, जयचन्दों की उत्पत्ति क्यों न होती। हमारे सत्ता का वह बल, जो विश्व के समस्त

भिन्नताओं और भिन्न शक्तियों को अपने में पचा सका, नष्ट हो चुका था। इसका परिणाम यह हुआ कि प्रत्येक दिशा से भारतीय समृद्धि और समाज का पतन आरम्भ हो गया। मुसलमान आक्रमणकारियों की धन और काम-लिप्सा का कुठार जर्जरित हिन्दू जाति न सह सकी। जिहाद, जज़िया और जकात का सामना, जाति-पाँति, छुआछूत और वर्ण-व्यवस्था का आडम्बर न सह सका। फलस्वरूप कितने नरमुण्डों की आहुति हुई, कितने जौहर हुये, इनकी ठीक गणना करना भी सम्भव नहीं। किन्तु यह भी हमारे लिये कम गौरव की बात नहीं। अपनी सतीत्व की रक्षा के लिए प्राण विसर्जन कर देना साधारण बात नहीं। यह हमारे सभ्यता की नई देन है। विश्व-इतिहास में ऐसा एक भी उदाहरण नहीं मिलेगा जहाँ सतीत्व की रक्षा के लिये नारी अपना जीवन हँसते-हँसते त्याग दे। फिर भी फूट का वृक्ष इतना विस्तृत हो चुका था कि किसी प्रकार का त्याग हमारी रक्षा न कर सका। फिर भी हमारी वीरता, हमारा शौर्य्य और पराक्रम अटूट रहा। हमारे दुर्भाग्य का कारण नेतृत्व-हीनता और फूट बैर रहे हैं। हिन्दू भारत के पतन से लेकर आजतक यही परम्परा अविच्छिन्न रही है, चाहे मुगलों का उत्थान अथवा पतन का युग ही क्यों न रहा हो। अंग्रेजों का कदम भारत की पवित्र भूमि पर पड़ते ही मानो यह रोग चिरायु हो गया। सचमुच देखा जाय तो आज भारत में अंग्रेज सरकार की जड़ मजबूत करने की यही सबसे बड़ी महौषधि है।

यद्यपि यह कहने में विचित्र जान पड़ेगा कि भारत का मुसलमानों से प्रथम संम्पर्क शान्तिमय था। प्रथम सम्पर्क के सैकड़ों साल बाद वे विजेता के रूप में आक्रमण करने आये। विदित हो कि दक्षिण भारतीय समुद्र तट से नाविक सम्पर्क होने के कारण अरब निवासी भारत में व्यापार करने के लिये आते थे। अरब-निवासी पहले मुसलमान न थे। वे मूर्तिपूजक और पिछड़ी हुई सभ्यता की गोद में पल रहे थे। उनके मुसलमान हो जाने पर भी व्यापार-सम्बन्ध पूर्ववत बना रहा। दक्षिण में उन्होंने अपने छोटे-छोटे उपनिवेश बना लिये, जिनमें मिश्रित संस्कृति और सभ्यता का राज्य था। अरब से भारत

को अनेक प्रकार की वस्तुयें आती थीं और भारत से भी अनेक प्रकार की वस्तुओं का निर्यात होता था जो अरब-निवासियों के लिये अलभ्य थी। व्यापार की आवश्यकता के कारण कुछ कुटुम्ब आकर मलावार तट पर बस गये। शासकों ने उदारता से काम लिया और उन्हें अनेक प्रकार की समयोचित सुविधा देते रहे। इसका परिणाम यह हुआ कि दक्षिण भारत के व्यवसाय केन्द्रों में इनके उपनिवेश बन गये, मसजिदें बनीं और कुछ अंशतक इन्हें धर्म-प्रचार की भी आज्ञा मिली। अरब और तामिलों के सम्पर्क विशेष बढ़ जाने के कारण विवाहादि भी होने लगी और एक प्रकार की मिश्रित जातियाँ भी बन गयीं।

इस प्रकार की स्वतन्त्रता से उनकी सामाजिक और राजनैतिक सत्ता का महत्वपूर्ण हो जाना स्वाभाविक था। पांड्य राज में मुसलमान मन्त्री की चर्चा मार्को पोलो ने अपने यात्रा विवरण में की है। पांड्यराज्य का कुबलाई खाँ (१२८६) के दरबार में एलची मुसलमान था। इसका प्रभाव यह हुआ कि हिन्दू और अरब के भारतीय मुसलमानों का स्वार्थ एक हो गया। अनेक अवसरों पर इन वीरों ने दृढ़तापूर्वक हिन्दुओं से मिलकर मुसलिम आक्रमण-कारियों का मुकाबिला किया। मलिक काफूर की सेना ने देवगिरी के राजा वीर वल्लाल की सेना से मुकाबिला किया, जिसमें २०,००० मुसलमान सैनिक थे। यह भारतीय-सभ्यता की ही विशेषता है कि इसमें लाख कम-जोरियों के होते हुए भी जो विदेशी भारत में आये वह भारतीय हो गये। इसका प्रमाण यह है कि पठानों की सलतनत का अन्त हो जाने पर जिस समय बाबर ने पानीपत में युद्ध के लिये ललकारा। उसकी सेना का सामना इब्राहिम लोदी की मुस्लिम और हिन्दू सेना ने मिलकर किया। यह बात विचारणीय है कि इन युद्धों का एकमात्र उद्देश्य राज्य की सीमा-वृद्धि ही था। यह जिहाद अथवा धार्मिक युद्ध नहीं थे। दक्षिण-भारत के विजयनगर राज्य से बीजापुर और अहमदनगर की मुसलमानी रियासतों में अनवरत युद्ध होता रहता, फिर भी धार्मिक पक्षपात अथवा कट्टरपन का कहीं नाम न था।

प्रत्येक ने अपने राज्य में पूर्ण धार्मिक स्वतन्त्रता और सहिष्णुता दी थी। इतना ही नहीं, अहमदनगर और गोलकुण्डा रियासतों के मुख्य कर्मचारी हिन्दू मरहठे सरदार थे। वे मरहठी भाषा के संरक्षक थे तथा उनकी सेना में अधिकांश हिन्दू सैनिक थे। इसी प्रकार विजयनगर राज्य में मुसलमानों की तूती बोलती थी। मुगल-सेना और बहमनी राज्य का संघर्ष इसीलिये होता रहा कि दोनों अपना राज्य बढ़ाना चाहते थे। उनके युद्ध और संघर्ष का कारण धार्मिक नहीं, आर्थिक और राजनैतिक था।

भारत में बस जानेपर मुसलमान सुलतानों की धार्मिक भावनायें कोमल हो गईं। कठोर न होकर उन्होंने धार्मिक सहिष्णुता को अपनाया। पठानों के समय से प्रचलित अनेक प्रकार के कर उठा दिये गये। काश्मीर के सुलतान ज़ैनुलआबदीन (१४२०–७०) ने घृणित जज़िया को कत्तई बन्द कर दिया; वह स्वयम् भारतीय साहित्य का प्रेमी था और अनेक संस्कृत ग्रन्थों का फारसी में स्वयम् अनुवाद किया। गौड़ सुलतान अलाउद्दीनहुसेनशाह (१४९३–१५१९) बंगाल में नवयुग प्रवर्तक हुआ। शेरशाह सूर ने अपनी आदर्श शासन-प्रणाली न्याय और धार्मिक सहिष्णुता के आधार पर स्थापित की। उलेमा और मौलवियों के संकुचित दृष्टिकोण और धर्मोन्माद से वह अछूता रहा। हिन्दुओं में शिक्षाप्रचार के लिये उसने दातव्य संस्थायें स्थापित कर दीं जिसका प्रबन्ध हिन्दुओं के हाथ था। इस प्रकार दया, न्याय और सहानुभूति का बर्त्ताव करने के कारण प्रत्येक जाति की प्रजा चाहे वह हिन्दू रही हो या कोई और उसे आदर की दृष्टि से देखते थे[1]। अकबर के उदाहरण और सहिष्णुता का वर्णन पुनरावृत्ति नहीं चाहता। अकबर की उदार नीति का ही यह फल है कि उसे इतनी बड़ी सफलता मिली। नीति और राजसत्ता के आगे उसकी दृष्टि में धर्म का महत्त्व गौण था।

यह स्मरणीय है कि इसी युग में जब योरुप के लोग धर्मयुद्ध में कुत्ते बिल्लियों की भाँति लड़-मर रहे थे। रोमनकैथालिक और प्रोटेस्टेण्ट, एक दूसरे

---

१ ईश्वरीप्रसाद— भारत में मुसलिम राज्य का इतिहास।

के खून के प्यासे हो रहे थे। अकबर ने अपने राज्य में प्रत्येक सम्प्रदाय को पूर्ण धार्मिक स्वतन्त्रता दे रखी थी। वर्तमानयुग की धार्मिक सहिष्णुता के प्रयोग में वह सबसे पहला और बड़ा प्रयोगार्थी था[1]। अनेक धर्म के मूल तत्वों के समन्वय के आधार पर ही उसने दीने इलाही को राज्यधर्म घोषित किया, यद्यपि उलेमाओं ने इसका एड़ी चोटी से विरोध किया। अकबर के पश्चात सभी मुगल सम्राट अकबर की नीति का उत्साहपूर्वक पालन करते रहे। औरङ्गजेब के दिमाग में जैसे ही शेरियत और हदीस का भूत सवार हुआ मुगल साम्राज्य जर्जरित हो खण्ड-खण्ड होने लगा, और अगले ५० सालों में नाम लेने के लिये साम्राज्य मात्र रह गया।

इस मिश्रण का प्रभाव यह हुआ कि परशियन और भारतीय सभ्यता के मिश्रण से एक सुन्दर चित्र बना जिसके राग-रंग में हिन्दू मुसलमानों की भिन्नता का सूत्र एकता के रंग में रंग उठा। इससे देश की समृद्धि, वैभव और व्यापार का विस्तार बढ़ा। भारत के बने हुए माल का पश्चिम के बाजारों में इतनी मांग बढ़ी कि प्रत्येक काम करनेवाला मालामाल हो गया। इसी समृद्धि को देखकर योरोपियनों को भारत से व्यापार सम्बन्ध स्थापित करने की लिप्सा बढ़ी।

शाही दरबार हिन्दू मुसलिम एकता के केन्द्र बन गये। पदगौरव और नियुक्ति में हिन्दू मुसलमानों में किसी प्रकार का भेदभाव न रखा गया। यदि मुसलमानों के लिये मसजिदें और यतीमखाने बनाने के लिये सहायता दी गई तो हिन्दू मन्दिरों और शरण-गृहों में भी मुक्तहस्त होकर सहायता दी गई। इसी युग में भक्तिकाल का प्रादुर्भाव हुआ जिसके रंग में हिन्दू मुसलमान समान रूप से रंग उठे। इस सम्बन्ध में खुसरु और दाराशिकोह का नाम नहीं भुलाया जा सकता। अमीर खुसरो अत्यन्त विद्वान और खिलजी के दरबार में प्रभावशाली व्यक्ति था। वह बलबन के शाहजादे का शिक्षक था। उसने हिन्दी को इतना प्रोत्साहित किया कि स्वयम् हिन्दी में लिखने लगा। आज भी अमीर खुसरो

---

१ श्रीराम शर्मा—मुगल सम्राटों की धर्म्म-नीति।

की कविता हिन्दी में पढ़ी जाती है तथा उसका नाम आदर से लिया जाता है। शाहजादा दाराशिकोह हिन्दू दर्शन का प्रेमी और संस्कृत साहित्य का प्रकाण्ड विद्वान था। यह उसी के उद्योग का फल था कि भारतीय अध्यात्म शास्त्र की निधि पाश्चात्य विद्वानों के लिये खुली। उसने, उपनिषदों, भगवत-गीता और योगवाशिष्ठ का फारसी में अनुवाद कराया। उसने अनेक ग्रन्थों की स्वयम् रचना की। उसके कृपा पात्रों में अनेक सूफी सन्त और अध्येता थे जिनका उद्देश्य हिन्दू और मुसलमानों की कटुता मिटाकर एकता उत्पन्न करना था। ऐसे उदाहरणों की ही एक पोथी लिखी जा सकती है। इसी उद्योग में रामायण, महाभारत तथा अन्य कितने ही ग्रन्थ फारसी में अनुदित हुये जिसका एक मात्र ध्येय यही था कि उसके पठन-पाठन से मुसलमानों की धार्मिक कट्टरता सहिष्णुता का रूप ग्रहण करे।

इस आन्दोलन के युग में भक्तिसाहित्यका उदय हुआ। जिनमें अनेक साधू-महात्मा और फकीर हुए जिन्होंने भक्ति का सन्देश गाकर हिन्दू मुसलमानों को मुग्ध कर लिया। गुरुनानक, कबीर, इत्यादि ने अपने उपदेशों में हिन्दू मुसलिम भेद-भाव मिटा सा रखा था। उनके शिष्य हिन्दू और मुसलमान सभी थे। इसके प्रभाव से दक्षिण भारत भी अछूता नहीं रह सका। रामानन्द, तुकाराम, नरसी मेहता ने भक्ति रस का ऐसा स्रोत प्रवाहित किया जिसपर हिन्दू मुसलमान सभी समान रूप से आकृष्ट हुये। रहीम, रसखान आदि इसी भक्ति श्रोत में बह चले। उनकी दृष्टि में राम, रहीम में कोई भेद न रह गया। हिन्दुओं के छूआछूत, सामाजिक पाखण्ड और विभेद का भेद-भाव नहीं रहा। उन्होंने प्रेम, भक्ति और श्रद्धा से मानवता का आह्वान किया। उनकी पुकार विफल नहीं हुई, तुलसी के राम और सूर के श्याम ने जर्जरी भूत समाज में नवीन जीवन सचार किया। हमारी धारणा है कि भक्ति मार्गपर किसी अंश तक मुसलमानी सभ्यता का भी प्रभाव पड़ा। रामानुज और शंकर का द्वैत और अद्वैत केवल विवाद और अध्येता का ही विषय रह गया। भक्ति-मार्ग में रामकृष्ण का मूर्तिमान होना इसी की प्रतिक्रिया है।

अध्यात्मिक चिन्तन का रहस्य जबतक प्रकट न हुआ मनुष्य आत्मा और परमात्मा की अनुभूति का ही द्वन्द मचता रहा। अध्यात्मिक चिन्तन का प्रभाव मुसलमान सन्तों और फकीरों पर पड़ा जिन्होंने साधना का मार्ग अंगीकार किया। इस प्रभाव का व्यापक विकास तत्कालीन समाज पर पड़ा। बर्बरता, क्रूरता और अहमन्यता का दृष्टिकोण बदलकर मानव दृष्टिकोण का विकास हुआ। इस समन्वय का फल यह हुआ कि फारस और पश्चिम की भाषा के शब्दों का प्रचार बढ़ा और हमारी भाषा और भावव्यक्त करने की शैली का नया रूप प्रकट हुआ। यह कहा जा चुका है कि मुसलमान शासक भी अपने राज्य की प्रान्तीय भाषा और साहित्य को प्रोत्साहन देते थे। बंगाली साहित्य के उत्थान और उसे साहित्य का स्थान पाने का श्रेय तो निश्चय ही मुसलमानों का सम्पर्क और मुसलिम सभ्यता है। इसमें ध्यान देने की बात यह है कि मुसलिम विद्वानों ने हिन्दी में लिखना-पढ़ना आरम्भ कर दिया। अकबर हिन्दी का संरक्षक था। हिन्दी की ही कृपा से राजा बीरबल से प्रसन्न होकर शाहंशाह ने कविराज की उपाधि दी थी। रहीम और रसखान का कहना ही क्या, इन्होंने ब्रजभाषा की कविता में मानों जान फूँक दी। इस संयोग से ही हमारी हिन्दी प्रकट हुई। यह भाषा उन लोगों के लिए थी जो संस्कृत और फारसी न जानते थे। कुछ लोग जो ज्यादा अंश में इसमें अरबी और फारसी के शब्दों का प्रयोग करते थे इसे उर्दू कहने लगे। उर्दू लश्कर की भाषा कही गई है। इस भाषा का प्रचार फौज के आने-जाने से चारों ओर होने लगा। यह इतनी लोकप्रिय हुई कि इसका सुन्दर साहित्य बन गया। कविता और गद्य दोनों में उर्दू चमक उठी। इसी की समस्या आज हिन्दी और हिन्दुस्तानी के बीच ऊँची दीवार की भाँति आकर खड़ी हो गई है।

दोनों सभ्यताओं के समन्वय का जैसा प्रभाव धर्म और भाषा पर पड़ा उससे अन्य कलायें भी अछूती नहीं रह सकीं। चित्रकला, भवननिर्माण में दोनों सभ्यताओं का बड़ा सुन्दर मिश्रण हुआ है। दिल्ली, आगरा, अजमेर, लाहौर, जौनपूर, गुजरात, मालवा इत्यादि स्थानों में जहाँ भी इमारतें बनी हैं

वहाँ के शासक चाहे हिन्दू अथवा मुसलमान ही क्यों न रहे हों इमारतों के मेहराव, गुम्बजवाले छज्जे इत्यादि हिन्दू कला के अनुसार ही बनाये हैं चाहे वह मन्दिर या मसजिद ही क्यों न हो। अरब के लोग जो पहले-पहल भारत में आये भारतीय निर्माण कला का आदर करते थे। महमूद ग़ज़नी जब भारत से वापिस जा रहा था अपने साथ हिन्दुस्तानी कारीगरों की एक सेना ले गया। वहाँ पर भारतीय आदर्श के अनुसार नगर और महलों के बन जाने पर अपने राज्य के अन्य हिस्सों में भी उसी प्रकार की इमारतें बनाने के लिये भेजा। इस प्रकार भारतीय कला मध्य एशिया, खारकन्द बुखारा और तुर्किस्तान तक पहुँच गई। मुगल चित्रकला और इमारती कला की भाँति भारतीय संगीत पर भी इसका प्रभाव कम महत्त्वपूर्ण नहीं था। भारतीय संगीत की परम्परा में अमीर खुसरो द्वारा आविष्कृत ख्याल बिल्कुल नई चीज थी। ख्याल का प्रचार इतना बढ़ा कि आज भी ख्याल की प्रणाली घरानों की 'बन्दिश' और परम्परा पर स्थित है। हिन्दू और मुसलमान उस्तादों के घराने आज भी अपनी 'तरकीबों' पर गर्व करते हैं।

दोनों सभ्यताओं के समन्वय का हिन्दू समाज पर जो प्रभाव पड़ा उसका परिणाम यह हुआ कि हिन्दू जाति और समाज अपना अस्तित्व न खो सकी। इस समय भी भारतीय समाज की दशा योरोपीय देशों की तुलना में अत्यन्त सुख, शान्ति और समृद्धि की थी। आज से हमारा बल और वैभव मुगल-राज्य-काल में बढ़ा हुआ था। शाहंशाहों की धार्मिक भिन्नता के सिवा वे अपने को हर प्रकार हिन्दुस्तानी समझते। इसी दृष्टि और नीति से देश का शासनसूत्र संचालित करते। साम्प्रदायिक विष को उन्होंने कभी न फैलने दिया। जहाँगीर की उदारता के सम्बन्ध में तो यहाँ तक कहा गया है कि मौलवियों की धार्मिक कट्टरता से क्रुद्ध कर उसने महल में सोने के सूअर बनवा कर रख छोड़े थे ताकि उलेमा और मौलवी सूअर को हराम समझ कर अपने को दरबार में आने के कारण नापाक समझ लें। औरङ्गजेब ने धार्मिक आधार पर अपनी शासननीति निर्धारित की और साम्प्रदायिकता के रंग में रंग उठा। इसीलिये महान

मुगल साम्राज्य का क्षय आरम्भ हो गया। दक्षिण में मरहठे और पञ्जाब में सिख मुगल साम्राज्य की जड़ में कुठाराघात करने लगे और औरङ्गजेब के मरते-मरते समस्त राज्य टुकड़े-टुकड़े हो उठा।

मुगल राज्य के क्षय हो जाने से भारत में अँग्रेजों के आने का इतिहास हमारे पतन की चरम सीमा का कालिमामय युग है। यद्यपि देश की शक्ति क्षीण हो चुकी थी, छोटी-छोटी रियासतें पारस्परिक लूट-मार में लगी रहतीं अथवा अपनी व्यक्तिगत घृणा और वैर लेकर एक दूसरे से भिड़ती रही हैं, फिर भी हिन्दू मुसलमान, मरहठा, और सिख रियासतों के वैभव और सामाजिक शान्ति में किसी प्रकार का अन्तर नहीं आया। वह एक अविच्छिन्न धारा की भाँति प्रवाहित होता रहा। हमारे देश में डाक्टर अम्बेडकर ऐसे विचार के भी मनुष्य हैं जिनकी दृष्टि में कभी इस प्रकार की न तो एकता ही थी और न किसी प्रकार का सामञ्जस्य ही। हिन्दू-मुसलिम समस्या के अन्तर्गत भेद और भिन्नता को उन्होंने ऐतिहासिक, धार्मिक, साँस्कृतिक असमानता के कारण आपसी घृणा प्रतिस्पर्धा और द्वेष बताया है। उनकी दृष्टि में सामाजिक शान्ति का कभी प्रश्न ही नहीं उठा क्योंकि हिन्दू मुसलमान और अछूत सामाजिक और धार्मिक भिन्नता तथा असमानता के कारण एक दूसरे से जला करते हैं। इस प्रकार की धारणा का कारण हमारी समझ में अम्बेडकर महोदय की अनभिज्ञता और दृष्टि-संकोच है न कि और कुछ।

× × × ×

मुगल साम्राज्य के पतन के आरम्भ के समय से देश में एक नई सत्ता का उदय आरम्भ हुआ। वह सत्ता न हिन्दू थी और न मुसलमान। यह इंगलिस्तान के कुछ ईसाई व्यापारी थे, जिन्होंने ईस्ट इण्डिया कम्पनी स्थापित कर भारत से व्यापार करना आरम्भ किया। इनका पहले पहल पदार्पण सूरत में हुआ। भारत के वैभव और समृद्धि से कम्पनी का विस्तार बढ़ने लगा और कुछ ही दिनों में मद्रास और बंगाल में भी इनकी कोठियाँ खुल गयीं। बढ़ते कार बार के कारण इन्होंने रक्षा के लिये कुछ सेना और दुर्गपंक्तियाँ बना लीं।

भारत में किसी शक्तिशाली केन्द्रीय शक्ति के न होने के कारण छोटी छोटी रियासतें एक दूसरे से लड़ती भिड़ती रहतीं। स्मरण रहे कि इनके लड़ने का कारण पारस्परिक वैर और फूट था न कि धार्मिक मतभेद अथवा भिन्नता। कम्पनी के शासकों ने इस स्वर्ण अवसर का लाभ उठाया और एक दूसरे को आपस में लड़ा लड़ा कर उनकी शक्ति का ह्रास और अपनी शक्ति की वृद्धि करते रहे। इस प्रकार की नीति का परिणाम यह हुआ कि कम्पनी का राज्य-विस्तार बढ़ने लगा। एक एक कर कम्पनी कितनी छोटी बड़ी रियासतों को हड़प कर गई। कम्पनी के कर्मचारियों की दृष्टि में न्याय और निष्पक्षता का कभी मूल्य न था। उनका एकमात्र लक्ष्य भारत वैभव को लूटकर अपना घर भरना था। किसी भी इतिहास में इनकी करतूतों का वर्णन मिल जायगा।

ईस्टइण्डिया कम्पनी ने जिस प्रकार व्यापार-वृद्धि के लिये कोठियाँ खोलीं और व्यापार बढ़ाया, उसका इतिहास घृणित एवम् लज्जास्पद है। कम्पनी की काली करतूतों का विस्तृत विवरण देना यहाँ सम्भव नहीं। हमारा काम इतने से ही चल जायगा कि भारत के उद्योग-धन्धों को नष्ट करने के लिए उन्होंने ऐसा कौन जघन्य और बर्बरकृत्य है, जिसे न किया हो। भारतीय-कुटीर-व्यवसाय का मूलोच्छेदन ही इनकी नीति थी। बंगाल के जुलाहों के साथ कम्पनी के कर्मचारियों ने जैसा अत्याचार किया उसकी कल्पना से रोमाञ्च हो जाता है। पठान आक्रमणकारियों ने कितने ही कत्लेआम कराये। साधारण अपराध के लिये कठोर दण्ड ही मानो उनका न्याय था, किन्तु कम्पनी इनसे किसी प्रकार कम न थी।

कम्पनी के व्यापार का व्यापक प्रभाव हमारे देश के सभी उद्योग-धन्धों पर बुरी भाँति पड़ा। इसका पहला दृष्टिपात कपड़े के व्यवसाय पर पड़ा। अंग्रेजों की कोठियाँ स्थापित की गयीं जो भारत से सूती और रेशमी कपड़े योरप और इंग्लैण्ड भेजा करतीं। स्मरण रहे कि भारत का बना सूती वस्त्र पश्चिम वालों के लिये अलभ्य वस्तु थी इसकी बारीकी, मजबूती और सौन्दर्य जग-प्रसिद्ध था। ढाके की मलमल और चिकन, मुर्शिदाबाद के रेशमी वस्त्र

के व्यापार से कोठी वाले मालामाल हो रहे थे। इन व्यापारियों ने एकाधिकार स्थापित कर लिया। किसी जुलाहे को यह अधिकार न था कि अपना माल कोठीवाले साहबों के सिवा वह किसी दूसरे के हाथ बेंच सके। उनके साथ कितनी बेइमानी की जाती थी, यह कहना सम्भव नहीं। उन्हें बयाना लेने के लिये मजबूर किया जाता और मनमाने दाम पर उनसे कपड़ा खरीदा जाता, वक्त पर न पहुँचने पर उनकी खबर कोड़े से ली जाती। उँगलियाँ काट ली जातीं और हर प्रकार से उन्हें बेकाम कर दिया जाता। स्वदेशी माल पर तो चुंगी लगती और विदेशी माल ग्राहकों के सिर जबरन लादा जाता। शिल्पी और किसान जो भारतीय उद्योग के प्राण थे, दास बनाये गये। ऐसी दशा में भारत का वैदेशिक और आन्तरिक व्यापार नष्ट न होता तो क्या होता? इतना होने पर भी भारतीय-वस्त्र का उत्पादन इतनी कम लागत में होता कि इङ्गलैण्ड के बाजार में वहाँ के बने कपड़े के मुकाबले भारत के कपड़े ५०/६०% कम मूल्य में बिका करता था। इसमें घाटा नहीं होता था। *ऐसी प्रतिस्पर्धा में भारतीय-व्यवसाय के सामने इंगलैण्ड का टिकना असम्भव* था। अस्तु, उन्होंने भारतीय उद्योग के ऊपर अनेक प्रकार के नियन्त्रण लगाना आरम्भ किये। वस्त्र पर तो ८० प्रतिशत तक आयात कर लगा दिया गया। इसका प्रभाव भारतीय उद्योग-धन्धों के लिये विनाशकारी सिद्ध हुआ।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी का २०० साल का इतिहास आर्थिक शोषण की कहानी है। जिसका उद्देश्य भारत से धन लूट लूट कर इंगलैण्ड का खजाना भरना और रद्दी माल लाकर भारत के बाजारों में जबरन बेंचना था। भारत का कोई भी ऐसा उद्योग नहीं रहा जिस पर कम्पनी की शनि दृष्टि न पड़ी हो। भारतीय जलपोतों का वर्णन वेदों में पाया जाता है। भारत का जहाज-निर्माण का व्यवसाय बहुत ही पुराना है। भारतीय जहाज बनाने में ही निपुण न हों सो बात नहीं, प्रत्युत वे पृथ्वी की परिक्रमा तक अपने जहाजों पर किया करते थे। कम्पनी के जहाज जिनसे उन्होंने बड़ी-बड़ी लड़ाइयाँ जीतीं और व्यापार किया करते थे, उनमें अधिकांश भारत के ही बने हुये जहाज

होते। यह व्यवसाय नष्ट करने के लिये भी अनेक प्रकार की पाबन्दियाँ लगा दी गयीं। यहाँ तक की भारत का कच्चा माल या ब्रिटेन से कोई भी माल भारतीय जहाज पर आने में रोक लगा दी गयी। १८४० में तो पूर्ण रूप से यह व्यवसाय बन्द कर दिया गया। भारतीय धातु अस्त्र शस्त्र और गोले-बारूद का व्यापार भी इंगलैण्ड का व्यवसाय कम करने के लिये रोका जाने लगा। भारत का बना फौलाद और तोपें तथा गोला-बारूद अंग्रेजी सेना में काम आता था। इतना सुन्दर फौलाद बनाना उस समय तक दुनिया की कोई भी जाति अब तक न जानती थी। दिल्ली में अशोक का स्तम्भ भी भारतीय फौलाद का बना हुआ है। यह हमारी प्राचीन धातु कला का सबसे सजीव नमूना है। रेल और सड़कें तथा भाप से चलनेवाले जहाजों और कल-कारखानों से ब्रिटिश माल की भारत में पहुँच आसान हो गई और उसकी खपत गाँव-गाँव होने लगी। सहस्राब्दियों से जो आर्थिक स्रोत और व्यावसायिक प्रवाह देश में बहता रहा, अंग्रेजों के आने के साथ ही सूख चला। परिणाम यह हुआ कि देश के करोड़ों नर-नारी, जो उद्योग और व्यवसाय में लगे हुए थे, बेकार हो गये। वे अन्न और काम के अभाव में दर-दर मारे-फिरने लगे। लाचार होकर बेकार खेती-बारी की ओर आकृष्ट हुये। खेती-बारी से पेट भरने को अन्न भले ही मिल जाय, किन्तु व्यापारोपार्जित वैभव की समग्रता नहीं मिल सकती। अतः भूमि का भार बढ़ने लगा, उपज घटने लगी। यहाँ किसानों और खेती करनेवालों की भीड़ तो पहले से थी ही अब और बढ़ गई। कृषि-योग्य भूमि पहले से ही खेती के काम आ रही थी। लोग इधर-उधर भूमि के लिये दौड़े। कितने नगरों की ओर आकृष्ट हुये, जिनसे आज के मजदूर-वर्ग का सूत्रपात हुआ। इस नीति और परिवर्तन का फल यह हुआ कि देश क्रमशः समृद्धि से गरीबी की ओर तेजी से अग्रसर होने लगा। इस गरीबी के सम्बन्ध में भारत के गवर्नर लार्ड वेन्टिक ने अपनी रिपोर्ट में लिखा है कि—"भारतीय कारीगरों की जो दु:खित और दयनीय स्थिति है, उसका दूसरा उदाहरण इतिहास में कहीं शायद ही मिले। जुलाहों की हड्डियाँ भारत

के विस्तृत भू-भाग को स्मशान बनाये हुए हैं।" यह अनेक रिपोर्टों में-से एक का उद्धरणमात्र है।

परिणाम यह हुआ कि अंग्रेजों की शोषक नीति से भारत की दशा शोचनीय हो गई। दूसरी ओर अकाल और दुर्भिक्ष से लोग तड़ा-तड़प कर मरने लगे। अन्न और वस्त्र का ऐसा अकाल भारत की शस्य-श्यामला उर्वरा भूमि में शायद ही कभी हुआ हो। ब्रिटिश-शासन की एक देन हमारे देश को अकाल भी है। इसके पहले देश में दुर्भिक्ष हुआ करते, अनावृष्टि होती किन्तु ऐसा अकाल और बार-बार कभी न आये, जितनी तीव्र गति से ब्रिटिश-शासन में आने लगे। इनमें कुछ तो स्वाभाविक और प्राकृतिक कारण वाले थे शेष शासकों की क्रूरनीति के परिणाम स्वरूप। उदाहरण के लिये हमें अतीत का इतिहास न टटोलना होगा। बंगाल का १९४२-४३ का अकाल इसका जीवित नमूना है। सरकारी गोदामों में अन्न सड़े और गरीब जनता भूखों मरे। ऐसे वातावरण में क्षोभ उत्पन्न होना स्वाभाविक था। क्षोभ और त्रास की ज्वाला सभी वर्गों में समान रूप से व्याप्त हुई। चाहे हिन्दू हो या मुसलमान, अंग्रेजों के सकरण का अभिशाप सब पर समान रूप से पड़ा। दैन्य और क्षुधा की ज्वाला से जनता पीड़ित हो उठी। भारत के पीड़ित मानव समूह का अन्तर क्षोभ की ज्वाला से धुधुआ उठा। इस ज्वाला का विस्फोट सन् १८५७ के विप्लव के रूप में हुआ।

यह विप्लव अंग्रेजों की कूटनीति के कारण हुआ। किसान, जुलाहे कारीगर सभी की रोटी छिन चुकी थी। क्षुधा की ज्वाला से विकल होकर विदेशी शासन के जूए को सब शीघ्रता से उतार फेंकना चाहते थे। राजे-रजवाड़े भी इनकी नीति से कुढ़े हुए थे। कितनों के राज्य छिन चुके थे। अवध के नवाबों का राज्य हेस्टिंग्स हड़प कर चुका था। मरहठा शक्ति के तोड़ने में भी तरह तरह के षडयन्त्र रचे जा रहे थे। सिन्ध और पंजाब के रंगमंच पर दूसरे प्रकार के अभिनय का आयोजन हो रहा था। बिहार और बंगाल तो पहले ही से कालग्रस्त हो चुके थे। उस समय सेना में चरबी और

कारतूसों का प्रयोग मानो बारूदखाने में आग लगाने के लिये ही हुआ। क्रान्तिकारियों का संगठन सुन्दर और प्रशंसनीय था, फिर भी लाखों हिन्दुस्तानी अपने ही भाइयों के विरुद्ध अंग्रेजों की सहायता कर रहे थे। इतना होने पर भी क्रान्तिकारियों की वीरता प्रशंसनीय थी। इनके सम्बन्ध में सर विलियम रसल अपनी डायरी में लिखते हैं:—

"फिर भी हमें यह स्वीकार करना पड़ता है कि अंग्रेज चाहे कितने ही बहादुर क्यों न हो, यदि समस्त भारतवासी हमारे विरुद्ध पूरी तरह हो जाते तो भारत में अंग्रेजों का निशान तक बाकी न रह जाता। हमारे किले और सेनाओं की रक्षा का काम सचमुच वीरोचित था, किन्तु इस वीरता में भारतवासी शामिल थे और उन्हीं की सहायता और उपस्थिति के कारण हमारी रक्षा हो सकी। देशी फौजें ही सबसे आगे हमारी रक्षा कर रही थीं। देशी लोग हमारे घोड़ों के लिये घास काट रहे हैं और हर प्रकार की दारवरदारी, रसद और सफाई तथा तीमारदारी का प्रबन्ध करते हैं। वे हमारा सब काम करते हैं, यहाँ तक कि समय पर रूपया भी उधार देते हैं। हमारे साथियों का कहना है कि बिना भारतीयों की सहायता के हमारे लिये एक क्षण टिकना असम्भव है।" (My Diary in India—Sir W. Russell)

हमारी क्रान्ति के असफल होने में तीन कारण मुख्य हैं। वे यह हैं—पहला योग्य और प्रभावशाली नेताओं का अभाव। दूसरा देशी नरेशों की अकर्मण्यता। तीसरा दक्षिण में उदासीनता। भारतीय युद्धों में प्रायः हार का कारण नेतृत्व का अभाव रहा है। सिकन्दर से लेकर आजतक जितने आन्दोलन और युद्ध में विफलता मिली, उनका मुख्य कारण यही रहा है। योग्य नेतृत्व न होने के कारण सेना और जनता का ठीक-ठीक संगठन न हो पाता, जिसका परिणाम यह होता कि वीरता और त्याग का भाव असीम होने पर भी हमें पराजय की ही भेंट स्वीकार करनी होती। सन् सत्तावन के आन्दोलन की विफलता का कारण हिन्दू मुस्लिम भेद और भिन्नता नहीं थी और न

किसी की यह इच्छा नहीं थी कि अंग्रेज भारत में टिक सकें, किन्तु नेतृत्व का अभाव होने के कारण हमारे गुण ही हमारे लिये घातक सिद्ध हुये।

दूसरा कारण देशी नरेशों की अकर्मण्यता और पारस्परिक बैर भाव था। यद्यपि अंग्रेज धीरे धीरे देशी रियासतों का अन्त कर रहे थे और बड़ी बड़ी रियासतों को भी हथियाने के ताक में बैठे थे फिर भी देशी नरेशों की आँखें न खुलीं और वे अंग्रेजों को अपना रक्षक समझते रहे। विद्रोहियों को दबाने के लिये यदि पटियाले और झींन्द की सेनाएँ न आ जातीं तो मेरठ और दिल्ली की सेना को पराजित करना असम्भव सा था। दूसरा कारण यह भी था कि मरहठे और राजपूत पारस्परिक अविश्वास के कारण राष्ट्रीय विप्लव में भाग न ले सके। यदि सम्राट बहादुरशाह की पुकार पर जयाजीराव सिन्धिया अपनी सेना सहित दिल्ली पहुँच जाता तो नेतृत्व की कमी और शाहंशाह की निराशा का प्रतिकार हो जाता तथा कम्पनी के सेना के पैर उखड़ जाते। किन्तु बेचारे शाहंशाह को तो गुलामी की यातनायें बदी थीं, उसका मनोरथ कैसे सफल होता।

विन्ध्या के दक्षिण का देश तो मानों क्रान्ति के छींटे से अछूता ही रहा। यदि दक्षिण की रियासतों और सेनाओं ने शतांश उत्साह से भी भाग लिया होता तो निश्चय ही देश में आज यह दुर्दिन न आता। फिरंगी अवश्य ही भारत से कूच कर जाते और हमारा इतिहास ही कुछ दूसरा होता। यदि मद्रास, बम्बई और महाराष्ट्र की सेनाओं ने भी इस स्वातंत्र्य युद्ध में सक्रिय योग दिया होता तो जनरल नील और हैवलाक की सेनाओं के लिए कलकत्ते पहुँचना भी असम्भव हो जाता और इलाहाबाद, बनारस, कानपुर और लखनऊ पर अंग्रेजों की विजय पताका फहराना असम्भव हो जाता।

कोई भी निष्पक्ष इतिहासकार इस बात से इनकार नहीं कर सकता कि अधिकांश क्रान्तिकारी अपने देश की स्वाधीनता, धर्म, सभ्यता और समृद्धि की रक्षा के लिए लड़ रहे थे। दूसरी ओर अंग्रेज भारत को गुलामी की जंजीरों

में जकड़ कर स्वेच्छापूर्वक शोषण करने की नीति से प्रेरित हो रहे थे। अस्तु। इन उद्देश्यों से प्रेरित होकर जो लड़े, उनमें देश की स्वाधीनता के लिए लड़ने वाले विप्लवकारी हमारे आदर और श्रद्धा के पात्र हैं क्योंकि उनका लक्ष्य देश को अंग्रेजों की गुलामी से मुक्त करना था। उन लोगों के लिए दुख और ग्लानि प्रकट करने के अतिरिक्त हम कर ही क्या सकते हैं जिनकी दृष्टि में स्वाधीनता का मूल्य इतना न्यून था और जिन्होंने अपने को लोभवश अंग्रेजों के हाथ बेच डाला था।

क्रान्ति को दबाने के लिए जिन उपायों से अंग्रेजों ने काम लिया उसका स्मरण हमारे हृदय में ऐसी ठेस है जो कभी भूली नहीं जा सकती। प्रामाणिक अंग्रेज लेखकों की सम्मतियाँ भी विपरीत ही हैं। वे सभी इस सम्बन्ध में एक मत हैं कि जिन उग्र और क्रूर उपायों का आश्रय लिया गया वे मानव इतिहास के सबसे कालिमामय पृष्ठ हैं। इस विषय में स्वयम् लार्ड कैनिंग ने अपनी कौंसिल में क्या कहा है? जरा सुनिये "न केवल छोटे बड़े हर तरह के अपराधी वरन् वे लोग भी जिनका अपराध अत्यन्त संदिग्ध था बिना किसी भेदभाव और विचार के फाँसी पर लटका दिये गये। ग्राम जला दिये गये। लूट पाट का बाजार गर्म था। इस तरह दोषी और निर्दोषी स्त्री-पुरुषों और बालक बूढ़ों को दण्ड दिया गया।" नील्, हडसन जैसों के अत्याचारों का स्मरण करना भी हृदय को यातना पहुँचाना है।

× × × ×

अब हम वह प्रश्न उपस्थित करते हैं जिसे सन्मुख करके विदेशी शासक हमारी स्वाधीनता के मार्ग में रोड़े डाल रहे हैं। वह है हिन्दू मुसलिम एकता का प्रश्न। सन् ५७ का गदर इस देश में हिन्दू मुसलिम ऐक्य का सुन्दर उदाहरण था। धर्म की दुहाई, दीन की आवाज, किसी भी प्रकार एकता के मार्ग में बाधक नहीं थी। इस संग्राम में जुटने वाले समस्त हिन्दू मुसलमान

अपने धार्मिक विश्वासों पर आरूढ़ रह कर भारतसम्राट बहादुर शाह के झण्डे के नीचे कन्धे से कन्धा मिलाकर लड़ते रहे। मैदान में उतर कर उन्हीं हिन्दू और मुसलमान वीरों ने जिन्होंने गाय और सूअर की चरबी के कारतूसों के कारण विप्लव की घोषणा की थी हँसी-खुशी से उन्हीं कारतूसोंको दाँतों से काट कर विदेशी सिपाहियों का संहार कर रहे थे। इससे यही प्रमाणित होता है कि स्वाधीनता की लगन ने भारतीयों को जिनमें हिन्दू और मुसलमान सम्मिलित थे, आकुल कर रखा था।

दूसरा पहलू यह भी था कि लाखों हिन्दू मुसलमान इन कारतूसों के कारण धर्म और मजहब को संकट में समझ कर लड़ाई में कूदे थे। "हजारों वर्षों से जिस प्रेम और ऐक्य के साथ हिन्दू और मुसलमान इस देश में रहते थे उसका दूसरा नमूना संसार के इतिहास में मिलना असम्भव है, यद्यपि यह सच है कि इनकी टक्करें हमारे दैनिक और मानसिक जीवन में मौजूद हैं। इन्हीं टक्करों के कारण कबीर, नानक आदि के उपदेश ऐसे हुए जिनमें दोनों आदर्शों का समन्वय हुआ है। सम्भव है यदि सन् ५७ के विप्लव ने इन टक्करों को दमन की चट्टानों से न टकरा दिया होता तो कदाचित आज इस समस्या का यह उग्र और कटु स्वरूप न होता। क्रान्तिकारियों के तर्ज-तरीकों के बारे में हम कुछ भी भलेही कह लें किन्तु उनका आदर्श उच्च था। जिस परिस्थिति में क्रान्ति हुई वह यदि न होती तो हम यह समझने के लिये बाध्य होते कि भारत की जीवनशक्ति में आत्मगौरव और कर्त्तव्यपरायणता का अन्त हो चुका। यदि यह हो जाता तो निश्चय ही डलहौजी की नीति के फलस्वरूप आज देश में एक भी हिन्दू या मुसलमान रियासत न बच पायी होती। इस दृष्टि से हम यह कहेंगे कि सन् ५७ का महान् बलिदान व्यर्थ नहीं गया। इसने भारतीय जीवन में आजादी की ऐसी लहर उत्पन्न कर दी जिसमें आज भी हमारा देश पूरी शक्ति से आन्दोलित हो रहा है।" (विश्व इतिहास की झलक)

यहाँ पर हम उन विद्वानों के सम्बन्ध में कुछ कहना आवश्यक समझते हैं

जो दो-राष्ट्र सिद्धान्त (two nation theory) का प्रतिपादन करते हैं। ४-६ शताब्दियों के इतिहास पर दृष्टिपात करने से हमें कहीं भी हिन्दू मुसलमानों के दो राष्ट्र होने का संकेत नहीं मिला। मुसलमान जब देश जीत कर बस गये तब वे हिन्दुस्तानी हो गये। उन्होंने कभी अरब और फारस का भारत से किसी प्रकार का सम्बन्ध स्थापित करने की उत्सुकता अथवा लालसा प्रकट न की। उनकी एक मिली-जुली संस्कृति, भाषा और सभ्यता बनी जो धार्मिक भिन्नता को कायम रखते हुए दोनों को भारतीयत्व के ऐक्य सूत्र में बाँधे हुए थी।

आईने अकबरी, तुजुक जहाँगीरी आदि ग्रन्थों में कहीं भी इस प्रकार की बातों का जिक्र नहीं आया है जहाँ कि बादशाहों ने हिन्दू और मुसलमानों को दो राष्ट्र समझा हो। दो जातियाँ अपने धार्मिक आचार-विचार और सामाजिक नियमों का पालन करते हुये भी एक थीं (There was unity in diversity—Havel)। उन सम्राटों ने यह भी उद्योग किया था कि उनकी प्रजा अपने भेदभाव मिटाकर एकता के सूत्र में बँधी रहे। सभी अन्न और वस्त्र से तृप्त और सन्तुष्ट थे। उन लोगों ने जो कुछ भी किया वह भारतीय कला-कौशल की उन्नति के लिए। वे अपने को हिन्दुस्तानी समझते थे, इसीलिए हिन्दुस्तान की उन्नति का दत्तचित्त हो प्रयत्न भी करते थे। आज की भाँति साम्प्रदायिक कटुता और दृष्टि संकीर्णता का तो कदाचित् उन लोगों ने स्वप्न में भी चिन्तन न किया होगा ; उनकी नीति सहिष्णु और उदार थी। इतिहास से यह सिद्ध है कि जब कभी शासकों में धर्मोन्माद उत्पन्न हुआ तो उसी समय उनके राज्य का पतन भी हो गया; यह ऐतिहासिक तथ्य इन लोगों को न भूलना चाहिये। साम्प्रदायिकता को प्रोत्साहित करने का कलंक ब्रिटिश सरकार पर है जिसका ध्येय हिन्दू-मुसलमानों को आपस में लड़ाकर भारत में अपनी सत्ता दृढ़ और स्थिर रखना है।

वे लोग जो इस सिद्धान्त को प्रमाणित करने में अपनी सारी बुद्धि नष्ट

कर रहे हैं वे अंग्रेजी शिक्षा और ब्रिटिश-राज-भक्ति में रँगे हुये दासत्व की श्रृंखला में बंधे हुये हैं। उनका स्वार्थमय उद्देश्य देश को गुलाम बनाये रखने का ही है। इसीलिये वे इस तरह के तर्कों पर जोर देकर एकता और अन्तर में आजादी के प्रश्न को दूर ठेलते जा रहे हैं। विवश होकर उन्हें अपने पूर्वजों का ही मार्ग ग्रहण करना होगा। इनके प्रयत्नों से हमारी स्वतन्त्रता स्थगित हो जायगी इसका हमें विश्वास नहीं। वह कुछ समय के लिये टल भले ही जाय किन्तु एक दिन वह भी आयेगा, जब इन प्रतिक्रियावादियों की ऐसी प्रतिक्रिया होगी कि उन्हें विश्व में कदाचित् ही कहीं आश्रय मिले।

लीग की पाकिस्तान विषयक माँग की प्रतिक्रिया तो अभी से आरम्भ हो गई है। शायद ही कोई समझदार मुसलमान ऐसा हो जो इस प्रकार की मृग-तृष्णा को महत्व की दृष्टि से देखता हो। यह है इन प्रतिक्रियावादियों की बुद्धि। अस्तु, हिन्दू-मुसलमानों के दो भिन्न-भिन्न राष्ट्र होने की गुरुता नष्ट हो जाती है। फिर भी लीग में ऐसे-ऐसे लोग भी हैं, जो यह कहने का साहस करते हैं कि "हिन्दू-मुसलमानों को एक साथ रहने के लिये मजबूर करने का यह मतलब होगा कि कोयल और कौये को एक ही पिंजड़े में बन्द किया जाय। जिसका नतीजा यह होगा कि दो में शायद एक मर जाय या लड़ते-लड़ते दोनों ही खत्म हो जायँ"।[1] लीग के एक जिम्मेदार व्यक्ति की बुद्धि से ऐसी बातों का निकलना केवल बौद्धिक जड़ता के अतिरिक्त और क्या हो सकता है? अणु बम और योरोपीय महायुद्ध के समाप्त हो जाने पर इस प्रकार की बातें सोचना आश्चर्य की बात है। पर हमारा विश्वास है कि इस तरह की सूझ से जनता प्रभावित नहीं हुआ करती क्योंकि इसमें नैतिक बल और बुद्धि दोनों का स्थान नहीं।

---

1. Sir. A. K. Dehlavi—Two nation theory—Dawn Sept. 24, 1945.

हम भली-भाँति प्रकट कर चुके कि विप्लव के पूर्व हिन्दू-मुस्लिम समस्या थी ही नहीं। हिन्दू-मुसलमान एक साथ मेल-जोल से प्रेम-पूर्वक रहा करते थे। उनका लक्ष्य ऐक्य के सूत्र में बाँध करके देश और राज्य की उन्नति करना था। लीग के नेताओं का यह दिखाने का यत्न कि भारत ४ सदियों से मुसलमान शासकों का गुलाम था, मिथ्याप्रचार है। मुस्लिम राज्य का यह अर्थ लगाना, जो यह लीग लगा रही है, अर्थ का अनर्थ करना है। इस प्रकार का अर्थ लगाकर डेढ़ सौ साल के अंग्रेजी राज्य की मानसिक दासता की श्रृंखला में जकड़े हुये लोगों को एक दूसरे से लड़ाकर उन्हें रसातल की ओर भेजना है। साम्प्रदायिक समस्या का उदय तो अंग्रेजी नीति के कारण हुआ है जिसपर हम अगले अध्याय में विचार करेंगे।

अध्याय २

मुसलिम राजनीति का नेतृत्व--(१८५७ से १९४०)

पिछले अध्याय में हमने देखा है कि सन् ५७ के विप्लव में मुसलमानों ने भी पूर्ण रूप से योग दिया था। बहादुरशाह को दिल्ली के सिंहासन पर बिठा कर उन्हें भारत का सम्राट घोषित करने में मुसलमानों ने खूब उत्साह दिखाया। सेना में तो हिन्दू मुसलमान बड़े छोटे भाई की भाँति थे। क्रान्ति कुचल डाली गई किन्तु अंग्रेजों के मन में मुसलमानों के प्रति अत्यन्त शत्रुता उत्पन्न हो गई। अंग्रेजों के मन में यह बात बैठ गई कि मुसलमान अंग्रेजों के विरुद्ध बगावत करने में हमेशा चार कदम आगे रहेंगे। इस गलत धारणा का कुफल सबसे ज्यादा राष्ट्रवादी मुसलमानों पर पड़ा। मुसलमानों का दमन करने की गदर के पूर्व की नीति ने इतना जोर पकड़ा कि उसने मुसलमानों को नैतिक, आर्थिक और चारित्रिक-पतन के रसातल में भेज दिया। मुसलमानों का समुदाय इस नीति के परिणाम स्वरूप अशिक्षित, दरिद्र और जड़ हो गया। इसका परिणाम जैसा होना चाहिये था वही हुआ। मुसलमान जाति का मानसिक स्तर इतना गिर गया कि यह जाति किसी भी आदर्श और चरित्र के अभाव में देश को गुलामी में जकड़ने का कारण हुई। साथ ही साम्प्रदायिक जड़ता ही इनके धर्म का स्वरूप हुई। इस प्रकार इस जाति का भविष्य अत्यन्त अन्धकार पूर्ण हो गया। आज कल के दंगे और साम्प्रदायिक

झगड़ों की बाढ़ का बीजारोपण इसी समय हुआ। अंग्रेजों की लाख खुशामदें करने पर भी उन्होंने मुसलमान को अपना कृपापात्र नहीं बनाया। इस नीति से कुछ उदारचेता दूरदर्शी मुसलमान अत्यन्त दुखी हुए और अपनी जाति को किसी भी प्रकार आगे बढ़ाना चाहा।

इस समय मुसलमानों के अगुआ सर सैय्यद अहमदखाँ हुए। उन्होंने सोचा कि गदर में दमन के मुसलमान बहुत शिकार हो चुके है। उनकी दशा अत्यन्त पददलित है और हीन होती जा रही है। राजनीति और शिक्षा में भी मुसलमान पिछड़े हुये हैं। अतः उन्होंने मुसलमानों का उद्धार करने में अपनी सारी शक्ति लगा दी। सर सैयदअहमद के पुरखे अकबर के प्रधान मन्त्री थे। स्वयम् वे बिजनौर में अंग्रेज सरकार की नौकरी में थे जब विप्लव की आग भड़की थी। उनकी चातुरी और बुद्धिमत्ता के कारण अनेक अंग्रेजों की जान बचाई जा सकी। किन्तु जब क्रान्तिकारियों को इसका पता लगा तब उन्होंने उनका दिल्लीवाला मकान और अन्य सम्पत्ति लूट ली। फिर भी सर सैय्यद अंग्रेजों के मित्र और कृपापात्र बने रहे और यही नाता उन्होंने मृत्यु पर्यन्त निभाया।

गदर समाप्त होने पर उन्होंने उर्दू में "असबाबे बगावत" नामक पुस्तक की रचना की जिसमें गदर के कारणों पर प्रकाश डाला गया। उनकी सम्मति में गदर होने का मुख्य कारण यह था कि सरकारी कौन्सिलों में हिन्दुस्तानी सदस्य न होने के कारण सरकार को वस्तुस्थिति का ठीक ज्ञान नहीं हुआ इसीलिये इतनी बड़ी बगावत हो गई। उन्होंने मुसलमानों में शिक्षा प्रचार के लिये घोर परिश्रम किया। उन्होंने उच्च मुस्लिम आदर्शों को लेकर अलीगढ़ विश्वविद्यालय को भी स्थापित कर दिया। विश्वविद्यालय में अंग्रेजी तालीम का प्रसार करने के कारण सैयद अहमद मौलवी और मुल्ला पन्थियों के क्रोध भाजन भी हुये। उन लोगों ने इन्हें अनीश्वरवादी नास्तिक आदि कहकर सम्बोधित किया था। उन्हें जाति बाहर करने का फतवा दिया गया और कितनों ने तो कत्ल कर देने की भी धमकी दी पर सर सैयद का जोश किसी प्रकार कम

न हुआ। फलतः पहले पहल मुसलिम ऐंग्लो ओरियण्टल कालेज (M. A. O. College) की स्थापना हुई। उसके थोड़े दिनों बाद उन्होंने मुसलिम शिक्षा सम्मेलन का आयोजन किया जो अब भी नियमित रूप से होता है। बाल्यावस्था से सर सैयद राष्ट्रवादी होने के कारण उग्र राष्ट्रीय भावना के पक्षपाती थे। सरकारी नौकरी और पेन्शन मिलने पर भी जब कभी उपयुक्त अवसर आया वे सरकार की नीति की आलोचना करने में न हटे। भारतीय अफसरों के प्रति विलायती अफसरों का दुर्व्यवहार प्रायः उनके रोष का कारण हुआ करता था।

अंग्रेजी शिक्षा का विशेष प्रचार हिन्दुओं में हुआ। मुसलमान उससे वंचित ही रहे। परिणाम यह हुआ कि अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त व्यक्ति मैकाले और ट्रैवेलियन की दूरदर्शी नीति की सार्थकता सिद्ध करने लगे। हिन्दू अपने राज भक्ति और श्रद्धा विश्वास से अंग्रेजों की सहायता में ही अपना गौरव समझने लगे। मुसलमानों ने अंग्रेजी शिक्षा से लाभ नहीं उठाया और सरकारी नौकरियों में इसी लिए शामिल न हो सके। भारत का वस्त्र व्यवसाय जो अभी तक मुसलमान जुलाहों के हाथों में था मैनचेस्टर और लंकाशायर में कारखाने खुल जाने के कारण नष्ट हो गया। अतः मुसलमानों का अंग्रेजों की ओर से खिंचा रहना स्वाभाविक था। मुसलमानों की दुर्भावना दूर कर उनमें अंग्रेजों के प्रति भक्ति की धारा बहाने का सर सैयद का उद्योग सफल हुआ। मुसलमानों में भाव परिवर्तन देखकर अंग्रेजों ने भी उससे लाभ उठाया। इसका प्रत्यक्ष परिणाम यह हुआ कि उन्होंने मुसलमानों को कांग्रेस और राष्ट्रीय आन्दोलन से दूर रखकर एक अलग राजनैतिक वर्ग बनाने का प्रयत्न किया जो आगे चल कर हिन्दू और हिन्दुस्तान की आजादी में घातक हो गया। इस प्रकार एक वर्ग ऐसा भी उत्पन्न हो गया जिसमें न तो किसी प्रकार का चारित्रिक बल था और न प्रगति ही। उस वर्ग में अंग्रेजों के अनन्य भक्त और सहायक मुसलमान ही हुये।

इन दो वर्गों के संघर्ष से एक ऐसा वर्ग उत्पन्न हो गया जो अंग्रेजी शिक्षा

और सभ्यता में तो जरूर रंग गया था किन्तु उसमें देशभक्ति की भावना उमड़ रही थी। इसमें हिन्दू और मुसलमान दोनों थे जो संगठन कर अपनी राजनैतिक मांगों की पूर्ति चाहते थे। यह लोग ही भारतीय कांग्रेस के आधार स्तम्भ और जन्मदाता हुये। पर अंग्रेजों के प्रति भक्ति भावनावाले मुसलमान ही अधिक संख्या में थे। आगे के पृष्ठों में हम विस्तार पूर्वक देखेंगे कि इसी वर्ग के जन्म से यह दुष्परिणाम हुआ कि आज पाकिस्तान की माँग पर इतना जोर दिया जा रहा है और साम्प्रदायिक मनमुटाव का प्रश्न इतना जटिल बन रहा है मानो इस बुझौवल या गोरखधन्धे का गुर है ही नहीं और है तो केवल पाकिस्तान।

सर सैय्यद यद्यपि मुसलमान थे फिर भी उनका दृष्टिकोण उदार था। उन्होंने हिन्दू मुसलमान दो भिन्न राष्ट्रों की कभी कल्पना भी नहीं की थी। उनका लक्ष्य सरकारी नौकरियों और कौन्सिलों में अधिकाधिक हिन्दुस्तानियों का प्रवेश कराना था। वाइसराय की धारा सभा के सम्बन्ध में उन्होंने लिखा है :—

"मैं राष्ट्र शब्द का अर्थ यह लगाता हूँ कि इसमें हिन्दू और मुसलमान दोनों शामिल हों। एक का दूसरे से अलग होकर कोई अस्तित्व नहीं हो सकता। हमारे ख्याल से किसका कौन धार्मिक विश्वास है कोई अहमियत नहीं रखता। इसके कोई माने नहीं होता। हमारी समझ में तो यही बात आती है कि हम एक देश में एक राजा के अधीन बसते हैं जिसके साथ हमारा आर्थिक और राजनैतिक प्रश्न जुड़ा हुआ है। राज्य के नियम और संचालन में हम सब का स्वार्थ एक है क्योंकि उसकी समृद्धि और कष्ट हमारा ही दुख-सुख है। इसीलिए हम दोनों कौमों को जो हिन्दुस्तान में बसती हैं एक नाम से पुकारते हैं जो हिन्दुस्तानी हैं। जब तक मैं कौंसिल का सदस्य रहा, यही प्रयत्न करता रहा कि राष्ट्र की उन्नति हो।"

सर सैय्यद का दृष्टिकोण इतना उदार था कि प्रायः वे भावना से प्रेरित हो हिन्दू और मुसलमानों को दुलहिन की दोनों आखें कहा करते। किन्तु

एकाएक सर सैयद की नीति में विचित्र परिवर्तन हुआ और अब उन्होंने अपनी उसी सिद्धान्त का जिसका वे प्रतिपादन करते थे विरोध करना आरम्भ कर दिया। उसमें सब से घोर विरोध भारतीय कांग्रेस का था। इस नीतिपरिवर्तन के कारण जो सर सैय्यद के निकट सम्पर्क में थे, चकित से हो उठे किन्तु स्पष्ट रूप से इसके कारण का थाह न लगा सके। इनकी अवस्था अधिक हो जाने के कारण धीरे-धीरे शरीर और इन्द्रियों पर वृद्धावस्था की जड़ता स्थापित हो रही थी। इस उपयुक्त अवसर का लाभ अंग्रेज कूटनीतिज्ञों ने उठाया।

अलीगढ़ कालेज का प्रभाव

उन दिनों अलीगढ़ कालेज के प्रिंसिपल अंग्रेज हुआ करते थे। उन्होंने धीरे-धीरे वृद्ध नेता पर अपना रंग चढ़ाना शुरू किया जिसका परिणाम यह हुआ कि सर सैयद की नीति में प्रतिक्रिया आरम्भ हुई और उन्होंने राष्ट्रीय भावनाओं का विरोध आरम्भ किया। उन लोगों ने यह समझाया कि मुसलमानों का हित इसी में है कि वे अंग्रेजों से मिलकर रहें। राष्ट्रवादियों से सहयोग करने का परिणाम यह होगा–कि मुसलमान सदा उपेक्षित होते रहेंगे और यह भी सम्भव है कि आगे चलकर उन्हें गदर के समान ही यातनाएँ सहनी पड़ें। मुसलमानों की भलाई इसी में है कि वे सरकार से मिलकर सरकार की प्रत्येक चाल में सक्रिय रूप से सहयोग देते रहें। इसका परिणाम यह हुआ कि आरम्भ से ही उत्तरी भारत के मुसलमान कांग्रेस से अलग रहे और इस संस्था को संदिग्ध दृष्टि से देखने लगे। यह प्रतिक्रिया उन्हीं मुसल-मानों को अपने बन्धन में रख सकी जो सर सैयद के प्रभाव में थे।

भारत में ऐसे मुसलमान भी थे जो आरम्भ से ही कांग्रेस में योग दे रहे थे। बदरुद्दीन तैय्यबजी ने १८८७ की मद्रास कांग्रेस में सभापति का आसन ग्रहण किया। मीर हुमायूँ शाह ने जो इस अधिवेशन में सम्मिलित हुये थे कांग्रेस को ५०००) दान दिया। बम्बई के श्री अलीमोहम्मद

भीमजी अपने खर्च से देश भर में भ्रमण कर कांग्रेस का प्रचार करते रहे। कांग्रेस के प्रति सहानुभूति केवल शिक्षित वर्ग और व्यवसायियों तक ही सीमित न रही। मौलवी और उलेमा भी इससे प्रभावित हुए। मौलाना रशीद अहमद गंगोही, मौलाना लुत्फुल्ला अलीगढ़ी और मुल्ला मुराद मुजफ्फर-नगरी ने अपील की कि अपनी "दुनियावी तरक्की के लिए मुसलमानों का हिन्दुओं के साथ अपने सियासी जज़बात का इजहार करना बिल्कुल जायज और लाजमी है।" उनकी समस्त उमङ्गें कांग्रेस के सिद्धान्तों के साथ थीं। वे कांग्रेस में इसीलिए भाग न ले सकते थे क्योंकि उस समय कांग्रेस की कार्यवाही अंग्रेजी में हुआ करती थी। यही उनकी विवशता थी।

सर सैयद की प्रतिक्रियावादी नीति के प्रभाव में अनेक प्रभावशाली मुसलमान बुजुर्ग और अमीर-उमरा आ गये। इन्हीं भावनाओं से प्रेरित होकर मौलाना शिबली ने अपनी कौम के लिए अलग से सोचने का संकेत किया था[1]। सर सैयद के साथी नवाब विकारुल मुल्क, मसीहुल मुल्क और खाँ अलताफ हुसेन हाली ने उन्हीं का मार्ग ग्रहण किया और मौलाना शिबली के दृष्टिकोण से सोचने लगे। सर सैयद की प्रतिक्रियावादी नीति से अलीगढ़ कालेज के ट्रस्टी बगावत करना चाहते थे। किन्तु अपने बुजुर्ग नेता की बुढ़ाई का लिहाज करके चुप लगा जाते थे। यदि सन् १९०७ में सर सैय्यद की मृत्यु न हो जाती तो निश्चय ही उनकी नीति से घोर असन्तोष फैलता और उनके अनेक समर्थक उनका साथ छोड़कर राष्ट्रीय संस्था में आकर मिल गये होते। इस प्रकार सर सैय्यद ने राष्ट्रवाद के नवयुग में शिक्षित मुसलमानों को कांग्रेस के प्रभाव के क्षेत्र से अलग रखा।

इसके बाद ही नागरी और फारसी लिपि का आन्दोलन आरम्भ हो गया। कुछ हिन्दू यह यत्न कर रहे थे कि फारसी लिपि के स्थान पर नागरी लिपि अदालतों और सरकारी कागजात में शुरू कर दी जाय। मुसलमानों ने

---

१ – मुसलमानों का रौशनमुस्तकबिल —सैयद तुफैल अहमद मंगलोरी।

इस आन्दोलन का विरोध किया, क्योंकि उनकी दृष्टि में मुग़ल-काल से प्रचलित उर्दू लिपि का हटाना उनके मजहब और संस्कृति पर कुठाराघात करना था।

इसके विरोध में युक्तप्रान्त में संघटित आन्दोलन करने के लिए "अन्जुमने-तरक्किए-उर्दू" की स्थापना हुई। सरकार की नीति इस आन्दोलन को भी कुचल डालने की थी। इसीलिये इसके सभापति नवाब विकारुल मुल्क को प्रान्त के गवर्नर ने बाध्य किया कि वे अन्जुमन से सम्बन्ध त्याग दें। सरकार की यह विचित्रता है कि जब मुसलमान इस आन्दोलन को चलाना चाहते थे, तब उसने उसे दबाया और जब सरकार को अपनी स्वार्थ-सिद्धि का अवसर आया तो वह इसे प्रोत्साहन देने लगी। इस बे पेन्दी के लोटेवाली नीति का नंगा नाच हम कर्जन के "बंग-विच्छेद" आन्दोलन में स्पष्ट रूप से देखते हैं। अपनी कार्य-सिद्धि के लिये लार्ड कर्जन ने विच्छेद को चट से साम्प्रदायिक रंग दे दिया। कर्जन की कूटनीति और फूट फैलाने का प्रमाण बंग-विच्छेद योजना को कार्यान्वित करने में मिलता है। ढाका में सभा कर कर्जन ने घोषणा की कि ढाका मुस्लिम प्रान्त बनेगा। अनेक प्रलोभन देकर उन्होंने नवाब सलीमुल्ला खाँ को जो विभाजन के कट्टर विरोधी थे अपना समर्थक बना लिया। बँटवारे के बाद सरकार ने एक लाख पौण्ड की रकम बहुत कम सूद पर नवाब साहब को कर्ज के रूप में दी।[1] लेकिन कितने मुसलमान ऐसे भी थे जो इस चाल को भली-भाँति समझते थे। नवाब ख्वाजा अतीकुल्ला खाँ ने सन् १९०६ की कांग्रेस में घोषित किया कि "यह समझना बिल्कुल गलत है कि पूर्वीय बंगाल के मुसलमान बँटवारे का समर्थन करते हैं। इस योजना का समर्थन करनेवाले वही चन्द मुसलमान अमीर-उमरा हैं, जो अपने स्वार्थ के लिये अंग्रेजों के साथ हैं[2]। किन्तु बंगाल में अंग्रेजों को इस चाल में कितनी सफलता मिली, इसका लेखा हम आगे चलकर प्रस्तुत करेंगे।

1. Land Marks in Indian constitution and Development—Gurumuakh N. Singh p. 319
2. Ibid — p 268.

आगा खाँ डिप्यूटेशन (१९०६)

इसी समय आगा खाँ कुछ प्रभावशाली मुसलमानों का प्रतिनिधि-मण्डल लेकर लार्ड मिन्टो से मिले और प्रार्थना की कि सरकारी नौकरियों, कौंसिलों और उन संस्थाओं में जहाँ भी प्रतिनिधित्व का प्रश्न हो, मुसलमानों के अलग प्रतिनिधित्व करने की व्यवस्था की जाय। क्योंकि यदि हिन्दू उन्हें अपना मत न देंगे तो उनके लिये कहीं स्थान ही न रहेगा। हिन्दुओं की कृपा पर चुने जाने का अर्थ यह होगा कि वे हिन्दुओं का प्रतिनिधित्व करते हैं, मुसलमानों का नहीं। लार्ड मिन्टो ने आगा खाँके प्रार्थनापत्र पर सहानुभूति प्रकट की और कहा कि "हिन्दुस्तान के मुसलमानों ने जैसी कुर्बानियाँ ब्रिटिश साम्राज्य के हितार्थ की हैं उसे दृष्टि में रखते हुये मैं आपकी माँग से पूर्णतया सहमत हूँ।"

इस वक्तव्य में दो बातें स्पष्ट झलक रही हैं। एक तो मुसलमानों के प्रति व्यंग और दूसरा साम्प्रदायिकता की महत्ता। वे मुसलमान जिन्होंने इतने दिनों के बीच कभी अंग्रेजों का विश्वास नहीं प्राप्त किया था और सन् ५७ के विप्लव में वीरता से अंग्रेजों की जड़ खोदने के लिये लड़ते रहे, एकाएक अंग्रेजों के कृपा-पात्र बन गये और साम्राज्य के लिये कुर्बानियाँ कीं; दूसरी ओर स्पष्ट साम्प्रदायिक नीति का प्रतिपादन और हिन्दू मुसलिम भेद भाव की वृद्धि का समर्थन हुआ। साम्प्रदायिक आधार पर निर्वाचन की आवश्यकता तुरंत स्वीकार करली गई। मार्लेमिन्टो सुधार में इसको स्थान देकर अलग प्रतिनिधित्व और निर्वाचन की नीति स्वीकार कर ली गई। यहीं से साम्प्रदायिकता का उग्र सूत्रपात्र आरम्भ हुआ।

मुसलिम लीग का जन्म

डिप्यूटेशन की सफलता से प्रोत्साहित होकर संयोजकों ने मुसलमानों के लिये पृथक राजनैतिक संस्था या संगठन करने का विचार किया। नवाब सर्मी-उल्ला खाँ ने सन् १९०६ में प्रमुख मुसलमानों का एक सम्मेलन आमंत्रित

किया और दिसम्बर १९०६ में मुसलिम लीग की ऐसी परिस्थिति और वातावरण में स्थापना हुई।

मुसलिम लीग निम्नलिखित उद्देश्य लेकर स्थापित की गई।

(१) भारतीय मुसलमानों में ब्रिटिश सरकार के प्रति असीम राजभक्ति उत्पन्न करना और यदि उनके मन में सरकार के प्रति किसी प्रकार का सन्देह अथवा भ्रम हो तो उसे मिटाना।

(२) भारतीय मुसलमानों के राजनैतिक हितों की रक्षा करना और अपनी मांगों को नम्र भाषा में सरकार के सामने पेश करना।

(३) जहाँ तक सम्भव हो (१) और (२) का पालन करते हुए भारत की अन्य जातिओं में पारस्परिक सहयोग और शान्ति बनाये रखना।

यहीं से सरकार की साम्प्रदायिक नीति स्पष्ट रूप से आरम्भ हो जाती है जिसके मूल में विभाग और शासन (Divide et empera) सिद्धान्त है। इस प्रकार की नीति का यही अभिप्राय था कि हिन्दू मुसलमानों को संयुक्त न हो सकें। उनके राष्ट्रीय भावनाओं को कभी समान और सामूहिक रूप न मिले। हिन्दू मुसलमान कभी एक मत होकर कोई माँग न पेश करें। हर एक पक्ष और प्रश्न पर हिन्दू-मुसलिम भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण हों। दुर्भाग्यवश अशिक्षित और आर्थिक भित्तिहीन मुसलिम जनता इस कुचक्र को न समझ सकी और अंग्रेजों को ही अपना प्रभु समझने लगी। अशिक्षित, निर्धन और सम्मान हीन समुदाय जिसका चारित्रिक मेरुदण्ड टूट चुका हो यदि इस भाँति सोचे तो इसमें आश्चर्य की बात नहीं।
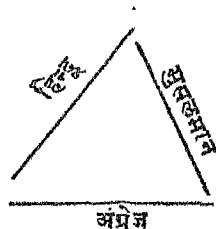
भारत में आने पर अंग्रेजों ने हिन्दू मुसलमानों का वैभव और ऐक्य देखा। इनका मेल जोल यदि वैसा ही रहता तो भारत में उनका पैर टिकना असम्भव था। इसलिये यह आवश्यक हो गया कि दोनों जातियों में फूट फैलाई जाय। अंग्रेज (Divide et empera) विभाजन में नीति

निपुण थे ही। उन्होंने दोनों जातियों में संघर्ष होने में ही अपना कल्याण समझा। यद्यपि हिन्दू और मुसलमान दो धर्मोंके अनुयायी थे किन्तु नित्यके रहन-सहनमें एक दूसरे से इस प्रकार मिल गये थे कि एक भारतीय राष्ट्र बन गया। अंग्रेज नीति विशारदों को सफलता के लिए दोनों जातियों के बीच में खाईं खोदना आवश्यक हो गया। अस्तु उन्होंने जातीयता के आधार पर एक ऐसा त्रिकोण बनाया जिसकी भुजायें हिन्दू और मुसलमान हों और अंग्रेज उसकी आधार भुजा हो। अंग्रेज अपनी कूटनीति और बैठकबाजी से योरप की सभी नाविक शक्तियों को पछाड़ कर पूरब में अपना साम्राज्य विस्तार कर रहे थे। उन्हें अपनी नीति निपुणता का भरोसा भी था।

× × ×

सन् ५७ के गदर के पश्चात् भारत पूर्ण रूप से अंग्रेजों के अधीन हो गया। अब देश में कोई भी ऐसी शक्ति नहीं बची जो अंग्रेजी शक्ति का किसी प्रकार सामना कर सकती। यह परिस्थिति अंग्रेजों के लिये अत्यन्त लाभदायक सिद्ध हुई। इंग्लैंड में यान्त्रिक क्रान्ति (Industrial Revolution) हो जाने के कारण वहाँ की आर्थिक दशा में सुधार होने लगा। प्रचुर मात्रा में माल बनकर तय्यार होने लगा जिसकी खपत के लिए बाजारों की आवश्यकता हुई। भाप से चलनेवाली रेल और जहाजों से यातायात का साधन सुगम हो गया। बिजली के तार से समाचार एक कोने से दूसरे कोने तत्काल पहुँचने लगा। जैसा कि पहले कहा जा चुका है इसका भारतीय उद्योग धन्धों पर घातक प्रभाव पड़ा। दूसरी ओर सरकार ने केन्द्रीय शक्ति का संगठन करना आरम्भ किया। जिसका उद्देश्य यह था कि जहाँ तक हो सके भारत में विदेशी माल की खपत की जाय और भारत का धन शोषण कर इंगलिस्तान का कोष भरा जाय। इस नीति को कार्यान्वित के लिए सैनिक बल की आवश्यकता हुई। सैनिक शक्ति के आधार पर राजकीय नीति प्रचलित की गई। इसका फल विप्लव के रूप में प्रकट हुआ और भारतीय सेना ने सन् ५७ के आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया।

सेना के विद्रोह से सरकार की आँखें खुल गईं और यह आवश्यकता प्रतीत हुई कि सेना का पुन: संगठन हो और उसमें उन जातियों के मनुष्य भरती किये जायँ जिनका सरकार के प्रति अटल विश्वास और राजभक्ति हो। सर जान लारेन्स जो दमन की कला में सिद्धहस्त थे और जिन्होंने विप्लव का दमन किया था, इसी नीति के समर्थक थे कि "सेना की जातीय एकता की भावना नष्ट हो।" अस्तु, इनका पहला काम जातीय भावना और राष्ट्रीयता का उद्रेक दबाना हुआ। राजभक्ति का सम्मान किया गया और विद्रोहियों को निर्दयतापूर्वक कुचल डाला गया। उन भिन्न फिरकों को, जो एक दूसरे के विरोधी थे, एक दूसरे से मिलाने का यत्न किया गया। जिसका फल यह हुआ कि उनमें कभी एकता न हो सकी और एक दूसरे से लड़ते रहे। उनकी साम्प्रदायिक और धार्मिक भावनाओं को भी उभाड़ा गया। परिणाम यह हुआ कि हिन्दू-मुसलमानों की हिन्दुस्तानी होने की भावना में फूट पड़ गई। हिन्दू-मुसलमान दोनों अपने को अलग-अलग राष्ट्र के पहलू से सोचने लगे। साम्राज्यवादी सरकारें इस प्रकार की फूट का सदैव फायदा उठाती हैं। यहाँ भी वही हुआ और केन्द्रीय शक्ति बलवान् होने लगी। इस सम्बन्ध में टामसन और गैरट ने अपनी पुस्तक* में स्पष्ट लिखा है, उसे देखिये :—

"हिन्दुस्तान के (नरम दलवाले) नेताओं ने अपनी शक्ति स्थानीय संस्थाओं, जैसे म्युनिसिपैलिटियों में अधिकाधिक प्रतिनिधित्व और सरकारी नौकरियों में हिन्दुस्तानियों की अधिक संख्या में नियुक्ति के लिये माँग की। उन लोगों ने सरकारी अर्थनीति की आलोचना आरम्भ की, शिक्षा का समुचित प्रबन्ध और नौकरियों में साम्प्रदायिक आधार पर नियुक्ति के लिये आन्दोलन करते रहे; किन्तु उन्होंने कभी यह कहने का साहस नहीं किया कि सरकार की अमुक नीति भारतीय संगठन और उन्नति के लिये बाधक है; इसलिए उसे कार्यान्वित न होना चाहिये।"

---

* Rise and fulfilment of British Rule in India Page 540.

इसी नीति को दृष्टि में रखकर ऐतिहासिक तथ्य की अवहेलना की गई। प्रान्तीय सरकारें और केन्द्र में यही आडम्बर रचा गया कि जनता यह समझे कि उसकी राजनैतिक सत्ता बढ़ रही है। यद्यपि इसमें सचाई और ईमानदारी का अभाव था। प्रान्तों का नये सिरे से विभाजन हुआ। साम्प्रदायिक भेदभाव बढ़ाने की नीति को प्रोत्साहन दिया गया। इस सम्बन्ध में संयुक्त पार्लिया-मेण्टरी कमेटी की सम्मति का सरकारी नीति पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। रिपोर्ट के पैरा २६ में कहा गया है "ब्रिटिश शासन की भारत को सबसे बड़ी देन भारत की एकता, अर्थात् भारत पहले किसी दृष्टि से एक न था, वह अब हमारी शिक्षा और विज्ञान के द्वारा अपनी एकता का अनुभव कर रहा है। प्रान्तों में राजनैतिक सत्ता की उन्नति को प्रोत्साहन देने का अर्थ यह होगा कि हमारी उत्पन्न की हुई राजनैतिक एकता गुटबन्दियों के कारण नष्ट हो जायगी और हमारी एकता उत्पन्न करने का प्रयास विफल हो जायगा।" यह तो सरकारी प्रतिनिधियों का सब्ज बाग दिखाने का प्रयास मात्र था। विरोधाभास की नीति की सफलता ही भारत में 'अंग्रेजी-राज' की जड़ें मजबूत कर सकती है। परिणामस्वरूप हिन्दू और मुसलमानों का विरोध बढ़ता ही गया।

गदर की समाप्ति पर ईस्ट इण्डियन कम्पनी के हाथ से हुकूमत ब्रिटिश पार्लियामेंट के हाथ में चली गई। तब से जिस नीति का सरकार ने पोषण किया है उसमें उसे सफलता ही मिलती गई। इसके निम्नलिखित कारण हैं जिससे सरकार को सहायता मिली:—

(१) हिन्दुस्तानी मुसलमानों का मुख्य पेशा फौजी नौकरी, या कपड़ा बुनना था। मैंनचेस्टर और लंकाशायर में पुतलीघरों के बन जाने से भार-तीय वस्त्र-व्यवसाय नष्ट हो गया। जुलाहों की रोटी छिन गई। वे बेकार हो भूखों मरने लगे। सन् ५७ के गदर में मुसलमानों ने अंग्रेजी राज को उखाड़ फेंकने और मुसलमानी सल्तनतों को पुन: स्थापित करने के विचार से जी तोड़ परिश्रम किया था। अस्तु अप्रत्यक्षरूप से अंग्रेज मुसलमानों को किसी प्रकार का सहारा देने के पक्ष में नहीं थे। सेना में मुसलमानों की भरती अंग्रेजी

सरकार ने कत्तई बन्द कर दी। ऐसी स्थिति में मुसलमानों में अशान्ति और विदेशी शासन के प्रति असंतोष होना स्वाभाविक था। देखिये, हन्टर इनके सम्बन्ध में क्या कहते हैं :—

"सेना में उनकी (मुसलमानों की) भरती बन्द है। कोई भी अच्छा मुसलमान भरती नहीं किया जा सकता। कुछ ही मुसलमान ऐसे हैं जिन्हें वायसराय की कृपा से सेना में चन्द कमीशनें प्राप्त हैं। किन्तु जहाँ तक हमें ज्ञात है सेना में एक आदमी भी शाही नियुक्ति का नहीं।" †

इस प्रकार नैराश्यग्रस्त होने पर मुसलमानों को सरकारी बाबुओं की सेना में एकाएक भरती होना असम्भव था। अस्तु, उन्हें पीछे हटाना पड़ा और उनके स्थान को अंग्रेजी पढ़े-लिखे हिन्दुओं ने ग्रहण किया जो सरकार की भाषा जानने के कारण सरकारी कारबार के लिये सहायक थे। मुसलमानों के शासन काल में भी हिन्दुओं को सरकारी नौकरियाँ मिलती थीं। मुगल बादशाहों के अर्थमन्त्री तो सदैव हिन्दू ही हुआ करते थे। अस्तु, इसका मुसलमानों को क्षोभ नहीं हो सकता था। वास्तविक क्षोभ का कारण उनके प्रति अविश्वास और किसी नौकरी में स्थान न मिलने से था। चन्द मुसलमानों को चपरासी, बावरची या अहलमद की नौकरियाँ दे देना कोई महत्व नहीं रखता। इससे अंग्रेजों को दोहरी सफलता मिली। पहली हिन्दुओं का सरकार के प्रति विश्वास और राजभक्ति। दूसरी सरकारी कार-बार चलाने में सरलता। तीसरी मुसलमानों में हिन्दुओं के प्रति स्पर्धा और अविश्वास। चौथी मजहबी खाईं की चौड़ाई और गहराई का बढ़ाना।

अंग्रेजी शिक्षा के प्रचार के कारण हिन्दुओं में उन भावनाओं और नवीन राजनैतिक सिद्धान्तों का भी प्रचार हुआ जिनका इङ्गलैण्ड में सम्पादन हो रहा था। प्रजातन्त्र की नवीन धारा का सबसे पहला प्रभाव हिन्दू शिक्षित समुदाय पर ही पड़ा और अनेक नेताओं का प्रादुर्भाव हुआ जो राजनैतिक सत्ता को

† Sir W. W. Hunter, Indian Mussalmans—P. 151.

माँग करने लगे। इनमें निम्नलिखित नाम उल्लेखनीय हैं। सर दादा भाई नौरोजी, राजा राममोहन राय, आनन्दमोहन बोस, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, लोकमान्य तिलक, स्वामी विवेकानन्द, अरविन्द घोष प्रभृति। इसी परिस्थिति में सन् १८८५ में भारतीय राष्ट्रीय (नेशनल) कांग्रेस की स्थापना हुई। यद्यपि पहले पहल कांग्रेस की स्थापना सरकार के संरक्षण में अवश्य हुई, किन्तु बढ़ती हुई राष्ट्रीयता के वातावरण में सरकारी राग में राग अलापना कांग्रेस के लिये सम्भव न हो सका।

"जब पहले पहल कांग्रेस कायम हुई, यह एक बहुत ही नरम और कदम फूँक फूँककर रखनेवाली संस्था थी। अंग्रेजों के प्रति अपनी राजभक्ति प्रदर्शित करनेवाली, और छोटे-छोटे सुधारों के लिये नम्र भाषा में माँग पेश करनेवाली संस्था थी। उस समय यह धनिक मध्य वर्ग की प्रतिनिधि थी, गरीब मध्य श्रेणी के लोग इसमें शामिल नहीं थे। यह खासकर अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोगों की संस्था थी, और इसकी सारी कारवाई हमारी सौतेली जबान अंगरेजी में होती थी। इसकी माँगें जमींदारों, हिन्दुस्तानी पूँजीपति और नौकरी की तलाश में रहनेवाले शिक्षित बेकारों की माँगें होतीं। रिआया की जरूरतें और उसे तबाह करनेवाली गरीबी पर बहुत कम ध्यान दिया जाता। इसने नौकरियों के भारती-करण की माँग की। इसने यह न देखा कि हिन्दुस्तान की जो कुछ खराबी है वह उस मशीन में है जो जनता का शोषण करती है; और इसी-लिये इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि वह किसके अधिकार में है; हिन्दुस्तानियों या विदेशियों के? कांग्रेस की दूसरी शिकायत यह थी कि फौज और सिविल सर्विस में अंग्रेजी अफसरों के जबरदस्त खर्चे और हिन्दुस्तान का सोना-चाँदी इंग्लैण्ड बहाये जाने की ओर।"*

पहले पहल कांग्रेस का दृष्टिकोण हिन्दू राष्ट्रवादिता थी। मुसलमान इस की ओर सर सैय्यद के उपदेशों के कारण आकृष्ट नहीं हुए; यद्यपि कुछ मुसलमान

* जवाहरलाल नेहरू—विश्व इतिहास की झलक, पेज ६२८

भी कांग्रेस के सभापति हो चुके थे। पढ़े-लिखे और विशेषकर हिन्दुओं की बढ़ती हुई राष्ट्रीयता का कांग्रेस द्योतक हुई। अंग्रेजों ने इस तूफान को रोकने के लिए एक संयुक्त मुसलिम मोरचा खड़ा किया और वे मुसलमान जो अब तक अविश्वास की दृष्टि से देखे जाते थे अचानक सरकार के कृपापात्र बन गये। सरकारी नौकरियों का द्वार मुसलमानों के लिये खुल गया और (हिन्दू) भारत को राष्ट्रीय भावनाओं के रोकने का एक अच्छा अवलम्ब मिल गया।

अलीगढ़ कालेज के प्रिंसिपल मिस्टर बेक।

इस काम में सरकार को सहायता देनेवाला कोई उपाधिधारी बड़ा अंग्रेज अफसर या खुशामदी हिन्दुस्तानी नहीं था। वह एक साधारण स्थिति के फिनरती अंग्रेज मिस्टर बेक (Beck) थे, जो अलीगढ़ कालेज के प्रिंसिपल थे।

अलीगढ़ कालेज के प्रिन्सिपल होने के कारण बेक साहब ने कालेज की नीति और प्रणाली में बड़ा परिवर्तन किया। पहला काम उनका यह था कि सर सैयद के प्रभाव से इन्स्टीट्यूट गजट का सम्पादकत्व निकाल कर उसका सम्पादन स्वयं करने लगे। सर सैय्यद के उदार विचारों और भावनाओं पर बेक साहब ने पानी फेर दिया। उनकी बंगाल के शिक्षित हिन्दुओं के प्रति उच्च भावना थी और प्रायः कहा करते थे कि "बंगाल का शिक्षित हिन्दूवर्ग ही ऐसा उन्नतिशील और उदार है जिसका हमें गर्व होना चाहिये। यह उन्हीं के उद्योग का फल है कि देश में राष्ट्रीय भावना की सरिता प्रवाहित हो सकी है।" बेक साहब ने आते ही साम्प्रदायिक विष का बीजारोपण आरम्भ किया। उन्होंने इन्स्टीट्यूट गजट में बंगालियों की निन्दा में एक लेख लिखा और उनके आन्दोलन को अराष्ट्रीय बताया। यह लेख सर सैय्यद की लेखनी का समझा गया और बंगाली पत्रों ने सर सैय्यद के उद्गारों की तीव्र आलोचना की। बेक साहब सर सैय्यद पर इस प्रकार हावी हुए कि उन्हें साम्राज्यवादी कूटनीतिज्ञों

के साम्प्रदायिक विष फैलाने के यत्न का उपयोगी शस्त्र बना लिया। सर सैय्यद मानो अब नौकरशाही के खास खिलौने बने और १८८७ में काँग्रेस के तृतीय अधिवेशन के अवसर पर एक विचित्र वक्तव्य दे डाला। इस सम्बन्ध में सर थियोडोरमारिसन ने, अलीगढ़ कालेज के इतिहास नामक ग्रन्थ में लिखा है।

"सर सैय्यद के भाषण का प्रभाव यह हुआ कि मुसलमान काँग्रेस से अलग हो गये और भारतीय शासन में निर्वाचन प्रणाली का विरोध करने लगे, जिससे उग्र राजनैतिक मतभेद और घोर वादविवाद उत्पन्न हो गया। आगे आनेवाले कुछ वर्षों के लिए सर सैय्यद और बेक साहब का अध्यवसाय मुसलिम जनमत संगठित करने में लगा। "गोकशी" और "राजनैतिक दृष्टिकोण" में मतभेद लेकर ऐसा प्रचार किया गया कि हिन्दू मुसलमानों के पारस्परिक मतभेद ने मजबूत जड़ पकड़ ली।" इतना होते हुए भी बहुत से मुसलमान व्यवसायी और उलेमा सर सैय्यद के चकमे में न आ सके और काँग्रेस से सक्रिय सहयोग करते रहे।

१८८९ में चार्ल्स ब्रैडला ने पार्लियामेण्ट में भारतीय संस्थाओं को प्रजासत्तात्मक अधिकार देने के लिए एक योजना प्रस्तुत की। यह अवसर बेक साहब को अपनी कार्य्यपटुता दिखाने के लिए उपयुक्त था। उन्होंने मुसलमानों में पृथकत्व की आग प्रज्वलित की। उन्होंने मुसलमानों की ओर से एक मसविदा तयार किया और मुसलमानों की ओर से बिल का विरोध किया गया। उनका कहना था कि "प्रजातन्त्रात्मक अधिकार का सिद्धान्त भारत के लिये अनुपयुक्त है, क्योंकि भारत एक राष्ट्र नहीं है।" उन्होंने प्रार्थनापत्र पर २१ हजार मुसलमानों के हस्ताक्षर करा लिये। इन हस्ताक्षरों को कराने में भी बेक साहब ने कैसी धूर्तता और छल से काम लिया यह जानकर प्रत्येक विचारशील व्यक्ति का सिर लज्जा से नत हो जाना चाहिये। इस काम में सबसे बड़े सहायक अलीगढ़ कालेज के छात्र हुए। वे प्रति शुक्रवार (जुमा) को दिल्ली की जुम्मा मसजिद की सीढ़ियों पर जाकर खड़े हो जाते और उन मुसलमानों से

जो वहाँ 'इबादत' और 'निमाज' के लिये आते, यह समझाते कि 'यह हिन्दू-आन्दोलन है'। 'गोकशी मुसलमानों का मजहबी हक है', यह मुसलमानों की जड़ खोदने का अंग्रेजों से मिलकर हिन्दू षड़यंत्र कर रहे हैं। भोले-भाले अशिक्षित मुसलमान मजहब पर कुफ्र गिरने के नाम पर सब कुछ करने को तैयार थे, आँखें मूँद कर मसविदे पर दस्तखत कर देते। जो आदमी झूठ और धोखे के बल पर ही अपना कार्य्यसाधन करे उसके लिये प्रत्येक निष्पक्ष मनुष्य के हृदय में कैसा स्थान होगा, कहने की आवश्यकता नहीं। बस, हम यही कह कर आगे बढ़ेंगे कि वह हमारे सम्मान और विश्वास का भाजन नहीं हो सकता। इस आन्दोलन के परिणामस्वरूप तीन वर्ष के पश्चात् सन् १८९३ में मुसलमानों ने "मुसलिम एंग्लो-ओरियण्टल डिफेन्स एसोशियेसन आफ अपर इण्डिया" की स्थापना की, इसका उद्देश्य निम्नलिखित था :—

(१) मुसलमानों के राजनैतिक अधिकारों की रक्षा करना।

(२) अंग्रेजों को और विशेषकर सरकार को मुसलमानों की राजनैतिक दशा का दिग्दर्शन कराना।

(३) उन साधनों को ग्रहण करना, जिनसे 'अंग्रेजी-राज' भारत में सुदृढ़ हो।

(४) मुसलमानों के भीतर राजनैतिक प्रगति रोकना।

(५) मुसलमानों में 'अंग्रेजी-राज' के प्रति अटल राजभक्ति उत्पन्न करना।

इस संस्था के मन्त्री मि० बेक थे। उन्होंने उद्घाटन के समय जो भाषण दिया, वह इस गुड़ियाचाली पर अच्छा प्रकाश डालता है।

'इण्डियन पैट्रियाटिक एसोशियेसन ने जो सार्वजनिक आन्दोलन आरम्भ किया वह दोषपूर्ण सिद्ध हो चुका है। इसके साथ पचास अन्य संस्थाएँ भी जुड़ चुकी हैं, दूसरे यह शुद्ध मुसलिम संस्था भी नहीं है। इसके हिन्दू भी सदस्य हैं। हमारा प्रस्ताव है कि उस नई संस्था का, जिसका हम संगठन

करने जा रहे हैं, न तो कोई शाखा होगी और न कोई सार्वजनिक सभा ही हुआ करेगी। एसोशियेसन की संमिति को पर्य्याप्त अधिकार देना होगा।"

इस प्रतिक्रियात्मक नीति को प्रकट करने पर भी बेक साहब को संतोष न हुआ और उन्होंने एक अंग्रेजी पत्र में लिखा :—

"कुछ वर्षों के भीतर देश में दो संस्थाओं का उदय हुआ। उनमें पहली तो भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस है और दूसरी गोकशी के विरोध का आन्दोलन। इनमें पहली अंग्रेजों और दूसरी मुसलमानों के विरुद्ध है। कांग्रेस का ध्येय अंग्रेजों से अधिकार छीनकर हिन्दुओं को देना है। इसने शस्त्र कानून (Arms Act) को रद्द कर देने, फौजी खर्च घटाने और सीमाप्रान्त की रक्षा का सैनिक खर्च कम करने की माँग की है। मुसलमानों को इन माँगों के साथ किसी प्रकार की सहानुभूति नहीं हो सकती। गोकशी बन्द कराने के विचार से हिन्दुओं ने मुसलमानों का बहिष्कार आरम्भ कर दिया है, जिसके कारण आजमगढ़ और बम्बई में दंगे हो गये। इसलिये मुसलमानों और अंग्रेजों के लिये यह आवश्यक है कि वे आपस में मिलकर बलपूर्वक आन्दोलन करनेवालों का दमन करें और देश को प्रजासत्तात्मक अधिकारों से वंचित रखें, जो इस देश और समाज के लिये अत्यन्त अनुपयुक्त और घातक है। इसलिये हम अंग्रेजों के प्रति अपनी राजभक्ति प्रकट करते हैं और आशा करते हैं कि अंग्रेजों और मुसलमानों की मित्रता चिरस्थायी होगी।"

बेक साहब को जहाँ भी अवसर मिला विषवमन करने से न चूके। इसीलिये ब्रिटेन में अंजुमने इस्लामिया की स्थापना की गई थी। वहाँ भी आपने एक भाषण में कहा :—

"अंग्रेजों और मुसलमानों की मैत्री साध्य और सम्भव है किन्तु, हिन्दू-मुसलिम एकता असम्भव है। क्योंकि इसके मूल में सामाजिक, धार्मिक और ऐतिहासिक कारण हैं।" ऐसे आन्दोलन का प्रभाव यह हुआ कि कांग्रेस का विरोध करने के लिये डिफेन्स एसोशियेसन कटिबद्ध हो गई।

मिस्टर बेक का अलीगढ़ की राजनीति में करीब पन्द्रह साल तक आधिपत्य था किन्तु इसके बाद भी वह अपना उद्योग करते रहे। दुर्भाग्यवश प्रोफेसर साहब की सन् १८९९ में मृत्यु हो गई। इसपर संसार-प्रसिद्ध "लण्डन टाइम्स" पत्र ने शोक प्रकट करते हुए कहा कि "साम्राज्य निर्माण का काम करनेवाला इङ्गलैण्ड का एक सच्चा सेवक आज गुजर गया। उसका यत्न विफल नहीं हुआ। यद्यपि मुसलमानों ने पहले सन्देह किया किन्तु मिस्टर बेक के चातुर्य्य, अध्यवसाय और इमानदारी ने उनके उद्योग को सफलीभूत किया।"

मिस्टर बेक के उत्तराधिकारी।

मिस्टर बेक ने अपना उत्तराधिकारी पहले ही से चुन रखा था। आपके बाद कालेज की प्रिंसपली का भार थियोडोर मारिसन साहब पर पड़ा। वे भी विलायत में इस हुनर की तालीम पा चुके थे। अलीगढ़ आने पर आप भी बेक साहब की नीति को प्रोत्साहित करते रहे। और जहाँ तक सम्भव हो सका मुसलमानों के हृदय में वैमनस्य का बीज बोते रहे। मारिसन साहब के पश्चात यह महत्व-पूर्ण काम मिस्टर आर्चीबाल्ड पर पड़ा, जो अंग्रेजों और मुसलिम हितों के रक्षार्थ तन मन से उद्योग करते रहे। शीघ्र ही सौभाग्य से इसका अवसर भी आया। सन् १९०६ में जब सुधारों की चरचा हो रही थी, उस समय नवाब मोहिसन मुल्क जो डिप्यूटेशन लेकर शिमले गये थे उसके विधायक और कर्त्ता आप ही थे। लार्ड मिंटो के रुख का जिक्र हम पहले ही कर चुके हैं। वाइसराय ने इस प्रार्थनापत्र को तभी लेना स्वीकार किया जब उन्हें इस बात का आश्वासन मिल गया कि उसमें सरकार की किसी प्रकार की आलोचना नहीं की गई है। इस प्रकार पूर्व योजना के अनुसार शिमले में आगा खाँ के नेतृत्व में ३५ मुसलमानों का एक डिप्यूटेशन वाइसराय से प्रार्थनापत्र लेकर मिला, जिसके रचयिता भारत के मुसलमानों की ओर से मिस्टर आर्चीबाल्ड, अलीगढ़ कालेज के प्रिंसिपल थे।

बंग-भंग और कर्जन।

एक ओर यह नाट्य हो रहा था, दूसरी ओर सरकार ने दूसरा नाटक आरम्भ किया, अर्थात कर्जन ने बंग भंग की घोषणा कर दी। बंगाल यद्यपि पहले ही कम्पनी की सेना से रौंदा जा चुका था, फिर भी उसके सुधारकों और नेताओं के उद्योग तथा अंग्रेजी-शिक्षा प्रचार के कारण राष्ट्रीय जागरण हो गया था। इसलिये बंग-विभाजन की योजना से बंगाली अत्यन्त क्षुब्ध हो उठे। सचमुच देखा जाय तो देश में राष्ट्रीय भावनाओं को जगाने का श्रेय बंगाल के नेताओं को ही है। लार्ड कर्जन ने यह सब बंगाल की शक्ति तोड़ने के विचार से किया था। लार्ड कर्जन की इस चाल का कारण यह था कि बंगालियों की प्रगतिशीलता देखकर लाट साहब को ईर्ष्या होती थी कि "भारत साम्राज्य की राजधानी कलकत्ते में राष्ट्रीय आन्दोलन के नाम पर यह सब होता रहे।" यह इन्हें असह्य था। ढाका को मुसलिम प्रान्त बनाकर बंगाल से अलग कर देने से यह मसला सहज में ही हल हो जाता था। बंगाली हिन्दू और मुसलमान बंगाल भर में कट मरते और सरकार का प्रयोजन सिद्ध हो जाता। इस भाँति राष्ट्रीय आन्दोलन का मूलोच्छेद हो जाता। सौभाग्यवश लाट साहब की चाल सफल न हुई। बंगाल और देश भर के हिन्दू मुसलमानों ने योजना का एक स्वर से विरोध किया। फिर भी लाट साहब ने ढाके में जाकर मुसलमानों को खूब सब्ज बाग दिखाया और अलग प्रान्त बनाने का आश्वासन दिया। यह बात विचारणीय है। इसी समय पञ्जाब, सिंध और सीमाप्रांत को भी मुसलिम प्रांत बनाने का प्रलोभन दिया गया। बंगाल पर ही यह कृपा सर्वप्रथम कैसे हुई यह आश्चर्यकी बात है। कारण, धर्म के अतिरिक्त वहाँ के हिन्दू-मुसलमानों की भाषा, खान-पान, रहन-सहन, और रीत-रिवाज परम्परा से एक रहा है। बंगाल में मुसलमानों की संख्या-वृद्धि तो धर्म-परिवर्तन के कारण ही हुई है, किन्तु धर्म परिवर्तन से किसी का खान-पान, बोल-चाल या सामाजिक आधार नहीं बदला करता।

सर हेनरी काटन ने इस सम्बन्ध में लिखा है कि "इस चाल का ध्येय बंगाल में उस सामाजिक एकता को चूर्ण करना था जो धार्मिक भिन्नता होने पर भी अटूट और अडिग थी। इसके लिये कोई राजकीय शासन सम्बन्धी कारण नहीं था। इसका कारण तो लार्ड कर्जन की नीति थी जो बंगालियों की बढ़ती हुई देशभक्ति और राष्ट्रीयता को कुचलना चाहती थी।"

कलकत्ते का प्रमुख अंग्रेजी पत्र स्टेटस्मैन भी सच कहने से अपने को न रोक सका और उसने लिख ही डाला कि "इस योजना का ध्येय पूर्वी बंगाल में मुसलिम शक्ति को दृढ़कर उनकी साम्प्रदायिक भावना को उत्तेजित करना है जिससे प्रगतिशील हिन्दुओं की बढ़ती हुई राष्ट्रीय शक्ति और देशभक्ति रोकी जा सके।"

यह साम्प्रदायिक विष-वृक्ष यथासमय पल्लवित हो उठा। १९०६ में जब सुधार करना अत्यन्त आवश्यक और अनिवार्य्य हो गया तब लार्ड मिंटो ने सुधारों की योजना बनाई। यद्यपि इसमें पार्लियामेण्टरी अधिकार और सत्ता देने का विचार न था। योजना का उद्देश्य सलाहकारी समिति बनाना था। इसमें सभी फिरकों, सम्प्रदायों और स्वार्थों का प्रतिनिधित्व रखा गया, जिसमें राजे, महाराजे, सेठ, साहूकार, महाजन, जमींदार इत्यादि का प्रतिनिधित्व विशेषरूप से था। इस सुधार में सबसे घातक वस्तु साम्प्रदायिक आधार पर प्रतिनिधित्व और चुनाव था, जिसे सरकार ने मुसलमानों की उन्नति के लिये स्वीकार किया। सरकार के पिट्ठू स्टेट्समैन ने भी इस नीति की निन्दा की और विरोध में कहा :—

"हम सरकार की इस नीति को जो समाज के एक अंग के साथ एक प्रकार का बर्ताव करे और दूसरे के साथ दूसरी तरह का, सन्देह और चिन्ता की दृष्टि से देखते हैं। सरकार सुधार और कौंसिलों के नाम पर चाहे जो भी करे पर इसका अर्थ तो यही लगाया जायगा कि सरकार मुसलमानों और जमीन्दारों को उनके अनुपात से अधिक प्रतिनिधित्व दे रही है।"

साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व के जनक—लार्ड मिंटो।

इससे यह भलीभाँति प्रकट होगा कि साम्प्रदायिक आधार पर प्रतिनिधित्व के वास्तविक जन्मदाता लार्ड मिंटो थे। उनके एक सहकारी सर हालैण्ड स्टुअर्ट ने भी एक योजना "देशियों से देशियों को लड़ाने की" (Native against native) नीति पर बनाई जिसमें इतने अनुत्तरदायित्वपूर्ण, असम्भव और प्रतिक्रियावादी सुझाव थे कि एक भी ऐसा व्यक्ति भारत में न था जिसने इसकी निन्दा और विरोध न किया हो। मद्रास-सरकार तो इस दौड़ में इतना आगे बढ़ गई कि उसने प्रत्येक जाति और पेशों के लिए अलग-अलग प्रतिनिधित्व की सिफारिश कर डाली। मुसलमानों का वह डेप्यूटेशन जो आगा खाँ के नेतृत्व में शिमले में लार्ड मिंटो से मिला था वह श्वेताङ्ग महाप्रभुओं का ही दूत था। इस तथ्य को अब सभी स्वीकार करते हैं। स्वर्गीय राम्जे मैकडालण्ड ने अपनी 'भारत जागृति' (The Awakening India) नामक पुस्तक में स्वीकार किया है कि मुसलमानों से अलग साम्प्रदायिकता की माँग करने को प्रोत्साहित करनेवाले अंग्रेजी सरकार के सूत्र-संचालक हो हैं। इस परदे की ओट में अंग्रेज-अधिकारी और उनके साथी जीहुजूर भी होते हैं, जिनका सूत्र-संचालन शिमलाशैल और लण्डन के व्हाइट हाल द्वारा किया जाता है।

लार्ड मारले ने जो स्वयम् संयुक्त-निर्वाचन के समर्थक और साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व के विरोधी थे, भारत सरकार की नीति से क्षुब्ध होकर कह ही डाला कि "यह भारत के वाइसराय ही हैं जिन्होंने पहले-पहल मुसलमानों के लिये साम्प्रदायिक आधार पर पृथक् प्रतिनिधित्व का राग अलापा है और मुसलमानों के विशेष प्रतिनिधित्व के लिये जोर दिया है।" इन बातों का परिणाम यह हुआ कि राजभक्ति की शपथ लेकर अलीगढ़ की नीति पर चलनेवाले साम्प्रदायिक अखाड़े में अड़ गये, उसी के परिणामस्वरूप लखनऊ का समझौता कांग्रेस और लीग के बीच साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में हुआ। सरकार की इतने दिनों से संचालित नीति का फल इस रूप में प्रकट हुआ इस

पर भी सरकार को संतोष न हुआ और मुसलिम-हितों को उत्तेजित करने के लिये जितना प्रतिनिधित्व समझौते की शर्तों के अनुसार तय हो चुका था, उससे अधिक देने की घोषणा कर दी गई। लार्ड मांटेगू और चेम्सफोर्ड ने भी साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व का अपनी रिपोर्ट में विरोध किया है और इस सम्बन्ध में अपनी रिपोर्ट में स्थान-स्थान पर शब्द-चातुरी भी दिखाई है। किन्तु यह तो स्पष्ट ही व्यक्त किया है कि जिस प्रान्त में कोई जाति बहुमत में हो वहाँ भी उसका प्रतिनिधित्व साम्प्रदायिक आधार पर हो। रिपोर्ट ने ईसाई, अंग्रेज और अर्द्ध गोरों के लिए भी अलग प्रतिनिधित्व की सिफारिश कर दी। इन सब बातों से स्पष्ट प्रगट होता है कि लार्ड मारले और मिन्टो की प्रगति और पूर्ण सुधारों की धारणा, साम्प्रदायिक मतभेद का न्यग्रोध उत्पन्न हो जाने पर फलीभूत हो उठी। यही कहलाती है राजनीति में दूरदर्शिता और कूट-नीति। इस प्रकार की चालें राष्ट्रीयता और प्रजातन्त्रात्मक सत्ता को निर्मूल करने के प्रबल अस्त्र हैं।

मान्ट फर्ड सुधारों ने भारतीय रंगमंच पर एक नया गुल खिलाया। इसमें इस बात का यत्न किया गया कि असली शक्ति सरकार और केन्द्र में रहे। जनता को भुलावा देने के लिये कुछ साधारण चीजें व्यवस्थापिका सभाओं को दी जाँय जिनसे हिन्दुस्तानी यह समझने लगें कि सचमुच सरकार अपने वचन का पालन कर अधिकार दे रही है और लोकतन्त्रात्मक सत्ता की जड़ें सींच रही है। इस रोटी के टुकड़े पर हिन्दुस्तान के राजनैतिक दल टूट पड़े। लखनऊ कांग्रेस में जो सब दलों में मेल हो गया था उसमें सुधारों की घोषणा होते ही फूट पड़ गई। उधर मांटेगू साहब ने हिन्दू पढ़े-लिखे लोगों में भी एक सरकार समर्थक वर्ग की उत्पत्ति का बीजारोपण किया—वह माडरेट दल था। सौभाग्य-वश यह दल अत्यन्त अल्पजीवी निकला। मुसलमानों में तो पहले ही से इतनी साम्प्रदायिक भावनाएँ भर दी गई थीं कि वे राष्ट्र की भावनाओं के सम्मुख ऊँची चट्टान की भाँति डटे रहे। हिन्दुओं में भी फूट डालने का पूर्ण उद्योग किया गया। इसी लक्ष्य से मद्रास में अब्राह्मण और ब्राह्मणों में फूट डालने के

लिये जस्टिस पार्टी का जन्म हुआ। जस्टिस पार्टी का लक्ष्य ब्राह्मणों की बढ़ती हुई शक्ति को तोड़ना था। यद्यपि उनमें अछूतों के प्रति वैसे ही घृणा के भाव थे जैसे कि ब्राह्मणों में; फिर भी वे अपने को न्याय का पुजारी कहते थे।

सन् १९१९ का सुधार जो प्रान्तीय सुधारों का जन्मदाता कहा जाता है, ऐतिहासिक दृष्टि से विचित्र है। इसने स्पष्टरूप से दो बातें की। पहली यह कि असली अधिकार सरकार के हाथों रखा। निर्वाचित काउन्सिलों में दिखावे के लिये कुछ चीजें दी गईं। दूसरी यह कि साम्प्रदायिक भाव को बढ़ाकर, वर्ग-वर्ग, जाति-जाति, और स्वार्थों में मतभेद उत्पन्न किया गया। इसके सम्बन्ध में मद्रास सरकार के भूतपूर्व मन्त्री सर के० वी० रेड्डी ने स्पष्ट स्वीकार किया कि:—

"मैं योजना और सुधार मन्त्री हूँ किन्तु जङ्गलों का शासन हमारे अधिकार में नहीं। मैं उद्योग-मन्त्री हूँ पर बिना कल कारखानों के, कारखाने सरकार के संरक्षित विषय हैं, बिना कारखानों के उद्योग-मन्त्री किस चीज पर शासन करेगा। मैं कृषि का मन्त्री हूँ किन्तु नहर का महकमा छोड़कर। मैं उद्योग धन्धों का जिम्मेदार हूँ पर बिजली छोड़कर जिसका शासन लाट बहादुर करते हैं। मजदूर और व्यवसाय का विषय भी सरकार ने संरक्षित रखा है।"[1]

इस वक्तव्य से यह प्रकट होगा कि सरकार ने कितने टुकड़ों में विभाजन किया और अधिकार के नाम पर सचमुच कुछ नहीं दिया। इन सुधारों से जनता में क्षोभ फैल गया। उधर डायर की तानाशाही के कारण पंजाब में जलियाँवाला बाग काण्ड हो गया। इस काण्ड ने असंतोषाग्नि में आहुती का काम किया। जनता में सरकार के प्रति व्यापक विरोध की लहर उत्पन्न हो गई। यही क्षोभ और अशान्ति की भावना सन् १९२१ के असहयोग आन्दोलन का प्रतीक है।

योरोपीय युद्ध समाप्त हो चुका था। बड़े युद्धों की समाप्ति पर प्रायः सामा-

---

१ प्रहाम पोल की पुस्तक (Problem of India) के आधार पर।

जिक, आर्थिक और राजनैतिक हलचल सी मच जाया करती है। योरोप की हलचल का भारत पर भी प्रभाव पड़ा। रूस में क्रान्ति होकर जारशाही का अन्त हो चुका था ; टर्की में खलीफा का 'पान-इसलाम' आन्दोलन मृतप्राय हो रहा था। जर्मनों की पराजय के कारण तुर्की रौंदा जा चुका था। इंग्लैण्ड में भी सरकार की नीति में परिवर्तन होने की सम्भावना प्रतीत हुई और लायडजार्ज के स्थान पर अर्ल बाल्डविन प्रधान मन्त्री चुने गये, किन्तु अंग्रेजों की भारत-नीति में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं हुआ। विभाग और शासन (Divide et impera) की नीति को ही प्रोत्साहन दिया जाता रहा।

देश की बढ़ती हुई राजनैतिक माँगों का दमन करने के लिये साम्प्रदायिक तन्त्री झंकृत की गई। जो तार ढीले हो रहे थे उनको चढ़ाया गया और चढ़े हुए तारों को उतारा गया। एक प्रकार का रूपक भी यह रचा गया कि तरह-तरह की माँगों को ठण्डा करने के लिये अनेक जाँच कमेटियों का संगठन हुआ और उनके रिपोर्ट की प्रतीक्षा में समय टाला गया।

भारत के मुसलमानों को यद्यपि राजभक्ति और साम्प्रदायिकता, फूट और बैर का पाठ ब्रिटिश-नीतिज्ञ अध्यापक पढ़ाते रहे फिर भी योरोपीय घटना का ऐसा प्रभाव पड़ा कि मुसलमानों का रुख अंग्रेजों के विरुद्ध हो ही गया। मुसलमानों की सहानुभूति स्वभावतः तुर्की के साथ थी क्योंकि खलीफा ही अब तक इस्लाम जगत् के सर्वशक्तिमान् नैतिक और आध्यात्मिक महाप्रभु समझे जाते थे। इसी समय लीबिया का युद्ध और मिश्र में तुर्की की सेना की रुकावट का मुसलिम-जगत् पर विपरीत प्रभाव पड़ा और जनचेतन की जागृति हुई। यह प्रतिक्रिया पान् इस्लामिज्म के रूप में प्रकट हुई। मुसलिम, तुर्की के खलीफा के झंडे के नीचे एक बार फिर मुसलिम साम्राज्य का स्वप्न देखने लगे। पान इस्लामिज्म आन्दोलन के जन्मदाता सैय्यद जमीलुद्दीन थे। इस आन्दोलन का ध्येय योरप में बढ़ते हुए ईसाई राष्ट्रों के प्रभाव को नष्ट करना था। अंग्रेज चाहते थे कि भूमध्य सागर पर प्रभुता बनाये रखने के लिये तुर्क साम्राज्य

के भूमध्य तटवर्ती प्रदेश और मध्यपूर्व के मुस्लिम राष्ट्रों की नकेल अपने हाथ में रखे। इन भावनाओं से मुसलमानों को और विशेपकर भारतीत मुसलमानों को अंग्रेजों से विशेष चिढ़ हो गई।

भारत में किस प्रकार अंग्रेज कूटनीतिज्ञ फूट और वैर फैला रहे थे, वह ऊपर कहा जा चुका है। भारतीय मुसलमानों का यह विरोध का भाव महायुद्ध के बाद खिलाफत आन्दोलन के रूप में प्रकट हुआ और भारत के मुसलमान राजभक्ति में पूर्ण सहयोग न दे सके। अस्तु, अंग्रेजों ने एक ऐसा वातावरण अवश्य उत्पन्न कर दिया जो हिन्दू-मुसलिम-समस्या को इस युग में भी अभेद्य बनाये हुए है। इसका परिणाम यह हुआ है कि आज मुसलमान यदि अंग्रेजों के विरोधी हैं तो वे हिन्दुओं को भी नहीं अपना सके और न भारत को अपनी मातृभूमि ही समझ सके हैं। हिन्दुओं में भी यह कमजोरी बनी हुई है कि वे मुसलमानों को अपने में पचाकार एक ऐसी सभ्यता और संस्कृति का सृजन न कर सके जो अपने समन्वय और सामञ्जस्य से नवराष्ट्र की चेतना का भाव जागृत कर सकती। मुसलिम समाज की यह मनोवृत्ति आज भी वैसी ही बनी हुई है और ब्रिटिश-विरोधी भावनाओं के होते हुए भी अभी तक मुसलिम जाति और समाज साम्प्रदायिकता के दलदल में फँसा हुआ है। ब्रिटेन विरोध की भावना को लीग ने भी उपनिवेशिक स्वराज्य की माँग प्रकट कर दी थी, फिर भी वह पृथक् निर्वाचन, प्रतिनिधित्व और नौकरियों में अधिकाधिक मुसलमानों की माँग के गोरखधन्धे में फँसी रही, फिर भी मुसलिम नेता हिन्दू मुसलिम एकता की आवश्यकता समझते रहे हैं। इसीलिये जब कभी समझौता हुआ उसका आधार साम्प्रदायिक ही रहा। इस प्रकार भारतीय एकता विच्छिन्न करने के लिये राजनीति के चतुरंग प्रयोग में अंग्रेजों को भारत में पूर्ण सफलता मिली। यह होते हुए भी अंग्रेजों की कूट नीति भारत में राष्ट्रीय प्रगति का किसी प्रकार भी दमन न कर सकी। दमन से उत्पन्न असंतोष की अग्नि भीतर ही भीतर सुलगती रही और अवसर पाते ही देश

व्यापी आन्दोलन का रूप लेती रही, जिसमें हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, सिख, पारसी और अछूत सभी भाग लेते रहे हैं।

पहले असहयोग आन्दोलन को जो सन् १९२१ में हुआ, क्रान्ति के इतिहास में दलित देशों के लिए एक नया अध्याय है। बापू उन प्रयोगों को जिनका उपयोग दक्षिण अफ्रीका में किया गया था, भारत में बड़े पैमाने पर आजमाना चाहते थे। इसमें उन्हें मुसलमानों का भी सहयोग मिल गया।

अलीबन्धु और मौलाना आजाद जैसे तुर्कों से हमदर्दी रखनेवाले मुसलमान युद्धकाल में कैद कर लिये गये थे, वे छूटकर आ गये। तुर्की और मिश्र, ईरान, ईराक के साथ मित्रराष्ट्रों ने जैसा बर्ताव किया और उन्हें जिन अपमानजनक शर्तों के आगे घुटने टेकने के लिए मजबूर किया; हिन्दुस्तान के मुसलमान इस पर अत्यन्त क्रुद्ध हुए और कांग्रेस आन्दोलन में सम्मिलित हो गये।

इस आन्दोलन की सबसे बड़ी सफलता यह हुई कि (१) हमारा राष्ट्रवादीदल अत्यन्त प्रबल हो गया। (२) देश को मोतीलाल, जवाहर, देशबन्धु दास और पटेलबन्धु तथा सबसे बढ़कर युगप्रवर्तक बापू की निधि मिली। (३) देश के एक ओर से दूसरी छोर तक राष्ट्रीय भावना की लहर फैल गई। (४) खादी और चर्खे के रूप में पूँजी और साम्राज्यवाद को पछाड़ने के लिए एक बड़ा अमोघ अस्त्र मिला और (५) सबसे बड़ी चीज जो मिली वह है राजनैतिक आन्दोलन का अहिंसात्मक रूप। आज इसके सिद्धान्तों को पश्चिम के लोभी, रक्त-पिपासु साम्राज्यवादी भी अपने उद्धार का साधन समझ रहे हैं। हाल ही में अमेरिकन सेना के एडमिरल निमिज ने गांधी जी के चित्र को देखकर कहा—"मैं चाहता हूँ, मैं भी गांधी जी का समर्थक और अनुयायी होता। आज यदि दुनिया गांधी जी के सिद्धान्तों पर चलती तो निश्चय ही इस संहार और रक्तपात से बच जाती।"

सरकार ने इसे कुचलने के लिए साम्प्रदायिक द्वेष फैलाने की नीति बरती। कांग्रेस और आन्दोलनकारियों में अनेक खुफिया और वेष बदल कर सरकारी आदमी भी भरे गये जिन्होंने अवसर पाते ही जनता को उपद्रव

और लूट पाट करने के लिए उभाड़ा। दूसरी ओर मुसलमानों की पीठ ठोंकी गयी। फिर क्या था ? देश में साम्प्रदायिक दंगे और उपद्रवों की बाढ़ आ गई। विवश होकर गांधीजी को आन्दोलन स्थगित कर देना पड़ा; क्योंकि वह तो उनके अहिंसा के सिद्धान्तों के मूल में ही कुठाराघात कर रहा था। निश्चय ही इस आन्दोलन का स्पष्ट निष्कर्ष यह निकला कि भारतीय-जीवन में अभी राष्ट्रीयता का स्रोत सूखा नहीं है और दूसरे यह कि सरकार के कुचक्रों के होते हुए भी जनता अपनी मातृभूमि की स्वाधीनता के लिये किये गये आह्वान पर अपना सिर हँसते-हँसते निछावर कर देगी।

× × ×

सरकार की ओर से सन् १९१९ से आगे साम्प्रदायिक भावनाओं की वृद्धि करने के लिए कैसा-कैसा षड्यन्त्र होता रहा उसका अब उल्लेख करेंगे। १९१९ के निर्वाचन के अनुसार प्रतिनिधित्व दस भागों में तोड़ दिया गया। पुनः यह १७ बराबर भागों में विभक्त[1] किया गया। किसी प्रकार की माँग न होते हुए भी स्त्रियों और ईसाइयों के लिए अलग सीटें दी गयीं। हिन्दू जाति भी अछूतों को अलग कर देने से कमजोर होने लगी, क्योंकि सर्वत्र हिन्दुओं और अछूतों में भी सीटों का बँटवारा हुआ। यह कहना अनुचित न होगा कि धर्म, जाति और पेशा तथा स्त्री-पुरुष भेद के अनुसार व्यवस्थापिका सभाओं के लिए प्रतिनिधित्व का आयोजन किया गया। लखनऊ के समझौते के अनुसार मुसलमानों को विशेष प्रतिनिधित्व उन प्रान्तों में दिया गया जहाँ वे अल्पसंख्यक थे, और बंगाल, पंजाब में बहुसंख्यक होने पर भी उनके लिए पृथक निर्वाचन की व्यवस्था की गयी। मुसलमानों को इस प्रकार का प्रतिनिधित्व प्रदान किया गया जिससे उनका बहुमत निर्वाचन क्षेत्रों में जाने पर भी न टूट सके। इतना ही नहीं, उन प्रान्तों में भी जहाँ मुसलमानों का बहुमत था, मुसलमानों को विशेषाधिकार दिये गये। यह बहुमत उनको कानूनी तरीके से दिया गया जिससे इस व्यवस्था में किसी प्रकार का हस्तक्षेप न किया जा सके। बंगाल और पंजाब के लिए तो यह चीज विशेष

प्रकार से तय्यार की गई कि इन दोनों प्रान्तों में इसी प्रश्न को लेकर जनता अपना सिर पीटती रहे और इसी बहाने राष्ट्रीय भावनायें दबी रहें। राष्ट्रीय भावनाओं और माँगों को रोकने के लिए सरकारी ऊपरी सभायें (Upper chambers) बनी, जिनमें यह आशा की गयी थी कि उनमें प्रतिक्रियावादियों का ही बहुमत होगा।

इसी प्रकार के उथल-पुथल में १९२९ में साइमन कमीशन आया जिसका एक सदस्य भी हिन्दुस्तानी न था। इसके लिए सरकार की देश भर में सब लोगों ने बिना किसी भेद-भाव के खुलकर निन्दा की और कमीशन को लौट जाने के नारे लगाये। इसी बीच सन् १९२९ में कांग्रेस ने अपने वार्षिक अधिवेशन में जो लाहौर में हुआ था "पूर्ण स्वतन्त्रता" का प्रस्ताव पास किया। इस अधिवेशन का सभापतित्व पं० जवाहरलाल ने किया था। यह उग्र कदम सरकार की सर्वदल सम्मेलन की सिफारिशों की उपेक्षा करने के कारण उठाया गया।

सन् ३० में एक बार आजादी की लहर से देश फिर आन्दोलित हो उठा। सरकार ने राष्ट्रीय आन्दोलन को कुचलने के लिए जिन पाशविक उपायों को अंगीकार किया उनकी कल्पना नहीं की जा सकती। इस प्रकार देश में आर्डिनेंस की बाढ़ आ गयी और फौजी कानून से देश में शासन होने लगा। दमन में असफल होने के कारण सरकार ने अन्य उपायों से भी काम लिया और यह था गोलमेज सभा का आयोजन। पहली गोलमेज में कांग्रेस के नेताओं के सम्मिलित न होने के कारण सफलता नहीं मिली। विवश होकर कांग्रेस से सरकार को आरसी समझौता करना ही पड़ा और गांधी जी, मालवीय जी, सरोजनी नायडू इत्यादि नेता गोलमेज में सम्मिलित होने के लिए लन्दन में आमन्त्रित किए गये। वहाँ भी साम्प्रदायिक प्रश्न लेकर सर मुहम्मद इकबाल और जिन्ना, सर फजले हुसेन और शफी प्रभृति ने भारी रुकावट खड़ी की। अछूतों का प्रतिनिधित्व अम्बेडकर जैसे देशहितैषी

और अछूतोद्धारक कर रहे थे। इन लोगों ने परोक्ष और अपरोक्ष रूप से अपने प्रभु के संकेत से गत्यवरोध उत्पन्न करने में सहायता दी।

अन्त में कांग्रेसी नेताओं को निराश होकर वापस आना पड़ा। गांधी जी अभी भारत पहुँचे भी नहीं थे कि देश में धर-पकड़ की बाजार फिर गरम हो उठी। अस्तु, कांग्रेस को पुन: आन्दोलन करने की घोषणा करनी पड़ी। इस प्रकार यह देखा जा रहा है कि सरकार की कुटिल नीति के कारण देश के सबसे उत्तम मस्तिष्क और विचारशील व्यक्तियों के जीवन का सर्वोत्तम और अमूल्य समय सरकारी आतिथ्य भवनों (जेलों) में ही बीतता रहा है। सन्तोष यही है कि सरकार इस रोग की जितनी ही औषधि करती है वह उतना ही बढ़ता जा रहा है।

गांधी जी जेल की सजा भुगत रहे थे। ब्रिटिश प्रधान मन्त्री रामजे मेक-डानल्ड जो समाजवादी थे और भारत का अपने को सच्चा मित्र और हितैषी होने की घोषणा बारबार कर चुके थे 'साम्प्रदायिक निर्णय' (Communal award) दे डाला। गांधी जी ने इसे अबाध्य कराने के लिए यरवदा जेल में अनशन किया। परिणाम स्वरूप सरकार को सत्यार्थी के सत्य के आगे झुकना ही पड़ा। इस निर्णय में भी पुरानी नीति की पुनरावृत्ति की गयी थी। बेचारे रामजे मेकडानल्ड की सब उदारता और वचन-प्रचुरता का तथ्य सन् १९३५ के शासन-विधान के रूप में प्रकट हुआ जो कहने के लिए प्रान्तीय अधिकार और स्वतन्त्रता देता है; किन्तु इसमें कितना तथ्य और सत्य का अंश है इसका स्वांग हम इन नौ सालों के भीतर भली-भाँति देख चुके हैं।

सन् ३५ के सुधारों के आगे सबसे बड़ा सब्ज बाग लीग की पाकिस्तान की माँग है। अभी तक मुसलिम लीग जो कि केवल कागज पर ही थी सक्रिय नेतृत्व लेकर मैदान में आ कूदी। लन्दन की गोलमेज सभा में पाकिस्तान के स्वरूप की रूप रेखा प्रकट की जा चुकी थी। इसमें सक्रिय भाग लेनेवाले सर मुहम्मद इकबाल, सर सिकन्दर हयात और जिन्ना प्रभृति अटल सरकार-भक्त मुसलमान ही थे। स्मरण रहे कि सर मुहम्मद इकबाल वही

प्रसिद्ध विद्वान् और दार्शनिक थे जिनकी धमनियों में किसी समय देशभक्ति का रक्त भी प्रवाहित होता था। उसी युग में आपने "सारे जहाँ से अच्छा यह हिन्दोस्ताँ हमारा" नामक नज़्म की रचना की थी किन्तु आगे चलकर आपकी नीति बदल गई और आप लीग के पूर्ण समर्थक हो गये।

सन् १६३७ के चुनावों में कांग्रेस की सफलता देखकर सरकार विकल हो उठी। इस बार फिर साम्प्रदायिक "विटो" ने सरकार को डूबने से बचाया। जिन्ना साहब अब पूर्ण रूप से लीग और पाकिस्तान का प्रोग्राम लेकर मैदान में आये और कांग्रेस के विरुद्ध लीग की क़िलेबन्दी करने के लिये एड़ी चोटी का जोर लगा दिया, फिर भी लीग को किंचित सफलता न मिली। यद्यपि चुनावमें अपने टिकट पर लीग कठिनतासे दो प्रतिशत सीटें प्राप्त कर सकी फिर भी अपना जोर लगाती ही रही जिसमें उसे पंजाब और सीमाप्रान्त छोड़कर यू० पी० और बंगाल में अच्छी सफलता मिली और सिन्ध में भी लीगी मन्त्रिमण्डल बना। इन मण्डलों की कलुष कहानी और लीग की प्रतिक्रिया-वादिता का विस्तृत वर्णन हम आगे के अध्याय में करेंगे। फिर भी यू० पी० या अन्य सूबों में लीग टिकट पर बहुत कम सीटें मुसलमान पा सके। बंगाल में कृषक प्रजा, पंजाब में युनियनिस्ट और सीमा प्रान्त में खुदाई खिदमतगारों की शानदार जीत हुई। जिन्ना साहब को आरम्भ में असफलता मिली। इस प्रकार की बढ़ती हुई राष्ट्रीयता और मुसलमानों में कांग्रेस के बढ़ते हुये प्रभाव को नष्ट करने के लिए कांग्रेस को "शुद्ध हिन्दू" संस्था और हिन्दू हितकारिणी होने का मुसलमानों में प्रचार किया गया। स्थान-स्थान पर साम्प्रदायिक दंगों की आग भड़काई गईं। कांग्रेस को बदनाम करने के लिये कोई बात नहीं उठाई गई; फिर भी इमानदारी से कांग्रेस अपनी जिम्मेदारी सँभालती ही रही और जनता की भलाई के लिये जहाँ तक हो सकता था उद्योग करती रही है। कांग्रेस के ढाई साल के शासनकाल में जनता में जो जागृति हुई वह आज को हमारी दृढ़ राष्ट्रीयता है जिसका विस्तार वेग से बढ़ता ही जा रहा है।

इसी बीच योरोप में द्वितीय महायुद्ध आरम्भ हो गया। जर्मनी की सेनायें जिनका संगठन नाजी प्रणाली के अनुसार हिटलर गत दस वर्ष से कर रहा था पोलैण्ड पर चढ़ गईं। पोलैण्ड की पृष्ठपोषक मृतप्राय लीग आफ नेशन्स और बृटिश सरकार थी। पोलैण्ड का मसला हल करने के लिये नेविल चेम्बरलेन साहब बरलिन गये किन्तु उन्हें हताश होकर लौट आना पड़ा। समस्या किसी प्रकार हल न हो सकी। नाजी सेना ने, योरोपीय रियासतों पर अपनी निपुण यान्त्रिक सेना के आधार और उत्तम सैनिक संगठन के कारण जिधर ही दृष्टि डाली, सफलताने उनका स्वागत किया। रिबनट्राप और गोयरिङ्ग का नाम योरोप में आतंक हो गया; हिटलर का कहना ही क्या? छोटी-छोटी रियासतों को चट करने के बाद नाजी फ्रांस पर कूद पड़े और ऐसा सैनिक प्रयोग आरम्भ किया कि गर्वीले फ्रांसीसियों को शीघ्र ही नाजियों के आगे घुटने टेक देने पड़े। इसी युद्ध में अंग्रेजों को डंकिर्क में सबसे बड़ी हार खानी पड़ी जिसमें वे पीठ दिखाकर मैदान से भागे। क्षण भर के लिये बृटिश कूट नीति के विफल होने के लक्षण प्रकट होने लगे। इंग्लैण्ड की अवस्था दयनीय हो रही थी क्योंकि इस समय न उसके पास सैनिक थे, न गोला बारूद और न जहाज ही जिससे वे सुसज्जित और सुसंगठित जर्मन सैन्य बल का मुकाबला करते। इस राष्ट्रीय संकट की घड़ी में विन्स्टेन चर्चिल ब्रिटेन के प्रधान मन्त्री निर्वाचित हुए। चर्चिल ने अपनी कूट नीति से बृटेन के राष्ट्रीय जीवन में नई जान फूक दी।

सर स्टाफर्ड क्रिप्स कांग्रेस को तोड़ने के लिये सुधार का मसविदा लेकर भारत भेजे गये। इस समय अमेरिका युद्ध में नहीं कूदा था। रूसियों को जर्मन शक्ति का अनुमान न होने के कारण नित्य पराजित होना पड़ रहा था। अंग्रेजों के उद्धार का भारत की सहायता के सिवा कोई उपाय नहीं था। भारत में स्टाफर्ड क्रिप्स के प्रस्तावों की प्रथम धारणा में बहुत से लोग आकृष्ट हुए किन्तु विश्लेषण करने पर योजना की पोल खुल गई। कांग्रेस की कार्य्य-समिति दिल्ली में सर स्टाफर्ड से विचार विनिमय करती रही। गान्धीजी ने इसकी

तथ्यहीनता पर यह कहा कि "यह एक ऐसे बैंक का चेक है जो किसी अनिश्चित भविष्य तिथि पर कदाचित ही भुन सके।" कांग्रेस के अन्य नेताओं से भी पिछले काँटे सर स्टाफर्ड क्रिप्स ने जो रुख धारण किया उससे कटुता और अविश्वास ही उत्पन्न हुआ। भारतीय राजनीतिज्ञ सर स्टाफर्ड के चकमें में न आ सके और उन्हें निराश होकर खाली हाथ लौटना पड़ा।

सन् ३९ से पूर्व ही कांग्रेस यह घोषणा कर चुकी थी कि किसी भी युद्ध में जिसमें अंग्रेज शामिल होंगे भारत से सहायता लेने के लिये उन्हें पहले अपने उद्देश्य को स्पष्ट प्रकट करना होगा कि भारत के प्रति उनकी नीति क्या होगी ? युद्ध आरम्भ हो जाने पर भारत को सम्मिलित होने के लिये सरकार की ओर से यत्न होने लगा। युद्धनीति स्पष्ट न करने के कारण उन सात प्रान्तों में जहाँ कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल थे, विरोध प्रकट करने के लिये त्याग पत्र देकर अलग हो गये जिससे बिना किसी अवरोध के भारत रक्षा कानून जैसे कानूनों की बाढ़ आ गई। कांग्रेस ने प्रस्ताव पास किया कि इस बार सामूहिक सत्याग्रह न कर व्यक्तिगत सत्याग्रह होगा और सत्याग्रही युद्ध-विरोधी नारे लगायेंगे। इसपर देशव्यापी आंदोलन छिड़ गया और नेताओं तथा सत्याग्रहियों से जेल भर गये। किन्तु सरकार को विवश होकर इन्हें छोड़ना पड़ा। मुक्त कांग्रेसी छूट कर पुनः मन्त्रिमण्डल न बना सके और न सरकारको युद्ध में सहायता ही दे सके क्यों कि अभी भी सरकार की नीति कांग्रेस की माँग को टालने की ही रही। इसलिये कांग्रेस की बढ़ती हुई शक्ति का संहार करने के लिये क्रिप्स प्रस्तावों का स्वांग रचा गया। ऐसे अवसरों के लिए अंग्रेजों का ट्रम्प कार्ड प्रायः मिस्टर जिन्ना के हाथ रहा करता है। अबकी बार जिन्ना के एक सहायक और प्रकट हो गये हैं जिनका नाम बी० आर० अम्बेडकर है; आप इस समय भारत-सरकार के श्रम मन्त्री हैं और अछूतों के उद्धारक कहे जाते हैं। वे भी अपने विचित्र तर्क से अड़ंगा लगाने की नीति में जिन्ना के समान ही सरकार के सहायक हैं।

इन प्रस्तावों के मूल में भारत को खण्ड खण्ड में विभक्त करने का

बीजारोपण किया गया था। सन् ३० से ही सरकार इस उद्योग में थी कि मुसल-मान और हिन्दुओं के बीच ऐसी खाईं खोदी जाय जो कभी न बाँधी जा सके। लीगके भाव पहले ही प्रकट हो चुके थे। इसमें आवाज उठानेवाले पहले पहल पञ्जाब के चौधरी रहमतअली थे जो उस समय केम्ब्रिज में एक छात्र थे। आपने हिंदू भारत और "मुसलिम भारत" की योजना प्रकट की किन्तु इसमें उन्हें कहीं सक्रिय सहयोग नहीं प्राप्त हो सका; इतनी बात अवश्य हुई कि इससे मुसलमानों में पृथकत्व की भावना प्रबल होने लगी और भारत के मुसलमान फिर मुसलिम राज्य का स्वप्न देखने लगे। सन् १६४० में हैदराबाद के डाक्टर सैयद अब्दुल लतीफ ने भारत को खण्ड-खण्ड कर देने की योजना उपस्थित की। इन दिनों पंजाब से सेना में अधिकाधिक सैनिक भरती हो रही थी। सर सिकन्दर के नक्षत्र सरकार के क्षेत्रों में प्रबल हो रहे थे। उन्होंने पंजाब की ओर विशेष ध्यान रख कर एक योजना उपस्थित की वह भी पाकिस्तान से मिलती जुलती है। किन्तु लीग जैसी अनर्गल नहीं। "पंजाबी" ने भी एक विभाजन की योजना उपस्थित की। कहना नहीं होगा कि प्रत्येक प्रान्त के मुसलमान एक न एक योजना बना कर खण्डित भारत या पाकिस्तान का स्वप्न देखने लगे। इन योजनाओं में एक चीज स्पष्ट रूप से मिलेगी वह है इनके लक्ष्य में "स्वाधीनता का अभाव"। सर सिकन्दर तो अपनी योजना में उपनिवेशिक अधिकार की ही याचना करते रहे हैं। इन सब के सहायक मिस्टर जिन्ना हैं जिन्हें पार्लियामेण्टरी विधान का पक्व अनुभव है और जो लीग के सर्वेसर्वा अधिनायक हैं। पाकिस्तान योजना का इतना प्रचार हुआ है कि लीगी मुसलमान भेड़ की भाँति पाकिस्तान शब्द की ओर दौड़ने लगे हैं यद्यपि अभी पाकिस्तान की परिभाषा का स्पष्ट विवेचन नहीं हुआ है। जिन्ना साहब से जब भी यह बात स्पष्ट करने को कही गई वह एक न एक बहाना कर टालते रहे हैं। जो कुछ भी हो पाकिस्तान से मुसलमानों का चाहे हित हो या अहित, किन्तु भारत की स्वाधीनता के मार्ग में यह बहुत बड़ी चट्टान है जिसका हटाना आवश्यक है।

इन पृष्ठों में हम विस्तार से कह चुके हैं कि अंग्रेजों की नीति का ध्येय यही रहा है कि हिन्दू मुसलमानों में कभी एकता न हो और उनका भेद जितना ही तीव्र हो स्वेतांग महाप्रभुओं के हित में वह उतना ही अनुकूल और लाभप्रद होगा। एक वर्ग को दूसरे वर्ग से लड़ाते रहने में शासन की जड़ मजबूत होती है यद्यपि जनता का शोषण होता है, वह निःशक्त और निस्तेज होती है। दूसरा पहलू यह भी है कि दमन और अड़चनों से यदि जाति बिलकुल मृत नहीं हो गई है तो राष्ट्रीय भावनाओं की दृढ़ता और वृद्धि होती है। भारत की आज यही दशा है। यद्यपि सरकार की ओर से दमन चक्रपूर्ण रूप से चल रहा है फिर भी राष्ट्रीय भावनाओं का स्रोत आज जिस वेग से देश में ओत प्रोत हो रहा है उसे देख कर शासक वर्ग घबरा गये हैं और तरह तरह की टालमटाल कर युद्ध जनित नियमों से लाभ उठा रहे हैं।

रही लीग की बात, वह जिन्ना के नेतृत्व में जिस दासत्व मनोवृत्ति का परिचय दे रही है, यदि समय से उसके प्रतिकूल मुसलमानों में चेतना न हुई तो निश्चय ही वह उन्हें रसातल की ओर ले जायगी। यदि मुसलमान यह समझते हों कि अंग्रेज उन्हें पाकिस्तान या ऐसी किसी और योजना को कार्यान्वित करने में सहायक होंगे तो यह उनकी भूल है। निश्चय ही अंग्रेज मुसलमानों के तभी तक सहायक हैं जब तक हिन्दू और कांग्रेस उनके स्वार्थ में बाधक हो रहे हैं। कभी वह समय भी आ सकता है जब अंग्रेज मुसलमानों से भी वैसी ही घृणा करने लगें जैसा आज कांग्रेस और हिंदुओं से करते हैं। जिन्ना की दूषित मनोवृत्ति का इससे बढ़कर और कौन उदाहरण हो सकता है कि सन् ३९ में जब कांग्रेस मन्त्रिमण्डलों ने पद-त्याग किया उस समय आपने "मुक्ति दिवस" और "प्रार्थना दिवस" मनाने की घोषणा कर दी। इसमें लीग को सफलता तो नहीं मिली परन्तु उसकी ओछी मनोवृत्ति और संकीर्णता का परिचय अवश्य मिल गया।

सन् ४२ के स्वतन्त्रता आन्दोलन की चरचा हम इस पुस्तक में करने से विवश हैं क्योंकि वह इस पुस्तक का विषय नहीं; हमारी वह रचना भी तैय्यार

हो रही है यदि पाठक पसन्द करेंगे तो समय पर उसे भी हम भेंट करेंगे। कांग्रेस के निष्कासन के पश्चात् लीग को एक प्रकार खुला मैदान मिल गया। सरकार तथा सरकारी अधिकारियों के प्रोत्साहन द्वारा लीग का कलुषित प्रचार होता रहा। बंगाल, सिन्ध में लीगी मन्त्रिमण्डलोंने किस प्रकार अपने अधिकारों का दुरुपयोग किया है कहना अनावश्यक होगा।

बंगाल में इतना बड़ा अकाल कदाचित ही कभी पड़ा हो जिसमें तीस, चालीस लाख नर-नारी अन्न के अभाव में; जब अन्न सरकारी गोदामों में सड़ रहा था तड़प तड़प कर मरें हों; लीग के मन्त्री यह जान कर भी अनजान बने रहे और सरकार की हाँ में हाँ मिलाते रहे। एक बार भी उनकी जिह्वा यह कहने के लिये न खुली कि वे दुर्भिक्ष रोकने के लिये क्या करते रहे हैं? यदि सरकार उनकी नहीं सुनती थी तो क्या उनके लिये यह उचित नहीं था कि वे पद त्याग कर जनता के सम्मुख अपनी सफाई देते? इस सम्बन्ध में हम फज़लुल हक़ और अलाबक्स की चरचा किये बिना नहीं रह सकते क्योंकि जब उन्होंने देखा कि गवर्नर मनमानी करेंगे, उन्होंने पद त्याग कर सरकारी नीति की असलियत प्रकट कर दी। बंगाल की जनता और मुसलमान ही बतावें कि क्या ऐसे अनुत्तरदायि स्वार्थी और अधिकार-लोलुप प्रतिनिधियों से किसी प्रकार उनके हितों की रक्षा हो सकती है?

सिंध में हिदायतुल्ला मन्त्रिमण्डल का रेकार्ड इससे उज्ज्वल नहीं है। पञ्जाब में यद्यपि युनियनिस्ट मन्त्रिमण्डल था वह भी राष्ट्रीय विरोधी ही रहा है। धन्य हैं लीग के फ्यूरर मिस्टर जिन्ना जिनकी जबान बंगाल के अकाल पीड़ितों के लिए मौखिक सहानुभूति भी नहीं प्रकट कर सकी। बंगाल के जिन जिलों में अकाल का प्रकोप रहा है उनमें बसनेवाले अधिकांश मुसलमान ही तो थे और वही अधिकाधिक पीड़ित भी हुए। अस्तु यह निःसंकोच होकर कहा जा सकता है कि लीग का नेतृत्व उन अकर्मण्य, स्वार्थी और अधिकार-लोलुप लोगों के हाथ है जो सरकार के कृपापात्र, सर, खानबहा-

दुर, खाँ साहब, या पेन्सन प्राप्त सरकारी अधिकारी हैं। अंग्रेजों का हित इसी में है कि वह उनका नेतृत्व नष्ट न होने दे और न मुसलमानों में राष्ट्रीय भावों की जागृति ही होने दें। यदि राष्ट्रीय भावनाओं की मुसलमान समुदाय में जागृति हुई तो निश्चय ही लीग का नेतृत्व समाप्त हो जायगा।

युद्धजनित नियन्त्रणों से सबसे ज्यादा मुसलमान ही पीड़ित हुए हैं क्योंकि इनमें ही मजदूर, जुलाहे और काम करनेवालों की संख्या अधिक है। पेट और रोटी का सवाल ऐसा है कि वह मनुष्य को अनायास ही सरकार का विरोधी, और देशभक्त बना देता है। "मजहब पर कुफ्र" की पुकार उसी समय कामयाब होगी जब पेट में चारा पड़ता रहेगा। भूखों मरकर मुसलमान लीग का भले ही साथ दे ले पर, कब तक? अस्तु इस निराशा में भी आशा का संचार हो रहा है। सरकार चन्द नौकरियां, प्रतिनिधित्व-विशेष और उपाधियों के बल पर किसी वर्ग विशेष की भावना का प्रवाह नहीं रोक सकती और न उसपर किसी प्रकार का नियन्त्रण ही रख सकती है। दो बार जिन्ना शाह शिमले की पुनरावृत्ति कर दें बस लीग के कल्पित पाकिस्तान की कब्र बनने में अधिक देर न लगेगी। सरकारी नौकरियों का प्रलोभन मुसलमानों का उद्धार नहीं कर सकता। जातियों का उद्धार उनकी आर्थिक और राजनैतिक दृढ़ता पर स्थित है। यदि आज मुसलमानों की आर्थिक दशा गिरी हुई है तो चन्द सरकारी नौकरियों और व्यवस्थापिकाओं में प्रतिनिधित्व विशेष से उनका उद्धार नहीं हो सकता?

दूसरी बात यह भी स्पष्ट है कि २०वीं सदी में जाति और धर्म के नारे किसी देश की राष्ट्रीय भावनाओं को नहीं कुचल सकते। ऐसा समय भी आ सकता है जब एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र की पराधीनता से नष्ट हो जायगा। "साम्राज्यवाद की जड़ पूँजी है। नये युग का आन्दोलन पूँजीवाद के विरोध में हो रहा है। पूँजीवाद के समाप्त होते ही साम्राज्यवाद का किला अपने आप ढह जायगा। इसे अंग्रेज कूटनीतिज्ञ भी अन्तरिक्ष में देख रहे हैं।

हिन्दुस्तानी भी देख रहे हैं। पर हमारा उनका अन्तर केवल आजाद और गुलाम का अन्तर है। अतः हम लीग को नहीं, उनके नेताओं और भाग्य-विधाता को नहीं; मुसलिम जन साधारण को सम्बोधित कर कहना चाहते हैं कि वह लीग और पाकिस्तान की असलियत को समझें। अगर मुसलमान यह जान लेंगे कि लीग और पाकिस्तान की मांग उनकी आर्थिक और राजनैतिक उन्नति के मार्ग में बाधक हो रही है तो निश्चय ही उनमें प्रबल प्रतिक्रिया होगी और उस प्रतिक्रिया का व्यापक स्वरूप होगा प्रबल राष्ट्रीयता की जागृति।" (पं० जवाहर लाल नेहरू)

अध्याय ३

मुसलिम राष्ट्रवाद का विकास

पूर्वाध्याय में हम कह चुके हैं कि कैसी परिस्थिति में मुसलिम लीग ने जन्म लिया। आगाखाँ जो डिप्यूटेशन लेकर शिमला गये थे उसका बहुत से मुसलमानों ने विरोध किया क्योंकि उन लोगों को आगाखाँ का नेतृत्व संदिग्धपूर्ण प्रतीत हुआ। जिस समय वाईसराय को मानपत्र दिया जा रहा था, नवाब सैय्यद मोहम्मद ने जो शिमले में थे इससे सहयोग करना अस्वीकार कर दिया। इससे यह प्रकट होता है कि आरम्भ से ही लीग में विरोध रहा और दलबन्दियाँ भी। स्थापित होने वाले वर्ष में ही एक प्रतिद्वन्दी लीग मियाँ मुहम्मद शफी के नेतृत्व में और दूसरी मियाँ फजलेहुसेन के नेतृत्व में स्थापित हुई किन्तु अलीगढ़ के आगामी अधिवेशन में, दोनों एक में मिल गई १९२८ में फिर लीग में फूट पड़ी। आरम्भ में लीग के अधिवेशनों का केवल इतना ही मूल्य है कि वे मुसलमानों का अलग प्रतिनिधित्व करके नौकरियों के फेर में थे। इस बीच में कांग्रेस के मार्ग का विरोध भी किया जाता रहा।

१९०९--१० के बीच अलीगढ़ कालेज के प्रिन्सपल मिस्टर आर्चीबाल्ड और लीग के सिक्रेटरी नवाब विकारुल मुल्क में झगड़ा हो जाने के कारण लीग का दफ्तर अलीगढ़ से लखनऊ आगया। इसका सबसे बड़ा प्रभाव यह हुआ कि लीग की नीति अलीगढ़ कालेज के अंग्रेज प्रिन्सपलों के संबंध से मुक्त

हो गई। जिनका काम केवल फूट फैलाना ही था। इस प्रभाव से अलग होते ही राष्ट्रीय चेतना की जागृति आरम्भ हुई। लीग की निर्जीव नीति की सबसे कटु आलोचना मौलाना शिब्लीनुमानी ने लखनऊ गजट नामक पत्र में की; उनका कहना था कि :—"लीग अपना अस्तित्व बनाये रखने के लिये तरह-तरह के प्रस्ताव पास करती है किन्तु यह सभी जानते हैं कि लीग का यह रंग स्वाभाविक न होकर बनावटी है। इसका दिन रात यही रोना है कि हिन्दू मुसलमानों के हकूक छीन रहे हैं इसलिये उनका संरक्षण किया जाय। हम शिमला सम्मेलन (१९०८) की महत्ता खूब समझते हैं। यह साम्प्रदायिक मसला दिखाने का सब से बड़ा नाटक है। पर क्या दोनों कौमों के आपसी झगड़े को हम राजनीति कहें ? अगर यह पालिटिक्स है तो हाईकोर्ट भी इसका फैसला कर सकती है। हमारे विचार से हम उस समय राजनीति के क्षेत्र में प्रविष्ट होते हैं जब हम यह तय करते हैं कि लोगों को देश के शासन में कितना भाग मिला। राजनीति का अर्थ शासक और शासित का पारस्परिक सम्बन्ध निर्णय करना है न की शासितों के आपसी झगड़े।

"देश के ओर छोर से वाइसराय के डिप्यूटेशन के लिये लोग तय्यार हो गये; किन्तु वही यदि एक साधारण निम्नकोटि के अफसर के पास चाहे उससे भी महत्वपूर्ण काम लेकर जाना होता तो कदाचित ही कोई तय्यार होता। इसके तहमें जाकर देखने से यह स्पष्ट प्रकट होता है कि यदि इस डिप्यूटेशन से वाइसराय की नाराजगी का खतरा होता तो मुसलमान कदाचित ही इस में सम्मिलित होते। इसमें असलियत यह है कि डिप्यूटेशानिष्ट स्वयम् भ्रम में भ्रमित हो रहे हैं। किसी वृक्ष का महत्व उसके फल पर निर्भर है। अगर हमारे राजनीति में कुछ तथ्य और आदर्श होता तो वह हमें संघर्ष के लिए प्रोत्साहित न करती किन्तु यहाँ तो व्यक्तिगत स्वार्थ के सिवा और कुछ है ही नहीं। कितने मुसलमान ऐसे हैं जो देश के लिये स्वार्थ त्याग कर ३०) मासिक वेतन पर सर्वेन्ट आफ इण्डिया सोसायटीके सदस्योंकी भाँति उत्सर्ग कर सकें।"

मौलाना शिबली का यह दृष्टिकोण वास्तविक और न्यायोचित भी है।

शिबली की विद्वत्ता की प्रशंसा देश विदेश में फैली हुई है। उर्दू फारसी में इनका लिखा प्रमाणिक होता है। भारत में मुसलमानों में राष्ट्रीय भावना जागृति करने का श्रेय मौलना शिवली नुमानी को ही है। यद्यपि यह सर सैय्यद के साथी थे किन्तु इनका दृष्टिकोण स्वतन्त्र और राष्ट्रीय था। मौलना अब्दुल-कलाम आजाद भी इन्हीं के विचार और लेखनी से प्रभावित हुये। उधर बंगाल में बंग-भग की योजना में मुसलमानों को नीबू-नमक दिया गया। इनका प्रभाव यह हुआ कि नवाब सलीमल्ला खाँ की आँखे खुल गई और कलकत्ता के लीग-अधिवेशन के मञ्च से आपने कहा कि इससे मुसलानों की विपत्ति का अन्त नहीं होगा। यह निराशा भी मुसलमानों की राष्ट्रीय भाव-नाओं को उत्तेजित करने लगी।

भारतीय राष्ट्रवादिता में योरोपियन घटनाओं का विशेष प्रभाव राष्ट्रवादी मुसलमानों पर पड़ा है। प्रथम योरोपियन महायुद्ध के पूर्व योरोप में कुछ ऐसी घटनायें घटीं जिसका प्रभाव हिन्दुस्तानी मुसलमानों पर भी पड़ा। बाल्कन प्रदेश ने तुर्की साम्राज्य से मुक्त होने का यत्न किया। इस आन्दोलन में रूस और ब्रिटेन ने तुर्की के विरुद्ध भाग लिया क्योंकि इसमें इन दोनों का पारस्परिक स्वार्थ था। इनके स्वार्थों के संघर्ष के कारण ही किसी प्रकार तुर्क साम्राज्य का छोटा सा भाग कुस्तुनतुनिया में बच सका। किसी समय 'आटमन साम्राज्य' इतना विस्तृत था कि इसका विस्तार स्पेन से लेकर चीन तक था, किन्तु खलीफा की शक्ति-ह्रास के साथ उसकी आज यह स्थिति हो रही थी। आटमन साम्राज्य के क्षय पर प्रकाश डालने का यह उपयुक्त स्थान नहीं है पर भारत के मुसलमान १९ वीं सदी के मध्य से पूर्व २० वीं सदी में तुर्की से मेल कर साम्राज्य वृद्धि और सहायता का स्वप्न अवश्य देखते थे। २० वीं सदी के आरम्भ में नवीन विचारों का उद्भव तुर्की में भी हुआ जिसके प्रवर्तक एनवर पाशा, तल्लात पाशा और जमल पाशा थे। इसका प्रभाव भारतीय मुसलिमों पर भी पड़ा। इनका ध्येय नवशक्ति संगठन कर प्राचीन तुर्क साम्राज्य को आधुनिक शक्तिशाली साम्राज्य का रूप देना था।

सुल्तान अब्दुलहमीद के शासनकाल में ही उनकी शक्ति का पतन आरम्भ हो गया था। उनके शासन की यही विशेषता थी कि समस्त तुर्की बाह्य और आन्तरिक षड़यन्त्रों की भट्टी बन रही थी। इसका प्रभाव भावुक युवक मण्डली पर पड़ा। मोनास्टिर के सैनिक कालेज के युवकों ने मिलकर 'वतन' नामक संस्था स्थापित की। सन् १९०८ में फलस्वरूप राजभवन में क्रांति हुई और सुल्तान को विवश होकर शासन में सुधार करना पड़ा। बृटेन में इस युवक आन्दोलन का यह प्रभाव हुआ कि वे इसे संदिग्ध दृष्टि से देखने लगे। यदि तुर्की एक आधुनिक-सुसंगठित और शक्तिशाली राज्य हो जायगा तो इससे भूमध्यसागर और कृष्णसागर के द्वार पर बैठे रहने के कारण इन स्थानों में बृटेन का स्वार्थ संकट में पड़ सकता है। ऐसी स्थिति में ब्रिटेन ने युवक आन्दोलन को कुचलने के लिये सुल्तान की सहायता दी।

कुछ समय के लिये यह आन्दोलन दब भी गया। इस घटना का भारतीय मुसलमानों पर विचित्र प्रभाव पड़ा। मौलाना शिबली की लेखनी के चमत्कार से मुसलमानों में राष्ट्रीय भावना जिसे दबाने का अलीगढ़ का कुचक्र ही सबसे प्रबल और व्यापक अस्त्र था, निःशक्त होने लगा। डाक्टर अनसारी के उद्योग से इस समय एक मेडिकल मिशन तुर्की गया। राष्ट्रीय भावनाओं से प्रेरित हो युवक अबुलकलाम आजाद ने अपना पत्र "अलहिलाल" प्रकाशित किया। इस पत्र ने मुसलमानों में नवजीवन और उत्साह का संचार किया। इसी समय मौलाना मुहम्मद अली अंग्रेजी "कामरेड" और उर्दू में "हमदर्द" नामक पत्र प्रकाशित करने लगे। इन पत्रों का मुस्लिम जनता पर इतना प्रभाव पड़ा कि बाध्य होकर लीग को १९१३ के लखनऊ अधिवेशन में नियमावली में संशोधन करना पड़ा और "भारत में बृटिश छत्रछाया के अन्तर्गत इस प्रकार का स्वराज्य प्राप्त करना जो भारत के उपयुक्त हो" संशोधन नियमावली में जोड़ दिया गया। अगले अधिवेशन में डाक्टर अनसारी, हकीम अजमल खां और मौलाना आजाद

सम्मिलित हुए और हिन्दू मुसलिम एकता पर जोर दिया गया तथा इसी अभिप्राय के प्रस्ताव पास किये गये।

युद्ध के बादल पहले ही से मड़रा रहे थे केवल अवसर की बाट देखी जा रही थी। सर्विया में इसका सूत्र राजकुमार की हत्या में मिल गया। इस युद्ध का अग्निशिखा योरप भर में व्याप्त हो गई और भारत के राष्ट्रवादी मुसलमान भी तुर्की की सहायता से स्वाधीनता और मुसलिम साम्राज्य का स्वप्न देखने लगे। देवबन्द के मौलाना महमूदुल हसन ने अपने एक विश्वासी छात्र को काबुल में जर्मन राजदूत से परामर्ष करने के लिये भी भेज दिया। मौलना ओबैदुल्ला सिन्धी को यह भी निर्देश दिया गया था कि वे आवश्यकता पड़ने पर काबुल के अमीर को भी ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध युद्ध करने के लिये प्रस्तुत करें। मौलाना की मशा थी कि भारत में एक स्वाधीन राजतन्त्र स्थापित हो। तब से निष्काषित राजा महेन्द्र प्रताप जो अभी भी विदेशों में अनेक यातनायें झेल रहे है, इस राजतन्त्र के प्रथम राष्ट्रपति हों। दुर्भाग्यवश इस क्षेत्र में कुछ ठोस काम होने के पूर्व ही यह लोग गिरफ्तार कर माल्टा द्वीप को निर्वासित कर दिये गये। गिरफ्तार होने वालों में उस समय के प्रमुख राष्ट्रवादी मुसलिम नेताओं में कोई न बच सका। उनमें प्रधान नामों का उल्लेख अना-वश्यक न होगा। उनका नाम निम्नलिखित है :—मौलाना महमूदुलहसन, और उनके सहायक, मौलाना हुसेन अहमद मादनी और मौलवी अजीमुल्ला तथा अलीबन्धु मौलाना आजाद और मौलाना हसरत मोहानी इत्यादि।

इन गिरफ्तारियों का प्रभाव यह हुआ कि लीग का अगला अधिवेश कांग्रेस पण्डाल में कांग्रेस अधिवेशन के साथही हुआ। इस अवसर पर देश के प्रख्यात नेता महामना मालवीयजी, श्रीमती नायडू और महात्मा गान्धी भी लीग के अधिवेशन में सम्मिलित हुये। लीग के स्थाई सभापति आगाखाँ के लिये इन राष्ट्रीय नेताओं के बीच बैठना असम्भव था, अस्तु उन्होंने स्थाई सभापतित्व से त्यागपत्र दे दिया। इस पद त्याग का परिणाम यह हुआ कि लीग आगे कुछ वर्षों के लिये शिमला और लन्दन के सूत्र संचालन से मुक्त होगई।

मिस्टर मोहम्मद अली जिन्ना के एक प्रस्ताव में यह स्वीकृत किया गया कि लीग और कांग्रेस मिलकर भारतीय विधान की एक रूपरेखा बनावें। यही रूपरेखा समयान्तर में लखनऊ के समझौते के नाम से स्वीकृत हुई। इसमें हिन्दू मुसलमानों के फिरकेवाराना मसले के हल के अलावा सुधार की भी योजना थी जिसकी राजनैतिक क्षेत्र में आवश्यकता थी। वादाविवाद के पश्चात् निश्चय हुआ कि स्वराज्य प्राप्ति के लिये एक ऐसा निश्चित कदम उठाना चाहिये कि भारत साम्राज्य के अन्तर्गत उपनिवेशिक स्वराज्य प्राप्त कर एक दूसरे उपनिवेशिक के समान पद प्राप्त करे। इस समझौते में यह तय हुआ कि मुसलमानों का पृथक प्रतिनिधित्व हो और अल्प संख्यक प्रान्तों में उन्हें अलग मत देने का अधिकार हो। इसका विवरण नीचे दी हुई तालिका से स्पष्ट हो जायगा। इसमें एक धारा यह भी जोड़ दी गई थी कि "यह भी शर्त है कि किसी गैर सरकारी सदस्य द्वारा पेश किये गये किसी ऐसे बिल या उसकी किसी धारा या प्रस्ताव के सम्बन्ध में, जिसका एक या दूसरी, जाति से सम्बन्ध हो, कोई कार्रवाई न की जायगी, यदि उस जाति के उस विशेष केन्द्रीय या प्रान्तीय कौन्सिल के ३/४ सदस्य उस बिल या प्रस्ताव का विरोध करते हों। इसका निर्णय उसी जाति के उस सभा के सदस्य करेंगे।" ३—

प्रान्तीय धारा सभाओं में निर्वाचित सदस्यों की संख्या

प्रान्त	प्रतिशत	
१—पंजाब	५०%	मुसलिम सदस्यों का निर्वाचन इसी औसद के आधार पर हो तथा सरकारी निर्वाचित सदस्य भी इसी में सम्मिलित हों।
२—संयुक्त प्रान्त	३०%	
३—बंगाल	४०%	
४—बिहार	२५%	
५—मध्यप्रान्त	१५%	
६—मदरास	१५%	
७—बम्बई	३३%	

---

१ Sedition Committee Report (1918) Govt. of India publication. २ कांग्रेस का इतिहास-पट्टाभी पृ० १२८ (हिन्दी संस्करण)
३ कांग्रेस का इतिहास—पट्टाभी—पृष्ठ ५९४ (हिन्दी संस्करण)

ऐसे वातावरण में सन् १६१७ में मिस्टर जिन्ना ने लीग के सभापति की हैसियत से लखनऊ में जो भाषण दिया वह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। उन्होंने भाषण में कहा :—

"भारत वासियों के लिये गैरमुमकिन तरीके का मसविदा बनवाकर उनके ऊपर ठेल दिया गया है। वह क्या है? उसे राजनीतिज्ञ भली भाँति जानते हैं। उदाहरण के लिये यह कहा—जाता है कि लोकतन्त्रात्मक संस्थायें भारत के लिये अनुपयुक्त हैं। क्या लोक अथवा प्रजातन्त्र हिन्दुओं और मुसलमानों के लिये नई चीज है? इसका मैं स्वयम् उत्तर दूँगा यदि यह चीज नई है तो ग्राम पंचायतें क्या हैं? इसलाम का अतीत क्या इससे कुछ भिन्न है? संसार की कोई भी जाति अथवा राष्ट्र मुसलमानों से बढ़कर लोकतन्त्र की परम्परा की कदाचित ही पुजारी हो।" १

इस अधिवेशन में और भी अनेक महत्वपूर्ण प्रस्ताव स्वीकृत हुये, जैसे:—प्रेस ऐक्ट, डिफेन्स आफ इंडिया ऐक्ट। शस्त्र ऐक्ट (Arms Act) को उठा लेने का सरकार से अनुरोध किया गया। स्मरण रहे की गत युद्ध में भी एक भारतरक्षा कानून प्रचलित था। हिन्दू मुसलिम एकता का सूत्र भी कुछ-कुछ उस समय बँध गया था। अभी मौलाना मुहम्मद अली जेल में बन्द थे किन्तु वे कलकत्ता अधिवेशन के सभापति चुन लिये गये। समय पर रिहाई न होने के कारण महाराजा महमूदाबाद ने सभापतित्व किया। अपने भाषण में आपने कहा कि "आज हमारे सामने देश का प्रश्न सबसे महत्वपूर्ण है। अब यह कहने का समय नहीं कि हम मुसलमान हैं या हिन्दुस्तानी। सच तो यह है कि हम मुसलमान भी हैं और हिन्दुस्तानी भी हैं। लीग ने मुसलमानों में जितना मज़हब के लिये उतना ही देश के लिये कुर्बानी करने की भावना भर दी है।" एकता का भाव इस समय इतना प्रबल हो उठा था कि लीग मञ्च से ही गान्धीजी और श्रीमती नायडू ने अली बन्धुओं के रिहाई का प्रस्ताव सम-

१ Md Nuaman—Muslim India

र्थन किया। उस समय यह प्रतीत होता था कि लीग और कांग्रेस में जैसे कोई भेद ही नहीं है।

कलकत्ता के बाद आगामी अधिवेश दिल्ली में हुआ। इस अधिवेशन की विशेषता यह थी कि उलेमा भी इससे अधिक संख्या में सम्मिलित हुए। जिनमें प्रमुख फिरंगमहल के मौलाना अब्दुलबारी, मौलाना किफायतुल्ला, और मौलाना मुहम्मद सईद थे। सरकार की बैठक पर इतनी कृपा हुई की स्वागताध्यक्ष डाक्टर अनन्सारी का मुद्रित भाषण सभा में बटने के पूर्व ही जब्त कर लिया गया। लीग ने अधिवेशन में भारत के प्रश्न पर आत्मनिर्णय के सिद्धान्त वर्तने की माँग पेश की। युद्ध भी इसी वर्ष समाप्त हो गया फलस्वरूप जनता बड़े बड़े स्वप्न देखने लगी।

मुसल्मानों को भी, जो अंग्रेजों के बड़े-बड़े प्रलोभन में भूले हुए थे विशेष रूप से आशान्वित हुए। मुस्लिम जनता की धारणा थी कि युद्धोपरान्त तुर्की का पूर्णसंगठन होगा और मित्रराष्ट्र "पानइसलाम" आन्दोलन में सहायक होंगे किन्तु उनकी आशापर पानी फिर गया। क्षोभ और अपमान से सन्तप्त मुस्लिम जनता सरकार के विरुद्ध आन्दोलन करने का विचार करने लगी। इसीका प्रतीक खिलाफत आन्दोलन हुआ। खिलाफत कान्फरेन्स ने यह निश्चय किया कि ब्रिटिश माल का बहिष्कार हो और सरकार से असहयोग (तर्कमवालात) किया जाय। इसके लिये गान्धीजी को धन्यवाद दिया गया और हिन्दू जनता से हार्दिक सहानुभूति प्रकट की गई।

जमैयत उलेमा हिन्द की स्थापना

संयुक्त हिन्दू और मुसलिम आन्दोलन का प्रभाव सरकारी दायरे पर भी पड़ा और वे कुछ न कुछ करने के लिये चिन्तित हुये। लार्ड रीडिङ्ग और मान्टेगू ब्रिटिश सरकार की तुर्की नीति पर चौकन्ना हुये क्योंकि इसका प्रभाव भारतीय राजनीति पर ऐसा पड़ा जिसकी उन्हें सम्भावना नहीं थी। मि० मान्टेगू ने स्पष्ट नीति ग्रहण करने का साहसी कदम उठाया और वाइसराय को

सलाह दी की वे भारतीय मुसलमानों को आश्वासन दें की उन्हें सन्तुष्ट करने के लिये सरकार तुर्की और फिलिस्तीन से सेनायें वापिस बुला रही हैं। वे स्थान जो तुर्की से छीन लिये गये हैं उन्हें वापिस किया जा रहा है। इसका भारत के लिये महत्व है।

''भारत के उलेमा अब यह आवश्यक समझने लगे कि वे भी अपना दल स्थापित कर लें और समय समय पर मुसलिम जनता को अपनी सलाह देते रहें। दिल्ली की खिलाफत कान्फरेन्स में उन्होंने निश्चय किया कि अब उनके गुप्त रहने का समय नहीं है। अवसर आ गया है जब उन्हें राजनीति में सक्रिय भाग लेना चाहिये। गदर के समय से उनका प्रभाव नष्ट सा होगया है इसलिये अब उन्हें संयुक्त रूप में जनता के सन्मुख आना होगा। अभी तक राजनीति, 'खुशामद और राजभक्ति' का प्रदर्शन मात्र था। राजभक्त और सरकार के खुशामदियों को ही अभी तक मुसलमान अपना नेता मानते आये हैं इसलिये उलेमा गुप्त हो गये थे। उलेमा का जीवन सत्य और त्याग का है, वे सत्य के लिये अत्याचार और उत्पीड़न सहन करने से नहीं घबराते। चूँकि भारतीय मुसलमानों की राजनैतिक प्रवृत्ति बदली हैं; वे खुशामद और दरबारदारी छोड़कर स्वतन्त्रता की साँसें ले रहे हैं, इसलिये हम लोग मुसलमानों का उद्धार और उन्हें न्यायमार्ग प्रदर्शित करने के लिये राजनीति क्षेत्र में उतर हैं और एतदर्थ जमैयत उलेमा हिन्द की स्थापना कर रहे हैं[1]।''

इसके संस्थापक मौलाना मुहम्मदुलहसन, एक पवित्र और धार्मिक आचरण के योग्य पुरुष थे। अभी हाल ही में सरकार के नजरबन्दी में माल्टा (भूमध्य सागर में एक ब्रिटिश छावनी और द्वीप) में राजद्रोह के संदेह में बन्द थे आये, और अपनी समस्त शक्ति से खिलाफत आन्दोलन में योग दान देने लगे। उनका प्रभाव देश के एक ओर से दूसरे छोर के उलेमा और मौलवियों पर पड़ा।

---

१ Communal Triangle p. 46—Mehta & Patwardhan.

इस सिलसिले में जमैय्यत उलेमा ने अपना 'फतवा' जारी किया। इतनी महत्वपूर्ण घोषणा सन् ५७ के विप्लव के बाद पहली चीज थी। हजारों मुल्ला और मौलवियों ने उलेमा के फतवे का आदर किया और आज्ञा के समान उसका पालन किया। यह फतवा सरकार से चतुर्मुख बहिष्कार और असहयोग करने के लिये दिया गया था। इसने मुसलमानों को आदेश दिया कि मुसलमानों का कर्त्तव्य है कि वे सरकार से असहयोग करें, कौंसिलों के चुनाव का बहिष्कार करें, स्कूल कालेज, कचहरी का बहिष्कार करे, पदवी त्याग करें इत्यादि। रेलों की हड़ताल फलस्वरूप सन् १९२२ में आरम्भ हो ही गई थी और हमारा ख्याल है, हड़ताल काफी सफल भी रही। इतनी प्रेरणा और जीवन फूँकने का शुभ दिन देखना मौलाना के भाग्य में न था। मृत्यु असमय ही उन्हें हमारे बीच से छीन ले गई अन्यथा आज मुसलमानों में अंग्रेजों की साम्प्रदायिकता का जादू इतनी तेजी से न चलता।

मौलाना मुहम्मदुलहसन की मृत्यु के पश्चात् इनके स्थान पर मुफ्तीकिफायतुल्ला नियुक्त हुये। इन्होंने भी सत्याग्रह आन्दोलन का समर्थन किया और बार-बार जेल यात्रा की और सजायें भुगतते रहे हैं। आजाद मुसलिम कान्फरेन्स के आप प्रधान समर्थक और सहायक है। जमैयत उलेमा हिन्द ने विदेशी-शासन के प्रति सदा से घोर विरोध और उससे अनिच्छा प्रकट की हैं। समय-समय पर यह विरोध सक्रिय रहा और इनके आदेश पर उलेमा के अनुयाई सहर्ष कांग्रेस आन्दोलन में योग देते रहे हैं।

कांग्रेस, लीग, खिलाफत और जमैयत उलेमा का सम्मेलन १९१९ में अमृतसर में हुआ। लीग के इस अधिवेशन के सभापति स्वनामधन्य हकीम अजमल खाँ साहब थे। जलियाँवाला बाग का हत्या काण्ड हो चुका था। इस कारण जनता में अत्यन्त रोष और शोक उत्पन्न हो रहा था। स्कूल कालेजों की हड़ताल जारी थी और राष्ट्रीय शिक्षा संस्थायें खुल रही थी। फलस्वरूप काशी विद्यापीठ और दिल्ली में जामिया मिल्लिया इसलामियाँ की स्थापना हुई। जिसका ध्येय ऐसी शिक्षा प्रणाली प्रचलित करना था जो देश की राष्ट्रीय

भावनाओं के अनुकूल हो। लीग का अगला अधिवेशन डाक्टर अन्सारी की सभापतित्व में हुआ जिसमें कांग्रेस का पूर्ण समर्थन और सहयोग का प्रस्ताव पास हुआ। लीग का अगला अधिवेशन कांग्रेस के साथ अहमदाबाद में १९२१ में हुआ। जिसके सभापति मौलाना हसरत मोहानी थे। इस जोशीले भाषण के कारण मौलाना साहब को तत्काल जेल यात्रा करनी पड़ी।

डाक्टर पट्टाभी ने कांग्रेस के इतिहास नामक ग्रन्थ के ३३५ पृष्ठ पर मौलाना हसरत मोहानी के भाषण का सारांश दिया है। मौलाना हसरत मोहानी ने कहा—"भारत में प्रजातन्त्र स्थापित होने पर मुसलमानों को दो प्रकार का लाभ स्पष्ट रूपसे होगा। लोकतन्त्रात्मक राज्य की प्रजा होने के कारण उन्हें भी सब की भाँति समान अधिकार प्राप्त होंगे। दूसरे यह कि ब्रिटिश प्रभाव क्षेत्र से मुक्त हो जाने के कारण वे इसलामी दुनियाँ की उन्नति के लिये आवश्यक सहायता दे सकेंगे।"

हिजरात

इसी बीच ब्रिटेन और तुर्की से जो सन्धि हुई उससे मुसलिम इतने क्षुब्ध हुये कि उन्होंने समझा कि ऐसी सन्धि हो जाने पर उनका भारत में रहना असम्भव है। यह आन्दोलन हिजरात के नाम से सिन्ध में आरम्भ किया गया किन्तु इसका छूत सीमा प्रान्त में भी फैल गया। इसी बीच करीब १८००० मुसलिम जो अफगानिस्तान जा रहे थे उनसे और फौज से कच्चागढ़ी की फौजी चौकी पर मुठभेड़ हो गई। इस प्रकार की खींचा-तानी देखकर अफगान अधिकारियों ने 'मुहाजरीन' का अफगानिस्तान में प्रवेश निषेध कर दिया। घोर यातना तथा कष्ट के पश्चात इस आन्दोलन का अन्त हो गया।

देशके दुर्भाग्यसे इस समय चौरी-चौरा काण्ड होगया जिसके परिणाम स्वरूप गान्धीजी ने सत्याग्रह आन्दोलन स्थगित कर दिया और गिरफ्तार हो गये। किन्तु अलीबन्धु क्षमा-याचन कर छूट चुके थे। इसकी प्रतिक्रिया यह हुई कि मुसलिम दल धीरे-धीरे कांग्रेस से तटस्थ होने लगा जिससे साम्प्रदायिक प्रश्न दुरूह

और असाध्य होने लगा। कलकत्ता बम्बई आदि बड़े-बड़े नगरों में दंगे होने लगे। सरकार को कांग्रेस का बल तोड़ने और देश की बढ़ती हुई राष्ट्रीय जागृति को रोकने के लिये इससे अच्छा प्रतिरोध पाना कठिन था। अस्तु राष्ट्रीयता के लिये साम्प्रदायिक दंगों के रूप में ब्रेक लगाया गया। यही सरकार की क्रूर नीति है। देश में जब भी राजनैतिक आन्दोलन हुआ बड़े नगरों में दंगे अनिवार्यरूप से हुए। सन् ३०।३१ में दंगे हुए; सन् ३६ में दंगे हुए और सन् ४५ का सूत्रपात भी बम्बई से हो चुका है। इसके सिवा लीग और अलीगढ़ के विद्यार्थियों की गुण्डाशाही तो नित्यही हुआ करती है।
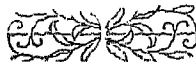
अध्याय ४

मुसलिम लीग की प्रतिक्रिया

पूर्व पृष्ठों में हम कह आये हैं कि युद्ध काल में लीग और कांग्रेस कन्धे से कन्धा लगा कर सरकारी नीति का विरोध कर रही थी। इसके मुख्य कारण सरकार की तुर्की के प्रति नीति और उलेमा का निर्वासन तथा उत्थान तो था ही, साथ ही साथ युद्ध के अन्य कारण भी थे। खिलाफत और तब लीग आन्दोलन भी सफलता के निकट पहुँच चुके थे। इसी समय अचानक चौरीचौरा काण्ड हो जाने के कारण महात्माजी ने इसे "हिमालीय भूल" स्वीकार कर आन्दोलन स्थगित कर दिया। आन्दोलन स्थगित हो जाने के कारण एक पराजित मनोवृत्ति ने मुसलमानों को धर दबाया और वे कांग्रेस के प्रधान क्षेत्र से अलग होने लगे। अंग्रेजी नीतिज्ञों के लिये इस प्रकार का ऐक्य खतरे से खाली न था। शासकों की नीति यह थी कि किसी प्रकार मतभेद बढ़ाया जाय। इसका परिणाम यह हुआ कि मृतप्राय लीग में कुछ जागृति उत्पन्न हुई यद्यपि वह अब भी निर्जीव ही थी। १९२३ के लखनऊ अधिवेशन में उपस्थिति इतनी न्यून थी कि विवश होकर "कमरे में अधिवेशन" करना पड़ा। इसी प्रकार सन २७ तक लीग सुसुप्तावस्था में ही थी।

लीग के इतिहास में सन १९२७ का साल अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इस समय प्रतिक्रियावादियों ने आकर लीग में नया जीवन डाल दिया। इस नवजीवन के कारण सरकार द्वारा भारत में शासन-सुधार देने के लिये साइमन कमीशन की नियुक्ति हुई। इस कमीशन का भारत भर की संस्थाओं ने एक स्वर से विरोध किया किन्तु लीग ने यह परम्परा तोड़ दी। कमीशन के सम्बन्ध में विचार करने के लिये लीग का अधिवेशन लाहौर में आमन्त्रित हुआ। सौभाग्यवश राष्ट्रवादी मुसलमान अभी बलवान थे। कमीशन के स्वागत का प्रस्ताव गिर गया। इसपर लीग के जीहुजूरों ने कलकत्ता में बैठक करने का निश्चय किया। इस प्रस्ताव पर राष्ट्रवादी दलवाले जिनमें प्रमुख अल्लामा इकबाल और सर फीरोजखां नून थे सभा से अपने दल-बल के साथ निकल गये। सर मोहम्मद शफी के नेतृत्व में लाहौर में अगला अधिवेशन किया गया। जो देश भर के ३५२ प्रतिनिधियों और डेलीगेटों की उपस्थिति में हुआ[1]। इस अधिवेशन में सर मोहम्मद ज़फरुल्ला खां ने कमीशन के स्वागत करने का प्रस्ताव उपस्थित किया जो स्वीकृत हुआ।

इसका प्रतिद्वन्दी अधिवेशन जो कलकत्ता में श्री जिन्ना के सभापतित्व में हुआ उसमें कमीशन के बहिष्कार और बिना अभियोग के जेलों में बन्द नेताओं की रिहाई का प्रस्ताव बहुमत से स्वीकृत हुआ। दूसरा महत्वपूर्ण कार्य्य इस अधिवेशन में यह भी हुआ कि भारत मन्त्री लार्ड बर्कन हेड द्वारा दी गई चुनौती स्वीकार कर ली गई। यह चुनौती भारतीय नेताओं को एक ऐसा शासन विधान तय्यार करने के लिये थी जो सर्व सम्मत हो। लीग की काउन्सिल ने निश्चय किया कि कांग्रेस और दूसरे राजनैतिक दलों के सहयोग और सम्मति से एक ऐसा मसविदा तय्यार किया जाय जो सर्व सम्मत हो और अल्प संख्यकों को पर्य्याप्त संरक्षण दे।" राष्ट्रीय कनवेंशन जो आगामी मार्च में दिल्ली में होनेवाला था अपना प्रतिनिधि भेज कर सम्मिलित हो।

---

१ मिर्जा अख्तर—लीग का इतिहास।

इस विचार से लीग का वार्षिक अधिवेशन (दिसम्बर १९२८) स्थगित कर दिया गया और मार्च १९२९ में शफी लीग के साथ अधिवेशन हुआ। इस सम्मेलन में नेहरू रिपोर्ट स्वीकृति के लिये उपस्थित की गई जो अस्वीकृति हो गई। यहीं से मिस्टर जिन्ना में प्रतिक्रिया आरम्भ होती है। इस तानाशाही से ऊब कर राष्ट्रीय मुसलमानों ने लीग से सम्बन्ध विच्छेद कर लिया। इस प्रतिक्रियावादी वातावरण में राष्ट्रीय मुसलिम पार्टी की स्थापना हुई। उधर लीग में ऐसी प्रतिक्रिया आरम्भ हुई कि वह अपनी पूर्व स्थिति में पहुँच गई और सरकार के संकेत पर अपनी नीति का संचालन करने लगी।

१९३० का साल साइमन कमीशन की प्रतिक्रिया का साल था। बहिष्कार और विरोध प्रदर्शन का अंत करने के प्रयास में सरकार पाशविकता का नग्न प्रदर्शन करने लगी। देश भर में बाल-वृद्ध-वनिता पुलिस की लाठियाँ खाने लगे जिससे ऐसी कटुता उत्पन्न होगई कि देश आन्दोलन के लिये तय्यार होने लगा। महात्माजी ने इस अवसर पर नमककरबन्दी का आन्दोलन आरम्भ कर दिया। इसका प्रभाव मुसलमानों पर भी पड़ा। देश भर के राष्ट्रवादी मुसलमानों का एक सम्मेलन १९३१ मे लखनऊ में हुआ। इस सम्मेलन के सभापति सर अली इमाम थे। आपने अपने भाषण में कहा कि "किसी समय वे भी भिन्न निर्वाचन के पक्षपाती थे किन्तु अनुभव और परिस्थिति ने उन्हें यह कहने के लिये विवश किया है कि यह उनकी भूल थी। साम्प्रदायिक निर्वाचन प्रणाली राष्ट्रवाद के मूल में कुठाराघात करती है। यदि आज हमसे पूछा जाय कि मेरा भारतीय राष्ट्रीयता में इतना दृढ़ विश्वास क्यों है तो मैं कहूँगा उसके विना भारतीय स्वाधीनता असम्भव है। भिन्न निर्वाचन राष्ट्रीयता का अन्त कर देती है।"

आगे उन्होंने यह भी कहा कि "इस सम्मेलन के सभापति के हैसियत से उनके पास देश के कोने-कोने से संयुक्त निर्वाचन प्रणाली की माँग और स्वीकृति के तार और पत्रों की बाढ़ सी आगई है।"

इस सम्मेलन में अनेक महत्वपूर्ण प्रस्ताव पास हुये, जैसे संयुक्त निर्वाचन, बालिगों को मताधिकार, प्रान्तीय और केन्द्रीयधारा सभाओं में केवल अल्प संख्यकों का संरक्षण जिनकी संख्या ३०% से कम हो । इससे प्रकट होता है कि राष्ट्रवादी मुसलमानों का दृष्टिकोण कितना न्यायोचित और उदार था। उनपर साम्प्रदायवादी नीति का रंग न चढ़ सका था और भारतीय स्वाधीनता के उद्योग में वे कांग्रेस की नीति के विरोधी नहीं थे।

राष्ट्रीय मुसलिमों ने सन् ३०-३२ क असहयोग आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया था। इसका परिणाम यह हुआ कि मुसलिमलीग एक बार फिर अन्तिम सांसें लेने लगी। किन्तु गान्धी इरविन समझौता और १९३३ में असहयोग आन्दोलन स्थगित हो जाने की प्रतिक्रिया एक बार मुसलमानों में फिर आरम्भ हुई। राष्ट्रीय मुसलिम तो लीग के निकट नहीं आये, पर एक बार लीग का पुनर्संगठन हुआ। इधर बीच में लीग के दो अधिवेशन और हुए जिसके सभापति अल्लामा इकबाल और जफरुल्ला खां थे। लीग के साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में अल्लामा इकबाल के मत का प्रकाशन हम पूर्व पृष्ठों में कर चुके हैं। अबकी लीग राजनैतिक क्षेत्र में जिन्ना के नेतृत्व में उतरी।

जिन्ना के नेतृत्व में लीग

पुनर्संगठित लीग का अधिवेशन दिल्ली में पहली अप्रैल १९३४ को हुआ जिसमें केवल ४० सदस्य उपस्थित थे। काउन्सिल ने प्रस्ताव द्वारा निश्चय किया कि लीग साम्प्रदायिक निर्णय को स्वीकार करती है और ऐसे दलों से सहयोग करने का निश्चय करती है जो भारत के लिये साम्प्रदायिक आधार पर विधान तय्यार करने में सहयोग करें और ऐसा विधान बनाने में सहायक हों जो देश के अन्य दलों और जातियों का स्वीकृत हो। मिस्टर जिन्ना ने भाषण के अन्त में कहा कि "लीग अपने ध्येय पर दृढ़ता से अटल है। मैं तो इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि भारत की अन्य किसी जाति से स्वदेश सेवा

में मुसलमान पीछे न रहेंगे।" आपने श्वेत पत्र की भी कड़े शब्दों में निन्दा की और कहा कि—

"भारत दृढ़ और सच्चा संयुक्त मोर्चे पेश करे। नेताओं के लिये यह आवश्यक है कि वे स्थिर बुद्धि से विचार करें और पारस्परिक ऐक्य स्थापित करें। हिन्दू और मुसलमानों में एकता स्थापित हो इससे बढ़कर कोई भी चीज सुखद नहीं हो सकती। हमें विश्वास है कि हमारी इस धारणा में हिन्दुस्तान के मुसलमानों का पूर्ण समर्थन है।"

इसके पश्चात लीग का महत्वपूर्ण अधिवेशन सन् १९३६ में बम्बई में हुआ। इसके सभापति सर वजीर हसन थे। उन्होंने नये शासन विधान की तीव्र आलोचना करने के पश्चात अभ्यर्थना की कि देश-हित के दृष्टि से भारत की सभी जातियाँ और फिर्के मिलकर ऐक्य स्थापन करें। आपने भाषण में कहा :—

'भारत के हित और कल्याण के लिये मैं केवल हिन्दू-मुसलमानों से ही एकता की अपील नहीं करता बल्कि मैं चाहता हूँ कि सभी दलों और फिर्कों में मेलजोल हो जाय। इस मेल का परिणाम यह होगा कि हमारा आदर्श मूर्तिमान होगा और हमारे भेदभाव मिटने लगेंगे। इससे हमारे राजनैतिक और जातीय सम्बन्ध में सुधार और उन्नति होगी। क्या यह आवश्यक है कि हम अलग रहें और अपने स्वार्थों को लेकर अलग-अलग लड़ते रहें जब एकता स्थापित कर सभी लड़ाइयों को हम सदा के लिये समाप्त कर सकते हैं।"

आपने इस योजना और विचार को क्रियात्मक रूप देने के विचार से ऐसा आन्दोलन आरम्भ करने की सलाह दी जिसमें वर्गों और जातियों तथा सम्प्रदायों में मेलजोल हो : जिससे हम एक हो कर देश के मसले को हल कर सकें। नवीन शासन विधान के सम्बन्ध में आपका मत था कि यह लोकयन्त्र की भावना को कुचल कर स्वाधीनता को गुलामी की जंजीरों में जकड़ डालेगा। इससे मुसलिम जाति और वर्ग का अन्य जातियों की भाँति ही

अहित होगा।" इस अधिवेशन का सबसे महत्वपूर्ण प्रस्ताव नवीन शासन विधान को अस्वीकार करने के लिये था जिसके सम्बन्ध में यह कहा गया कि यह भारत की स्वतन्त्रता और उत्तरदायी शासन को चिरकाल के लिये स्थगित कर देगा।

सर वजीर हसन की धारणा अगले ही अधिवेशन में स्पष्ट रूप से प्रकट होने लगी। कांग्रेस चुनाव में विजयी हो शासन विधान कार्यान्वित कर मन्त्रिमण्डल बनाना और ज़िच पेश करना स्वीकार कर लिया। इसकी प्रतिक्रिया पदलोलुप मुसलमानों में आरम्भ होगई। यद्यपि कांग्रेस से कभी किसी वर्ग अथवा जाति का अहित होने की सम्भावना नहीं फिर भी सरकार के खुशामदी कौमपरस्तों को कांग्रेस की नेकनियती पर कैसे विश्वास होता ?

लीग का अगला अधिवेशन (१९३७) पुन: लखनऊ में हुआ जिसके स्वागताध्यक्ष महाराज महमूदाबाद और अध्यक्ष मिस्टर जिन्ना हुये। महाराजा के भाषण से प्रकट होता है कि मुसलमानों में कांग्रेस के पदग्रहण के कारण कैसी प्रतिक्रिया आरम्भ होने लगी।

उन्होंने कहा—"हमारे देश में आज नाजुक स्थिति पैदा कर दी गई है। क्योंकि बहुसंख्यक जाति ने मुसलिम नेताओं के सहयोग से राष्ट्रीय उन्नति का कार्य अग्रसर करना अस्वीकार कर मानो मुसलिम कौम का अस्तित्व ही मिटाने का निश्चय कर लिया है।"

कायदे आजम ऐसे मौके पर कांग्रेस को आड़ेहाथ लेने से कब चूक सकते थे। उन्होंने कहा—"कांग्रेस ने शासन विधान चलाना स्वीकार कर देश के साथ विश्वास घात किया है। लीग का ध्येय भारत के लिये लोकतन्त्रात्मक सरकार प्राप्त करना है और वह उसके लिये उद्योग कर रही है।' (जिन्ना ने चातुरी से स्वतन्त्रता के स्थान पर सरकार शब्द का प्रयोग किया है) अपने भाषण के अन्तरगत उन्होंने कांग्रेस को जो कुछ भला बुरा कहा उसका कुछ अंश उन्हीं की बोली में जरा पढ़िये—

"कांग्रेस का वर्तमान और गत १० साल का रवैया मुसलमानों को कांग्रेस

से अहलदा करने का जिम्मेदार है। उसने ऐसी नीति धारण कर ली है जिससे केवल हिन्दुओं का हित हो सकता है। कांग्रेस ने हिन्दू बहुसंख्य छ प्रान्तों में मन्त्रिमण्डल स्थापित किया है। इसके प्रोग्राम और कामों से खुलासा जाहिर है कि मुसलमान उनसे न्याय और ईमानदारी की उम्मीद नहीं कर सकते। नवीन शासन विधान में जो कुछ भी थोड़ा अधिकार मन्त्रि-मण्डलों को मिला है उससे उसने अपने अधिकारों का दुरुपयोग कर यह साबित कर दिया कि हिन्दुस्तान केवल हिन्दुओं के लिये ही है।"*

लीग का अगला जलसा इस भाषण के वर्ष भर बाद कलकत्ते में १७; १८ अप्रैल को हुआ। इस विशेष अधिवेशन का सभापतित्व भी जिन्ना साहब ने किया। भाषण में "कांग्रेस राज" की शिकायत और बुराइयाँ की गई और कांग्रेस से विरोध करने के लिये मुसलमानों को खूब उत्तेजित किया गया। इसका कारण यह था कि बहुमत प्रान्तों में लीग के सहयोग से संयुक्त मन्त्रिमण्डल बनाना कांग्रेसने अस्वीकार कर दिया था। विधानके अनुसार न तो यह आवश्यक था और न कांग्रेसने इसे आवश्यक ही समझा। कांग्रेस देश के सभी वर्ग, जाति और समुदाय का प्रतिनिधित्व करती है अस्तु, मुसलमानों के लिये लीग से समझौता करना अनावश्यक था; किन्तु जिन्ना साहब को रुदन करने का यह अच्छा अवसर मिला। उन्होंने मुसलमानों को समझाया कि "यदि कांग्रेस का यही ध्येय होता तो वह लीग से जरूर समझौता कर लेती किन्तु वह हिन्दू संस्था है और हिन्दुओं का ही कल्याण करना चाहती है।"

कलकत्ते के अधिवेशन में मियाँ फजलुलहक भी आकर जिन्ना के पैरों पड़ गये, यद्यपि वे लीग के न तो कट्टर समर्थक ही थे और न लीग टिकट पर एसेम्बली में चुने ही गये थे। उन्होंने भी अपने भाषण में मुसलमानों को खूब उत्तेजित कर पूर्वजों की वीरता का स्मरण कराया और हिन्दुओं के विरुद्ध थानेश्वर और पानीपत के मैदानों की याद दिलाई तथा कहा कि यदि इतिहास

---

* Leader-Octer 17th 1937

की पुनरावृत्ति हो सकती है तो उन्हें भी उसके लिये प्रस्तुत रहना चाहिये। संरक्षणों से मुसलमानों का हित होना असम्भव है।''

मिस्टर जिन्ना ने भी फजलुलहक का अपने भाषण में समर्थन किया और कहा कि कांग्रेस लीग की जड़ खोदने पर तुली हुई है। अपने एक दूसरी युक्ति भी लगाई। आपने अन्य अल्प संख्यकों को भी इसी में लपेटा और कहा "लीग केवल मुसलमानों की ही आजादी के लिये नहीं लड़ रही है वरन वह भारतीय अन्तरिक्ष में रहने वाले सभी अल्प संख्यकों की स्वाधीनता और हिन्दुओं की गुलामी से उनकी मुक्ति के लिए लड़ रही रही है।"

पटना के अधिवेशन में (दिसम्बर १९३८) में अपने उन्ही बातों की पुन: पुनरावृति की और कहा कि "हिन्दू मुसलिम प्रश्न कांग्रेस हाई कमाण्ड की तानाशाही के चट्टान से टकरा कर चूर-चूर हो चुका है।" पंजाब में परिस्थिति ऐसी विगड़ी कि सर सिकन्दर हयता जो पंजाब के प्रधान मंत्री थे। खाकसार आन्दोलन दमन करने की आज्ञा देने के लिये बाध्य हुये परिस्थिति ऐसी बिगड़ी कि गोली चलाने की आवश्यकता आ पड़ी। ३० खाकसार खाक में मिल गये। सर सिकन्दर स्वयम् एक प्रमुख लीगी थे किन्तु लीग के अधिवेशन में सम्मिलित न हुए। स्मरण रहे कि इनकी सरकार ने हिन्दू महासभा के लाहौर में होने वाले अधिवेशन के समय जलूस और स्वयम् सेवकों पर भी शासन और सुव्यवस्था के नाम पर लाठी प्रहार कराया था। इस घटना से लीग को अत्यन्त क्षोभ और लज्जा का, इसलिये अनुभव हुआ कि (१) यद्यपि सरकारका प्रधान मन्त्री एक प्रमुख लीगी था (२) उसी की आज्ञा द्वारा मुसलिम खाकसार मारे जायँ और मर जायँ (३) कांग्रेस के विरुद्ध दमन के अभियोग का हल्ला करने वाली लीग के हूकूमत वाले प्रान्त में जो कि पाकिस्तान होने वाला है वहाँ कि सरकार के लीगी प्रधान मन्त्री के नेतृत्व में ऐसा काम हो पर इसकी चिन्ता न कर लीग समर्थकों ने जल्द ही धूल झाड़ ली और जिन्ना साहब ने अपने सभापति के भाषण में "दो राष्ट्र सिद्धान्त" का राग आलाप डाला।

आपने कहा "इसलाम और हिन्दू धर्म शब्दार्थ में धर्म नहीं बल्की

निश्चित और भिन्न सामाजिक संगठन हैं। हिन्दू और मुसलमानों को एक राष्ट्र के सूत्र में बाँधना स्वप्न मात्र है। भारत के एक राष्ट्र होने का भ्रम हमें बहुत दूर खींच ले गया है और हमारे समस्त उपद्रवों का कारण है। यदि समय के पूर्व हम अपनी भावना का परिष्कार नहीं कर लेते तो यह अभाव भारत का नाश कर डालेगी।''

उनके विचार से भारत की राष्ट्रीय एकता केवल कृत्रिम बन्धनों से संबंधी हुई है और बृटिश संगीनों के बलपर स्थिर है। भारत के लिये लोक अथवा प्रजातन्त्र अनुपयुक्त हैं। राष्ट्र के किसी भी परिभाषा के अनुसार मुसलिम एक पृथक राष्ट्र हैं और उसके लिये पृथक वतन, (Home Land) और राज्य होना चाहिये।

आपने यह भी कहा कि ''यदि भारत सरकार ने बिना उनकी सलाह और स्वीकृति के किसी योजना की घोषणा कर दी तो भारत के मुसलमान उसका पूर्ण रूप से विरोध करेंगे।''

जिन्ना और उनके अनुयाइयों की सक्रियता परीक्षण के लिये हम सरकार से अनुरोध करना चाहते हैं कि वह लीग और जिन्ना की सलाह लिये बिना भारत हित की एक योजना प्रकाशित कर दे। हम यह देख कर प्रसन्न होंगे कि कांग्रेस की भाँति लीग कितना आत्मत्याग और यातना सहन कर सकती है। इससे स्पष्ट हो जायगा कि प्रस्ताव पास कर वह केवल भारत की स्वाधीनता के मार्ग में रोड़ा अड़काने में ही वह अपना गौरव समझती हैं या सचमुच कुछ कर भी सकती है ?

लीग ने मिस्टर जिन्ना का सुझाव स्वीकार कर लिया। अगले दिन मियाँ फजलुल हक ने एक प्रस्ताव उपस्थित किया। इस प्रस्ताव का आशय यह है कि लीग और मुसलमानों के लिये किसी प्रकार की भी संघ व्यवस्था अस्वीकार्य होगी। जब तक शासन-विधान की योजना नये सिरे से विचार न की जावे और मुसलमानों की सम्मति तथा स्वीकृति से न बनाई जाय उसे मुसलमान स्वीकार न कर सकेंगे। तीसरे यह कि मुसलमानों के लिये अलग

अलग क्षेत्र बनाये जाँय जो भारतीय संघ से पृथक मुसलिम संघ में हों। यही सन् १६४० का ऐतिहासिक प्रस्ताव है जिसपर लीग के कौमपरस्त तरह तरह के किले खड़ा कर रहे हैं। इसी प्रस्ताव द्वारा लीग ने पाकिस्तान की मांग स्वीकार की है। (प्रस्ताव परिशिष्ट में देखिये)

इस प्रस्ताव के स्वीकृत होने के कुछ ही दिनों बाद ही दिल्ली में अखिल भारतीय स्वतंत्र मुसलिम सम्मेलन (अप्रैल २७-३०-१६४०) की बैठक हुई। सिंध प्रधान मन्त्री खाँ बहादुर अल्लाबक्स इस अधिवेशन के सभापति थे। सभापति का भाषण राष्ट्रीय भावना की दृष्टि से महत्वपूर्ण है क्योंकि इसमें जिन्ना द्वारा प्रतिपादित दो राष्ट्र सिद्धान्त का घोर खण्डन और विरोध किया गया। इस सम्मेलन में जम्मैयत उलेमा के प्रधान मुफ्तीकिफायतुल्ला ने भी भाग लिया और लीग के पाकिस्तान योजना का प्रबल विरोध करते हुए भारत की अखण्डता नष्ट न होने का प्रस्ताव उपस्थित किया। आपने कहा कि "मुसलमान भी हिन्दुओं की तरह हिन्दुस्तानी हैं और देश उनकी जन्मभूमि है। जंगे आजादी में हिन्दुओं से कन्धा से कन्धा मिला कर जब तक स्वाधीनता न प्राप्त हो जाय, लड़ते रहना मुसलमानों का परम कर्तव्य है।"

दूसरा प्रस्ताव मौलाना हबीबुररहमान ने उपस्थित करते हुए कहा कि "ऐसा कोई भी मसविदा जो हिन्दू मुसलमानों में फूट डालकर पृथक करने का दावा करता हो, वह मुसलिम हितों और देश के लिये घातक है। ऐसी योजना का परिणाम यह होगा कि मुसलमान सदा गुलाम बने रहेंगे; इसका लाभ अंग्रेजों को होगा और ब्रिटिश साम्राज्यवाद की जड़ उखाड़ फेंकना हमारे लिए असम्भव हो जायगा।"

इसे हिन्दू सांप्रदायिक संस्था बनाकर इसका ध्येय नष्ट कर चुके हैं अस्तु मुसलमानों को किसी प्रकार का आशा करना व्यर्थ है। उन्हें अपनी राष्ट्रीय चेतना पृथक होकर जागरित करनी होगी। आपने देशी रियासतों की ओर संकेत कर कहा कि संघ में हिन्दू सीटों का बहुमत कराने के लिये ही कांग्रेस ने यह चाल चली है और रियासतों के मुसलमानों को भी हिन्दुओं के पक्ष

से मुक्त करने के लिये उन्हें और बृटिश भारत के समस्त मुसलिमों को अपनी शक्ति भर उद्योग करना होगा।

लीग की कार्यकारिणी समिति की बैठक मार्च १९३९ में मेरठ में हुई जिसमें यह तय किया गया कि भिन्न सुधार और विधान योजनाओं की छानबीन कर एक मसविदा तय्यार किया जावे जिसमें भारत के मुसलिम स्वार्थ और हितों की रक्षा हो सके। इसी बीज को लेकर भारत विभाजन की विनाशकारी और अव्यवहारिक योजना का रूप डाक्टर लतीफ के भारत के ग्यारह सांस्कृतिक खण्ड में विभाजन की योजना का जन्म हुआ। इस योजना की रूपरेखा हम परिशिष्ट में दे रहे हैं। इसके अनुसार एक खण्ड या क्षेत्र की आबादी में अदलाबदली तथा आरम्भ काल में संरक्षण और जब तक यह पूर्ण न हो जाय सरकार अल्पसंख्यकों के हाथ छोड़ देने की भी सलाह दी गई है। (Statesman, April 1939)

इसी साल सितम्बर के आरम्भ में योरुप में युद्ध छिड़ गया और वाइसराय की घोषणा होते ही अनिच्छापूर्वक भारत युद्ध में लपेट लिया गया। दिल्ली से इसी समय लीग की कार्यकारिणी समिति ने एक वक्तव्य प्रकाशित कर कहा कि जब तक लीग की माँगें स्वीकार नहीं कर ली जाती तब तक वह सरकार के युद्धोद्योग में सहायक होने की बात तक नहीं सोच सकती। (लीग का १५ सितम्बर १९३९ का प्रस्ताव देखिये)

"मुसलिम लीग का ध्येय भारत की स्वतन्त्रता प्राप्त करना है। इसलिये वह सम्राट की सरकार से निवेदन करती है और आश्वासन चाहती है कि भारतीय शासन विधान के सम्बन्ध में किसी प्रकार की घोषणा करने के पूर्व भारतीय मुसलिम लीग की सम्मति और स्वीकृति ले लेंगे और, बिना उसकी सलाह और स्वीकृति के न तो कोई विधान बनाया जाय और न उसे कार्यान्वित हो।"

इस प्रस्ताव से प्रकट हो जाता है कि जिन्ना ने अपना वक्तव्य बार बार बदलने की नीति धारण की है, और जैसा कि प्रस्ताव की भाषा से स्पष्ट है कि

वे एक ही स्वर में दो चीजें प्रकट करने का प्रयत्न करते हैं। प्रस्ताव की सूचना वाइसराय को देने के उपरान्त वे पत्र व्यवहार में लगे रहे। उधर भारतीय कांग्रेस कमेटीने बृटेन का युद्धोद्देश्य स्पष्ट प्रकट न होने के कारण विरोध में ८ प्रांतों के कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल भंग करने का आदेश दे दिया, क्योंकि देश अपनी इच्छा के विरुद्ध युद्ध में घसीटा जा रहा था। मन्त्रिमण्डल ने आज्ञानुसार त्याग पत्र देकर सरकार के सामने एक वैधानिक संकट उत्पन्न कर दिया, किन्तु शासन विधान में इस परिस्थिति का सामना करने का अस्त्र ब्रिटिश कूटनीतिज्ञों ने ९३ धारा के अन्तर्गत स्वतः प्रस्तुत कर रखा था। कोई दूसरा मंत्रि-मण्डल न बना और उस आठ प्रांतों में गवर्नरी शासन आरम्भ हो गया।

इसकी देश में यह प्रतिक्रिया हुई कि जनता यह सोचने लगी कि मन्त्रि-मण्डल के पदत्याग से लीग का "कांग्रेस द्वारा अल्पसंख्यकों के दमन" का अभियोग समाप्त हो जायगा और लीग द्वारा धधकाई हुई विषाक्त साम्प्रदा-यिकता का अपने आप अन्त हो जायगा। कुछ लोगों की यह भी धारणा हो रही थी कि पण्डित जवाहरलाल और जिना की बातचीत के फल स्वरूप किसी ऐसी योजना का जन्म होगा जिससे स्थिति में परिवर्तन होगा और बृटिश सरकार के विरुद्ध एक ऐसी नीति ग्रहण की जायेगी जिसे हिन्दू और मुसल-मान समान रूप से अपनावेंगे। यह कुछ न होकर श्री जिन्ना के द्वारा वज्रपात हुआ जिसे देखकर जनता क्षोभ और क्रोध से विकल हो उठी और जिन्ना के प्रति घृणा के बादल भारत के राष्ट्रीय अन्तरिक्ष पर मड़राने लगे। यह था जिन्ना का लीग को मुक्ति दिवस मनाने का आदेश। इस घोषणा से कांग्रेस की समस्त आशाओं पर तुषारपात हो गया। इसी समय लार्ड लिन-लिथ-गो और जिन्ना से पत्र व्यवहार हो रहा था। जिसमें लाट साहब ने उन्हें पूर्ण आश्वासन दिया। हम यह नहीं भूल सकते कि यह पत्र भी उसी प्रकार के थे जैसे लार्ड मिण्टो ने १९०६ में मुसलिम डिप्यूटेशन के सम्बन्ध में भेजा था जिसकी चर्चा हम इस पुस्तक में कर चुके हैं।

इसी पत्र के संकेत पर लीग का २७ वाँ अधिवेशन लाहौर में काइदे

आजम की अध्यक्षता में हुआ किन्तु लीग और उसके नेताओं को अत्यन्त लज्जा और क्षोभ का अनुभव करना पड़ा, क्योंकि इस समय खाकसारों ने पंजाब में बड़ा उपद्रव मचा रखा था और सरकारी अहलकारों की ज्यादतियाँ भी बढ़ रही थीं। एक ओर राष्ट्रवादी मुसलमानों का यह रंग ढंग रहा है; दूसरी ओर मिस्टर जिन्ना ने मद्रास के लीग अधिवेशन में सभापति के पद से पुनः बेसुरा राग आलापना आरम्भ किया उन्हें प्रतिक्रिया और पाकिस्तान के स्वप्न ने इस तरह अपना लिया था मानों भारत विभाजन ही उनकी प्रवृत्ति और कर्तव्य हो रहा था। उन्होंने कहा :—

"किसी भी परिस्थिति में हम लोग ऐसा शासन विधान नहीं चाहते जो सर्वभारतीय हो और केन्द्र में एक सरकार बने। हम लोग उसे कभी स्वीकार नहीं कर सकते। हम लोगों ने पक्का विचार कर लिया है कि इस महाद्वीप में हम लोग एक भिन्नराष्ट्र हैं और अपना अलग राज्य स्थापित कर दम लेंगे।"

लाहौर के अधिवेशन में पाकिस्तान की माँग स्वीकार हो चुकी थी अस्तु लीग का राजनैतिक ध्येय अब भारत की स्वाधीनता अथवा राष्ट्रीय एकता नहीं रहा। वह अब पाकिस्तान की प्राप्ति हुआ। मद्रास के अधिवेशन में एतदर्थ लीग की नियमावली में संशोधन किया गया और इसका ध्येय पाकिस्तान की प्राप्ति हो गई। इस प्रकार मुसलिम लीग का इतिहास देखने से हमें यह प्रकट होता है कि आरम्भ से लेकर आज तक कि लीग की नीति में कितना परिवर्तन हुआ है। कांग्रेस से कन्धा लगा कर भारतीय स्वाधीनता का ढोंग रचना, दूसरी ओर भारतीय राष्ट्रीयता का विरोध करना विरोधाभास की चरम-सीमा है, किन्तु इन दोनों दृष्टिकोणों की मुसलमानों पर प्रतिक्रिया हुई है। पहले ही से जमैयत उलेमा और राष्ट्रवादी मुसलमानों का संगठन हो चुका है। यह लीग की १९१६ से १९२४ की नीति का फल आगे चल कर कांग्रेस मन्त्रि-मण्डलों के युग में भी लीग के लाखचिल्लाने पर वह मुसलमानों एकता में न ला सकी। इसी विचलित दृष्टिकोण का यह फल हुआ कि मोमिन, अनसार, अहरार, खाकसार, शिया पोलिटिकल कान्फरेन्स, आदि लगकर लीग की जड़ उखाड़ने

लगे। इन दलों ने तो लीग को चुनौती भी दे रखी है। जो हो, यह लीग की उसी प्रतिक्रियावादी नीति का परिणाम है जिसने भारतीय स्वाधीनता का दृष्टिकोण बदल कर उसे एक संकुचित स्तर पर लाकर छोड़ दिया है।

प्रश्न उठता है? मुसलिम राजनीति में इस प्रकार का द्वैध क्यों उत्पन्न हुआ? और कारण क्या है कि लीग एक बार कांग्रेस से कन्धा मिलाकर उससे दूर चली गई? इसका कारण हमें राजनैतिक प्रगति का इतिहास और घटनाओं के अध्ययन से प्रकट होता है। इसपर राजकीय नीति का भी यत्र-तत्र ऐस प्रभाव पड़ा है कि उसका रंग ही बदल गया। एक कारण यह भी है कि गत सौ साल से कुछ ऐसे सामाजिक और धार्मिक परिवर्तन हो रहे हैं जिनका अशिक्षित और संकुचित मुसलिम जनता पर प्रबल प्रभाव पड़ा।

मदरास अधिवेशन के पश्चात् लीग के राजनैतिक प्रकाश का उदय प्रयाग में हुआ। क्रिप्स की योजना पर विचार लीग के वार्षिक अधिवेशन में हुआ जो प्रयाग में ४ अप्रैल १९४२ को हुआ। जिन्ना साहब ने अपने भाषण में पाकिस्तान की रट लगाई।

आपने कहा "मैं यह स्पष्ट शब्दों में प्रकट कर देना चाहता हूँ कि हमारा ध्येय पाकिस्तान की प्राप्ति है। यदि सरकार का प्रस्ताव इस प्रकार का न हो जो हमारे ध्येय में सहायक हो तो हमें उसे स्वीकार नहीं करेंगे। पाकिस्तान की माँग में भूल और गलतियाँ हो सकती हैं किन्तु हमारा पक्का इरादा यही है। यह ब्रिटिश सरकार के देने और मान लेने का प्रश्न नहीं है—हम तो पाकिस्तान लेकर ही दम लेंगे।...भारत के मुसलमान किसी प्रकार भी संतुष्ट नहीं हो सकते जबतक उनके आत्मनिर्णय का अधिकार निर्विरोध स्वीकार नहीं कर लिया जाता और उसमें सहायता नहीं दी जाती।"

उन्होंने यह भी कहा कि "पाकिस्तान का सिद्धान्त अप्रकाशरूपेण योजना में स्वीकार किया जा चुकी है; किन्तु प्रकाश रूपसे उसकी स्वीकृति नहीं हुई है। उसे स्वीकार कर लेना चाहिये।"

लीग की कार्यकारिणी समिति का दिल्ली में ११ अप्रैल १९४२ को क्रिप्स

योजना पर विचार करने के लिये अधिवेशन हुआ। उसमें इस आशय का प्रस्ताव पास हुआ कि—

"गत २५ साल के अनुभव से सम्भव नहीं हो सकता कि हिन्दू मुसलमानों को एक राष्ट्र के सूत्र में संगठित किया सके। इसलिये सुख शान्ति और समृद्धि के लिये उनकी एक संयुक्त सरकार—(संघ) जिसमें हिन्दू और मुसलिम हों जो कि सम्राट की सरकार का ध्येय प्रतीत होता है""""एक बहुत बड़ा भ्रम और असम्भावना है।"

इस सम्बन्ध में आपने बहुत-सी ऐसी वैधानिक बातें भी कहीं जिनका यहाँ स्थानाभाव के कारण उल्लेख करना सम्भव नहीं; किन्तु योजना ६०% मताधिकार का आश्वासन और अल्प संख्यकों को मताधिकार की माँग करना भी उन्हें स्वीकार न हुआ। उन्हें केन्द्र और बंगाल पंजाब तथा सिन्ध के सम्बन्ध में घोर आपत्ति थी, क्योंकि यहाँ हिन्दुओं का अल्पमत होते हुए भी उन्हें अत्यधिक संरक्षण दिया गया है जिससे मुसलमानों के सुखशान्ति का जीवन व्यतीत करने में यह सदा बाधक होते रहेंगे। लाहौर के सन् ४० वाले प्रस्ताव की पुनरावृत्ति की गई। मुसलमानो की सांस्कृतिक, राजनैतिक और धार्मिक एकता के सम्बन्ध में उच्चआदर्शवाद प्रगट किया गया और यह भी कहा गया कि पाकिस्तान योजना की माँग की स्वीकृतिके बिना लीग किसी भावीविधान, योजना अथवा प्रस्ताव का समर्थन कौन कहे विचार भी नहीं कर सकती।

बम्बईका ८ अगस्त ४२का कांग्रेस प्रस्ताव पास होनेपर लीगके कार्यसमिति की बैठक १९ अगस्त को बम्बई में हुई और समिति ने कांग्रेस के निर्णय की निन्दा करते हुए कहा कि "सामूहिक सविनय अवज्ञा का आन्दोलन कांग्रेस भारत में हिन्दुओं का प्राधान्य स्थापित करने के लिये कर रही है। जिसका परिणाम यह हुआ कि बहुत सी सम्पत्ति का नाश हुआ, उपद्रव हुये और कितने जान माल का नुकसान हुआ।" प्रस्ताव में आगे यह भी कहा कि "संयुक्त राष्ट्रों की ओर सेछोटे राष्ट्रों के स्वाधीनता और आत्म रक्षा की घोषण हो चुकी है। अस्तु निवेदन है कि वह भारतीय मुसलिम समस्या में हस्तक्षेप कर उनके लिये अलग

खण्ड और क्षेत्र जहाँ वे बहुमत में हैं और जो उनका वतन है सर्वशक्तिमान रियासत बनाने में सहायता दें। क्योंकि उनकी संख्या दस करोड़ से भारत में कम नहीं है। मुसलीम लीग पाकिस्तान चाहती है। मुसलिम लीग जैसा कि बारबार स्पष्ट किया जा चुका है मुसलमानों की स्वाधीनता पाकिस्तान द्वारा और हिन्दुओं की स्वतन्त्रता हिन्दुस्तान द्वारा चाहती है। मुसलमान हिन्दू राजका जुआ बहुत दिनों तक अपने कन्धों पर ढो चुके हैं आगे ढोना उनके लिये अब असम्भव है।

सन् १९४३ में यद्यपि कांग्रेसी जेलों में बन्द थे लीग वैधानिक संकट का अन्त न कर सकी और गत्यवरोध बना ही रहा। हाँ, कांग्रेस लीग का संघर्ष अवश्य होता रहा जिसका परिणाम यह हुआ कि लीग के समर्थक और सहायकों को निराश ही रहना पड़ा क्योंकि न तो सरकार और न कांग्रेस ही उनका कुछ सुनने के लिये तय्यार थी। हिन्दू सभा और हिन्दुओं से भी लीग का कोई समझौता न हुआ क्योंकि भारत विभाजन और पाकिस्तान की माँग का ऐसा प्रभाव पड़ा कि डाक्टर अम्बेदकर ऐसे दो चार विद्वानों को छोड़कर किसी ने इस पर गंभीर विचार करना भी आवश्यक न समझा।

सन् १९४३ में लीग का ३०वाँ सालाना जलसा नई दिल्ली में मिस्टर जिन्नाके सभापतित्वा में हुआ। इस अधिवेशन में हिन्दू मुसलिम समझौते के लिये लीग की इच्छा प्रकट की गई।" आपने कहा कि हमें पिछली बातों को भुला कर दो बराबर राष्ट्रों की हैसियत से बैठ कर विचार करना चाहिये। आखिर यह कहाँ तक कहा जा सकेगा कि यह दोष अंग्रेजों का है और वही हमें विभाजित किये हुये हैं। मैं स्वीकार करता हूँ, कि अंग्रेज हमारी मूर्खता का अवश्य लाभ उठा रहे हैं। किन्तु हमारे पास इसका उपाय भी है और हम अंग्रेजों की फूट फैलाने की नीति से बँच सकते हैं। हम यह क्यों न कहें कि हम आपस में मिल जाय और अंग्रेजों को भारत छोड़ने के लिये वाध्य करें। संसार के अन्य राष्ट्रों के सामने घुटना टेकने और प्रार्थना करने का कोई अर्थ

नहीं होता और न इससे हमें अपने उद्योग में सफलता मिलने की ही सम्भावना है।"

कांग्रेस के भारत छोड़ो प्रस्ताव और नये रास्ते (यानी आन्दोलन का नया स्वरूप जो ४२ के आन्दोलन में प्रगट हुआ था) की आलोचना करने के पश्चात् आपने कहा "अंग्रेज कहते हैं कांग्रेस का दमन कर वे हमारी रक्षा कर रहे हैं। मैं वैसा कुछ नहीं कहता मैं यहा विश्वास नहीं करता कि अंग्रेजों को हमसे कोई खास मुहब्बत है। हम जानते हैं कि इससे उनका मतलब सधता है और इसी परिस्थिति का वे लाभ उठाना चाहते हैं क्योंकि वे जानते हैं कि अगर हिन्दू मुसलमानों में पारस्परिक सद्भाव और एकता हो गई तो उन्हें अपना राज छोड़ना पड़ेगा। अगर हम मिलजुल कर इस काम को नहीं कर सकते तो हमारे लिये यही उचित है कि हम अलग अलग इसको करें।

भाषण के सिलसिले में सरकार की नीति की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए आपने कहा "सरकार ने कांग्रेस को द्रोही संस्था घोषित कर दी है। लेकिन कांग्रेस तो केवल एक दल मात्र है—भारत के अधिकांश लोग कांग्रेस के साथ नहीं है बल्की बहुमत सरकार की ओर है। सरकार ने कांग्रेस को गैरकानूनी घोषित कर औरों के लिये क्या किया। सरकार ने स्वयम् स्वीका किया है कि भारतीय जनमत के हाथ अधिकार सौंपने के लिये वह तय्यार है यदि कांग्रेस इसमें बाधक न हो। यह स्वीकृति उसकी अपनी ही असफलता प्रकट करती है। चाहे कांग्रेस के साथ भारतीय जनमत हो या नहीं पर दस करोड़ मुसलिम तो कांग्रेस के साथ अवश्य नहीं हैं। उन्हें सरकार क्या उत्तर देती है। मुसलमानों के हाथ अधिकार सौंपने में सरकार को कौन सी दिक्कत और अड़चन है?"

"मुसलिम लीग के प्रति यह अभियोग लगाया गया है कि वह सरकार के युद्धोद्योग में सहायक नहीं हुई। मैं कहता हूँ जहाँ तक मुसलिम भारत का सम्बन्ध है हमारी कटुता का प्याला भर चुका है। मैं इसको एक बार फिर

दोहरा देता हूँ। यह अत्यन्त खतरनाक परिस्थिति है और हम सरकार को इससे सावधान कर देना चाहते हैं। मैं इस मंच से बता देना चाहते हूँ कि मुसलमानों की निराशा, क्षोभ, और उनके प्रति दुर्व्यवहार सरकार के लिये संकट है। इसलिये अपनी स्थिति को समझो। मुसलमानों को आत्म निर्णय का सर्वाधिकार देकर पाकिस्तान की माँग को पूर्ण होने का सरकार आस्वासन दे। यही उसके लिये सबसे सुन्दर अवसर और मार्ग है।"

लीग के लिए सरकार पर यह आरोप करना घोर मिथ्या और भ्रमपूर्ण है। एक नहीं हजारों उदाहरण ऐसे हैं जहाँ लीग के प्रमुख सदस्य सरकार की सहायता ही नहीं कर रहे हैं वरन् अपने स्वेच्छाचार से नागरिक स्वतन्त्रता का गला घोंट रहे हैं। जिन्ना साहब स्वयम् उत्तर दें कि सर सुल्तान अहमद, सर फीरोज खाँनून, सर अकबर हैदरी, सर मोहम्मद जफरुल्ला तथा अन्य उपाधिधारी खैरख्वाह मुसलमान, क्या लीगी नहीं? क्या वे वाइसराय के शासन-परिषद् के सदस्य होकर युद्ध-उद्योग में सहायक नहीं हुये? शासन-परिषद् से त्याग-पत्र भी उन्होंने क्यों दिया है? केवल इसलिये कि लीग टिकट पर आगामी चुनाव में भाग ले सकें। यह तो बड़े लोगों की बातें हैं, छोटे लोगों की तो हमदर्दी लीग के साथ है ही और चुनाव के अवसर पर यह भली-भाँति प्रकट हो जायगा कि अधिकारियों से लीग को कितनी और किस प्रकार की सहायता मिलती है।

लीग ने अपनी कार्य-समिति की बैठक में १४ नवम्बर सन् १९४३ को यह फतवा दिया कि खाकसारों का संगठन ऐसा हुआ जा रहा है कि हम अब यह आदेश दें कि कोई भी लीगी मुसलमान न तो खाकसार-संगठन में शामिल हो न उससे कोई सम्पर्क ही रखे। इस प्रकार खाकसारों का भी लीग अधिनायक ने बहिष्कार किया है।

कराँचीमें लीग का ३१वाँ अधिवेशन २४ दिसम्बर १९४३ को हुआ। मिस्टर जिन्नाने सभापतिके आसनसे जो भाषण दिया उसका आशय निम्नलिखित है।

"मिस्टर चर्चिल ने कहा कि वह ब्रिटिश साम्राज्य की कर्ज अदायगी करने-

वाले वे आखिरी प्रधान मन्त्री नहीं हुए हैं। हमारे विचार में अनिवार्य अदायगी से अपने-आप अदायगी कर देना उपयोगी होगा। इससे ब्रिटेन की ख्याति बढ़ेगी और हम लोग उपकृत होंगे। लार्ड वेवल ने सैनिक की भाँति सीधी-सादी भाषा में अपनी सरकार का अभिप्राय व्यक्त कर दिया है पर भारत की राजनैतिक प्रगति को बढ़ाने का कोई नहीं मार्ग बताया। वह अपने दृष्टिकोण को उदार रखकर भारत का शासन करना चाहते हैं और गत्यवरोध को जैसा का तैसा रखकर युद्धोद्योग की ओर ही अपनी शक्ति केन्द्रित कर रहे हैं। आश्चर्य है कि भारत की राजनैतिक परिस्थितसे अन्यमनस्क होकर वह युद्ध में विजय प्राप्त करने की बात कैसे सोचते हैं?"

"लेबनान का प्रश्न आने पर ब्रिटिश सरकार ने क्या किया? सीरिया का प्रश्न आने पर ही क्या हुआ? क्या इन प्रश्नों का निबटारा न्याय के आधार पर किया गया अथवा राजनीति के। फ्रेंच और अलजीरिया का झगड़ा किस प्रकार निबटाया गया? इसको देखकर आश्चर्य होता है और यह कहना कठिन जान पड़ता है कि यह सब केवल युद्ध में विजय प्राप्त करने के लिये किया गया। इस अपमान को सहकर मैं आज कहता हूँ कि किसी-न-किसी दल की सरकार को सहायता लेनी ही होगी यदि सब दलों का नहीं।" वाइसराय के सहयोग की अपील की चर्चा करते हुए कायदे आजम साहब ने फरमाया— कि "यह सहयोग शब्द का सबसे बड़ा दुरुपयोग है। सहयोग शब्द का सीधा अर्थ क्या है? सरकार चलाने में कोई असली अधिकार न देकर हम साथी इसलिये बनाये जाते हैं कि हम नौकर और भिश्ती का काम करें। क्या कोई संगठन अथवा संस्था ऐसी है जो इस बर्ताव पर अंग्रेजी सरकार से सहयोग करने के लिये तत्पर होगी? अंग्रेजी सरकार की एक निश्चित नीति है, वह उसी आधार पर चल रही है। दरअसल सरकार किसी का सहयोग नहीं चाहती। कांग्रेस ने असहयोग कर सामूहिक अवज्ञा आरम्भ कर दी है। इसीलिये वह गैरकानूनी संस्था करार कर दी गई है। पर भारत के अन्य दलों ने क्या किया कि सरकार इस प्रकार उनकी उपेक्षा कर रही है?

हमने अपने सहयोग की भुजा एक विश्वासी मित्र की भाँति इस आशा से बढ़ाई कि युद्ध की समाप्ति पर हमें भी शासन-विधान में उचित अधिकार और भाग मिलेगा और इसका आश्वासन भी मिल जाना चाहिये। यह स्वीकार नहीं किया गया और हमारी संस्था भी कांग्रेस की भाँति ही संदिग्ध दृष्टि से देखी जा रही है। कांग्रेस निश्चय ही एक हिन्दू संस्था है। पर कांग्रेस और लीग को यदि सरकार समान दृष्टि से देखती है तो हम उसके लिये भी तैयार हैं। लीग भी एक गैरकानूनी संस्था घोषित कर दी जाय।" आपने आगे यह भी कहा—

"हिन्दू देश की राजनैतिक प्रगति को रोकने के कारण हैं। क्या हिन्दुस्तान के मुसलमान भारत पर हिन्दू राज्य और अखण्ड हिन्दुस्तान जैसी चीज को कभी स्वीकार कर सकते हैं? क्या यह सम्भव है? यह हिन्दुओं का प्रस्ताव है। हिन्दू अभी अपने स्वप्न से नहीं जागे पर स्वतन्त्रता की बात करते हैं? कैसी स्वतन्त्रता? मैं आपसे बार-बार कह चुका हूँ कि जब कांग्रेस स्वतन्त्रता की चर्चा करती है तो वह हिन्दुओं की स्वतन्त्रता और मुसलमानों की गुलामी के अर्थ में करती है। जब हम पाकिस्तान की बात कहते हैं, हम अपनी ही नहीं बल्कि हिन्दुओं की स्वाधीनता की भी बात सोचते हैं। मैं आपसे पूछता हूँ, यदि हिन्दू अपनी हठधर्मी में भूलकर स्वप्न देखते हैं और हर प्रकार से गत्यवरोध स्थिर रखने में सहायक हैं तो वे भारत की प्रगति रोकने के उत्तरदायी हैं या और कोई?"

जिन्ना साहब की दृष्टि में गत्यवरोध स्थिर रखने की अपराधी कांग्रेस और उसके बहुअनुयायी हिन्दू ही हैं। कहने की आवश्यकता नहीं कि गत्यवरोध तो स्वयम् सरकार की नीति के कारण स्थिर है न कि हिन्दुओं और कांग्रेस की नीति द्वारा। समय ने प्रकट कर दिया है कि जब भी उपयुक्त अवसर आया कांग्रेस ने पूर्ण यत्न किया है कि गत्यवरोध भंग हो; किन्तु यह सरकार और उसके कृपापात्र हैं जिनके कारण न तो कोई स्थाई विधान बनता है और न गत्यवरोध का ही अन्त हो रहा है।

अध्याय ५

मुसलिम विश्व-बन्धुत्व

१९३५ के शासन विधान के लागू होने के पूर्व मुसलमान अपने संरक्षण और एकता की बात में अपनी शक्ति लगाते थे। सर सैय्यद अहमद ने इस सम्बन्ध में आज से पचास साल पूर्व कहा था कि "जो देश, विदेश में बसते हैं वही उसकी राष्ट्रीयता का निर्माण करते हैं। हिन्दू और मुसलमान मजहबी विशेषण है। हिन्दू मुसलमान और ईसाई जो इस देश में बसते हैं वे एक राष्ट्र हैं। जब वे एक राष्ट्र है तो उनका नागरिक सत्व भी एक ही होगा। वह समय बीत गया जब देश के अलग अलग मजहब के माननेवाले अलग राष्ट्र समझे जाते थे।" इतना ही नहीं मिस्टर जिन्ना ने स्वयम् पहली गोल मेज परिषद में यह भावना व्यक्त की थी कि इस परिषद के परिणाम स्वरूप एक राष्ट्र का नव-निर्माण होगा। किन्तु सन् ३५ के शासन-विधान के भीतर कैसी दुष्टता का बीजारोपण किया गया था इसे महामना मालवीयजी की दिव्य दृष्टि ने Statute Book पर आने के पूर्व ही देख लिया था। आप ने सन् १९३१ में साम्प्रदायिक निर्णय के सम्बन्ध में मत प्रकट करते हुये कहा था—

"इस समय हम एक विदेशी सरकार की हुकूमत में एक होकर अवश्य रह रहे हैं किन्तु हम इस साम्प्रदायिक निर्वाचन प्रणाली से कैसा लाभ उठावेंगे। इसका उत्तर तो कालान्तर में स्वत: मिल जायगा। इसका अभिप्राय तो जनता की सरकार जनता के लिये न होकर एक जातिकी दूसरे जाति के लिय होगी। इसे हम प्रजातन्त्र नहीं कह सकते। यह एक विचित्र प्रकार की तानाशाही होगी। यह एक जाति का दूसरे के ऊपर अत्याचार होगा। यही अन्याय और अत्याचार इस साम्प्रदायिक निर्णय का परिणाम होगा जो सरकार हमारे ऊपर जबरन लादना चाहती है।"

इस वक्तव्य में जो बात कही गई है वही शत प्रतिशत नये शासन विधान के लागू होते ही सत्य होने लगता है। प्रान्तों में कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल बनते ही लीग को मुसलिम कौम और संस्कृति की रक्षा का ज्वर सा जढ़ जाता है और वह कांग्रेस को बदनाम करने के लिये पागल की तरह दौड़ने लगती है। जिन्ना के क्षोभ का ठिकाना नहीं रहता और इसी दौड़ में कितने ही विचित्र प्रस्ताव उपस्थित कर भारतीय मसले के हल होने की गुत्थी जटिल होने लगती है। १६४० में स्पष्ट रूप से लाहौर में वह प्रस्ताव भी पास हो जाता है, जिसके आधार पर लीग पाकिस्तान की मांग पेश करती है। गत पाँच साल से लीग पाकिस्तान का नारा बुलन्द कर रही है। इससे और क्या होगा इसका हम इस पुस्तक में अच्छी तरह विचार कर रहे हैं। एक नया पहलू जो इसके भाष्यकार उपस्थित करते हैं वह यह कि वह भारतीय मुसलमानों को एक प्रकार की आध्यात्मिक शान्ति मिलेगी क्योंकि मुसलमानों की विश्व विजय की परम्परा की भावना इससे सन्तुष्ट होगी। इस सम्बन्ध में पन्जाबी ने अपनी (The Confederacy of India) नामक पुस्तक में प्रकाश डाला है।

"मुसलमान अपने मजहब से अपनी सियासत को अलग नहीं कर सकते। इसलाम में मजहब और सियासत एक दूसरे से अलग नहीं। हरएक मुसल-मान के दिमाग में मजहब और सियासत एक में बुना हुआ है। उनके मजहब

में उनकी सियासत है और उनकी सियासत उनका मजहब है। उनकी मसजिद महज निमाज पढ़नेके लिये ही नहीं है वरन वह उनकी पंचायत या जमात भी है वह एक तरीके। पैदा हुये है। वह तरीका उनपर जबरन नहीं लादा गया है। मजहब और सियासत उनके लिये एकही चीज है एक दूसरे से अलग नहीं। इसलिये हिन्दू मुसलिम मेल या कौमियत जिससे उन्हें एक में गैर मजहबी बिनापर मिलाने की कोशिश की जाय गैरमुमकिन है। इसलामी सियासत जिसमें मजहब और सियासत खासतौर पर एक में मिला हुआ है अपनी तरक्की के लिये पूरी अलहदगी चाहता है। एक आम सरकार का ख्याल जिसमें हर मजहब और कौम के लोग हों इसलाम के लिये बिल्कुल बाहरी चीज है और कभी कामयाब नहीं हो सकती।"

इसके पहले हम देख चुके हैं कि जो भी हिन्दू मुसलिम विचार श्रोत के बुद्धिदाता थे यही यत्न करते रहे कि हिन्दू मुसलिम एक होकर रहे उनकी एक मिली जुली संस्कृति हो चाहे वह हिन्दू थे या मुसलमान। लेकिन हिन्दुस्तान से बाहर के मुसलमान जिसपर हिन्दुस्तानी मुसलमान इतना बड़ा भरोसा रखते हैं और अपना परदादा समझते हैं, वे दुनियाँ की रफ्तार के साथ चलने के लिये कितनी तेजी से अपनी परम्परा का सड़ा गला लबादा फेंक कर अपने लिये नया रास्ता मजबूत कर रहे हैं विचारणीय है। मोरक्कोसे लेकर चीन तक मुसलमान मजहब के पाकेदामन में पैदा होकर भी अलग-अलग अपने राष्ट्रकी उन्नति और दृढ़ता में अपना समस्त शक्ति लगा रहे हैं। एक छोर से दूसरे छोर तक वे अपना राष्ट्रीयता के प्रति ईमानदारी से अपना कर्त्तव्य धर्म से किसी प्रकार प्रभावित हुये बिना पालन कर रहे हैं। राष्ट्रीयता के प्रबल थपेड़ों में पड़कर प्राचीन ओटमन तुर्क साम्राज्य जिसमें खलीफा, सम्राट और धर्मगुरु, दोनों हुआ करते थे चूर चूर होगया। तुर्कों का जिस समय कमाल अता तुर्क के नेतृत्व में नव निर्माण हुआ अरब रियासतों को उनके साथ जोड़ने का यत्न नहीं किया गया। मध्यपूर्व के राष्ट्रों में इतना संघर्ष हुआ करता है कि उनका संयुक्त होजाना उनके लिये हितकर है। किन्तु धार्मिक एकता होने

पर भी वे अपना गौरव भिन्न राष्ट्रीयता में ही समझते है। यह चीज रूस और चीन में और भी प्रकट है कि वहाँ प्रधान्य धर्म से खिसक कर राष्ट्रीयता की ओर हो गया है। इतना होते हुये भी इस देश के कुछ मुसलिम बुद्धिवादी इस कठोर सत्य से अपनी आँखें और दिमाग बन्द रखना चाहते हैं। इस सम्बन्ध में हम जिन्ना साहब की पुस्तक से एक उदाहरण पुनः दे रहें हैं।

"इसलाम के राजनैतिक मसले हर जगह एक प्रकार के हैं। एक मुसलिम देश के उद्धार का प्रभाव दूसरे पर भी पड़ेगा। हिन्दुस्तान के मुसलमानों की किस्मत के फैसले का असर दुनिया के दूसरे मुसलिम मुल्कों पर पड़ेगा और खासकर चीन और रूस के दक्षिणी-पश्चिमी खण्ड पर जहाँ मुसलिम बहुसंख्यक हैं। भारत में ९ करोड़ मुसलमानों को अल्पसंख्यक करार कर देने का अर्थ यह होगा कि हम रूस के ३ करोड़ और चीन के ५ करोड़ मुसलमानों को भी जंजीरों में जकड़ रहे हैं।"

यह है कायदे आजम के बुद्धि के अजीर्ण का एक उदाहरण। भारत में तो पाकिस्तान आप स्वप्नों में कदाचित ही इस जीवन में पा सकें; रूस और चीन में भी पाकिस्तान बनाने का संकेत कर रहे है पर वहाँ सौभाग्य से ब्रिटिश सरकार नही है कि आपका स्वागत कर इतनी बड़ी प्रतिष्ठा दे। वहाँ पहले ही से तुर्किस्तान, खारिस्तान वगैरह मौजूद हैं। रूस और चीन के मुसमान भी परतन्त्र गुलाम हैं, इस नवीन अविष्कार और शोध के लिए कायदे आजम को बधाई।

जिस प्रकार संसार में शीघ्रता से परिवर्तन हो रहा है उसे देखते हुए हम यह कह सकते हैं कि मजहबी रियासतों का जमाना गया। अब खलीफा, पोप और धर्म-गुरुओं को राजनीति के क्षेत्र में पूजा नहीं मिल सकती। यदि कहीं ऐसा हो भी तो उस राष्ट्र के लिए इससे हानि ही होगी, फिर इस युग में "अपनी उन्नति के लिए" इसलामी साम्राज्य को "पूर्ण निष्कासन" (complete isolation) कहाँ मिल सकेगा। पंजाबी यह बात धर्म्मोन्माद अथवा भ्रमवश अवश्य कह गये; किन्तु उन्हें अपनी कमजोरी चुभती है इसीलिए वे आगे चलकर

परिष्कार करते हैं और कहते हैं—"कदाचित हम लोगोंके लिये यह असम्भव होगा कि इस गैर इसलामी दुनियाँ में हम अपना आदर्श मुसलिम राष्ट्र उसके प्रभाव से बचा सकें। ऐसी परिस्थिति में हमें इसलामी तरीके पर दुनिया में इन्कलाब पैदा करना होगा।"

आज पण्डित नेहरू भी विश्वक्रांति की बात करते हैं किन्तु उनके और पंजाबी की दलीलों में कितना अन्तर है। साम्राज्यवाद अथवा पूंजी के आधार पर स्थित सरकारें जो देश का रक्तशोषण कर रही हैं उसके विरुद्ध क्रांति होना सम्भव है और हो रही है किन्तु २१ वीं सदी में १००० सदी अतीत को सम्भव बनाने की बात करना सिवा बुद्धि के दिवालियापन और क्या है। क्रांति की बात करना तो घर में खिचड़ी पकाने समान आसान है किन्तु क्या इससे क्रांति हुआ करती है। इस प्रकार की बातें कागज पर भी प्रतिक्रियावादी योजनाओं द्वारा राष्ट्रीय भावना का उद्रेक कुछ समय के लिये स्थगित करने के लिये की जा सकती हैं। क्रान्ति करने के लिये नाजी जर्मनी और सोवित रूस की भाँति बलावान होने की आवश्यकता है। जो शक्ति इतनी थी कि उन्होंने ब्रिटेन जैसी शक्ति को आज तीसरे दर्जे में ढेल दिया। पाकिस्तान की लम्बी चौड़ी बात और लफ्फाजियों से हम इसकी आशा नहीं कर सकते। इसलिये इसको लेकर विश्वक्रान्ति नहीं हो सकती और न मजहब इसके लिये विस्फोट का ही काम कर सकता है। आज के वैज्ञानिक सैनिक संगठन और अस्त्रशस्त्रों के सामने यह असम्भव है। इस दृष्टि से आज इसलामी रियासतें योरुप की छोटी रियासतों का भी सामना नहीं कर सकती क्योंकि न उनके पास संगठन है और न आधुनिक अस्त्रशस्त्रों का साधन ही। लीग के प्रचारक अपनी अन्धा-धुन्धी में सत्य का गला घोटने में नहीं घबराते। मैं उनसे पूछता हूँ कि क्या वे आज सीरिया, ईराक, और ईरान की दशा भूल गये? वह भी तो स्वतंत्र रियासतें हैं किन्तु मित्रराष्ट्रों ने इन्हें किस प्रकार शक्तिहीन और निकम्मा बनाकर अपनी सेनाओं से इन देशों को दबा रखा है। तुर्की यद्यपि पहले जैसा निकम्मा और योरुप का मरीज नहीं रहा पर अतीत के गीत गाकर वह जीवित नहीं रह सकता और न भारत के मुसलमानों को कोई सहायता

ही पहुँचा सकता है। इसका कारण यह है कि इन देशों के मुसलमानों का दृष्टिकोण और सामाजिक संगठन अब मजहब के संकुचित दायरे में नहीं है। वह इन बंधनों को तोड़कर राष्ट्रीयता के विस्तृत मार्ग पर आ गये हैं। उन्हें हिंदुस्तानी मुसलमानों से कितनी सहानुभूति है यह तो समय बतायेगा किन्तु गत वर्षों में टर्किशमिशन ने भारत भ्रमण के सिलसिले में जो भाव व्यक्त किया उससे तो यही प्रकट हुआ कि हिन्दुस्तानी मुसलमानों और हिन्दुस्तान के बाहर के मुसलमानों के दृष्टिकोण में आकाश पाताल का अन्तर है। यह आशा करना कि इस्लामिक साम्राज्यवाद का पुनः उदय होगा, व्यर्थ है। एक बार अलग पाकिस्तान बन कर दो बड़े राष्ट्रों को पाकिस्तान संघर्ष के लिये चुनौती देगा। पाकिस्तान किसी प्रकार इतनी सैन्य-शक्ति नहीं बढ़ा सकता कि आधुनिक सैन्यसंयुक्त शक्तियों का सामना कर सके और यह भी तुर्की के समान एशिया का मरीज बन जायगा। इसको दूर करने का केवल एक उपाय है और वह है नौकरशाही के जूए को उतार फेंकना। पराधीन जाति स्वाधीनता को ही सबसे बड़ा अभिशाप समझती है पर वही अभिशाप उसके मुक्ति का कारण हुआ करता है। दूसरी चीज और भी है जो दूर अन्तरिक्ष में स्पष्ट दिखाई दे रही है। उसकी चर्चा पंडित जवाहरलाल आजकल बार-बार कर रहे हैं वह है क्रांति जो उनकी धारणा से द्विगुण गति से आ रही है। मुसलमानों के नेता चाहे जो करें और कहें किन्तु संसार की घटनाओं से अछूता और अनभिज्ञ होकर नहीं रहा जा सकता है।

हमें यह भी देख लेना चाहिये कि योरुप की बड़ी-बड़ी शक्तियों ने ऐसे मामलों को किस प्रकार सुलझाया और उसका परिणाम क्या हुआ? वरसाई की सन्धि के पूर्व देखा जाय तो अल्पसंख्यकों का प्रश्न ऐसा नहीं था जिससे कि राजनीतिज्ञों का माथा दुखता। यद्यपि बर्लिन की कांग्रेस (१८७८) में ईसाई अल्पसंख्यकों को कुछ अधिकार देने का निश्चय किया जा चुका था। किन्तु एक व्यापक योजना बनाना इसलिये सम्भव न था कि बहुत सी रियासतें ऐसी थीं जिनमें अल्पसंख्यकों का बाहुल्य था। बल्कि मध्य और

पूर्वी-दक्षिण योरुप में तो इनकी ऐसी खिचड़ी थी कि उनके सम्बन्ध में कुछ करने का परिणाम यह होता कि जर्मन, आस्ट्रियन और आटमन साम्राज्य का अस्तित्व ही लुप्त होने लगता और ऐसी आग धधकती जिसका बुझना असम्भव था। आज भी योरुप में महायुद्ध होने के कारण यही अल्पसंख्यक वर्ग और छोटे निर्जीव निःशक्त राष्ट्र हैं। योरुपीय राष्ट्रों में शक्ति-संतुलन (Balance of Power) का ही विशेष ध्यान रखा गया। रूस तुर्की के कृस्तानों का विशेष ध्यान रखना चाहता था और सुलतान के अत्याचारों से उनकी रक्षा करना चाहता था किन्तु सुलतान ने बृटिश सहायता और सहयोग से इसको फलीभूत न होने दिया। रूस की पानस्लाव (Panslav) सहानुभूति ने उसे जर्मनी और आस्ट्रिया की शक्ति के सामने लाचार कर दिया। उसका परिणाम यह हुआ कि मध्य और दक्षिण पूर्वी योरुप षड्यंत्र-केन्द्र बन गया और बड़ी बड़ी शक्तियों के संघर्ष का कारण। १९१४ के गत महायुद्ध का कारण भी रशियन पानस्लाविज्म ही था। योरुप के संघर्ष में दो बातें सदा स्पष्ट रही हैं; एक तो जर्मनी का विघटन और दूसरे अन्तर्राष्ट्रीय राष्ट्रवाद के परिधान में साम्राज्य-लिप्सा। इसमें ब्रिटेन, जर्मनी और रूस का सदा से प्रमुख स्थान रहा है। एक बार फ्रांस ने भी नैपोलियन के नेतृत्व में सिर उठाया किन्तु शक्ति का ह्रास रूस और बृटेन के षड्यन्त्र से हो गया। उसके बाद शक्ति-संतुलन के नाम पर योरुपीय शक्तियों का और विशेषकर जर्मनी का पराभव बृटिश कूटनीतिज्ञ किया करते हैं। गत महायुद्ध के पश्चात योरुप के छोटे राष्ट्रों को आत्म-निर्णय करने के सिद्धांत को बृहत् तटस्थ रूपी राष्ट्रों ने स्वीकार कर लिया पर उससे विश्वकल्याण न हो सका हाँ रूस का जारशाही से अवश्य उद्धार हो गया। यद्यपि लीग आफ नेशन्स ने अल्पसंख्यक राष्ट्रों को अनेक संरक्षण और बृहत् राष्ट्रों को नियन्त्रण में रख सका। सन् १९३२ में जर्मन सूडेटन और पालिश समस्या को लेकर क्या हुआ इसका परिणाम कहने की आवश्यकता नहीं। क्या लीग और जिन्ना भी भारत को इसी प्रकार के चिर अशांति और संघर्ष की भट्ठी बनाना चाहते हैं? वरसाई की संधि ने जर्मनी को टुकड़े-टुकड़े

कर उसकी शक्ति का विघटन करना चाहा किंतु हिटलर के हाथ वही टुकड़े एक शक्तिशाली तलवार बन गये और योरुप में ऐसी खून की नदियाँ बहाईं कि कितने अल्पसंख्य राष्ट्रों का योरुप के नकशे से नाम-निशान मिट गया। हिटलर ने किस नीति से अपनी शक्ति का एकीकरण किया यह उसके मैनकैम्फ Mein Kamf नामक पुस्तक पढ़ लेने पर अविदित नहीं रह जाता। यदि देखा जाय तो हिटलर की सफलता की कुञ्जी अल्पसंख्यकों ने ही उसे दी। सूडेटन जर्मनों का चेकोस्लेवाकिया में अल्पमत ने पहला काम यह किया कि अपने आस-पास की रियासतों की जड़ में घुन की तरह लगाकर उसकी शक्ति पोली करने लगे। आगे चलकर अतृप्त राष्ट्रीय भावनाओं ने अल्पमतों को भड़का कर उन रियासतों की शक्ति का तोड़ मरोड़ किया जो उनके मार्ग में बाधक थे, जैसे चेकोस्लावाकिया में स्लोव और यूगोस्लोवाकिया में क्रोट। इससे यह प्रकट है कि अल्पसंख्यक, शक्तिशाली और बृहत् राष्ट्रों की शक्ति ही बढ़ाने में सहायक हुए। जिन्ना साहब ने बड़े गर्व से कहा है कि (Presidential address Madras Session of League, 1941) जिस प्रकार क्रोट ने अलग होकर अपनी स्वतंत्रता स्थापित की उसी प्रकार वह भी बृटेन की सहायता से पाकिस्तान स्थापित करेंगे, यदि बृटेन सहायक न हुआ तो किसी दूसरी शक्ति के सहयोग से, जो उदारता पूर्वक हमें उपकृत करेगा, और उसकी सहायता से हम पाकिस्तान स्थापित करेंगे। अस्तु, हम देखते हैं कि पाकिस्तान का आदर्श जो इस्लामी दुनियाँ का बहिश्त होगा क्रोटिया है। जैसा कि हम देख चुके हैं जिनका आदर्श क्रोटिया है वे मुसलमान यदि इतना संघर्ष और कटुता फैलाकर क्रोटिया जैसी रियासत ही पाकिस्तान में बना सकें तो उनका अस्तित्व स्थिर रहना असम्भव है। हम योरुपीय घटनाओं की पुनरावृत्ति नहीं करना चाहते पर यह तो कह ही देना चाहते हैं कि यदि मुसलमान उससे सबक न सीखें तो हिन्दू उसे नहीं भुला सकते। हिंदुओं की सैनिक शक्ति का मुकाबला करना इनके लिये असम्भव होगा। यह स्वप्न देखना कि पश्चिमोत्तरी पाकिस्तान अफगानिस्तान, ईरान, ईराक और तुर्की की सहायता से भारत में पुनः हिन्दुओं के बाहुल्य को नष्ट

कर मुसलिम राज्य-स्थापित करेगा वालू से तेल निकालने के समान अनधिकृत चेष्टा है। हमें तो जिन्ना की सूझ पर तरस आती है और मुसलमानों की बुद्धि पर जो इस भाँति इनका अनुगमन करते हैं। कदाचित् आज मुसलमान भी शिक्षित होते और पाकिस्तान की बुराइयों को समझते होते तो ब्रिटिश सरकार को पाकिस्तान के स्थान पर मुसलमानों और हिंदुओं में फूट फैलाने का कोई दूसरा नाटक रचना पड़ा।

पाकिस्तान की माग स्वीकृत हो जाने पर असली खतरा मुसलमानों को ही होगा इसमें सन्देह नहीं। अंग्रेजों की शक्ति का जिस गति से ह्रास हो रहा है उससे बहुत बड़ी आशा नहीं की जा सकती। यदि रूस को साम्राज्यवाद की लिप्सा न ग्रसे तो उसको भारतीय मुसलमानों को पाकिस्तान कायम रखने में सहायक होने में कोई प्रलोभन नहीं। पूर्व में चीन की शक्ति का उदय हो रहा है, उधर प्रशान्त के द्वीपसमूह, अनाम, श्याम, हिन्दचीन, सुमात्रा, जावा आदि श्वेत जाति के दासत्व से मुक्ति पाने के लिये विप्लव कर रहे हैं। डा० सुकरनो और महम्मद हट्टा हिन्दुओं से प्रभावित नहीं हुए हैं। इन घटनाओं को हम नहीं भुला सकते, इसका प्रभाव भारत पर भी पड़ रहा है। जिन्ना और उनकी लीग हिन्दचीन की गुलामी को दूर करने के लिए क्यों नहीं यत्नशील होते। क्या पत्रों में मौखिक सहानुभूति और वक्तव्य भी नहीं प्रकाशित कर सान्त्वना दे सकते ?

रह गया मुसलिम विश्वबन्धुत्व का प्रश्न उस सम्बन्ध में हमारी धारणा यह है कि जिन पर हिन्दुस्तानी कौमपरस्त मुसलमानों का बहुत बड़ा भरोसा है उनका मज़हबी दृष्टिकोण संकुचित दायरे से बाहर निकल आया है और उन्हें अपने उन भाइयों से जो गुलामी की जंजीरों को जकड़ने में सहायक हैं कदाचित कोई सहानुभूति नहीं। अपने को शक्तिशाली राष्ट्र बनाने के लिए मजहबी दृष्टिकोण का त्याग कर उदार दृष्टिकोण बनाना होगा। हम उस पुरानी कहानी को नहीं भुला सकते जिसका अर्थ है "एकता ही शक्ति है।" क्या जिन्ना और मुसलमान उस पुरानी को कहानी नहीं जानते जिसे उन्होंने लड़कपन

में पढ़ा । बूढ़ा और लकड़ियों का गट्ठर ईसप की प्रसिद्ध कहानी है । जिन्ना का दृष्टिकोण दूषित होने का कारण अंग्रेजों राज्य और उनकी कूटनीति है जिसका प्रलोभन देकर वह उन्हें और मुसलमान कौम को भुला रहे हैं । इसका कारण शक्ति हथियानें का प्रलोभन भी हैं । पर इसके सम्बन्ध में अल्लामा मशरकी (पत्रिका ५-११-४५) और खाजा अब्दुलमजीद ने (पत्रिका ४-११ ४५) अपने भाषणों में क्या कहा है उसपर मुसलमानों को ध्यान देना चाहिये । "गुलामों का कोई मजहब नहीं होना ।" इसलिये "पाकिस्तान की माँग मुसलमान-हितों के लिये घातक है ।" आधुनिक युग के संघर्ष और संकर्षण में पाकिस्तान साम्राज्य विधायक न होकर एक आधीन गुलाम मुल्क ही रहेगा ।
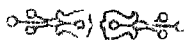
अध्याय ६

ईराक ने क्या किया ?

हिन्दुस्तान के वे मुसल्मान जो देश का धार्म्मिक आधार पर बँटवारा करना चाहते हैं उन्हें अपने पड़ोसी ईराक के वैधानिक इतिहास का पाठ पढ़ना चाहिये जहाँ की साम्प्रदायिक समस्या भारत की ही भाँति जटिल थी। गत महायुद्ध के पश्चात् अनेक छोटी मुसलिम रियासतें अस्तित्व में आईं। इन रियासतों में भी भारत की भाँति ही जाति, धर्म, भाषा, संस्कृति और सभ्यता का जटिल प्रश्न था। पारस्परिक युद्ध और कलह से वायुमण्डल दूषित हो रहा था। तुर्की की सल्तनत में इनपर विभाग और विभाजनन की नीति से शासन होता था और शासकों की अदूरदर्शिता के कारण इनकी दशा शोचनीय हो रही थी। गत महायुद्ध ने तुर्क-साम्राज्य का सफाया कर दिया। प्रत्येक आधीन देश उससे बगावत कर स्वाधीन होगया। स्वाधीन होते ही वे समस्यायें जो इन देशों की शान्ति और शक्ति-वृद्धि में बाधक हो रही थीं अपने आप दूर होगईं। धार्मिक, सांस्कृतिक और भाषा आदि का प्रश्न स्वतः हल होगया और उन्हें स्वतन्त्रता ने वह वैभव दिया जो इन्हें कभी तुर्की साम्राज्य में लभ्य न था।

भारत के राष्ट्रवादी भी साम्प्रदायिक मसले पर इसीलिये अधिक महत्व नहीं देना चाहते क्योंकि एक बार देश के स्वाधीन हो जाने पर पारस्परिक झगड़े और मतभेद अपने आप मिट जायेंगे। जैसा की जिन्ना कहा करते हैं 'साम्प्रदायिक प्रश्न का पहले निपटारा हो जाय तब स्वाधीनता प्राप्त की जाय" प्रमाद के सिवा और कुछ मालूम नहीं होता। इसका उदाहरण तो हमारे निकट-मध्यपूर्व की मुसलिम रियासतें स्वयम् दे रही हैं। स्वाधीनता प्राप्त कर लेने पर उनका मसला हल हुआ अथवा मसला हल हो जाने पर स्वाधीनता प्राप्त हुई, इसे हम स्वयं देख सकते हैं।

मुसलिमलीग के नेता यह प्रचार करते हैं कि जिस देश में मुसलमान रहते हैं उसमें मुसलमान एक राष्ट्र हैं और गैर मुसलिम दूसरे राष्ट्र हैं। किन्तु ईराक के मुसलमानों ने यह सिद्धान्त स्वीकार नहीं किया। उन्होंने इसी धारणा पर काम किया कि ईराक में रहनेवाले चाहे किसी जाति, धर्म, सभ्यता अथवा संस्कृति के उपासक हों सभी एक राष्ट्र हैं। उनकी दृष्टि में जाति-धर्म का महत्व इतना नहीं था जो उनके स्वतन्त्रता प्राप्ति में बाधक होता। एक देश में रहनेवालों का राजनैतिक और आर्थिक प्रश्न समान होता है, उसमें जातिधर्म अड़चन नहीं डालता। इन देशों पर भी 'पान-इसलामवाद' का प्रभाव था और किसी समय यह भी खलीफा के सल्तनत का एक विशेष अंग था। स्वाधीन हो जाने पर ईराकियों ने अपना वैधानिक प्रश्न किस प्रकार हल किया? इसका उत्तर लीग दे? उन्होंने विभाजन का प्रश्न नहीं उठाया और न जातिधर्म संकट की दोहाई ही दी।

विधान बनाने के लिये ईराकवालों ने एक राष्ट्रीय पञ्चायत बनाई जिसकी माँग आज भारतीय कांग्रेस भी कर रही है। जिसमें सब वर्ग और जातियों का प्रतिनिधित्व था। इसमें ईराक के अल्पसंख्यक और अल्पमतों को जिसकी माँग भारत के मुसलमान किया करते हैं और शासक वर्ग दिलचस्पी से सुनते है, किसी विशेष प्रकार का आश्वासन अथवा संरक्षण नहीं पा सका। ईराक

के सम्राट यद्यपि कितनी पीढ़ियों से शासन करते रहे हैं किन्तु उनकी उपस्थिति किसी प्रकार राष्ट्रीय विधान के निर्माण में बाधक नहीं हुई।

ईराक का शासन विधान १० जुलाई १६२४ को कार्यान्वित हुआ और २१ मार्च सन् २५ को सम्राट की स्वीकृति पा गया। विधान की कुछ विशेषताओं की यहाँ हम संक्षेप में जानकारी के लिये चर्चा कर रहे है।

(१) ईराक के निवासियों की कानूनी हैसियत एक होगी चाहे वह किसी धर्म अथवा जाति के माननेवाले हों और उनकी भाषा, संस्कृति अथवा धर्म कुछ भी हो।

(२) सरकार की दृष्टि में सभी ईराकी समान होंगे। जहाँ तक उनके अधिकारों का प्रश्न है सरकारी नौकरियाँ बिना किसी भेदभाव के योग्यतानुसार ईराकियों को ही दी जायँगी जब तक की कोई विशेष कारण न हो।

(३) ईराक के शासनपरिषद् और राज्यपरिषद् का ईराकी के अलावा कोई भिन्न राष्ट्र का मनुष्य सदस्य न होगा और वह किसी प्रकार की सुविधा न पा सकेगा जिसकी विदेशी राष्ट्रीयत्ता हो।

(४) ईराक राष्ट्र में अरब, खुर्द, तुर्की के अलावा सिरीयन, चाल्डिअन, असीरियन और यहूदी शामिल होकर एक ईराकी राष्ट्र के रूप में परिणत हुये हैं। ईराकी राष्ट्र में प्रत्येक वर्ग चाहे, वह बड़ा अथवा छोटा हो, समान अधिकार और नागरिक स्वतन्त्रता का उपयोग कर रहा है।

ईराक में कितने मजहबों के माननेवाले हैं यह भी कम दिलचस्प नहीं है। वहाँ के धर्म और जातियों की सूची यह है। मुसलिम, ईसाई, यहूदी, बहावी, सीरियन, सेबियन, यजदी, मेगियन के अलावा अन्य कितनी ही छोटी जमातें। यद्यपि मुसलिम बहुसंख्यक हैं किन्तु गैर मुसलिमों की ओर से किसी प्रकार का संरक्षण, आश्वासन या साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व पाने का उद्योग नहीं किया जाता। मसजिद और गिरजे स्थान-स्थान पर साथ-साथ हैं। अज़ान में गिरजे के घंटे की गूँज समा जाती है किन्तु मसजिद के सामने बाजे का सवाल लेकर सड़कों पर दंगा नहीं होता। ईराकी अपने को राष्ट्र के सम्बन्ध

में पहले ईराकी और बाद में मजहबी समझते हैं। उनकी धारणा है "मजहब खुदा की इबादत के लिये है, मगर मुल्क पर सबका बराबर हक है।" इस प्रकार यद्यपि कुल मिलाकर ६ प्रकार की भाषा और लीपियाँ प्रचलित हैं पर अरबी ही राष्ट्र और सरकार की भाषा है। इन सबका प्रभाव यह हुआ कि यद्यपि ईराक भारत ऐसा बड़ा देश नहीं पर देशभक्ति के कारण सभी भेदभाव मिटाकर आज वह सुदृढ़ और उन्नतिशील राष्ट्र हो रहा है। अगर ईराक में भी जिन्ना जैसे नेता और उनकी लीग होती तो आज ईराक रसातल में पहुँच गया होता। तुर्की में कमाल अतातुर्क और इस्मतपाशा ने जो चमत्कार किया क्या वह भुलाया जा सकता है? क्या लीग का और इन राष्ट्रोंका आदर्श और दृष्टिकोण समान है? इसे तो लीगवाले आँख खोलकर देखें। अगर वह नहीं देखते तो मुसलिम जनता देखे और अपने कल्याण का मार्ग ग्रहण करे।

अध्याय ७

दो राष्ट्र क्या हैं ?

प्रोफेसर कीथ ने अपनी पुस्तक[1] में लिखा है यों तो मुसलमानों में भिन्नत्व का सूत्रपात मांटफर्ड सुधार के समय से ही हुआ किन्तु उसकी असली बुनियाद साम्प्रदायिक निर्वाचन से आरम्भ होती है। उसे उत्तेजित करने के लिये धार्मिक भावनायें उत्पन्न की गई। "मुसलमानों में मुस्लिम रियासत कायम करने की भावना में अफगानिस्तान सहायक हुआ ; जिसमें पश्चिमोत्तर प्रान्त की सभी रियासतें हों, जिनमें मजहबी जोश हो ; किन्तु ऐसी रियासत से भारत को सदैव खतरे की सम्भावना है।" (पृष्ठ २८७)। इसीलिये बहुत से समझदार मुसलमान मजहबी जजबात को दबाने की कोशिश करते रहे ; फिर भी भारत के एक ओर से दूसरे छोर तक साम्प्रदायिक दंगे हुए जिनका कोई न तो कारण ही था और न आवश्यकता ही। यह केवल मिथ्या धार्मिक भावना का उत्तेजनमात्र था। यही उत्तेजन और वर्गभिन्नत्व की भावना आज पाकिस्तान की मांग के रूप में मूर्तिमान हुई है।

---

1. A. B. Keith. A Constitutional History of India. P. 287

पाकिस्तान के समर्थन का मूल जैसा कि लीगी नेताओं के भाषण से प्रकट होता है दो राष्ट्र सिद्धान्त पर स्थिर है। इसे विचार करने पर यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि "क्या मुसलिम भिन्न राष्ट्र है? और यदि वे हैं तो राष्ट्र का क्या अभिप्राय है? राष्ट्र-भावना क्या है? इसकी परिभाषा होनी चाहिये; जो भी हो यह कल्पना, उन्माद अथवा व्यक्तिगत वस्तु नहीं। जिन्ना ने मार्च १९४० में लीग के सभापति के पद से भाषण करते हुए कहा था— "मुसलमान एक राष्ट्र हैं; यह राष्ट्र की जो भी परिभाषा हो उससे जाँचा जा सकता है।" किन्तु आपने, भारतीय मुसलिम राष्ट्र क्या है, यह परिभाषा करने का कष्ट न किया। यदि आपने यह बताया होता कि मुसलमान किस प्रकार हिन्दुस्तानी नहीं हैं और कौन-सी चीज उन्हें हिन्दुस्तानीपन से अलग करती है, जिससे वे एक अलग राष्ट्र हैं तो इतना भ्रम न फैलता। किस चीज से राष्ट्र बनता है इसकी शाब्दिक परिभाषा कठिन है; किन्तु किन तत्वों से राष्ट्र नहीं बनता, यह बताना उतना कठिन नहीं। इस सम्बन्ध में हम कुछ योरोपीय विद्वानों की सम्मति दे रहे हैं:—

ब्रिटेन के भूतपूर्व प्रधान मंत्री लायड जार्ज ने वेल्स की राष्ट्रीयता के सम्बन्ध में अपने ब्राडकास्ट में कहा था—"राष्ट्र को राष्ट्र कहने के लिए कौन तत्व हैं जो राष्ट्र को राष्ट्र बनाते हैं। हमारे विचार से वह है जातीय विशिष्टता की समानता है। समान इतिहास और परम्परा, भौगोलिक परिस्थिति और सरकारें है। किन्तु पृथ्वी का कोई देश इस कसौटी पर शत-प्रतिशत नहीं उतर सकता।"

प्रोफेसर राम्जेम्योर[1] ने लिखा है "यह कहना अत्यन्त कठिन है कि राष्ट्र किससे बनता है। निश्चय ही वह जाति मात्र से नहीं बनता, यद्यपि एक बार जातीय संगठन होने पर राष्ट्र बनता है। इसके हो जाने पर यह अपनी एकता से ही जाति को शक्ति और बल देता है। योरुप की

1. Ramsay Muir :—Civilzation & Liberty Page 58.

सभी रियासतों के निवासी निश्चित जाति वाले हैं, विशेष कर इंगलैण्ड और फ्रांस, जहाँ राष्ट्रीय भावना अत्यन्त प्रबल रही है, सबसे अधिक मिश्रित जाति के हैं। एक स्पष्ट सीमा और उसमें प्राकृतिक गुण, जिसपर वहाँ के रहनेवालों का विशेष प्रेम और ममत्व हो, एक आवश्यक वस्तु है। भाषा की एकता भी महत्वपूर्ण है; किन्तु आवश्यक नहीं जैसा कि स्वीजरलैंड और स्काटलैंड के उदाहरण से स्पष्ट हैं। समान कानून और विधान व्यवस्था, समान परम्परा ही कदाचित सबसे महत्वपूर्ण है जो किसी देश और जाति को राष्ट्रत्व प्रदान करती है।"

प्रोफेसर हेराल्ड लास्की का मत है:—"राष्ट्रीयता से उस विशेष एकता का बोध होता है जो किसी देशको संसार के अन्य मानव-समूह से पृथक करती है।"

इसलिये इन विद्वानों के मत का निचोड़ यह हुआ कि किसी जाति-विशेष की भाषा, धर्म और रहन-सहन, संस्कृति, देश-प्रेम और समान-शासन-व्यवस्था तथा इतिहास और परम्परा ही उसे राष्ट्र बनाती है। यद्यपि लायड जार्ज के मतानुसार किसी राष्ट्र के लिये यह सब तत्व समान रूप से मिलना असम्भव है। यह स्थूल परिभाषा सामने रखकर हम उन मुसलमानों से पूछते हैं कि क्या वे भिन्न राष्ट्र हैं? और उनकी देश में किसी वस्तु से समानता नहीं? यदि जाति और देश के पहलू से ही देखा जाय तो हिन्दुस्तानी मुसलमान भिन्नराष्ट्र नहीं। भारतीय वातावरण में यह प्रभाव अवश्य रहा है कि वह भिन्न धार्मिक और जातीय रीतियों को एक में मिला ले और इसी का परिणाम यह हुआ कि अन्य देशीय वर्ग भी एक ही राष्ट्र के भिन्न अंग हुए। वे अंग, सिन्धी, पञ्जाबी, गुजराती, मरहठी, काश्मीरी और द्रविड़ हैं जिनसे भारतीय राष्ट्र उत्पन्न हुआ है। यह भिन्नता धार्मिक अथवा प्रान्तीयता की संकीर्णता नहीं रही है। धर्म में चाहे जो भी एकता और भ्रातृत्व उत्पन्न करने की शक्ति हो किन्तु वह इतना शक्तिमान नहीं कि भिन्न जाति और देशवालों को एकत्व के सूत्र में बाँध सकें। यदि यही गुण धार्मिक एकता में होता तो संसार भरके ईसाई एक राष्ट्र होते और योरुप कभी इतनी रक्ताहुति का अग्निकुण्ड

न बनता। यही कारण है धार्मिक आधार पर भी पन्जाब और बंगाल के मुसलमानों में समान धर्म होने पर भी एकता और समानता नहीं है। पंजाब या बंगाल के हिन्दू-मुसलमानों में आपसी रहन सहन और बोल चाल की समानता ही उनमें एकता की भावना उत्पन्न कर सकती है। जिन्ना के इस तर्क का विरोध करते हुये एक अर्धगोरा पत्र कहता है कि "अन्य देशीयता की दृष्टि से विचार करने पर हिन्दू और मुसलमानों को भिन्नराष्ट्रों में गिनने का कोई अर्थ नहीं। मजहब अथवा बहुसंख्यक होने से ही कोई जाति भिन्नराष्ट्र नहीं हुआ करती। पंजाब के एक मुसलमान और कोंकणी मुसलमान में कौनसी जातीय एकता है? हिन्दुस्तान में जातीय आधार पर विभाजन अवश्य है और बहुत हद तक; किन्तु यहाँ, जैसा की प्रकट होता है, अन्य देशीयता अथवा प्रान्तीयता की सीमा का निर्धारण धार्मिक आधार नहीं है और इस दृष्टि से भारत में न तो मुसलिम राष्ट्र है और न हिन्दू राष्ट्र—"

भारत के बहुत से घरानों में अपना वंश पुराणों की परम्परा से जोड़ा जाता है। भावुक हिन्दू आर्य सन्तान हैं। यद्यपि पश्चिमी विद्वान आज इस तर्क का खण्डन कर रहे हैं कि प्रत्येक जाति समयान्तर में मिश्रित होगई है और किसी जाति को अपने पूर्वजों की परम्परा से जोड़कर वैसा ही शुद्ध होने का दावा करना कदाचित ठीक नहीं। अब यह भी संशय की दृष्टि से देखा जा रहा है कि आर्य्य जाति न थी, वह तो एक सभ्यतामात्र थी[1]? यदि हिन्दू अपने को आर्य्य सन्तान कहते हैं तो मुसलमानों को भी अपनी परम्परा के लिये अपने को विदेशी मानना उचित ही है। यदि हम अपने को वशिष्ठ गौतम, भरद्वाज कश्यप आदि की सन्तति समझकर गौरवान्वित होते हैं तो उन्हें भी तैमूर, चंगेजखाँ और नादिरशाह को अभिमान होता है। इस तरह के गौरव का अभिमान हमें नहीं घबराता। हमारी घबराहट तो तब होती है जब उनके

---

1. Edward Houtton in Picture Post Octr 1938 quoted by V. M. Kulkarini in Is Pakistan Necessary? Page 53.

नेता तर्कहीन और काल्पनिक स्वप्न द्वारा नवीन सिद्धान्तों का प्रतिपादन करने लगते हैं। क्या हिन्दुस्तानी मुसलमानों की उत्पत्ति भारत से बाहर की जातियों से हुई है या उनकी परम्परा इतनी प्राचीन है कि उसके लिये हमें कल्पना का आश्रय लेना पड़ता है? प्रत्येक इतिहास पढ़नेवाला जानता है कि भारत में पहले पहल मुट्ठी भर मुसलमान आक्रमणकारियों के रूप में आये। बार-बार आक्रमण करने पर भी अब तक वे भारत में बसकर हिन्दुस्तानी नहीं हो गये उनका भारतीय जातीयता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। इतिहास में कहीं इसकी चर्चा नहीं कि आर्यों की भाँति मुसलमान भी भारत में आकर बसें। प्रोफेसर कीथ का कहना है कि "हिन्दुस्तान के ९।१६ मुसलमान परिवर्तित हिन्दुओं की सन्तानें है" (A Constitutional History of India P. 38)

इसमें तो कोई सन्देह नहीं कि अपने को हिन्दुस्तानी से अलग कहनेवाले मुसलमानों की संख्या उन्हीं के वंशज है जो पहले हिन्दू थे पर किसी कारणवश मुसलमान होगये हैं। उनके हिन्दुत्व के संस्कार उन्हें न छोड़ सके इसीलिये कुरान कलमा के प्रभाव में होते हुये भी उनमें वह कट्टरता न आई जिसकी आज लोग कल्पना कर मुसलमानों में फूट फैला रहे हैं। यह जानकर हमारे पाठकों को कम आश्चर्य न होगा कि मुसलिमलीग के नेता जो अपने को पैगम्बर कहने में नहीं शरमाते, चाहे कभी कुरान को अपने नखों से भी स्पर्श न करते हों और रोजा निमाज की तो बात ही क्या, अपनी मुसलमानीनियत, को दो-तीन पुस्त से पुरानी प्रमाणित नहीं कर सकते।

स्वर्गीय सरमुहम्मद इकबाल, इस्लाम के कवि और पाकिस्तान-स्वप्न के जन्मदाता का विकास एक काश्मीरी ब्राह्मण परिवार से है जो मुसलमान होगया था। इसीलिये सरअब्दुल कादिर ने अल्लामा इकबाल के सम्बन्ध में कहा था कि "उनमें अपनी जाति के सर्वश्रेष्ठ गुण और चरित्र तो थे ही साथ ही साथ वे गुण और संस्कार भी थे जो उनके पूर्वजों में थे।" यहाँ सरअब्दुल इकबाल को हिन्दू पूर्वजों की सन्तान होना तो स्वीकार करते ही हैं

साथ ही साथ कदाचित इकबाल के पद्यों की दार्शनिकता के लिये उनके पूर्वजों की प्रशंसा करते हैं जो ब्राह्मण होने के कारण भारतीय दर्शन में निपुण रहे होंगे और उनके गुणों और संस्कारों का अल्लामा पर प्रभाव पड़ना आवश्यक था।

स्वर्गीय सरअब्दुल हारून जो कि लीग के विदेशी सम्बन्ध विभाग के मन्त्री थे, ३ अप्रैल सन् ४० के एक वक्तव्य में कहा है "कि मिस्टर जिन्ना ऐसे महत्वपूर्ण व्यक्ति भी एक भाटिया परिवार के वंशज हैं। सर सिकन्दर हयात खाँ के पूर्वज राजपूत थे, जिसके सम्बन्ध में उन्होंने स्वयम् कहा है कि उनके पूर्वज लोहाना के विशिष्ट हिन्दू थे"—आश्चर्य होता है यह देखकर कि वे नेता जिनके पूर्वज हिन्दू थे और जिनकी धमनियों और रक्तनालिकाओं में आज भी हिन्दूरक्त का संचार हो रहा है, अपने को विदेशी, अन्य देशीय कहने में लज्जित नहीं होते। लज्जा का चाहे वे न अनुभव करें; किन्तु उन्हें सत्य पर कालिख न पोतनी चाहिये।

भाषा और बोल-चाल की दृष्टि से भी यह नहीं प्रमाणित होता कि मुस-लिम भिन्न राष्ट्र है क्योंकि जिस प्रान्त या स्थान में मुसलमान हैं वहीं की भाषा बोलते हैं और हिन्दुओं के समान ही रहन-सहन भी है। कम से-कम गाँवों में तो रहन-सहन में कोई विशेष अन्तर है ही नहीं और न उनकी कोई ऐसी समस्या ही है जिससे उन्हें हिन्दुओं से भिन्न माना जाय। भिन्नता, द्वेष और सम्प्रदाय की भावनायें तो शहरों में ही विशेष रूप से है क्योंकि यहीं साम्प्रदायिकता की अग्नि प्रज्वलित कर मुसलमानों को विश्वास दिलाया जाता है कि वे हिन्दुओं से भिन्न है, भारत में वे अपना अस्तित्व नहीं रखते। हिन्दी-उर्दू का झगड़ा उसकी समानता के कारण केवल आन्दोलन का एक रूप है। दरअसल जिस प्रान्त में मुसलमान बसते हैं उर्दू का चाहे जो भी महत्व हो प्रान्त की भाषा का त्याग कर उर्दू नहीं ग्रहण कर सकते क्योंकि उर्दू तो सार्वदेशिक भाषा नहीं है। यद्यपि यह बहुसमुदाय में हिन्दी की सौतेली बहन होने के कारण समान रूप से प्रचलित है फिर भी प्रान्तीय भाषाओं का स्थान नहीं ले सकती। बंगाल में देश की मुसलिम आबादी के ३५ प्रति सैकड़ा

मुसलमान बसते हैं ; उनकी भाषा बंगाली है। उनकी बंगाली छुड़ाकर उनके सिर पर क्या उर्दू ज़बरन लादी जा सकती है ? इसी प्रकार भारत के अन्यप्रान्तों की मातृ-भाषा भी उसी प्रान्त की भाषा है जिस प्रान्त में वे बसते है। यह तो सभी जानते हैं कि स्वयम् मिस्टर जिन्ना को गुजराती बोलने में उर्दू से अधिक सुविधा होती है और उन्होंने पाकिस्तान की माँग को जोरदार बनाने के लिये उतरती अवस्था में उर्दू सीखी है। अस्तु भाषा की दृष्टि से मुसलमानों की न तो एकता ही प्रमाणित हो सकती और न भिन्न राष्ट्रत्व ही।

संस्कृति के सम्बन्ध मे भी हम यह कह देना चाहते है कि भारत की जलवायु में गत ८०० साल से मुसलमान हिन्दुओं के साथ और सम्पर्क में रहते आ रहे है। अस्तु उनकी सभ्यता विदेशी नहीं कही जा सकती और न संस्कृति ही हिन्दुत्व के प्रभाव से वंचित रह सकती है। ऐसी परिस्थिति में क्या भारतीय संस्कृति के सिवा कोई ऐसी अन्य संस्कृति भी हो सकती है जिसे अपनाने का लीगी मुसलमान दावा कर सकते हैं। किसी अन्य विदेशी मुस्लिम राष्ट्रों से भारत के मुसलमानों का कोई सम्पर्क नहीं है। जब वे भारत में बस गये यही उनका वतन होगया अस्तु वे दूसरी संस्कृति और शिष्टता को अपनाने का दावा किस प्रकार कर सकते हैं ? यद्यपि मुसलिम सभ्यता का मुगल युग में भारतीय सभ्यता पर अच्छा प्रभाव पड़ा और फलस्वरूप ताजमहल, मोती मसजिद, जुम्मा मसजिद ऐसी इमारतों का निर्माण हुआ। क्या उसका गौरव हिन्दू नहीं समझते ? इतने दिनों तक तो मुसलिम सभ्यता पर हिन्दुओं का कोई आक्रमण नहीं हुआ और न वह हिन्दुओं द्वारा किसी प्रकार विकृत हुई फिर भविष्य के लिये यह भय क्यों ? हिन्दुओं द्वारा मुसलमानों की सभ्यता और संस्कृति पर तो किसी प्रकार कुठाराघात नहीं हुआ फिर लीग और उसके नेता "मुसलिम सभ्यता खतरे में का नारा क्यों लगाते हैं ? लीग के नेता हिज़रात (Hizarat) आन्दोलन को क्यों भूल जाते हैं जब सीमाप्रान्त से बहुत से मुसलमान अफगानिस्तान में जाकर बसने के लिये अपना घरबार छोड़कर प्रस्थान किया उस समय अफगान सरकार ने उन्हें

मुसलिम होने के नाते न तो अपनाया और अपने देश में ही बसने दिया। क्या यह सबक़ लीगी कौम-मजहब परस्त भूल जाते हैं कि उन्हें कोई देश अपनाने को तय्यार नहीं।

मुसलमान अपने को क्या भारत की वंशावली से बाहर समझते हैं? भारत के भौगोलिक और ऐतिहासिक परम्परा द्वारा तो यह बात नहीं प्रमाणित होती कि वे भारत में विजेता की भाँति आये किन्तु एक बार देश में बस जाने पर उन्होंने भारत को ही अपना लिया और हिन्दुस्तानी होकर हिन्दुस्तान का बल विक्रम और समृद्धि बढ़ाई। यह परम्परा तो अंग्रेजों ने ही तोड़ी है जिन्होंने भारत में २०० वर्षों से रहकर भी भारत को न अपनाया जिसका परिणाम यह हुआ है कि आज परतन्त्रता की बेड़ियों में जकड़ा हुआ भारत पराधीन दरिद्र और गुलाम बना हुआ है। अंग्रेज अपने को भारत में विदेशी समझते हैं और इसी नाते देश का शोषण करते हैं। मुसलमानों ने न तो इस नीति का अनुसरण किया और न यह उदाहरण इनके लिये लागू ही हो सकता है। अंग्रेजों के भारत विजय और मुसलमानों की विजय में आकाश पाताल का अन्तर है। मुसलमान यहाँ बस जाने के लिये आये पर अंग्रेजों का स्वार्थ और दृष्टिकोण तो विदेशी है। भारत के मुसलमानों का जीवन मरण भारत के अन्य निवासियों के साथ है और उनकी समस्यायें समान हैं।

मुसलमान यदि अपना अस्तित्व भारत से प्रथक समझते हैं तो वह बतावें की उनकी मातृ-भूमि अथवा वतन कहाँ है? अंग्रेजों का वतन तो ब्रिटेन है अस्तु उनकी निगाह सदा बृटेन पर ही लगी रहती है मुसलमानों का वतन या बृटेन कहाँ है? मुसलमान कहते हैं कि दुनियाँ के सभी मुसलमान में बन्धुत्व हैं किन्तु कौन मुसलिम देश उन्हें शरण देगा यह प्रश्न भी तो हल हो जाना चाहिये।

भारत से बाहर के मुसलिम राष्ट्रों में भी राष्ट्रीयता के पक्के पुजारी हैं। पान इसलामिजम का चाहे जो भी अर्थ हो किन्तु तुर्की के कमाल अतातुर्क ने आज उस भ्रामक भावना का अन्त कर दिया और तुर्की केवल नाम के

लिये ही मुसलमान है अस्तु वे हिन्दुस्तानी मुसलमान जो इस भ्रम में परिश्रम कर रहे हैं कि मुसलिम रियासयतें उन्हें शरण देंगी धोखे में हैं। एक देश के लोगों की बड़ी संख्या में दूसरे देश में जाकर बसना असम्भव है। हम तो कहते हैं पाकिस्तान की धारणा के अनुसार यदि अदलाबदली भी हो तो वह भी असम्भव होगी। उसका परिणाम वैसा ही होगा जैसा किसी समय मोहम्मद तुगलक के दिल्ली से राजधानी बदलकर देवगिरी जाने पर हुआ। जिन्ना को भी चाहिये कि वे अल्पसंख्य प्रान्तों के मुसलमानों से मजहब और संस्कृति के नाम पर अपील कर मुसलिम बहुसंख्यक प्रान्तों में जाकर बसने का अनुरोध कर क्यों नहीं देखते? मुसलमानों को छोड़कर दूसरे प्रान्त में जाकर बसने के लिये बाध्य होने पर उनका सारा आदर्शवाद भूल जायगा। भारत के मुसलमानों और अन्य देश के मुसलमानों में कोई समानता भी तो नहीं कि वह उन्हें आश्रय देकर व्यर्थ का झगड़ा मोल लें।

सन् १९२० के हिजरत आन्दोलन में १८००० मुसलमानों ने अपना घर द्वार बेंच भारत छोड़कर पवित्र स्थानों में जा बसने का निश्चय किया। अफगान सरकार ने पहले तो आगन्तुकों का विशेष ध्यान नहीं दिया पर बहुत बड़ी संख्या में आगमन देखकर उसने देश में हिन्दुस्तानी मुसलमानों की आमद रोक दी। नतीजा यह हुआ कि काबुल से पेशावर तक रास्ते भर कब्रिस्तान ही नजर आने लगे। धन और घरबार विहीन मुसलमान फिर लौट आये और उन्हें मालूम हुआ कि धर्मोन्माद में उन्होंने अपना सर्व नाश कर डाला।* इस घटना के हो जाने पर भी मुसलमान अन्य देशों के सम्बन्ध का राग क्यों अलापते हैं। उन्हें यह जान लेना चाहिये कि हिन्दुस्तान छोड़कर उनका वतन कहीं नहीं। इस सम्बन्ध में यह कह देना अनुचित न होगा कि अपने पूर्व जीवन में जिन्ना साहब भी राष्ट्रवादी थे और इस हैसियत से उन्होंने कभी खिलाफत आन्दोलन में भाग नहीं लिया और खिलाफत का विरोध करते रहे। किन्तु मिस्टर जिन्ना के हृदय में सत्य का कितना आदर और स्थान है

* Report of the Govt. of India 1920 page 52/53

यह सर्व विदित है। उन्हें अब मुसलिम विश्वबन्धुत्व का ज्वर उन्माद के रूप में दबा रहा है। इस सम्बन्ध में डाक्टर अम्बेडकर क्या कहते हैं? उनका कहना है :—

"इसमें कोई सन्देह नहीं कि उस समय मिस्टर जिन्ना नाम के लिये मुसलमान थे और मजहबी कट्टरता की शिखा प्रज्वलित नहीं हुई थी जो आज पूर्ण रूप से जल रही है। उन्होंने खिलाफत आन्दोलन में क्यों न भाग लिया इसका कारण यह था कि वे हिन्दुस्तानी मुसलमानों का भारत के बाहर की किसी भूमि पर आँख डालकर उसपर आशा करने की नीति के विरोधी थे।"*
हैदराबाद के निजाम ने भी इस आन्दोलन में भाग नहीं लिया और अपनी प्रजा को इस प्रकार के आन्दोलन में भाग लेने में पाबन्दियाँ लगा दी। इससे विदित होता है कि जिन्ना के समान ही सभी लीगी मुसलमान धर्मोन्माद में अपनी बुद्धि को तिलाञ्जलि नहीं दे चुके हैं।

अन्त में मजहब का सवाल पैदा होता है। निश्चय ही हिन्दू धर्म और इसलाम में मतभेद है किन्तु क्या यह मतभेद इतना घोर है कि दोनों का आपस में मिल-जुल कर देश में रहना असम्भव हो जाय। ८०० वर्ष का पुराना इतिहास देखने से यह बात प्रकट नहीं होती। यदि इसमें कुछ तथ्य होता तो इतिहास में इसका उल्लेख अवश्य होता और कदाचित दोनों जातियाँ एक दूसरे से लड़ मरती और दोनों में से एक न एक का नाश हो जाता। मुसलमानी राज्य के ८०० वर्ष के इतिहास में भी यह भावना न आई। यद्यपि किसी किसी ने ज़िहाद और परिवर्तन की पीड़ा अवश्य दी। किन्तु परिवर्तन कभी राज्य की नीति नहीं रहा और जब भी धर्मोन्मद और कट्टरता का बोलबाला हुआ मुसलिम साम्राज्य टुकड़े टुकड़े हो गया। इतिहास तो इसी का साक्षी है कि दोनों जातियाँ मिल-जुल कर रही हैं और एक दूसरे का पारस्परिक सम्बन्ध प्रेमपूर्ण था। मुसलमान बादशाहों की रियासतों और राज्य में हिन्दू मन्त्री, सेना, सेनापति, तथा अन्य उत्तरदायित्व के स्थान पर हिन्दू ही नियुक्त किये जाते।

* Thoughts on Pakistan P. 319

थे। उसी प्रकार हिन्दू राजा भी मुसलमानों को नियुक्त करते थे। अभी बहुत दिन नहीं बीता है, हैदर अली, टीपूसुल्तान और अवध के नवाबों के शासन की बागडोर क्या हिन्दू नहीं सम्हालते थे। किन्तु जिन्ना और मुसलिम लीग इस ऐतिहासिक तथ्य का विश्वास नहीं करते। उनके सोचने समझने का दृष्टिकोण ही भिन्न है। उनकी धारणा यह है कि मिली-जुली सरकार कायम होने पर मुसलमानों का अस्तित्व ही मिट जायगा। यह धारणा कितनी गलत और भ्रमात्मक है यदि ऐसी ही बात होती तो भारत में मुट्ठी भर मुसलमान आये और उनकी वृद्धि होती गई क्या उस समय मुट्ठी भर मुसलमानों को चटनी की तरह चाट जाना हिन्दुओं के लिये असम्भव था? अठारहवीं सदी में कुछ आपसी युद्ध अवश्य हुए किन्तु वह धार्मिक युद्ध न थे उनका हेतु राजनैतिक था। इतना होते हुए भी आज ग्रामीण मुसलमान और हिन्दुओं का पारस्परिक सम्बन्ध, और सहयोग एकता का है। कभी-कभी गावों की शान्ति दंगों से भंग होती है जिन पर साम्प्रदायिकता का रंग चढ़ाया जा रहा है जो वस्तुतः साम्प्रदायिक नहीं; किन्तु त्रिदोष के कारण हुआ करते हैं। कहना नही होगा कि यह त्रिदोष, मुल्ला, साम्प्रदायिक राजनीतिज्ञ, और ओट में सरकारी हाकिम हैं, जिनसे शान्ति भंग होती है। 'ग्रामीणों' की रोटी का सवाल ही पहली समस्या है यदि इस पर आघात कर मजहबी कटुता का पुट-पाक दे दिया जाता है तो वह उग्र हो उठता है वह और पगल की भाँति खून का प्यासा होकर अनर्थ कर डालता है। आर्थिक कारणों को भी इसी प्रकार साम्प्रदायिकता का रूप दिया जाता है।

टामसन और गैर ने ६२३ ¹ पृष्ठ पर हिन्दू मुसलिम दंगों पर प्रभाव डालते हुए कहा है कि "हिन्दू मुसलिम द्वेष का कारण निश्चय ही आर्थिक मसला है। जहाँ भी इस प्रकार का द्वेष और खींचा-तानी रहती है वहाँ उपद्रव किसी मजहबी आधार पर ही हुआ करता हैं। मसलन कुर्बानी—यानी गोकशी, मसजिद

Rise and fulfillment of British Rule in India—P. 623.

के सामने बाजा। यद्यपि यह रंग चढ़ाया जाता है कि इससे उनके मजहब पर आघात होता है; किन्तु इसके जड़ में आर्थिक असंतोष है।"

जैसा कि हम प्रमाणित कर चुके हैं शान्ति का ही उदाहरण लिया जाय तो देखा जयागा कि बंगाल के मुसलिम बहुसंख्यक प्रान्त होने पर भी वहाँ के हिंदू मुसलमानों में किसी प्रकार का भेद-भाव है ही नहीं। १९३१ की जनगणना रिपोर्ट से विदित होता है कि मौलवी और मुल्ला गावों में जाते हैं और अशिक्षित जनता में साम्प्रदायिकता का विष बोते हैं। अशिक्षित जनता ईश्वरीभय और कोप को सबसे बड़ा अभिशाप समझती है इसीलिये ईश्वर भीरुता के कारण उसपर धर्मोन्माद का भूत सवार हो जाता है। मुल्ला मौलवियों के इस काम को मुसलिम लीग जैसी संस्था और डान जैसे पत्र सहायक होकर साम्प्रदायिक अग्नि को प्रज्वलित करने के लिये उनकी सहायता करते हैं। इन्हीं स्थानों और उद्गमों से साम्प्रदायिकता का श्रोत प्रवाहित होकर ग्रामों की पवित्र जलवायु को दूषित करता है। यदि साम्प्रदायिकता के इन घोसलों को नष्ट कर दिया जाय तो यह समस्या बिना किसी प्रयोजन के स्वयम् सुलझ जायगी।

हम अनुमान कर लेते हैं कि मुसलिम लीग का दावा सही है कि हिंदू मुसलमानों का धार्मिक मतभेद इतना अधिक है कि उस खाईं को पाटना असम्भव है। उससे भी क्या भिन्न राष्ट्र होने का दावा किसी प्रकार चल सकता है? यद्यपि राष्ट्रीय एकता के अनेक कारणों में धर्म भी एक कारण है किन्तु केवल यही कारण नहीं है। मजहब एक व्यक्तिगत वस्तु है अस्तु सामुहिक रूप से वह समाज की एकता अथवा संगठन पर कुठाराघात नहीं कर सकता। भारत में अनेक धर्मों के माननेवाले हैं किंतु क्या कोई यह कह सकता है कि अनेक धार्मिक मामलों में किसी प्रकार का हस्तक्षेप होता है। भारतीय संस्कृति की यही विशेषता है कि वह इतनी भिन्नताओं को भी एक सूत्र में बाँधे हुए हैं। यदि हम लीग की राष्ट्र परिभाषा को मान लें तो इसका अर्थ तो यही होगा कि हम अपने धर्म को जितनी बार बदलें हमारी

जातीयता भी उतनी बार बदलती रहे । क्या जातीयता भी जीर्ण वस्त्र के समान बार-बार बदली जा सकती है ? हमारी तो धारणा है कि इस प्रकार जातीयता नहीं बदली जा सकती पर मजहब तो बार-बार बदला जा सकता है। यदि यही सही मान लिया जाय तो पारसी और ईसाई भी अभारतीय होंगे किंतु वह भी अपने को हिंदुस्तानी मानते हैं। एंग्लो इण्डियनस की बात इसलिये जुदी है कि उनकी अर्ध मिश्रित जाति अभी अपनी जड़ नहीं जमा, सकी है और कदाचित उनका अस्तित्व भी १००-१५० साल से अधिक नहीं।

लीग की पाकिस्तान के माँग का आधार मजहबी है इसीलिये उसका जादू मुसलमानों के दिमाग पर काम कर रहा है। इसलिये उन्हें यह सब्ज-बाग दिखाया जाता है कि पाकिस्तान में पाके ईमान के बिना पर हुकूमत होगी। पाकिस्तान में सिवा मुसलमानों के और कोई न होगा। इस माँग का रहस्य यह जान पड़ता है कि मुसलमानों की मानव भावना का अन्त हो गया है और वह मुसलिम राज्य का स्वप्न देख रहे हैं। श्री कन्हैयालाल मणिकलाल मुन्शी की धारणा इस सम्बन्ध में ठीक है जब वह कहते हैं कि उस रियासत में जो बहुसंख्यकों को अलग काट कर घृणा और परहेज से बने उसमें उसी बहुसंख्यक अल्पमत के संरक्षण की प्रतिज्ञा करना और ऊँची आशा में बँधाना मजाक के सिवा और क्या हो सकता है ?"

जिन्ना का कहना है कि "नेशन (जाति) शब्द के किसी भी परिभाषा से मुसलमान अलहदा कौम है।" हम स्वयम् जिन्ना के वक्तव्यों से प्रमाणित कर सकते हैं कि उन्हीं शब्दों में मुसलिम कौम नहीं बल्कि एक जाति है ; जो हिंदुस्तान के और जातियों से भिन्न और महत्वपूर्ण है। इस सम्बबंध में हम कमाल अतातुर्क की सम्मति प्रकट करना चाहते हैं जिन्होंने कहा है कि मजहब एक ज़ाती चीज है जो किसी व्यक्ति का ईश्वरी सम्बंध प्रकट करती है किंतु उसके सामाजिक सुख की जिम्मेदारी सरकार की है"। इतना ही नहीं Islam is not only a religion but fatherland के सिद्धांत

को भी आपने कुचल कर चूर्ण कर डाला। उनके ही शब्दों में उनके भाव देखिये। कमाल अतातुर्क ने कहा है:—"मुसलमानों का सदियों से पालित स्वप्न खलीफा की रियासत में मजहबी सरकार कामयाब साबित नहीं हुई। बल्कि यह आपसी मतभेद फूट अराजकता और विद्रोह का कारण हुई है। इससे आपस में फिरकेवाराना लड़ाईयाँ हुई है जिसमें एक ही मजहब के माननेवाले अलग अलग फिरकेवालों का खून बहाया। भलीभाँति विचार करने पर यही सत्य प्रकट होता है कि मुसलमानों को मजहबी भावना का त्याग कर ऐसी सरकारें बनानी चाहिये जिसमें सबके साथ भाईचारे का नाता हो और जनता चाहे किसी मजहब के माननेवाली क्यों न हो भाई-भाई की भाँति रहें।"

यह जान कर भी मुसलमान मजहबी रियासत बनाने का स्वप्न देखें, जबकि वह सब रियासतें जो खलीफा के साम्राज्य में भी आज मजहब का दकीयानूसी जूआ उतार कर फेंक चुकी हैं, कितनी बड़ी भूल है। इसी प्रकार यदि हिन्दुस्तानी मुसलमान भी जैसा कि सदियों से हिन्दुओं के साथ रहते आये हैं, यदि रहें तो उन पर कुफ्र या क़हर नहीं गिर सकता।

लीग के नेता भी कैसा कैसा तर्क पेश करते हैं, यह देख कर उनके बुद्धिवाद पर तरस आती है। सर अली मोहम्मद खां का कहना है कि यदि तोता और कौवे को आप जबरन एक पिंजड़े में बन्द करेंगे तो परिणाम यह होगा कि दोनों आपस में जूझेंगे, जिसका नतीजा यह होगा कि दोनों या दो में एक मर जायगा और जो बचेगा वह भी मरे के समान होगा। इस प्रकार के तर्क से ही लीगी प्रसन्न होते हैं और यही चीजें उन्हें अपील करती हैं। किन्तु इस प्रकार के और सोचनेवालों की भी कमी नहीं। डाक्टर अम्बेडकर भी इसी भाषा में सोचते हैं और पाकिस्तान की स्वीकृति का समर्थन करते हैं। दुःख है कि डाक्टर अम्बेडकर अपने तर्क से अपनी ही दलीलों का खण्डन करते हैं। वह कहते हैं कि पाकिस्तान का सिद्धान्त इसीलिये स्वीकार कर लेना चाहिये कि हिन्दू मुसलमान एक साथ कभी विश्वास और सहयोग से काम नहीं कर

सकते, काँग्रेस और हिन्दू महासभा की आलोचना करते करते आप यहाँ तक बढ़ जाते और कहने लगते हैं कि मुसलमानों की कौन ऐसी दगाबाजी है कि उनके साथ मिलजुल कर काम करना किसी के लिये सम्भव नहीं है। पृष्ठ ५६ पर Thoughts on Pakistan नामक पुस्तक में आप कहते हैं—"यदि मुसलमान आक्रमण के पश्चात् लौट गये होते तो वह हमारे लिये आशीर्वाद होता।" किन्तु आगे चलकर आप एक सूत्र भी देते हैं, जिसे लीग के ऊपर हम निःसंकोच भाव से लगा सकते हैं। "The adoption of gangster method in politics by the muslims और पृष्ठ २६७ पर The riots are sufficient indication that gangesterism has become a settled part of their (muslim) strategy in politics" आपके तर्कों का निचोड़ यह है कि पाकिस्तान की माँग स्वीकार कर ली जाय बाकी वह भारत के एक कोने में चले जायं और देश का वायुमण्डल पवित्र हो जाय। किन्तु यह धारणा कितनी गलत है, क्या मुसलमानों को एक कोने में फेंक देने से हिन्दू मुसलिम समस्या की गुत्थी सुलझ जायगी? हमें इस प्रकार विचार न करना चाहिये, क्योंकि अलग होने से फूट, बैर-विरोध गृह-युद्ध के सिवा कुछ न होगा, दो राष्ट्र-सिद्धान्त के निर्मूल तर्कों को भी इसी प्रकार दफना देना ही उचित है, क्योंकि उसमें तथ्य नहीं। मनुष्य की सब से बड़ी कला आपस में लड़ने भिड़ने से नहीं प्रकट होती, किन्तु एक साथ रहने में है। हमें शक्ति के भूखे पाश्चात्य विद्वानों और कूटनीतिज्ञों के बहकावे में न आना चाहिये, जिनका ध्येय फूट फैलाना ही है। इस सम्बन्ध में हम सर राधाकृष्णन् के विचार प्रकट करते हैं जो उन्होंने १९३८ के का० वि० वि० के दीक्षान्त भाषण में प्रकट किये थे।

"साधारण मनुष्य शान्त उदार और कोमल प्रकृति का होता है। उसे युद्ध और रक्तपात में आनन्द नहीं आता, इसी दृष्टिकोण के कारण मानवता जीवित है। यह मानव-भावना गोद में लिये हुये बच्चे की माँ, हाथ में हल को

मुठिया पकड़े किसान, और अनुवीक्षण यंत्र पर झुके हुए प्रयोगशाला में वैज्ञानिक आबाल वृद्ध में जब वह प्रेम का सन्देश सुनाते हैं और आराधना करते हैं, समान रूप से वर्तमान है। यह मानव-प्रेम और समाज-संगठन की ममता ने मानव आत्मा की अत्याचारों से रक्षा की है और उसी आधार पर विश्व-मानव जीवित है।"

क्या हम आशा करें कि आधुनिक युग के शंकराचार्य्य सर राधाकृष्णन् की यह अमृतमयी वाग्विभूति दो राष्ट्रसिद्धान्त के प्रतिपादकों की आँखे खोल उन्हें आपस में प्रेम-पूर्वक रहना सिखावेगी ?

अध्याय ८

पाकिस्तान का आन्दोलन

भारत में यों तो सदा से साम्प्रदायिक भेदभाव के आधार पर शासन करने की अंग्रेजी सरकार की नीति रही है, किन्तु इसका स्पष्ट रूप मान्टफर्ड सुधार से आरम्भ होता है। इसके फल-स्वरूप लखनऊ का समझौता हुआ और कदाचित् यह मसला ठण्डा पड़ जाता यदि कुछ अन्तर्राष्ट्रीय घटनायें ऐसी न घटी होती, जिससे मुसलमानों के हृदय में संदिग्ध भाव न उठ आये होते। अंग्रेजी सरकार का इसमें हित नहीं कि हिन्दू-मुसलमान में ऐक्य स्थापित हो। ऐक्य स्थापित हो जाने पर अंग्रेजों को विषम परिस्थिति का सामना करना पड़ सकता है। अस्तु उन्हें इस उद्योग में सफलता मिलती रही। आज भारत में साम्प्रदायिक समस्या का प्रश्न इतना जटिल हो गया है कि भारत की आजादी के समुद्र में ऐसी हलचल और आँधी आ गई है कि निस्तार का कोई लक्षण नहीं। आज गत्यवरोध का यह मुख्य कारण है। जैसा कि हम पहले कह चुके हैं, पाकिस्तान के गर्भाधान का श्रेय सर मुहम्मद इकबाल सन्त, दार्शनिक, राजनीतिज्ञ और कवि को है।

कायदे आजम जिन्ना ने (India's Problem of Her Future

Constitution) "भारतीय शासन-विधान की भावी समस्यायें" नामक पुस्तक लिखी है। यह पाकिस्तान विषय की सबसे प्रामाणिक पोथी है। इसमें भी जिन्ना के मस्तिष्क की अनोखी सूझें और तर्क एक वकील की होशियारी से भरे हुये हैं। यह संग्रह उनके और उनके मित्रों के खूब सोचे समझे विचार हैं जो लाहौर प्रस्ताव पर स्पष्ट रूपेण प्रकाश डालते हैं। इस पुस्तक में पाकिस्तान सम्बन्धी विवरण देखने योग्य है।

"यह भलीभाँति विदित है कि पाकिस्तान का विचार स्वर्गीय हजरत अल्लामा इकबाल के मस्तिष्क की उपज है। उस समय इसका विरोध किया गया और अप्रिय आलोचनायें की गईं। यह कहा गया कि इस्लाम के कवि दार्शनिक का तर्क और बुद्धि उनकी कवि-कल्पना के साथ कहीं कल्पनालोक में विचरण कर रही है। इस प्रकार के विचार कवि-कल्पना और अव्यवहार्य हैं, किन्तु यह बड़ी सरलता से भुला दिया गया कि यह सुझाव केवल कवि-कल्पना ही नहीं था, बल्कि इसके गर्भ में कुछ और ही था। इकबाल अपने युग की प्रगति के दर्पण थे। वह अपनी संस्कृति और जातीय भावनाओं के संदेश-वाहक थे।

भारतीय सम्बन्ध इस दशक की सबसे विख्यात पुस्तक "Enlist India for Freedom" के लेखक एडवर्ड थामसन ने इसी घटना की सचाई पर प्रकाश डालने के लिये उक्त पुस्तक में लिखा है कि:—

"इकबाल हमारे मित्र थे और उन्होंने (पाकिस्तान संबंधी) मेरा भ्रम दूर किया। अपनी उदासीनता और निराशा की चर्चा करते हुये कहा कि उन्हें स्पष्ट यह दीख रहा है कि उनकी बड़ी भारी भूमि, बुभुक्षित और अनियन्त्रित हो रही है, और बड़ा भारी विकराल तूफान अपना मुँह बाये हुये है, और कहने लगे कि उनके विचार से पाकिस्तान योजना अंग्रेज सरकार के लिये विनाशकारी होगी, हिन्दुओं के लिये और मुसलमानों के लिये भी संहारक होगी। किन्तु मैं मुसलिम लीग का अध्यक्ष हूँ, इसलिये हमारा यह कर्तव्य है कि हम इसका समर्थन करें।" महाकवि की इस उक्ति से प्रकट होता है कि वे किन कारणों से इसका समर्थन करते हैं। आश्चर्य है एक इतने बड़े व्यक्तित्व में इतनी साधारण

कमजोरी हो कि वह महसूस करके भी मुसलमानों के बीच सत्य को इस आसानी से टाला जाय। हमें विश्वास नहीं होता कि इस कठोर सत्य को छिपाने के लिये महाकवि का हृदय अनन्त वेदना का सागर बन गया होगा। यद्यपि इस प्रकार के आन्दोलन को प्रोत्साहित करने के लिये केवल लोगों का दिमागी फितूर न रहेगा। इसका ध्येय कुछ और ही है, और वह ध्येय शक्ति वृद्धि है।

शक्ति-लाभ और शक्ति-वृद्धि (Conquest of power) करने के लिये लीगी नेताओं को योरप में होने वाली घटनाओं से अच्छा पाठ मिला है, जिनमें पहला यह है कि "अपनी आवश्यक माँगोंको छोड़कर बहुत बड़ा मुँह बाओ।" इसी विचारसे सन् १९२८ में मि० जिन्नाने अपनी चौदह माँगें पेश की, जिसको हमने परिशिष्टमें दे दिया है। पाठक स्वयं विचारें कि कायदे आजम की ये माँगें कितनी अनावश्यक और लचर हैं। इन पर विचार करने से भलीभाँति प्रकट हो जायगा कि जिना साहब कैसी असम्भव दलीलें पेशकर बिल्कुल ऐसी माँगें कर बैठे हैं, जिससे संघ-शासन प्रणाली का उद्देश्य ही पतित हो जाता है। सिद्धान्त यह है कि जहाँ भी संघशासन होता है। केन्द्रीय-व्यवस्था अत्यन्त दृढ़ और शक्तिशाली बनाई जाती है, पर आप केन्द्री-व्यवस्था को निर्जीव छोड़कर (प्रान्तीय) स्वायत्त प्रदेशों में ही सब और सर्वमान्य शक्ति-सम्पन्न बनाना चाहते हैं। आप क्या चाहते हैं, "शासन-विधान में यह स्पष्ट नियम बना दिया जाय कि एकबार शासन-विधान बन जाने पर फिर उसमें किसी प्रकार का परिवर्तन संशोधन न किया जाय, यदि वह करना ही आवश्यक हो तो केन्द्रीय धारा सभा उन सम्बन्धित रियासतों की स्वीकृति के बिना न करेगी, जो संघ से सम्बन्धित हों।" इस प्रकार एक ही रियासत मिस्टर जिन्ना का प्रिय विटो (Veto) प्रयोग में ला सकेगा। इस प्रकार के कानूनवादी आज तक दुनिया के किसी संघ-शासन-विधान में दिखाई न पड़ेंगे। हिन्दू या मुसलिम रियासतों को रियायतन ३।३ या ३।४ का बहुमत अथवा संरक्षण

मिल सकता है, अथवा २।३ हिन्दू अथवा मुसलिम रियासतों के लिये किन्तु शत प्रतिशत स्वीकृति के लिये जिद करना तो हठधर्मी है।

लीग के जिद और हठधर्मी की कहानी विशेष मनोरंजक और उत्साह-वर्धक नहीं। किसी बात में भी जरा यह मालूम हो जाय कि एक उचित व्यवस्था होने जा रही है, बस लीग किसी न किसी रूप में एक अड़ंगा पेश कर देगी। १६३४ में सरकारी नौकरी में मुसलमानों के संख्या की जाँच हो रही थी। लीग बीच में कूद पड़ी, चूँकि सरकारी नौकरी में केवल २५% मुसलिम मुलज़िम हैं, इसलिये उनकी संख्या धारा सभा के प्रतिनिधित्व के आधार पर बढ़ाकर ३३·३३ कर दी जाय। एक जाति धारा सभा में संरक्षित हो यह एक बात है, किन्तु सरकारी नौकरियों में यदि उनका संरक्षण हो तो इसका अर्थ बिल्कुल भिन्न हो उठेगा। भारत सरकार चलाने में ५० % प्रतिनिधित्व की लीग की माँग इसी हठवादिता का एक नमूना है। इस कला में कायदे आजम प्रवीण हैं। दो चार नमूने देखने योग्य हैं। मिस्टर जिन्ना फादर जोसेफ के पूर्ण शिष्य हैं, इसीलिये बात बदलते आपको देर नहीं लगती, फिर राजनीति में बात बदलना ही तो असली कूटनीति है।

"डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद से जिन्ना साहब का सन् १६३५ में साम्प्रदायिक मसला सुलझाने के लिये पत्र-व्यवहार हो रहा था। सब बातें तय हो गईं अन्त में कायदे आजम यह कहकर मुकर गये कि समझौते पर हिन्दू सभा के अध्यक्ष का हस्ताक्षर होना आवश्यक है जो कि महासभा के अध्यक्ष ने करने से अस्वीकार कर दिया। इस पर काँग्रेस फिर लीग को इस समझौते को अमल में लाने के लिये दबाती रही और अन्त में यह आश्वासन भी दिया कि कांग्रेस उन हिन्दुओं का सामना करेगी जो इस समझौते में हस्तक्षेप करेंगे, पर मिस्टर जिन्ना को बड़ा अच्छा बहाना मिला, वह बिना महासभा के हस्ताक्षर के गाड़ी आगे ही बढ़ने न देंगे। अस्तु यह असम्भव और अनावश्यक माँग न पूरी की जा सकी और सारा समझौता बेकार हो गया।

दूसरा नमूना—लीग के अधिनायक कायदे आजम जिन्ना की दृष्टि में काँग्रेस

के उदारता पर अपने आवश्यकताओं के अनुसार बदला करते हैं। १६३८ में जिन्ना के लिये कांग्रेस हिन्दू संस्था बनी जिसे देश भर के हिन्दुओं के प्रतिनिधित्व की जिम्मेदारी दी गई, १६४१ में यह उच्चवर्ण के सभ्य हिन्दुओं की संस्था हुई और सन् १६४२ में डाकू, लूटेरी तथा १६४५ में फिर हिन्दुओं की प्रतिनिधि संस्था हो गई। यद्यपि तथ्य कुछ दूसरा ही है। १९३५ से ४१ तक कांग्रेस का प्रभाव क्षेत्र, अछूतों और किसानों में हो जाने के कारण प्रमुख उच्चवर्ण हिन्दू कांग्रेस से दूर होकर हिन्दू महासभा में चले जा रहे हैं। लीग का दूसरा नारा मुसलमानों का संरक्षण और विशेष प्रतिनिधित्व का अड़ंगा लगाया करती है कि मुसलिम अल्पमत में हैं, लेकिन जब से लीग ने दो राष्ट्र-सिद्धान्त का अविष्कार किया, यह कांग्रेस पर यही आक्षेप करती है कि कांग्रेस मुसलामानों को अल्पमत में होने के कारण अल्पमति की भाँति बरतती है। "कांग्रेस के अनुसार अल्प संख्यक और मुसलिम पर्यायवाची शब्द हैं। हिन्दुओं को अल्प संख्यक क्यों न कहा जाय? सिन्ध, बिलोचिस्तान, सीमाप्रान्त, पंजाब काश्मीर और बंगाल में क्या हिन्दू बहुमत में है? कांग्रेस ने मुसलमानों को अल्प संख्यक कहकर यह बात स्वीकार कर ली है कि हिन्दुस्तान एक राष्ट्र नहीं है।" यह बुरी बला कांग्रेस और देश के गले पड़ी हुई, इसमें संशय नहीं।

मुसलिम लीग किस प्रकार का प्रचार करती है और कितनी बेसिरपैर की झूठी बातों का प्रचार करती है, उसका हम कुछ नमूना पेश कर रहें हैं।

मुसलिम लीग ने सन् १६३६ में प्रान्तीय-शासन-सुधारों के सम्बन्ध में निम्न आशय का प्रस्ताव पास किया:—देश की दशा को देखते हुये लीग यह आवश्यक समझती है कि सन् ३५ के शासन-सुधारों को स्वीकार कर जहाँ तक बन पड़े (मुसलमानों का) फायदा उठावें, यद्यपि इसमें ऐसी आपत्ति जनक बातें हैं, जिससे उत्तरदायित्वपूर्ण रूप से नहीं मिलता और न सचमुच का कोई सुधार ही हो सकता है।" यह ध्यान देने की बात है कि उस समय लीग यह विश्वास करती थी कि लोकप्रिय मन्त्रियों और व्यवस्थापिका सभाओं को

मिल सकता है, अथवा २।३ हिन्दू अथवा मुसलिम रियासतों के लिये किन्तु शत प्रतिशत स्वीकृति के लिये जिद करना तो हठधर्म्मी है।

लीग के जिद और हठधर्म्मी की कहानी विशेष मनोरंजक और उत्साह-वर्धक नहीं। किसी बात में भी जरा यह मालूम हो जाय कि एक उचित व्यवस्था होने जा रही है, बस लीग किसी न किसी रूप में एक अड़ंगा पेश कर देगी। १६३४ में सरकारी नौकरी में मुसलमानों के संख्या की जाँच हो रही थी। लीग बीच में कूद पड़ी, चूँकि सरकारी नौकरी में केवल २५% मुसलिम मुलज़िम हैं, इसलिये उनकी संख्या धारा सभा के प्रतिनिधित्व के आधार पर बढ़ाकर ३३·३३ कर दी जाय। एक जाति धारा सभा में संरक्षित हो यह एक बात है, किन्तु सरकारी नौकरियों में यदि उनका संरक्षण हो तो इसका अर्थ बिल्कुल भिन्न हो उठेगा। भारत सरकार चलाने में ५०% प्रतिनिधित्व को लीग की माँग इसी हठवादिता का एक नमूना है। इस कला में कायदे आजम प्रवीण हैं। दो चार नमूने देखने योग्य हैं। मिस्टर जिन्ना फादर जोसेफ के पूर्ण शिष्य हैं, इसीलिये बात बदलते आपको देर नहीं लगती, फिर राजनीति में बात बदलना ही तो असली कूटनीति है।

"डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद से जिन्ना साहब का सन् १६३५ में साम्प्रदायिक मसला सुलझाने के लिये पत्र-व्यवहार हो रहा था। सब बातें तय हो गईं अन्त में कायदे आजम यह कहकर मुकर गये कि समझौते पर हिन्दू सभा के अध्यक्ष का हस्ताक्षर होना आवश्यक है जो कि महासभा के अध्यक्ष ने करने से अस्वीकार कर दिया। इस पर काँग्रेस फिर लीग को इस समझौते को अमल में लाने के लिये दबाती रही और अन्त में यह आश्वासन भी दिया कि कांग्रेस उन हिन्दुओं का सामना करेगी जो इस समझौते में हस्तक्षेप करेंगे, पर मिस्टर जिन्ना को बड़ा अच्छा बहाना मिला, वह बिना महासभा के हस्ताक्षर के गाड़ी आगे ही बढ़ने न देंगे। अस्तु यह असम्भव और अनावश्यक माँग न पूरी की जा सकी और सारा समझौता बेकार हो गया।

दूसरा नमूना—लीग के अधिनायक कायदे आजम जिन्ना की दृष्टि में काँग्रेस

के उदारता पर अपने आवश्यकताओं के अनुसार बदला करते हैं। १६३८ में जिन्ना के लिये कांग्रेस हिन्दू संस्था बनी जिसे देश भर के हिन्दुओं के प्रतिनिधित्व की जिम्मेदारी दी गई, १६४१ में यह उच्चवर्ण के सभ्य हिन्दुओं की संस्था हुई और सन् १६४२ में डाकू, लुटेरी तथा १६४५ में फिर हिन्दुओं की प्रतिनिधि संस्था हो गई। यद्यपि तथ्य कुछ दूसरा ही है। १९३५ से ४१ तक काँग्रेस का प्रभाव क्षेत्र, अछूतों और किसानों में हो जाने के कारण प्रमुख उच्चवर्ण हिन्दू काँग्रेस से दूर होकर हिन्दू महासभा में चले जा रहे हैं। लीग का दूसरा नारा मुसलमानों का संरक्षण और विशेष प्रतिनिधित्व का अड़ंगा लगाया करती है कि मुसलिम अल्पमत में हैं, लेकिन जब से लीग ने दो राष्ट्र-सिद्धान्त का अविष्कार किया, यह काँग्रेस पर यही आक्षेप करती है कि काँग्रेस मुसलामानों को अल्पमत में होने के कारण अल्पमति की भाँति बरतती है। "काँग्रेस के अनुसार अल्प संख्यक और मुसलिम पर्यायवाची शब्द हैं। हिन्दुओं को अल्प संख्यक क्यों न कहा जाय? सिन्ध, बिलोचिस्तान, सीमाप्रान्त, पंजाब काश्मीर और बंगाल में क्या हिन्दू बहुमत में है? कांग्रेस ने मुसलमानों को अल्प संख्यक कहकर यह बात स्वीकार कर ली है कि हिन्दुस्तान एक राष्ट्र नहीं है।" यह बुरी बला कांग्रेस और देश के गले पड़ी हुई, इसमें संशय नहीं।

मुसलिम लीग किस प्रकार का प्रचार करती है और कितनी बेसिरपैर की झूठी बातों का प्रचार करती है, उसका हम कुछ नमूना पेश कर रहें हैं।

मुसलिम लीग ने सन् १६३६ में प्रान्तीय-शासन-सुधारों के सम्बन्ध में निम्न आशय का प्रस्ताव पास किया :—देश की दशा को देखते हुये लीग यह आवश्यक समझती है कि सन् ३५ के शासन-सुधारों को स्वीकार कर जहाँ तक बन पड़े (मुसलमानों का) फायदा उठावें, यद्यपि इसमें ऐसी आपत्ति जनक बातें हैं, जिससे उत्तरदायित्वपूर्ण रूप से नहीं मिलता और न सचमुच का कोई सुधार ही हो सकता है।" यह ध्यान देने की बात है कि उस समय लीग यह विश्वास करती थी कि लोकप्रिय मन्त्रियों और व्यवस्थापिका सभाओं को

कोई अधिकार विशेष प्राप्त नहीं है, जिससे किसी प्रकार की भलाई या बुराई हो सके।

लीग ने अपने चुनाव के उद्देश्यों के सम्बन्ध में जून सन् १९३६ के मेनिफेस्टो में कहा है कि वे वसूल जिनपर देश की धारा सभाओं में हम अपने प्रतिनिधियों द्वारा अमल में लावें निम्नलिखित होंगे।

(१) मौजूद, प्रान्तीय और केन्द्रीय-शासन-विधान शीघ्रातिशीघ्र लोकतन्त्रात्मक स्वायत्त-शासन-प्रणाली ग्रहण कर नवीन विधान बनावें।

(२) जब तक यह नहीं सम्भव है, प्रान्तीय और केन्द्रीय धारा सभाओं के लीगी सदस्य धारा सभाओं से जहाँतक ज्यादा हो सके मुसलमानों के राष्ट्रीय जीवन की उन्नति के लिये फायदा उठावें। जबतक अलग साम्प्रदायिक आधार पर चुनाव होते रहेंगे, लीग उनमें भाग लेगी तथा उन दलों से पूर्ण सहयोग करेगी जिनका ध्येय और आदर्श लीग की भाँति है। लीग मुसलमानों से यह अपील करती है कि वे आर्थिक या अन्य कारणों से दूसरों (संकेत कांग्रेस की ओर है) के बहकावे में न आवें, जिससे मुसलमान कौम की कौमियत की जड़ हिल उठे।

किन्तु इस प्रतिज्ञापत्रके दूसरे ही दिन लीग के फ्यूरर अपनी लोकतन्त्रात्मक पूर्ण स्वाधीन-शासन-विधान की माँग को भूल गये और सन् १९४० में कहा कि "पश्चिमी आदर्शों का लोकतन्त्र भारत के लिये सर्वथा अनुपयुक्त है और भारत पर इसके लादे जाने का अर्थ यह होगा कि भारत के राजनैतिक प्रगति में रोग लग जायगा।" दूसरी प्रतिज्ञा का भी लीग ने आदर नहीं किया। लीग अधिकाधिक शासन-प्रणाली से फायदा उठाने से दूर रही, अपनी सारी शक्ति कांग्रेस के विरोध में ही खर्चा करती रही क्योंकि कांग्रेस मुसलमानों पर अत्याचार करने लगी। मौलाना आजाद ने इस शिकायत को जहाँ कहीं भी ऐसी शिकायतें उनके सामने आईं, पूर्णरूप से जाँच कर निर्मूल पाया है।

हमारे समझ में तो यह बात आती है कि कांग्रेस ने बहुमत में व्यवस्थापिकाओं में पहुँचकर पार्टीलाइन पर मन्त्रिमण्डल बनाया, जिसमें कि लीग

को स्थान नहीं मिल सकता था लीग के निराशा और वैराग्य का कारण हुआ। लीग अपनी तीसरी प्रतिज्ञा का भी पालन न कर सकी क्योंकि कांग्रेस से सहयोग करना लीग के लिये गैर मुमकिन था। कांग्रेस हिन्दू मुसलमानों की उन्नति और दशा सुधार का समान आर्थिक नीति बर्तने की घोषणा कर चुकी थी। पण्डित जवाहरलाल इस सम्बन्ध में काइदेआजम को पत्र व्यवहार में यह आश्वासन दे चुके थे कि कांग्रेस असेम्बलियों में एक उद्देश्य लेकर गई है और वह उस लक्ष्य को आगे बढ़ाने का सतत उद्योग करती रहेगी। वह उन सब दलों और फिरकों से पूर्ण सहयोग करेगी जो उसके नीति में सहायक होंगे। हमारी नीति में इतनी नरमी और फैलाव का स्थान है कि हम प्रान्तों में संयुक्त मंत्रिमण्डल तक कायम कर सकेंगे, यदि हमारे लक्ष्य में किसी प्रकार की बाधा न दी गई। नेहरूजी इस दिशामें प्रयत्नशील थे कि प्रान्तीय-धारा सभाओं में कांग्रेस-लीग संघर्ष न होने पावे। आपने एतदर्थ नवाब इसमाइल खां को पत्र लिखकर पूछा कि "मैं नहीं जानता कि राजनीति में हमारा आपसी मतभेद कैसा है, और कांग्रेस की नीति में कौन-सी ऐसी आपत्तिजनक चीज है जिस पर हमारा मतभेद हो सकता है। आपको याद होगा कि आप और चौधरी खलीकुज्जमा ने हमसे यह कहा था कि "आपलोग कांग्रेस के वार्धा योजना से सहमत हैं। यह ऐसी योजना है जिसमें सभी के तरक्की और फैलाव की जगह है।" नवाब साहब ने इस पर एक चलता हुआ जवाब देकर अपनी जिम्मेदारी टाल दी। आपने कहा कि "वर्धा योजना के अनुसार प्रान्तीय सभाओं में काम करने के लिये राजी हो जाने पर हमारे और आप में क्या भेद रहेगा कृपाकर आपही बतावें।" इसपर नेहरूजी का क्षुब्ध होना स्वाभाविक था। उन्होंने लिखा "मैं बार बार निवेदन करता रहा हूँ कि हमें यह बताया जाय कि हममें और आप में कैसा भेद है किन्तु आपलोग वही वाक्य दुहराया करते हैं और यह स्पष्ट रूप से नहीं प्रकट करते कि हमारा आपका मतभेद ठीक किन-किन बातों में है। हमें अगर कोई बात ठीक नहीं मालूम तो उसे साफ साफ बताना चाहिये।" इस पर जिन्ना साहब ने नम्रता से उत्तर दिया

"कदाचित आप हमारी चौदह माँगों की चरचा पत्रों में देख चुके होंगे। इसपर नेहरुजी ने लिखा कि "उनकी चौदह मांगे जमाने की जरुरियात से पिछड़ी हुई हैं। इनकी बहुत-सी माँगों का समर्थन और स्वीकृति साम्प्रदायिक निर्णय में की जा चुकी है।" इसपर जिन्ना साहब ने कहा हमारी मांगे उतने पर ही समाप्त नहीं होती। वस्तुत: लीग किसी प्रकार का समझौता करने के लिये उत्सुक नहीं थी। उसके मनमें तो कुछ दूसराही कपट छिपा हुआ था। जिन्ना की १४ मांगो में एक मांग यह भी है कि मुसलमानों का प्रतिनिधित्व केवल लीग ही कर सकती है और अन्य कोई मुसलिम अथवा गैर मुसलिम संस्था नहीं। इसी बात का जोर लीग की ओर से आजतक दिया जाता रहा है। शिमला सम्मेलन में इसी बिना पर जिन्ना साहब गैर लीगी मुसलमानों के आमन्त्रण को न सह सके और अंग्रेजों का इसी बहाने कुछ न करने का मनोरथ सफल हुआ।

मुसलमानों में प्रगति उत्पन्न करने और जन सम्पर्क (Mass contact) स्थापित करने के विचार से कांग्रेस ने मुसलमानों में प्रचार कार्य आरम्भ किया ताकि वे कांग्रेस में अधिक संख्या में सम्मिलित हों। इस प्रस्ताव से जिन्ना साहब और उनकी लीग कांग्रेस से जल उठी और मुसलमानों में फूट डालने का कांग्रेस पर अभियोग लगाया। लीग ने कांग्रेस के नाम नोटिस दी कि "मुसलमानों से दूर हो।" इस नारे का अर्थ अत्यन्त भयंकर और कटु है। देखने में यह जैसा छोटा है विश्लेषण करने पर निःसन्देह उतना ही खोटा है। इसका उद्देश्य मजहबी और सांस्कृतिक दृढ़ता उत्पन्न करना नहीं बलकी मुसलमानों की राजनैतिक प्रगति का द्वार बन्द कर देना है। दूसरी बात यह भी है कि यह मुसलमानों की राजनैतिक स्वतन्त्रता का इसलिये घातक है कि मुसलमानों का किसी भी राजनैतिक संस्था से सम्बन्ध करने का अधिकार छीन लेता है। इसके अनुसार कोई भी राजनैतिक दल अपने मत का मुसलमानों में प्रचार नहीं कर सकता। और सबसे बुरा तो यह है कि भारतीय राष्ट्रीयता का मूल तत्वही नष्ट हो जाता है। नेहरुजी ने इस पर साफ लिख दिया कि "यदि कांग्रेस के प्रचार का दायरा इतना संकुचित कर दिया जाय कि किसी भी

मुखतलिफ मजहबी फिरके में यह प्रचार न करे तो इसका मतलब यह होगा कि कांग्रेस की शक्ति कुछ दिनों में लुप्त हो जायगी।"

इससे यह स्पष्ट हो गया कि लीग चुनाव के साल दो साल के भीतर ही अपना वसूल भूल गई। यदि वह अपने रवैये पर चलती तो निश्चय ही कांग्रेस के समान मुसलमानों में राजनैतिक प्रगति उत्पन्न कर सकती किन्तु लीग ऐसे रास्ते पर चलना पसन्द नहीं कर सकती जिसमें हिन्दुओं की-सी राष्ट्रीयता, कांग्रेस की-सी शक्ति और सबसे अखीर में सरकार की जी हुजूरी में बट्टा लगे। इसने अपना कल्याण इसी में समझा कि मुसलमानों में पृथकत्व और फूट का इन्जेकशन देती रहे। इस प्रकार कांग्रेसी मन्त्रीमण्डल बन जाने पर संगठित रूप से कांग्रेस के खिलाफ लीग की गोलाबारी होती रही। १९३८ में सिन्ध प्रान्तीय मुसलीम लीग के अधिवेशन में जिसका सभापतित्व काइदे आजम कर रहे थे यह फतवा दे डाला कि भारत की सुखशान्ति, समृद्धि और राजनैतिक तथा आर्थिक उन्नति के लिये यह आवश्यक है कि हिन्दुओं और मुसलमानों का दो अलग अलग राज्य कायम होकर संघ में सम्मिलित हों। लाहौर का सन १९४० का प्रस्ताव जिसको हमने परिशिष्ट खण्ड में दिया है इसी माँग का विस्तार और स्पष्टीकरण है। किन्तु दोनों प्रस्तावों में बिभाजन की कोई भी योजना स्पष्ट नहीं की गई है। जिससे दोनों जातियों के सांस्कृतिक धार्मिक राजनैतिक और आर्थिक उन्नति अबाध गति से होती रहे। इस सम्बन्ध में बहुत बड़े साहित्य की रचना हो चुकी है जिसमें किसी के रचयिता को लीग का आशीर्वाद, किसी को संरक्षण, और किसी को विशेष छाप और मुहर लग चुकी है। इस साहित्य का लक्ष्य भारत बिभाजन योजनाओं को जोर देना है। इन योजनाओं में चार मुख्य है। १ डाक्टर लतीफ की योजना, २ सरसिकन्दर हयात की, ३ पंजाबी की; और चौथी अलीगढ़ योजना है। इनकी रूपरेखा हमने परिशिष्ट भाग में देदी है। सबसे बड़ी खूबी इन योजनाओं की यह है कि सभों ने अलग अलग खिचड़ी पकाकर अलग अलग राग अलापा है। पन्जाबी और डाक्टर लतीफ की योजनाओं में कितना अन्तर

है, किन्तु जैसा कहा जा चुका है कि लीग किसी एक बात पर स्थिर नहीं रहती इसलिये ये योजनायें भी बेकार हैं। दूसरे अब डाक्टर लतीफ और जिन्ना की लीग में भी काफी मत भेद उत्पन्न हो गया है।

यदि डाक्टर लतीफ साहब की योजना पर अमल किया जाय तो देश ग्यारह टुकड़ों में बंट जायगा इसमें दक्षिण में मुसलमानों को बहुत बड़ा भूखण्ड और लखनऊ दिल्ली क्षेत्र में बहुत छोटा भूखण्ड दिया गया है किन्तु खींचा तानी कर के मद्रास और कलकत्ता को मुसलिम क्षेत्र में घसीटने का अनधिकृत प्रयास किया गया है। अलीगढ़ योजना के जनक प्रोफेसर जफरूल हसन और अफजल हुसेन* भी हैदराबाद का विस्तार चाहते हैं और कर्नाटक तथा बरार को इस मुसलिम क्षेत्र में शामिल किये जाने की राय देते हैं। इस प्रकार पाकिस्तान की किलेबन्दी में समस्त भारत पश्चिम से पूरब और दक्षिण तक आजाता है। डाक्टर लतीफ की योजना से भिन्न सुझाव अलीगढ़ के प्रोफेसर साहबान की योजना में है। इन लोगों ने यह सुझाव पेश किया है कि वे शहर जिन में ५०००० या उससे अधिक की आबादी हो और यदि वह हिन्दुस्तान में हों तो वे मुक्त नगर (free city) हों और उनका स्वायत्त भी अपना हो। डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद ने इस योजना का विरोध करते हुये लिखा है कि :—

"इन विद्वान लेखकों ने हिन्दू और मुसलमानों को योरप के ज़ेक और स्यूडेटनजर्मनों से मुकाबिला किया है। इन मुक्त नगरों की तुलना भलीभांति जर्मन मुक्त नगर डैनज़िग से की जा सकती है। इससे यह उम्मीद की जा सकती है कि इन नगरों की रक्षा के लिये भारत में भी डैनज़िग के इतिहास की पुनरावृत्ति हो और भारत में भी डैनजिग के समान ही मुक्त नगरों की रक्षा और मुक्ति के लिये युद्ध हो।" १

---

१. राजेन्द्र प्रसाद—पाकिस्तान (अंग्रेजी) पृष्ठ ३६-४०

*[Mark the pun on Hasan and Hussain ; The cause of Shia Sunni fraction in the muslim polity]

इस योजना से यह स्पष्ट होजाता है कि अलीगढ़ प्रोफेसरों ने अपनी योजना द्वारा देश में कैसा उपद्रव फैलाने का प्रयास किया है। इसका अर्थ यह होगा कि इन मुक्त नगरों में पञ्चमार्गी पहले से ही सैनिक संगठन करते रहेंगे और जिस समय पड़ोस के पाकिस्तान से उद्धार के लिये सेनायें आयेंगी यह पञ्चमार्गी विद्रोह कर देंगे। फ्रैंको ने जिस समय मैड्रिड पर हमला किया नगर में उसके पंचवर्गी मौजूद थे उन्होंने विद्रोह किया और फ्रैंको की सेना को प्रभुत्व स्थापित करने में सहायता दी। हिटलर को भी इसी प्रकार आस्ट्रिया डैनजिग और जिकोस्लोवाकिया में आधिपत्य स्थापित करने में सहायता मिली। अब पाठक भलिभांति समझें कि जिन्ना के मुसलिम लीग को ही मुसलमानों की प्रतिनिधि संस्था होने की घोषणा के भीतर कैसा विषाक्त रहस्य छिपा हुआ है।

हिन्दुस्तान और पाकिस्तान में अल्पमत में हिन्दू और मुसलमान होंगे। मुसलमान जिन्ना मियाँ की चौदह शर्तों के मुताबिक देश भर में एक नीति का पालन करते रहेंगे। इस भाँति देश भर में अशान्ति और पञ्चवर्गी षडयन्त्र के अड्डे बने रहेंगे। मुसलमान इसीलिये पाकिस्तान लेंगे और देश भर में इन मुक्त नगरों द्वारा दंगे और लड़ाई-भिड़ाई कराते रहेंगे। लाचार होकर हिन्दुओं को भी प्रतिशोध की प्रवृत्ति उत्पन्न करनी होगी और पाकिस्तान में हिन्दुओं का पञ्चवर्ग स्थापित होगा। इसका सबसे बुरा असर तो यह होगा कि कांग्रेस की राष्ट्रीयता का अस्तित्व ही नष्ट हो जायगा और हिन्दू मुसलिम साम्प्रदायिक संस्थाओं का बोलबाला होगा। अस्तु, यह स्पष्ट होगया कि भारत के मुसलमान पाकिस्तान की माँग कर अपनी सांस्कृतिक आर्थिक और धार्मिक उन्नति के लिये नहीं चाहते बल्कि देश भर में फूट की आग लगाकर उसे रसातल भेज देना चाहते हैं। इस प्रकार की नीति से देश सदैव गुलाम बना रहेगा और बृटिश नौकरशाही के शासन का जूआ उतारकर फेंकना असम्भव होजायगा।

इस सम्बन्ध में मिस्टर एडवर्ड टामसन ने Enlist India for Freedom नामक पुस्तक में लिखा है। "भारत का बँटवारा हो जाने पर

1. Enlist India for freedom P. 59.

भी दोनों राष्ट्र प्लेग की भाँति देश का वातावरण दूषित करते रहेंगे जैसा कि काईदेआजम की बातचीत से प्रकट हुआ। उन्होंने कहा 'दो राष्ट्र एक दूसरे के मुकाबले हरएक प्रान्त, हरएक शहर और हरएक गाँव में रहेगा। यही एकमात्र मसले का हल है। मैंने कहा "मिस्टर जिन्ना यह तो बड़ा भयानक हल है" उन्होंने कहा "यह भयानक जरूर है किन्तु मसले के हल करने का एकमात्र यही उपाय है। (Page 52)

लीग किस प्रकार अपनी जबान और बात बदलती रहती है इसका भी नमूना देखने योग्य है। (१) जब तक साम्प्रदायिक आधार पर निर्वाचन होता रहेगा लीग पार्टी इसकी हिमायत करती रहेगी। (The Leagues Election manifesto 1936)

(२) लीग कांग्रेस की पूरी बराबरी का दावा करेगी (Jinnah's Presidential Address—April 1938.)

(३) लीग ही मुसलमानों के प्रतिनिधित्व की अधिकारी है और हिन्दुस्तान के मुसलमानों की राजनैतिक बागडोर अपने हाथ रखेगी (Letter to Subhas Bose, Aug, 1938)

(४) भारत में हिन्दू मुसलमानों के दो संघ स्थापित किये जायँ (Sindh Provincial Muslim League Conference. Octr 1938)

(५) मिस्टर जिन्ना ने १६३९ के आरम्भ में भारत के शासन में मुसलमानों के ५० % प्रतिनिधित्व की माँग की।

(६) सितम्बर १९३९ में लीग की कार्य्यकारिणी परिषद ने यह प्रस्ताव पास किया कि "मुसलिम भारत हिन्दू बहुमत के शासन का विरोध करता है क्योंकि मुसलमानों के लिये हिन्दुओं की हुकूमत और गुलामी असह्य है; और भारत में किसी प्रकार के लोकतन्त्रात्मक और पार्लियामेण्टरी शासनप्रणाली का विरोध करती है। इस प्रकार लोकतन्त्रात्मक शासनप्रणाली इस देश के लोगों के लिये सर्वथा अनुपयुक्त और असंगत है क्योंकि भिन्न जातियों और राष्ट्र की

जनता जो देश में बसती है इस प्रकारके शासनप्रणाली को कभी स्वीकार नहीं कर सकती ।

(७) इस प्रस्ताव के पास कर लेने के पश्चात लीग ने पाकिस्तान की माँग पेश की । यद्यपि लीग ने पाकिस्तानके माँग की भूमि तय्यार कर दी थी किन्तु सरकारी अफसरों को भी इस योजना में कम दिलचस्पी नहीं थी क्योंकि उन्होंने भी इसे यथाशक्ति प्रोत्साहित किया है ।

(८) इसलिये लाहौर के सन् १६४० के अधिवेशन में लीग का दकियानूसी प्रस्ताव पास हुआ और पाकिस्तान की माँग से ही सारा साम्प्रदायिक मसला हल होने की बात कही गई ।

(९) मदरास के १६४१ के अधिवेशन में लीग ने पाकिस्तान को अपना जीवन स्रोत घोषित किया । जैसे जलके बिना कमल और मीन का अस्तित्व नहीं रह सकता उसी प्रकार बिना पाकिस्तान के लीग का जीवन नहीं रह सकता । इसने लाहौर प्रस्ताव की और विस्तृत व्याख्या की और दक्षिण में द्रविड़स्थान बनाने की माँग पर जोर दिया । कलकत्ता अधिवेशन में मिस्टर जिन्ना ने भाषण में कहा :—मुसलिमलीग केवल मुसलमानों के लिये ही नहीं वरन भारत की समस्त अल्पसंख्यक जातियों की स्वतन्त्रता के लिये लड़ रही है और उनसब को उनका पूर्ण अधिकार दिलाकर दम लेगी यदि उनका भी सहयोग प्राप्त होता रहा । इस प्रकार उन्हें स्वतन्त्रता प्राप्त हो जायगी और जातिपाँति के भेदभाव तथा कट्टरतायें उनको भविष्य में न सता सकेंगी ।" इस प्रकार का वक्तव्य देकर अपने द्राविड़स्थान की माँग सींचा और मदरास के एक भाषण में आपने कहा कि ३% ब्राह्मण मिलकर चुनाव की कला में निपुण होने के कारण सारे अछूतों पर राज्य कर रहे हैं, क्या यही लोकतन्त्र है ?" लीग तो केवल मुसलमानों में संगठन और एकता करने के लिये स्थापित हुई थी फिर हिन्दू जाति के बारे में इस प्रकार के फूट फैलानेवाले सुझाव क्यों देने की अनधिकृत चेष्टा करने लगी पर लीग करे क्या यही तो उसका स्वभाव है । लीग का यही दृष्टिकोण रहा है कि जनता में भाँति भाँति की दलीलें पेश कर अपनी माँग का प्रचार करती रहे ।

पश्चिमी पाकिस्तान में सिखों का मसला ऐसा प्रबल है कि जिसे हल करना जिन्ना के लिये टेढ़ी खीर है। सरदार बल्देवसिंह मन्त्री पञ्जाब सरकार ने हाल ही लाहौर के एक भाषण में सिखों को लीग के प्रचार से सावधान होने का अनुरोध किया और कहा कि जिन्ना का सिख प्रेम मायामृग के सिवा कुछ नहीं जो उनके स्वर्णमय पाकिस्तान में घूम रहा है। सिख यह सोचना क्यों भूल जाते हैं कि वे उस समय अपने धर्म के लिये बलिवेदी पर चढ़े जब उनका अस्तित्व ही खतरे में था। आज उनकी शक्ति का कौन मुकाबला कर सकता है†। अपने इस भाषण द्वारा मिस्टर जिन्ना के उस वक्तव्य की ओर भी संकेत किया जो उनकी पुस्तक के ६६ पृष्ठ पर है। जिन्ना कहते हैं कि:—"संयुक्त भारत में पंजाब महत्वपूर्ण स्थान नहीं प्राप्त कर सकता क्योंकि केन्द्र में उसके हितों की पूर्ण रूप से रक्षा न हो सकेगी। इसलिये वह अपनी मौजूदा सीमा पर जिसमें सिन्ध विलोचिस्तान सीमाप्रान्त और काश्मीर की रियासतें पंजाब के अलावा होंगी हमारी स्थिति को अत्यन्त उज्ज्वल बनायेगी। तथा सिख अपने प्राचीन राज्य सीमा का गौरव अनुभव करने लगेंगे जिनके लिये वे कितनी कुर्बानियाँ कर चुके हैं। यह प्राचीन साम्राज्य का पुनर्जन्म होगा जिसे की सिख और मुसलमानों को संयुक्त बाहुबल से रक्षा होगी। इसलिये एक सच्चे पंजाबी का यह फर्ज होना चाहिये कि वह अपने देश के हितों की बात पहले सोचे और ऐसा यत्न करता रहे कि उसके देश का गौरव और स्थिति किसी प्रकार नीचे न गिरने पावे[1]। किन्तु लीग कितनी लीचर और बलछुट है कि उसके सम्बन्ध में कुछ भी कहना थोड़ा ही होगा। इस कथन के अनुसार यदि यह कहा जाय कि संयुक्त भारत जिसे मुसलमानों ने अपने उदय काल में अपने बाहुबल से सँवारा था जिसे अब लीग मुसलमान और सिखों के सहयोग से सुरक्षित रखेगी कितना बड़ा अनर्गल प्रलाप है। अगर लीग से यह अभ्यर्थना की जाय कि वह देशहित का

---

1 Indias Problem of her Future Constitution—M. A. Jinnah P. 69.

† (A. B. Patrika, Octr 22nd 1945)

पहले विचार करें और की अपने महत्व को नष्ट न होने दें तो कोई मुसलमान लीगी शायद ही इस बात से प्रसन्न हो। कारण स्पष्ट है, जिन्ना और लीग ने मुसलमानों में इस प्रकार की भावनायें भर दी हैं कि उसके आगे हित अनहित की सभी बातें भूल जाती हैं। इसी प्रकार के नेतृत्व से मुसलमानों का इतना आत्मिक और नैतिक पतन हो चुका है कि कोई मुसलिम कितने नीचे स्तर तक जा सकता है इसका अनुमान करना भी कठिन है। फिर भी लीग सिखों से इतना प्रेम क्यों प्रकट करती है यह रहस्य अप्रकट नहीं है। पाकिस्तान में धार्मिक और सामाजिक भिन्नता ही विभाजनका आधार है किन्तु सिखों के सम्बन्ध में यह बातें त्याग दी गई हैं और जातीय एकता पर जोरदिया गया है।

"पाकिस्तान में हिन्दू अल्पता महत्वपूर्ण है। पाकिस्तान के हिन्दू वहाँ के सच्चे सपूत हैं और उसी नसल के हैं जिससे उनके मुसलिम जाति भाई सिख जो पक्के पाकिस्तानी हैं।"† इस वक्तव्य में कितनी सचाई है कहने की जरूरत नहीं। यह स्पष्ट है कि भारत के बहुतायत मुसलमान हिन्दू से मुसलिम हुये हैं अथवा मुसलिम से हिन्दू और सिख इसका प्रमाण इतिहास है न की लीग के बुद्धिवादी नेता जिनकी बुद्धि में भारत विभाजन के सिवा कोई बात ही नहीं सूझती। यह लोग कलम की एक चोट में ही बंगाली, मदरासी और पंजाबी की रहन सहन एक कर देना चाहते हैं। मिस्टर जिन्ना ने मदरास अधिवेशन में पाकिस्तान पर जोर देते हुये कहा है कि जहाँ तक हो सके "हमें उतनेही स्पष्ट रूप में यह कहने दो कि लीग का ध्येय यह है कि हम पूरब और पश्चिमोत्तर में पूर्ण स्वतन्त्र राज्य स्थापित करें जिसकी मुद्रा, विनिमय और रक्षा हमारे हाथ हों। हमलोग किसी भी परिस्थिति में ऐसा शासन विधान नहीं चाहते जो कि अखिल भारतीय हो और केन्द्र में एक सरकार हो। हमलोग ऐसे विधान से कभी सहमत नहीं हो सकते। अगर हम एक बार इसे स्वीकार कर लेंगे तो भारत से मुसलमानों का अस्तित्व ही लुप्त हो जायगा।"

† El. Hamza—Pakistan P. 35-46.

इसका विरोधाभास नवाब इस्माइलखां के उस भाषण से स्पष्ट प्रकट होता है जो उन्होंने सन् १९४० में युक्तप्रान्तीय मुसलिम लीग के अधिवेशन में दिया था। लीग एक ही स्वर में संयोग और वियोग यानी संघ और विभाजन दोनों चाहती हैं। या तो संघ ही स्थापित हो सकता है या विभाजन ही किन्तु यह तो लीग की पूर्वायोजित और निर्धारित नीति का विस्तार मात्र है। इस प्रकार के प्रचार और आन्दोलन का अर्थ स्पष्ट यही है कि एक ओर तो जितने मुसलिम विरोधी हैं वह लीग के झण्डे के नीचे आजायँ दूसरी ओर विपक्षी भ्रम में भूले रहें, इसी विचार से इस प्रकार की बातें कही जाती हैं मुसलिम लीग संघ नहीं चाहती, और न संयुक्त राष्ट्र ही। वह विभाजन के लिये भी दबाव नहीं डालना चाहती, लेकिन पाकिस्तान के बिना मुसलिम जीवित नहीं रह सकते। इस प्रकार का लचीलापन लीग के संगठन की दृढ़ता से ज़ाहिर हो जाता है; और वह है उनका यह कहना कि केवल लीग ही मुसलमानों का प्रतिनिधित्व कर सकती है।

मुसलिमलीग दर असल देखा जाय तो हिटलर की तानाशाही और नाजी उपायों का अनुसरण कर अपनी शक्ति वृद्धि करनी चाहती है, जिसमें हिटलर का पार्ट जिन्ना साहब अदा करेंगे। वह हिटलर की भांति ही लीग की शक्ति संचय कर संयुक्त भारत को चूर्ण करना चाहते हैं। सच देखा जाय तो लीग न तो साम्प्रदायिक समझौता चाहती हैं और न वैधानिक खिंच ही तब तक मिटाना चाहती हैं जब तक कि लीग के हाथ बागडोर न आजाय और हिन्दू तथा अंग्रेज लीग के इशारे पर चलें। इसकी एकता, प्रतिनिधित्व और मुसलमानों के लिये अलग रियासत की माँगें, कांग्रेस के अत्याचार की शिकायतें, धमकी और चेतावनी की डींगें केवल शक्ति हथियाने के रास्ते हैं। यही उसके सब आदर्शवाद और लक्ष्यों का लक्ष्य है कि पाकिस्तान मिल जाय। इस सम्बन्ध में हम गान्धीजी का वह बयान नहीं भूल सकते जो उन्होंने सप्रू-कमेटी को दिया है। बापू ने उसमें जिन्ना का सच्चा चित्रण कर लीग के मिथ्या ताण्डव का वास्तविक रूप प्रकट कर दिया है। उनका बयान इतना उपयुक्त

और सटीक है कि उसको उद्धृत करने का लोभ निवारण करने में हम असमर्थ हैं।

"मिस्टर जिन्ना अब रंगशाला में अपने असली रंग में आये हैं। युद्धकाल में भी किसी प्रकार की सरकार उन्हें स्वीकार नहीं यदि वह भारत की फूट बढ़ाने में सहायक न हो। सात प्रान्तों में गवर्नर शासन चला रहे हैं जिनमें ६ में हिन्दू बहुमत हैं, जो अपने साधारण अधिकारों से भी वंचित कर दिये गये हैं। यदि धमकियों और हठवादिता से युद्ध के समाप्त होने तक गत्यवरोध कायम रहा तो हिन्दुओं को शक्ति प्राप्त करने की भविष्य की आशा अत्यन्त क्षीण हो जायगी। "मुसलिम-अंग्रेज" समझौते का पूरा यत्न होना चाहिये और दूसरी ओर मिस्टर जिन्ना अभी तक जो हिन्दुओं में फूट डालने और मुसलमानों के ही संरक्षक थे अब वे अछूतों और जस्टिस पार्टी की भी हिमायत करेंगे। इस प्रकार जिन्ना द्वारा १० करोड़ मुसलमान और ६ करोड़ अछूतों का नेतृत्व होगा। इस राजनैतिक गणित से हिन्दुस्तान के बहु समुदाय पर शासन होगा। यही इनकी बुद्धिमत्ता है कि वही काम हो जिससे भारत विभाजन पर जोर दिया जाय और उन प्रयत्नों की अवहेलना की जाय जिससे एकता की वृद्धि हो। यह सब इसीलिये कि किसी प्रकार का समझौता न हो सके और काइदेआजम की हुकूमत चले।" सर तेज को एक पत्र में महात्माजी ने इसे और स्पष्ट रूप से व्यक्त कर दिया है। 'मेरी धारणा है कि जिन्ना तब तक कोई राजनैतिक समझौता नहीं चाहते जब तक कि अपनी स्थिति ऐसी न कर लें कि लीग के इशारे पर देश के सभी दल और शासकवर्ग चले।" राजाजी और जिन्ना ने यह शर्त पहले ही रख दी थी कि कांग्रेस अबतक पाकिस्तान की माँग स्वीकार न करले तब तक वह कोई बात-चीत न करेंगे। इससे यही प्रकट होता है कि जिन्ना साहब कांग्रेस से हिन्दू संस्था की हैसियत से किसी समझौते के लिये नहीं मिलते बल्कि पाकिस्तान की परिभाषा और माँग को स्वीकार कराने के लिये।

मिस्टर जिन्ना और अन्य नेताओं के स्थिति अध्ययन में भारतभाग्य ने ही

अकाल चक्र चला दिया। सन १९४१ में आम रिहाई होगई। कांग्रेसी नेता जो युद्ध विरोधी नये लगाने के कारण जेलों में बन्द रखे गये थे मुक्त कर दिये गये। युद्ध की परिस्थिति इस समय जटिल हो रही थी। जर्मनी फ्रांस पर कामयाब हो चुका था। डंकर्क की पराजय से अंग्रेज विकल हो रहे थे। रूस की ओर भी जर्मन दबाव तेजी से बढ़ रहा था, यूक्रेन में जर्मनों की विजय पताका फहरा चुकी थी। पूरब में जापान मलाया श्याम और प्रशान्त द्वीपों को हड़प कर बर्मा की ओर बढ़ रहा था। ब्रिटिश भारत के लिये यह बड़ाभारी खतरा था। प्रान्तों में कांग्रेसी मंत्रिमण्डल पदत्याग कर चुके थे। पदत्याग का मुख्य कारण यह हुआ कि अंग्रेज सरकार ने भारत के प्रति युद्ध नीति स्पष्ट नहीं की थी। इसी नीति के विरोध में सन ४० में कांग्रेस युद्ध विरोध में सत्याग्रह कर चुकी थी। प्रस्तुत युद्ध में भारत की सहायता का क्या अभिप्राय हो सकता था यदि इसके समाप्त होने पर भी भारत स्वतन्त्र नहो और उसका भविष्य नौकरशाही की ठोकरें खाता रहे। कांग्रेस का दृष्टिकोण देश की आजादी हासिल करना है और इसी के लिये जब से अग्रवादियों के हाथ आई है लड़ रही है।

सन ४१ की आम रिहाई के बाद कांग्रेस के लिये निश्चित अगला कदम बढ़ाना आवश्यक था जिससे उसके उद्देश्य की पूर्ति हो। वाक् प्रवीण अंग्रेज भी इस अवसर पर किसी न किसी प्रकार की ऐसी कूटनीति के भुलावे में हिन्दुस्तानियों को रखकर युद्ध में सहायता प्राप्त करना चाहते थे जिससे पूर्व में जापान और पश्चिम में नाजी सत्ता चूर्ण हो। इसीलिये चर्चिल और एमरी ने एक ऐसा मसविदा तयार किया जिसमें भारत के आजादी की झलक तो अवश्य आये पर आजादी उससे बहुत दूर हो। इसके लिये उन्हों ने उस योजना को तयार की जो 'क्रिप्स -योजना' के नाम से प्रसिद्ध हुई और ऐटली की सरकार आज भी उसका सिद्धान्तिक समर्थन कर रही है। जिस प्रकार की अविश्वास और फूट अंग्रेजी नीति से भारत में फैली हुई है। तथा कांग्रेस के पद त्याग के कारण जन-साधारण में जो कटुता उत्पन्न हो चुकी थी उसे मिटाने के लिये सरकार का

सन्देश वाहक कोई ऐसा व्यक्ति होना चाहिये था जिसका भारतीय जनता में विश्वास हो। इस काम के लिये प्रसिद्ध समाजवादी नेता सर स्टाफर्डक्रिप्स चुने गये। सर स्टाफर्ड एक प्रगतिशील बैरिस्टर हैं जिन्हें भारतीय समस्या से सहानुभूति है और दर्शक की हैसियत से कांग्रेस के अधिवेशन में सम्मिलित भी हो चुके थे। समाजवादी होने के कारण नेहरूजी से आपका सिद्धान्तिक मतैक्य कहा जाता था। अस्तु, ब्रिटिश कैबिनेट ने यह समझा कि क्रिप्स से उपयुक्त इस काम के लिये दूसरा व्यक्ति न होगा। इसी अवसर पर क्रिप्स बृटिश कैबिनेट की योजना लेकर भारत आये जिसमें किसी अनिश्चित तिथि के लिये भारत की आजादी का प्रश्न टालकर केन्द्र में सर्वदलीय सरकार बनाने की योजना थी। इस योजना को गान्धीजी ने 'बिना तारीख का चेक' कहा कांग्रेस कार्य्य समिति ने भी इसमें वैधानिक दोष होने के कारण स्वीकार करने से इनकार कर दिया। सर स्टाफर्ड ने अपनी वाक्य-चातुरी और उदारता से मसविदे का खूब सब्जबाग दिखाया। कितने ही गोरे और अर्द्धगोरे पत्रों ने इस योजना की खूब प्रशंसा की किन्तु कांग्रेसी और स्वतन्त्र पत्रों ने इसकी खिल्लियाँ उड़ा डाली। पंडित नेहरू और मौलाना आजाद से इस मौके पर जो पत्र व्यवहार हुआ उससे योजना की पोल खुल गई। सर स्टाफर्ड को खाली हाथों वापिस जाना पड़ा। जिस प्रकार की योजना लेकर सर क्रिप्स भारत आये थे उसका क्या अर्थ और अभिप्राय था वह चीज उनके भाषण, वक्तव्य और पत्र सम्मेलन में कहीं स्पष्ट प्रकट नहीं हुई। इस पर क्रिप्स ने कोई उद्योग भी नहीं किया। हां, ऐमरी साहब ने अवश्य पार्लियामेंट में वक्तव्य देते हुये कहा कि "यह सरकार भारत-मन्त्री और वायसराय के नियन्त्रण से मुक्त कोई उत्तरदायित्व नहीं दे सकती।" और यह भी कहा कि भारतमंत्री और वायसराय भारत के संरक्षक हैं (Trustee) तथा क्रिप्स को इसे स्पष्ट करने की अधिकाधिक स्वतन्त्रा भी दी गई थी। यद्यपि सर स्टाफर्ड का मौन न टूटा था फिर भी एमरी ने एक बार वही पुरानी कहानी दोहरा दी। भारतमंत्री ने बार बार 'ultimate responsibility' शब्द की पुनरावृत्ति की है। इसका अर्थ

भारतीय राजनैतिक कोष में स्पष्ट है। उन्होंने यह भी कहा कि यदि कांग्रेस की बात मान ली गई तो भी भारतमन्त्री और वायसराय के नियंत्रण से सरकार मुक्त नहीं रहेगी। दूसरी ओर कांग्रेस का यह कहना था कि वह ऐसी राष्ट्रीय सरकार चाहती है जिसके सम्मति की वाइसराय साधारणतः उपेक्षा न करेंगे। ऐमरी साहब की नीति यह थी कि वे ऐसी शासन परिषद् चाहते थे जिसमें वाइसराय और भारतमन्त्री की हुकुमत ज्यों की त्यों बनी रहे। यानी सरकार का मन्तव्य यह था कि सरकारी मशीनरी ज्यों की त्यों बनी रहे और राष्ट्रीय नेता उसके पेंच पुरजे बनकर नौकरशाही का किला मज़बूत करें। सर स्टाफर्ड ने राष्ट्रीय सरकार के बनने में अल्पसंख्यकों का अड़ंगा भी लगा दिया। ऐमरी ने इस का खुलासा कर दिया। इसका अभिप्राय यह था कि यद्यपि राष्ट्रीय सरकार बनने में सरकार अवश्य सहायक होगी किन्तु भारतमंत्री और वाइसराय के अधिकारों पर किसी प्रकार का हस्तक्षेप न होगा। इस नीति में किसी प्रकार का परिवर्तन न होगा, चाहे प्रत्येक दलों में समझौता भी हो जाय। यदि बृटिश कैबिनेट की यही इच्छा है तो क्रिप्स के लिये यह आवश्यक था कि इसे वह प्रकट कर देते। यह सोचना की मंत्रीमण्डल की इस नीति से क्रिप्स महोदय अनभिज्ञ थे, यह हम कयास भी नहीं कर सकते। पर इनका २९ मार्च के पत्रकार सम्मेलन के वक्तव्य से तो यह ध्वनि आती है कि कांग्रेस नेताओं की धारणा के अनुसार राष्ट्रीय सरकार की व्याख्या कर रहे हैं और ९ अप्रैल के अन्तिम भाषण से यह प्रकट होता है कि क्रिप्स की इस उदारता (मूर्खता ?) पर चर्चिल और ऐमरी के कान खड़े हुये और उन्होंने क्रिप्स को रोकना शुरू किया। बातचीत समाप्त होगई किन्तु प्रेस को कोई रिपोर्ट नहीं मिली। सम्मेलन असफल होगया। इस विफलता के बारे में समस्त भारत की एक धारणा है। अमेरिका और इंगलैण्ड के बहुत से पत्रकारों का मत भी इससे भिन्न नहीं। लुई फिशर और फ्रैंक मैकडेरमाट (Frank Mac Dermont) ने सण्डेटाइम्स और न्यूयार्क नेशन में छानबीन कर कहा कि "क्रिप्स ने पहले कांग्रेस नेताओं से

ईमानदारी से बातचीत आरम्भ की और तत्काल ही राष्ट्रीय सरकार की मांग स्वीकार करली किन्तु पिछले कांटे वे अपनी बात छोड़कर बहानेबाजी करने लगे और सम्मेलन असफल हो गया किन्तु इसका कोई कारण नहीं बताया गया ?"

सर स्टाफर्ड ने निर्लज्जता पूर्वक यह कहा कि गान्धी जी के हस्तक्षेप के कारण कांग्रेस ने अपनी नीति बदल दी क्योंकि इसके पूर्व कार्य्य समिति ने यह प्रस्ताव पास कर लिया था कि मसविदा स्वीकार कर लिया जाय। यह सर स्टफर्ड का वक्तव्य है यद्यपि यह देश तो अभी तक केवल यही बात जानता है कि कार्य्यसमिति ने केवल एक प्रस्ताव उस मौके पर पास किया जो सम्मेलन असफल घोषित होने पर प्रकाशित किया गया। क्रिप्स के उपरोक्त वक्तव्य को कांग्रेस कार्य्यसमिति के सभी सदस्यों ने एक स्वर से झूठ कहा है। गान्धी जीने हरिजन में भी इसका प्रतिकार प्रकाशित किया। इससे क्रिप्स के प्रति भारतीय धारणा में आदर न मिल सका। कांग्रेस को बदनाम करने के यत्न में उन्हें स्वयम् मुहकी खानी पड़ी। सर क्रिप्स ने पं० जवाहर लाल से कहा था कि वे सरकार कांग्रेस और लीग का एक समझौता चाहते थे। सर तेज से भी यही बात कही कि लीग और कांग्रेस से यदि समझौता हो गया तो उन्हें अन्य दलों की चिन्ता न होगी। कांग्रेस और मुसलिम लीग ने एक साथही इसके खिलाफ फैसला किया पर हिन्दू महासभा दसदिन पहले ही भारत की अखण्डता टूटने का अभियोग लगाकर इसका विरोध किया और किसी प्रकार का भाग न लिया, सिक्खों ने भी इसे स्वीकार न करने की घोषणा कर दी क्योंकि सिक्खों की स्थिति नाजुक बनाता था। अछूतों के नेता अम्बेडकर और वह राजा ने भी भिन्न कारणों से इसे अछूतों की ओर से अस्वीकृत कर दिया। मोमिन, शिया, देशीराज्य परिषद, यानी हर एक महत्वपूर्ण संस्थाओं ने एक या दूसरे कारण से इससे मुख मोड़ा और इसे भयानक और घातक बताया। इस योजना की कमजोरियों को जानते हुये भी सरकार ने ऐसी योजना क्यों भेजी जिसे वह जानती थी कि हिन्दुस्तानी कभी स्वीकार न करेंगे। इसका

अभिप्राय यह जान पड़ता है कि अमेरिकन जनमत को अपने पक्ष में करने के लिये यह चाल चली गई, यद्यपि अमेरिका में भी यह पोल लुई फिशर और और विलियम फिलिप्स द्वारा खुलगई।

× × ×

यों तो अंग्रेजों की नीति भारत में साम्प्रदायिक वृक्ष को हरा भरा रखने की थी ही किन्तु युद्ध आरम्भ हो जाने के कारण सरकार मुसलमानों की ओर विशेषरूप से झुकी। हिन्दू जनता पर कांग्रेस या अन्य संस्थाओं का प्रभाव था जो भारत में लोकतंत्र व्यवस्था स्थापित कर अंग्रेजों के पंजे से मुक्त करना चाहती थी। मुसलिम लीग ही ऐसी संस्था थी जो किसी प्रकार की लोक-तंत्रात्मकसत्ता के पक्ष में नहीं थी। इस सम्बन्ध में जिन्ना और लीग के अन्य नेताओं का मत हम प्रकट कर चुके हैं। क्रिप्स योजनारूपी मुर्दे पर इस तरह एक लकड़ी और चढ़ी और इससे लीगियों को पाकिस्तान की माग को प्रोत्साहन मिला। यद्यपि लीग क्रिप्स योजना अस्वीकार कर चुकी थी फिर भी योजना में इस पर काफी जोर दिया गया था कि भारत का बँटवारा हिन्दू और मुसलमानों में होगा। क्रिप्स के चले जाने पर अखिलभारतीय कांग्रेस कमेटी की प्रयाग में बैठक हुई। इसमें राजाजी ने पाकिस्तान की मांग या इससे मिलती जुलती योजना को स्वीकार करने का प्रस्ताव किया। आत्म-निर्णय के सम्बन्ध में जगतनारायण लाल का प्रस्ताव आया। यद्यपि अधिवेशन में यह प्रस्ताव गिर गया पर मुसलमानों में यह धारणा फैली कि कांग्रेस पर दबाव डालने से उनकी योजना सम्भवतः कांग्रेस स्वीकार करले। हिन्दुओं में भी इसकी प्रतिक्रिया हुई। श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी तो इससे बिलकुल अलग हो कर अखंड भारत का आन्दोलन करने लगे। हिन्दुओं में भी यह धारणा फैलने लगी की कांग्रेस की मुसलमानों को संतुष्ट करने की नीति हिन्दूहितों के लिये घातक होगी। सरकार से समझौते का कोई लक्षण नहीं प्रकट हो रहा था। देश में क्षोभ और अशान्ति मची हुई थी। ऐसी परि-स्थिति में कांग्रेसको, 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव पास करने के सिवा दूसरा कोई रास्ता

नहीं था। अस्तु कांग्रेस ने बम्बई की बैठक में ८ अगस्त सन १९४२ में भारत छोड़ो प्रस्ताव पास किया।

युद्ध आरम्भ होने के साथ ही डी० आई० आर नामक कानून लागू कर भारत की बची खुची आजादी भी छिन गई। भारत स्वयम् एक बड़ा जेलखाना सा हो रहा था। इस समय शान्ति रक्षा और युद्ध के नाम पर अंग्रेजी हुकूमत ने जैसा अत्याचार किया वह क्रूर से क्रूर शासक को भी लज्जित कर देता है, पर नौकरशाही को नहीं ; और हम उन हिन्दुस्तानियों को क्या कहें जो नौकरशाही के पुरजे बन कर अपने श्वेताङ्ग महाप्रभुओं को प्रसन्न करने के लिये तिल का ताड़ और अर्थ का अनर्थ कर देते हैं। देश दमन की ज्वाला में प्रज्ज्वलित हो उठा। मुसलमानों ने परिस्थित का अटल राजभक्ति प्रकट कर लाभ उठाया और अनेक विभागों में अधिकाधिक नौकरी पाकर अपना भाग्य और सरकार की खैर मनाने लगे। इस समय लीग को और भी मौका मिल गया। पंजाब, सिन्ध और बंगाल में लीग का पूर्ण राज्य हो गया। पंजाब में सर सिकन्दर के कारण जिन्ना की दाल तो न गल सकी किन्तु सिन्ध में इनके पिट्ठू मंत्रियों ने सत्यार्थ प्रकाश पर रोक लगाकर हिन्दुओं की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँचाई। आश्चर्य्य है कि इतने दिनों तक सत्यार्थ प्रकाश का चौदहवाँ सम्मुल्लास मुसलमानों की धार्मिक भावनाओं को चोट नहीं पहुँचाता था। लीग के मन्त्रिमण्डल के शासनकाल में ही काफिरों का कुफ्र गिरा। दूसरी ओर बंगाल में भीषण अकाल पड़ा। जिसका उत्तरदायित्व बंगाल सरकार और लीगी मन्त्रीमण्डल पर है क्योंकि वह अपना कर्त्तव्य पालन दृढ़ता से न कर सकी ; और तीस चालीस लाख आदमी भूख और प्यास से तड़प तड़प कर विदा हो गये। यह पाप तो एक हत्यारे की हत्या से भी बर्बर है जिसे इसके लिये फाँसी की सजा मिलती है। यह है लीग के मन्त्रीमण्डल की काली करतूतें और इसी आधार पर पाकिस्तान की माँग की जा रही है। यदि इसी प्रकार की जिम्मेदारी और जनहित लीग पाकि-

स्तान में चाहती है तो हम पीड़ित भारतीय मानव के लिये हृदय से दुखी हैं, और ऐसे पाकिस्तान को स्वप्न में भी नहीं चाहते।

मिस्टर जिन्ना और लीग के अन्यनेता जो देश भर में साम्प्रदायिक विष उगल रहे थे और जो खेलना चाहते थे उसमें उन्हें सफलता न मिल सकी। इन लोगों की इच्छा थी कि इस मौके पर सरकार से मिलकर ऐसा कोई चलता समझौता कर लिया जाय कि अंग्रेज सरकार स्पष्टरूप से लीग की माँग को स्वीकार कर ले। इस समय लार्ड लिनलिथगो भारत से स्वदेश जाने के लिये बिस्तर बाँध चुके थे, अस्तु उनसे किसी प्रकार की आशा करना व्यर्थ था। किन्तु एक फायदा तो हो ही गया, वह था सप्लाई रेशनिंग और सिविक गार्ड आदि विभागों में मुसलमानों की आँखें मूंदकर नियुक्ति। इससे कुछ मुस- लिम जनता प्रभावित अवश्य हुई किन्तु जिन्ना को सरकार चलाने की नीति में तो असफलता ही मिली। लीगका पाकिस्तान पाने का स्वप्न इस प्रकार नष्ट हो गया और कुचक्रों से देश को मुक्ति मिली।

लार्ड वेवल ने भारत की वाइसरायलटी का पद ग्रहण कर स्थिति अध्ययन के बहाने तत्काल व्यवस्थापिका सभा में भाषण नहीं किया, किन्तु आपके पहले भाषण में भारत की अखण्डता पर जोर दिया गया। इससे लीगको धक्का पहुँचा क्योंकि वाइसराय की ध्वनि भारत विभाजन नीति से भिन्न स्वरों का आलाप था। वाइसराय का यह भाषण विना भारत मन्त्री के स्वीकृति के होना सम्भव नहीं था अस्तु भाषण विना किसी रहस्य के नहीं, यह धारणा और दृढ़ यों होगई कि गत्यवरोध दूर करने का संकेत भी नहीं किया गया केवल देश की एकता पर जोर दिया गया। कौन कह सकता है कि कोई अज्ञात मिस्टर विक, या थियोडोर मारिसन अथवा आर्चीबाल्ड इसके पीछे न होंगे।

भारतीय मुसलमानों में इसकी ऐसी प्रतिक्रिया हुई जो बहुत से मुसलमानों को लीग के दायरे से बाहर निकाललाई और एक ऐसा दल तय्यार हो गया जो लीग और जिन्ना का विरोध करता है। जिन्ना की हठवादिता से ही विरो- धियों को बल मिला है। लीग के वे किले जो सिन्ध, पंजाब और बंगाल

में बने हैं उनमें फूट पड़ चुकी है; बौखलाहट में लीगवाले सर्वत्र उपद्रव कर रहे हैं फिर भी इनकी खबर लेने वाला कोई दिखलाई नहीं पड़ता। हिन्दू संस्थायें और कांग्रेस तो आरम्भ से ही इसका विरोध कर रहे हैं। ऐसे वातावरण में हमारी यह प्रार्थना है कि मुसलमानों की आँखें खोलकर देखें और वे स्वतन्त्र या आजाद मुस्लिम दल को अपना वोट देकर देश को अंग्रेजों की गुलामी से मुक्त करने में सहायक हों। ऐसा बढ़ते हुए काले बादलों के बीच लीग और जिन्ना अभी भी पाकिस्तान का आलाप बन्द नहीं कर रहे हैं। उनका ध्यान है कि इस प्रकार यत्न करते-करते एक न एक दिन मुसलमान पाकिस्तान लेकर ही रहेंगे। गान्धीजी इस मसले को हल करने के लिये तीन सप्ताह तक बम्बई के मलाबार हिल पर जिन्ना से समझौते का यत्न करते रहे किन्तु बापू की ईमानदारी से वह न पिघल सके और उन्हें बिना समझौते होकर लौट आना पड़ा। यही शिष्टता है काइदे आजम की कि एक बार भी वापसी मुलाकात के लिये वे पर्णकुटी न गये, उन्हें उचित था कि उस महापुरुष के कुटीपर सभ्यता के नाते ही वापसी मुलाकात करने जाते। बात चीत असफल हो जाने पर भी पाकिस्तान का मसला कहाँ तक हल हो सका यह कहने में हम असमर्थ हैं पर हिन्दू जनता ने इसका यही अर्थ लगाया कि कांग्रेस व मुसलमानों के आगे जरूरत से ज्यादा झुकी है। मुसलिम लीग की इस नीति से मुसलमानों में यह धारणा फैली की संभव है, एक दिन उनका स्वप्न सफल हो जाय और देश हिन्दुस्तान और पाकिस्तान में बँट जाय। इस प्रकार की उथल-पुथल का परिणाम यह होता रहा है कि जब भी किसी दल ने यह यत्न किया कि युद्धान्तर्गत एक आपसी समझौता हो जाय और प्रान्तों में सरकारें फिर बने लीग ने रोड़ा डाला। धारा ९३ से प्रान्तों की कुछ मुक्ति हो पर जब कभी ऐसा यत्न हुआ लीग ऊँची दिवार की भाँति बीच में आ खड़ी हुई किन्तु न तो अपनी कोई योजना ही पेश कर सकी और न पाकिस्तान की कोई निश्चित परिभाषा ही दे सकी। जितने लीग और पाकिस्तान के हिमायती हैं उनकी पाकिस्तान की धारणा और परिभाषा अलग-अलग है। ऐसी स्थिति में उस चीज की माँग

पेश करना जो अभी स्थिर नहीं की जा सकी है कहाँ तक उपयुक्त है ?

इसी बीच जर्म्मनी पराजित हुआ और जापान भी तीव्रता से पतन की अग्रसर हो रहा था। अस्तु बृटिश सरकार के लिये कोई नया नाटक खेलना आवश्यक था। चर्चिल और एमरी की शक्ति का ह्रास हो चुका था यद्यपि अभी भी साम्राज्यवाद के सूत्र संचालक यही हैं। मन्त्रिमण्डल क्लेमेन्ट एटली की नेतृत्व में बन चुका है। यह मन्त्रिमण्डल मजदूर दल का है और भारत की मित्रता का दावा करता है। कोई अंग्रेज हृदय से भारत के प्रति कितना उदार और निष्पक्ष हो सकता है कहने की आवश्यकता नहीं। इतना ही समझ लेना पर्याप्त होगा कि भारत की नीति के सम्बन्ध में चाहे राम्जेमेकडान्लड हों या एटली और लास्की वह किसी टोरी अनुदार सरकार से पीछे नहीं रहेंगे। मजदूर दलने अपने चुनाव की विज्ञप्ति में ही इसे स्पष्ट कर दिया था; पर रूस और अमेरिका को प्रसन्न करने के लिये यह आवश्यक हैं की भारत के सम्बन्ध में कुछ न कुछ चरचा होती रहे। इसीके फलस्वरूप शिमला सम्मेलन आरम्भ हुआ। शिमला सम्मेलन के आरम्भ में समझौते का आधारलियाकत देसाई समझौता होगा यही धारणा हुई क्योंकि लीग और कांग्रेस को बराबरी का पद दिया गया। बीच-बीच में श्रीभूलाभाई देसाई और लीग नेता लियाकत अलीखाँ में जो बात-चीत चलती जिन्ना हमेशा उसका प्रतिकार करते रहे और पाकिस्तान का राग आलापते रहे। इनकी हठधर्मी का इससे अधिक कैसा प्रमाण चाहिये कि यह युद्ध काल में भी किसी प्रकार की आरसी सरकार की स्थापना नहीं चाहते थे जिससे जनता का भार और बन्धन ढीला हो सके। डी० आई० आर और अन्य नियन्त्रणों और नियमों की चक्की में देश पिस रहा है। करोड़ो मनुष्य अन्न और वस्त्र संकट से खिन्न हो रहे हैं फिर भी किसी प्रकार की सरकार नहीं बन सकती जो जनता का वास्तविक प्रतिनिधित्व कर सके और जुल्म ज्यादतियों से उसकी रक्षा कर सके।

शिमला सम्मेलन में भी जिन्ना अपनी डफली अलग बजाते रहे। उनकी डफली से बेसुरा और बेताला राग छोड़कर बज ही क्या सकता था। अन्तमें

सम्मेलन असफल घोषित होगया और देश की आशा निराशा में परिणित हो गई। लार्ड वेवल की शुभेच्छा और ईमानदारी में अविश्वास नहीं किया जा सकता किन्तु इस नाटक से यह स्पष्ट हो गया कि वाइसराय का अपना मत भी बृटिश मन्त्रीमण्डल की नीति निर्धारण और संचालन के आगे कोई महत्व नहीं रखता। लीग और जिन्ना भारत के कल्याण और स्वतन्त्रता के घातक हैं। तीसरी बात यह कि इनकी सलाह पर चलकर मुसलमानों का अस्तित्व खतरे में पड़ जायगा। चौथी बात यह कि भारत अंग्रेजों की गुलामी और नौकरशाही से कभी स्वतन्त्रा न हो सकेगा। इस प्रकार अंग्रेजों की विभाजन नीति में जिन्ना और लीग सिद्धक साधक बन गये हैं। अंग्रेजों की चतुराई का एक नया स्रोत अछूत समस्या के रूपमें प्रवाहित होने के लिये उत्सुक है। इस दलकी बागडोर डाक्टर भीमराव अम्बेदकर के हाथ हैं। अम्बेदकर महोदय में चाहे जो भी विद्या बुद्धि और अनुभव हो किन्तु यदि वे अंग्रेजों के हाथ के खिलौने बनकर भारतीय स्वाधीनता का मार्ग अवरुद्ध करते हैं तो वे हमारी श्रद्धा नहीं पा सकते। वस्तुतः इसका उद्देश्य यह है कि साम्प्रदायिकत्रिकोण की तीनों भुजाओं में से अंग्रेज अलग होकर उस भुजा के स्थानपर अछूतों को कर देना चाहते हैं। यह है कूटनीति अथवा क्रूर नीति। इसका निर्णय समय स्वयम् करेगा।

घटनाओं की इस प्रकार आवृत्ति हो जाने पर यह स्पष्ट हो रहा है कि पाकिस्तान का नारा केवल आन्दोलन करने का एकमात्र सहारा है। आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक कारणों की ओट में धर्म संकट की शर्तें और दलीलें लचर हैं। इसका न तो कोई महत्व है और न आधार हो, यह केवल अपनी शक्ति संचय और वृद्धि के लिये युद्ध है। दूसरी चीज यह भी स्पष्ट है कि मुसलमानों के यह नेता इस प्रकार अपने आत्मसम्मान से पतित हो चुके हैं कि उनका मेरुदण्ड ही टूट गया है। वे किसी आधार पर स्थिर नहीं रहते और सरकार के इशारे पर नर्तन में ही अपना कल्याण समझते हैं। अस्तु यह प्रमाणित है कि पाकिस्तान का नारा-नारा मात्र है। यह आन्दोलन केवल भारतीय स्वतन्त्रता

का मार्ग रोधक है क्योंकि बृटिश राजनीतिज्ञों को संसार के सम्मुख यही एक समस्या है जिसे वे रख सकते हैं और कहते हैं कि हिन्दू मुसलमानों के आपसी मतभेद के रहते हुए एक तीसरी शक्ति यानी अंग्रेजों का रहना अत्यन्त आवश्यक है। अन्यथा देश में दंगे, डकैती, राहजनी और ऐसी अराजकता फैलेगी कि देश में किसी का प्राण और सम्पति सुरक्षित नहीं रह सकेगी। पर सब से बड़ा कारण तो यह है कि भारत को किसी प्रकार का अधिकार देकर अंग्रेज अपने व्यवसाय स्वार्थ और पूंजी को जिसे वे भारत में लगा चुके हैं; और जो इङ्गलैण्ड के जीवन मरण का प्रश्न है। भारत किसी दशा में भी हो इंग्लैण्ड स्वेच्छापूर्वक उस का आर्थिक शोषण करता रहना चाहता है। यही है पाकिस्तान का परिणाम और लीग की माँग के भीतर छिपा हुआ रहस्य।

मुसलमान लीग और पाकिस्तान के भुलावे में मजहब के नाम पर रखे गये हैं क्योंकि यदि आज मुसलमानों में भी लीग की पोल खुल जाय तो राजनैतिक अन्तरिक्ष में लीग के बादल अपने आप साफ हो जायँगे और भारत की स्वतन्त्रता का प्रभात ज्योतिर्मय हो जायगा। पाकिस्तान के नारे का वास्तविक महत्व जैसा ऊपर कहा जा चुका है यही है। मुसलमान इतने पर भी लीग के आगे भेंड़ की तरह आकर गिरते हैं यही दुर्भाग्य है, हमारा और मुसलमानों का भी। काँग्रेस का ध्येय और नीति स्पष्ट है। अहिंसा के मार्ग में असत्य और कूटनीति पराजित ही होते रहेंगे इसमें सन्देह नहीं। अहिंसा और सत्य ही हमारे राजनीति की ऐसी कसौटी है जिस पर नीरक्षीर विवेक करते देर नहीं लगती। कोई भी नीति अहिंसा और सत्य की कसौटी पर कसा जाय उसका रहस्य तत्काल ही प्रकट हो जायगा। यही कारण है कि अंग्रेजों की चालें काँग्रेस के सम्मुख सदा बेकार हो जाती हैं। इसलिये यह आवश्यक है कि लीग यदि राजनैतिक प्रगति और देश का उद्धार चाहती है तो वह मजहब और पाकिस्तान का नारा छोड़ कर देश की अखण्डता और राजनैतिक प्रगति के लिये प्रयत्नशील होकर पहले अंग्रेजों की ताकत तोड़कर देशको स्वाधीन करे। इस युग में धर्म के नाम पर स्वाधीनता का मार्ग रुद्ध करना पागलपन से भी दुस्तर है

इसमें सन्देह नहीं। यदि देश स्वाधीन हो गया तो धर्म का लोप नहीं हो सकता। मुसलमानों का यह भय कि हिन्दू और कांग्रेस उनका अस्तित्व लोप करना चाहते हैं निर्मूल है। उनका यह अभियोग जिसे जिन्ना जैसे मिथ्यावादी आरोपित करते रहते हैं निराधार है; और पाकिस्तान का समर्थन करने का आधार भी निराधार है। अस्तु इस प्रकार के आन्दोलन का जितनी ही जल्दी अन्त हो भारत के लिये हितकर होगा।

अध्याय ९

लीग का मिथ्या प्रचार

सन् १९३५ का नया सुधार क्या हुआ मानो लीग के प्रतिष्ठापकों, सरक्षकों और समर्थकों को कांग्रेस पर मिथ्यारोपण और ज़िहाद का अच्छा अवसर मिल गया। सन् १९३७ में प्रान्तीय धारा सभाओं का चुनाव हुआ इस समय लीग ने जी तोड़ कोशिशें की किन्तु कहीं भी उन्हें इतना वोट न मिल सका जिसके आधार पर उन्हें संयुक्त मन्त्रीमण्डल बनाने में सहायता मिलती। आरम्भ में लीग के कितने मुस्लिम समर्थक थे इसका पता नीचे दिये हुये आँकड़ों से स्पष्ट हो जाता है। सन् १९३७ के आमचुनाव में लीगी और गैर लीगी मुसलमानों का प्रतिनिधित्व विचारणीय है।

वर्तमान शासन विधान के अनुसार निर्वाचित १५८१ सदस्यों में भारत के ग्यारह प्रान्तों ४८० मुसलिम सदस्य हैं जिनमें लीगके केवल १०४ प्रतिनिधि चुने जा सके अर्थात् मुसलिम जनमत का केवल ४.९% सिन्ध, सीमा प्रान्त लीग के साथ था पंजाब और बिहार में तो मानों लीग का श्रीगणेश ही नहीं हुआ। अस्तु कहीं भी लीग के मन्त्रीमण्डल बनाने का प्रश्न ही न उठ सका। बंगाल में कृषक प्रजा दलके हाथ विजय श्री लगी। कांग्रेस के इस अप्रत्यशित विजय ने विदेशी

क्रम संख्या	प्रान्त	गैरलीगी मुसलमान	लीगी	प्रान्त में मुसलिम आबादी
१.	मदरास	१७	११	३८६६४५२ या ७९ %
२.	बम्बई	९	२०	१६२०३६८ या ९२१ %
३.	बंगाल	७७	४०	३३००५४३४ या ५४.७३ %
४.	संयुक्तप्रान्त	३७	२७	८४१६३०८ या १५.०२ %
५.	पञ्जाब	८३	१	१६२१७२४२ या ५७.०६ %
६.	विहार	३६	×	४१७६३४१ या १२.१८ %
७.	मध्यप्रान्त	१४	×	७८३६९७ या १५.३० %
८.	आसाम	२५	९	३४४२४७९ या ३३.७३ %
९.	सीमा प्रान्त	३६	×	२७८८१९७ या ९१.४ %
१०.	उड़ीसा	४	×	१४६३०१ या १६८ %
११.	सिन्ध	३६	×	३२०८३२५ या ७०.४ %
११		३७७	१०८	

शासकों के कान खड़े कर दिये। अंग्रेज यह खूब समझते हैं कि उनके काम में मुसलमान भलीभाँति सहायक हो सकते हैं और खासकर ऐसे मौकों पर जब उन्हें जिन्ना ऐसा व्यक्ति नेतृत्व के लिये मिल जाय। उनका हित तो इसी में है कि भारत में सार्वजनिक एकता न होने पावे। अस्तु मुसलमानों को राष्ट्रीयता से विमुख करने के लिये राजा, नवाब, खाँ बहादुर, ताल्लुकदार जमींदार और सरकारी नौकरों के इशारे पर चलाने वाले खुशामदियों की राजभक्त सेना तय्यार हो गई जो कॉंग्रेस की राष्ट्रीयता और हिन्दुओं की बढ़ती हुई शक्ति को चूर्ण करने में सरकार की सहायक हो। इसके लिये मुसलिम लीग से बढ़कर कौन सहायक मिल सकता था। लीग और मुसलमानों का पृष्ट पोषण करने के लिये सरकारी उच्चपदाधिकारी तो तत्पर रहते ही हैं जैसा कि मौलाना हुसेन अहमद मदनी की विज्ञप्ति से प्रकट होता है जो २१ नवम्बर १९४५ की अमृतबजार पत्रिका में प्रकाशित हुआ है कि प्रयाग हाईकोर्ट के एक न्यायाधीश भी भारत में अंग्रेजों की सुरक्षा के लिये मुसलमानों की ओर उत्कण्ठा से देख रहे हैं। सरकार ने मुसलमानों को बहकाने और उभाड़ने में जिस प्रकार आँखें बन्द करली हैं उसी का यह कुपरिणाम है कि देश की शान्ति को आज लीग वाले भंग करने की धमकी दे रहे हैं।

सन् ३७ के आम चुनाव के बाद कॉंग्रेस मन्त्रिमण्डल १७ महीनों तक शासन की बागडोर अपने हाथ लिये रही। कॉंग्रेस मंत्रियों ने कितने परिश्रम, लगन और ईमानदारी से शासन में हाथ बटाया इसकी प्रसंसा यू० पी० के भूतपूर्व गवर्नर सर हेरीहेग स्वयम् कर चुके हैं पर लीगवाले भला इसको कैसे सह सकते हैं। उन्ह पर तो कॉंग्रेस को बदनाम करने का भूत सवार है। अस्तु उन्हें कॉंग्रेस शासन काल में चारों ओर अत्याचार और जुलुम ही नजर आया। लीग कौन्सिल ने कॉंग्रेस प्रान्तों में जाँच करने के लिये राजा पीरपूर की अध्यक्षता में एक जाँच कमीशन नियुक्त की। इनका पक्षपात तो इसी से प्रकट होता है कि बंगाल और पंजाब में लीगी मन्त्रीमण्डल था अस्तु वहाँ के मुसलमानों पर ज्यादतियों की जाँच नहीं की गई। अत: इस

जाँच की बड़े छानबीन के पश्चात् रिपोर्ट प्रकाशित हुई जो पीरपूर रिपोर्ट के नाम से प्रसिद्ध है। यह रिपोर्ट क्या है मानों झूठ और अनर्गल प्रलाप का खजाना है। किन्तु लीग इसे अत्यन्त महत्व देती है और इसी आधार पर सन् १६३६ में मन्त्रीमण्डल के पदत्याग के पश्चात् 'प्रार्थना' और 'मुक्ति दिवस' मनाया गया। इसमें किये गये मिथ्या आरोपों को पढ़ कर आश्चर्य होता है कि समाज के इतने उत्तरदायी व्यक्ति भी इस प्रकार निःसंकोच होकर असत्य का प्रचार करते हैं। अगर मुसलमान अपने मजहब और ईमान को इतना महत्व देते हैं तो उन्हें झूठ से अवश्य परहेज करना चाहिये पर इससे वे नहीं चूकते। हमारा मुसलमानों से चाहे जो भी धार्मिक और सामाजिक मतभेद हो किन्तु इतना तो हम कह सकते हैं कि संसार में कदाचित ही ऐसा कोई मजहब होगा जो झूठ को प्रोत्साहित करता हो। वल्कि हिन्दू साम्प्रदायवादी तो यहाँ तक कहते हैं, और कदाचित ठीक भी कहते हैं कि मुसलमानों को अपने दायरे में मिलाने के लिये कांग्रेस इतना झुक गई कि हिन्दुओं के साथ एक प्रकार से अन्याय ही होने लगा है। डाक्टर सावरकर और मुंजे, मुकर्जी प्रभृति ने तो इसकी बार-बार चुनौती तक दे डाली है। कांग्रेस के अग्रनेताओं ने जिन्ना के आगे झुक कर तथा काइदेआजम की उपाधि देकर मानों तितलौको को नीम चढ़ा दिया है। यही कारण है कि सतत उद्योग होने पर भी मियाँ जिन्ना से किसी प्रकार का समझौता न हो सका, और न भविष्य में होने का कोई सम्भावना ही है।

पीरपूर रिपोर्ट में निराधार अनर्गल असत्य भरा हुआ है। यदि इसकी एक एक बातों का खण्डन किया जाय तो एक स्वतन्त्र पुस्तिका बन जायगी। इस प्रकार के आक्षेप और आरोप का कांग्रेस के किसी अधिकारी द्वारा खण्डन होना आवश्यक है। रिपोर्ट तीन भागों में बटी हुई है। पहले और दूसरे में "कारण और संघर्ष" का वर्णन किया गया है। तीसरे में मुसलमानों पर कांग्रेस प्रान्तों में किये गये अत्याचारों का वर्णन है। इसमें लगाये गये अभियोगों की चरचा करने के पूर्व हम यह कह देना चाहते हैं कि इसका साक्षी इतिहास ही है कि हिन्दू धर्म्मोन्माद ग्रस्त हैं अथवा मुसलमान?

जो देश शंकर बुद्ध, व्यास मनु जैसे बुद्धिवादी दार्शनिक ऋषि महर्षियों की सेना उत्पन्न कर सकता है वह धर्म्मोन्माद से कभी ग्रस्त न होगा। हम तो यह कहने का साहस करते हैं कि हिन्दू धर्म्म की सहिष्णुता और उदारता तथा व्यर्थ बन्धनों का ही कुपरिणाम है कि आज हिन्दू जाति की वह शक्तिक्षीण हो गई जिससे वह दूसरों को पचाकर अपना सके। यही कारण है कि भारत में आज १० करोड़ मुसलिम नर मुण्ड की गणना होती है। आखिर जिन्ना, लियाकत अली सिकन्दर हयात आदि भी तो हिन्दू सन्तान ही हैं। क्या यह अपनी तीन पुश्त से अधिक को मुसलमान होने का दावा कर सकते हैं? क्या जिन्ना का उद्गम भाटियारक्त से नहीं है? यदि स्वर्गीय अब्दुल्ला हारून का वचन प्रमाणिक नहीं तो इसका खण्डन मियाँ जिन्ना को कर देना चाहता था। श्री जिन्ना देखने में कोमल, कपड़े-लत्ते से लैस अवश्य रहते हैं किन्तु उनका चमड़ा और हृदय दोनों कठोर हैं और स्वार्थ से इस प्रकार रंग गया है कि उन्हें सत्य, अथवा वास्तविकता का प्रकाश नहीं दीखता।

और तो और कांग्रेस की नीति पर आक्षेप करने में लीग वन्देमातरम्, राष्ट्रीय झंडा, और गोपालन तथा गोरक्षा की निंदा करने में भी लज्जित नहीं हुई है। गोरक्षा प्रचार को ही यह लोग साम्प्रदायिक दंगों का कारण बताते हैं। हिन्दुस्तानी प्रचार को यह मुसलिम शिष्टता और संस्कृति पर धावा करने का आरोप लगाते हैं। मुसलमान स्वयम् ईमानदारी से बतावे क्या गोरक्षा और गोपालन में उनका स्वार्थ नहीं? क्या उन्हें दूधकी आवश्यकता नहीं होती, क्या उन करोड़ों मुसलमानों को जो गाँव की जिन्दगी बसर करते हैं खेतीबारी के लिये बैल की आवश्यकता नहीं होती? अथवा उनकी आर्थिक समस्या भिन्न कही जा सकती है? अन्त में कुर्बानी का अर्थ खींचकर गोकशी के पक्ष में करना तो बिल्कुल असंगत है। मैंने स्वयम् कितने उलेमाओं से कुर्बानी के सम्बन्ध में प्रश्न कर पूछा कि कुरान शरीफ की इस सम्बन्ध में क्या व्यवस्था है? पर किसी ने खुलकर इसे लाजिमी नहीं बताया। कुर्बानी का अर्थ तो वे उत्सर्ग ही बताते रहे हैं; फिर यह भी कहते हैं कि "जो

मजहब एक दूसरे से नफरत करना सिखाये ; एक दूसरे में फूट फैलाये वह मजहब अपनी पाकमरता खोकर गुमराह हो जाता है।" इस प्रकार यदि सचमुच मुसलमान कुरान का पालन कर सच्चे मुसलमान बनना चाहते हैं तो उन्हें चाहिये कि हिन्दुओं से घृणा करना छोड़ कर पारस्परिक एकता से रहें। पर उन्हें तो ज़िहाद की शिक्षा दी जारही है। उन्हें लीग और पाकिस्तान के नाम पर गुण्डई सिखाई जा रही है। इस प्रकार का प्रचार होता रहा और सरकारी अफसर भी आँखें बन्दकर यह गवारा करते रहे तो कुछ दिनों में यह द्वेष और घृणा इस प्रकार बढ़ जायगी कि भारत भी एक वृहत्त फिलिस्तीन अथवा बालकन बन जायगा और कभी भारत को स्वेतशोषण से मुक्ति नहीं मिलेगी। इसका परिणाम यह होगा की अगला महायुद्ध भारत भूमिपर ही होगा क्योंकि अंग्रेजों की वर्तमान नीति से प्रकट हो रहा है कि वह भारत में अपना विशेष स्वार्थ (Special interest) नहीं छोड़ना चाहते ! ईरान और मध्य योरुप की नीति से स्पष्ट प्रकट हो रहा है कि अब स्टालिन का रूस लेनिन का रूस नहीं है। वह भी दिन दूर नहीं जान पड़ता जब स्टालिन का रूस पूँजीवाद और उसके शिरहस्त पुत्र साम्राज्यवाद की उपासना में लिप्त हो जाय। हमारे विद्वान् और आदरणीय नेता हमें क्षमा करें, हमारी धारणा तो यह हुई जारही है कि जनवाद, साम्यवाद, समाजवाद, गान्धीवाद आदि कितने 'वाद' केवल समाज के बड़े पाखण्ड मात्र हैं इनका विश्व विधान में स्थाई होना असम्भव साप्रतीत होता है ? कम से कम नव विश्व-विधान में तो यह केवल क्रूरहास्य मात्र है। आज भी शक्ति लोलुप स्वेतजाति नर रक्त की उतनी ही पिपासित हैं जितनी वह पहले थी। आदर्शवाद और बुद्धिवाद केवल तर्क और सांस्कृतिक उन्नति प्रकट करने का द्योतक है। ऐसी भीषण स्थिति में देश विभाजन करने का आन्दोलन करना असंगत है। किन्तु जान पड़ता है मुस-लिम लीग के प्रचारक और अनुयाई इस प्रकार धर्म्मान्ध हो गये हैं कि उचित मार्ग प्रदर्शन भी उन्हें गुमराही जान पड़ती है। यही कारण है कि लीग नेताओं के मुखसे १९४६ में भी "ज़िहाद, ज़िहाद" की पुकार सुनाई पड़ती है।

पीरपुर रिपोर्ट का कांग्रेस द्वारा खण्डन न होने के कारण लीग नेताओं को अधिक प्रोत्साहन मिला और सन् ४० के लीग अधिवेशन में लाहौर में वह प्रस्ताव पास हुआ जिसके आधार पर लीग पाकिस्तान की माँग कर रही है। "मुसलमानों की धारणा है कि बहुमत शासन से बढ़कर कोई बड़ा जुल्म उनपर हो ही नहीं सकता और राज्य को स्थाई बनाने के लिये यह आवश्यक है कि सभी जातियों को समान अवस्था और अधिकार न प्राप्त हों चाहे कितनी ही साधारण समस्या क्यों न हो।" (रिपोर्ट पृष्ट २)। हिन्दू समाज अछूतों की अवहेलना नहीं कर सकता ; वे तो हिन्दू समाज के अंग हैं और उनकी समस्या हिन्दुओं ने छूआछूत निवारण की व्यवस्था कर तय करली है। हिन्दुओं के ऊपर साम्प्रदायिकता का आरोप लगाकर यह कहा गया है कि धार्मिक कट्टरता के कारण ऐसे ऐसे कर लगा दिये गये हैं जिसका प्रभाव अपरोक्ष रूपसे मुसलमानों पर पड़ता है (पृष्ठ ४) मुसलमान किसानों के साथ सोशलिष्ट और कांग्रेस कार्यकर्ताओं ने भेदभाव से काम लिया (पृष्ट ५)। कांग्रेस स्वयम् सेवकों और मुसलमान जमींन्दारों में झगड़ा खड़ा हुआ। सागर जिले के राहली स्थान में कांग्रेस उम्मीदवारों को वोट न देने के कारण बीड़ी बनानेवाले मुसलिम मजदूरों को निकाल दिया गया (पृष्ट ६) पर लीग ने किसी प्रकार का भेद भाव नहीं दिखाया और कानपूर में मजदूरों की हड़ताल होने पर लीग ने बिना किसी भेद भाव के मजदूरों को खाद्य सामग्री दी।

रिपोर्ट आगे कहती है कि भारत में स्थाई हिंदू धार्मिक बहुमत होने के कारण अन्य प्रजातन्त्रों से भिन्न धार्मिक आधार पर राजनैतिक दल बनते हैं। मुसलमान गरीब होने के कारण कांग्रेस की योजना से सहयोग नहीं कर सकते क्यों कि उनकी योजना केवल चुनाव जीतने के लिये एक छलमात्र है और इससे मुसलमानों का हित असम्भव है।" जिन्ना साहब ने कलकत्ते में छात्र संघ में भाषण करते हुये कहा "लीग ने संयुक्त मन्त्री मण्डल (बंगाल) बनाना इसीलिये स्वीकार कर लिया कि लीग की नीति भिन्न सम्प्रदायों के विरुद्ध युद्ध करना नहीं है बल्कि मुसलमानों का संगठन कर एक ऐसी व्यवस्था बनाना है

जिससे देशकी आर्थिक और राजनैतिक समस्या का निपटारा हो जाय। (पृष्ठ ८) परन्तु कांग्रेस और कुछ समाचार पत्रों ने बीड़ा उठा लिया है कि लीग के नेताओं के दृष्टि कोण, और आदर्शों का जनता में ऐसा प्रचार हो जिससे भ्रम उत्पन्न होकर फूट फैले। इसलिये लीग के लिये यह आवश्यक होगया कि वह मुसलमानों का पृथक सांस्कृतिक, धार्मिक और आर्थिक संगठन करे। मुसलमानों के स्वाभाविक संगठन को भंग करने के विचार से काँग्रेस ने लीग और लीग नेताओं वदनाम करना आरम्भ किया। उनको इस काम में सहायक कुछ मुसलमान भी मिल गये जिन्होंने काँग्रेस प्रतिज्ञा पत्र पर हस्ताक्षर कर दिया। कुछ उलेमा और मुल्लाओं के स्वार्थमय संयोग से कुछ किरायेदार मुसलिम दलों का संगठन हुआ जो लीग के विरुद्ध प्रचार करें। लीग ने कभी "मजहब के खतरे" की आवाज नहीं उठाई। यह तो उसे विरोधियों की देन है। प्रत्येक मुसलिम यह विश्वास करता है कि इसलाम कभी खतरे में नहीं पड़ सकता। कांग्रेस मञ्च पर बड़े से बड़े नेता भी धर्म की ओट लेते हुए प्रकट हुए हैं। (पृष्ठ ९) और कांग्रेस ने स्वराज्य का आदर्श सदैव रामराज्य के आधार पर रखा है। अन्त में काँग्रेस जिसमें बहुसंख्यक हिन्दू हैं केवल इस आधार पर की स्वराज्य माँग की है कि वे सदियों के मुसलिम और ब्रिटिश पराधीनता से मुक्त हो सकें (पृष्ठ १०) काँग्रेस द्वारा समय पर ऐसा उद्योग होता है जिससे मुसलमानों में पारस्परिक फूट फैले और मुसलमानों से असली मसलों पर किसी प्रकार का समझौता न हो सके। (पृष्ठ ११)

दंगों का कारण बताते हुये रिपोर्ट ने भूतपूर्व मन्त्री श्री सम्पूर्णानन्द, काटजू और पन्त प्रभृति नेताओं पर सारा दोष लाद दिया है और कहती है कि इनकी नीति का ही यह दुष्परिणाम है कि मुसलमानों को अपने धार्मिक और सामाजिक स्वत्वों के रक्षार्थ विद्रोह करना पड़ा। "बिना किसी विचार के मुसलमानों पर टैक्स लगाया गया।" कहने की खूबी तो यह है कि गत चुनाव में विहार, मध्यप्रान्त, उड़ीसा, सीमा प्रान्त में जहाँ काँग्रेस का मन्त्रिमण्डल था एक सदस्य भी लीग टिकट पर न चुना जा सका जैसा कि ऊपर दी गई तालिका से स्पष्ट

है फिर भी लीग नेताओं की काँग्रेस पर गोलाबारी का अन्त नहीं। दंगों का मुख्य कारण जो गलत नहीं, उसकी जिम्मेदारी किस पर है? काँग्रेस अहिंसा व्रत लेकर किस प्रकार दंगे करा सकती है? यह हलाहल तो लीगी नेताओं के श्रीमुख से ही निकल सकता जिनका काम ही साम्प्रदायिक विष वमन करना है। दंगों की जिम्मेदार तो विदेशी सरकार है जो अपने विभाजन नीति को हरा भरा रखने के लिये साम्प्रदायिकता की ज्वाला को प्रज्वलित करती रहती है। वर्तमान काल में होनेवाले चुनाव में ही जैसी गुण्डाशाही लीगी कर रहे हैं और सरकारी अधिकारी उसे आँख बन्द कर देखते रहते हैं क्या सरकारी प्रोत्साहन का प्रमाण नहीं? क्या समय समय पर सरकार इनके उपद्रवों को प्रोत्साहित नहीं करती? गत सन् ४२ के आन्दोलन में क्या सरकार ने हिन्दुओं को लूटने और बलात्कार करने के लिये मुसलमानों को प्रोत्साहित नहीं किया। इस सम्बन्ध में हम बं० प्रा० कां० कमेटी की रिपोर्ट की ओर हम पाठकों का ध्यान आकर्षित करते हैं। मिदनापूर और कन्टाई, तामलुक आदिस्थानों में पुलिस और मुसलमानों ने मिलाकर कौन ऐसा क्रूरकृत्य हो गया जिसे न किया हो। रिपोर्ट का कहना है" "यह कहा जाता है मुसलमानों को सहायता के लिये रिश्वतें दी गई। उन्हें आश्वासन दिया गया कि सरकार उनकी सहायक होगी और उनकी प्रत्येक प्रकार के दमन से मुक्ति होगी। उनसे यह भी कहा गया कि वे चाँद का झंडा अपने मकानों पर लगादें" इतना ही नहीं "खेजूरा और पतासपुर थानों के हल्कों में मुकामी अफसरों के प्रोत्साहन से मुसलमान अपने पड़ोसी हिन्दुओं का घर लूटते रहे" (Amrit Bazar Patrika २२-१२-४५) मैं यह पूछना चाहता हूँ कि सरकार के इन अत्याचारों के प्रति लीग की जबान क्यों नहीं खुलती? यद्यपि मुसलमानों से हिन्दुओं का मतभेद परम्परा गत है फिर भी क्या यही न्यायोचित है कि हिन्दुओं की संकट के घड़ी में मुसलमान उनपर अत्याचार करें? पर लीग के कर्णधार भी तो सरकार की कृपा से हैदराबाद रियासत की मारफत ६ लाख सालाना की खिराज पारहे हैं। अस्तु वे अपने प्रभु के विरुद्ध किस प्रकार जबान हुला सकते

हैं। मास्टर तारासिंह ने जिन्ना की यह पोल खोल दी कि किस प्रकार मियाँ को सरकारी सहायता मिलती है। (Modern Review Dec. 1945) इतने पर भी मुसलमान लीग के नाम से पागल हो उठते हैं; यह लीग के जादू का चमत्कार है।

इस मिथ्या प्रचार में क्या काँग्रेस बदनाम हो सकी? काँग्रेस को बदनाम करने में बृटिश सरकार भी नहीं सफल हो सकी। जो इमानदारी से कुर्बानी करता है वह आगसे तपकर निकले खरे सोने के समान उज्वल हैं। काँग्रेसजन के लिये यह कहना आवश्यक नहीं कि वे देश के लिये किस प्रकार का त्याग कर रहे हैं। बिना संघर्ष के सूचिकाग्र मिलना भी सम्भव नहीं। लीग का बल और प्रचार तो सरकार की स्वेच्छा से बढ़ रहा है। मुसलमान अशिक्षित हैं अस्तु धर्म्मोन्माद का तूफान उनमें जल्दी आता है। वह गरीब हैं अस्तु उन्हें सरकार का विशेष भय है। अन्त में सरकार उनकी पीठ स्वयम् ठोंकती रहती है। पढ़े लिखे अपने स्वार्थ में इस प्रकार तल्लीन हैं कि उनका सारा ध्येय एक सरकारी नौकरी पा जाने से ही हल हो जाता है। उन प्रान्तों में जहाँ वे अल्पमत हैं उनकी आबादी से उन्हें अधिक प्रतिनिधित्व मिला हुआ है फिर भी मियाँ जिन्ना को समानता (Parity) चाहिये। न्यायतः तो उन्हें १० करोड़ के अनुपात पर ही प्रतिनिधित्व मिलाना चाहिये, किन्तु यू० पी० के १५% मुसलमान आबादी पर उन्हें प्रान्तीय धारा सभा में ३२% प्रतिनिधित्व मिला है; पुलीस में ७३.% मेडिकल— लोकलसेल्फ में ६०% रजिस्ट्रेशन ६० % इत्यादि। यह सब काम नवाब यूसुफ और छतारी की छत्रछाया में हुआ फिर भी मुसलमानों को सन्तोष नहीं होता।

इस सम्बन्ध में पाकिस्तान के जन्मदाता सी० रहमत अली का वक्तव्य विचारणीय है जो उन्होंने हाल में केमब्रिज में दिया है। उन्होंने एक पुस्तिका भी प्रकाशित की है जिसमें लिखा है कि पाकिस्तान की सीमा निर्धारित करना मुनासिब नहीं। निश्चित-सी सीमा न होने पर पहले हिन्दू अल्पमत को और धीरे-धीरे बहुमत प्रान्तों को धर्म परिवर्तन द्वारा मुसलमान बना लिया जायगा और

हिन्दुस्तान का नाम बदलकर 'दीनीया' रख दिया जायगा। यही कारण है कि पाकिस्तान में आसाम भी शामिल किया जा रहा है जहाँ मुसलिम आबादी केवल ३३% है। पहले ६७% हिन्दुओं को सत्वहीन बनाकर लीग उनका अधिकार निगल जायगी फिर समस्त देश को जिसमें २५% से कम मुसलमान हैं; ७५% हिन्दुओं को हड़प जाने का अच्छा अवसर मिल जायगा। लीग के समस्त आन्दोलन की ओट में यही तथ्य निहित है। किन्तु लीग को अपने ध्येय में सफलता मिलना असम्भव है। सरकार एक बार हिन्दुओं को कुचल कर फिर मुसलमानों को कुचलेगी क्योंकि उसे मुसलमानों से विशेष सहानुभूति का कोई कारण नहीं प्रकट होता। इतने पर भी यदि काँग्रेस की शक्ति अभेद्य रही और सरकार को लीग की वजह से शोषण और दमन में अड़चन हुई तो दमन के शिकार या तो मुसलमान होंगे या देशव्यापी गृह युद्ध अथवा विप्लव होगा। इस सम्बन्ध में हम अक्षर गणित का एक साधारण नियम नहीं भूल सकते हैं वह है 'ज' का पतन और संहार। ज से आरम्भ होनेवाले जर्मनी, ज से आरंभ होने वाले जापान का सर्वनाश हो चुका, अब ज से आरम्भ होने वाले (ज, जा जि) जिन्ना का क्रम है। यदि इस विज्ञान में तथ्य है तो जिन्ना शाही का पतन और अन्त निश्चित है।

इतना मिथ्यारोप कर भी लीग काँग्रेस को कहाँ तक बदनाम कर सकी इसका निर्णय पाठक स्वयम् करलें।

अध्याय १०

पाकिस्तान का तत्कालिक ध्येय

मिस्टर जिन्ना के विभाजन की ज्वाला देश भर में फैल गई है। जो लोग लीग से किसी प्रकार का समझौता करना चाहते थे उनकी आशाओं पर पानी फिर गया। यह योजना केवल राष्ट्रीयता और जातीयता तथा लोकतन्त्र का विरोध ही नहीं करती वरन भारत को साम्राज्यवादी रथ के पहिये में बांध कर घसीटना चाहती है और साम्प्रदायिक नेताओं को अपने वास्तविक रूप में प्रकट होने का उपयुक्त अवसर प्रदान कर रही है। साथ ही साथ यह भी प्रकट हो गया कि मुसलिम स्वार्थ, और हित तथा अल्प मत की बातें केवल शब्दाडम्बर मात्र है। लीग के प्रचण्ड गर्जन के गर्भ में भारत पर विदेशी शासन की शृखला मजबूत करना है। यदि मुसलिम जनता इसी प्रकार लीग के नारे पर आकर्षित होती है तो उसका एक मात्र कारण यह है कि उसके सामने मुसलिम साम्राज्य का एक ऐसा स्वप्न चित्र खिंच जाता है जिससे वह वास्तविक स्थिति को भूलकर कल्पना जगत में विचरण करने लगती है। हम सर मुहम्मद इकबाल की बातचीत का उद्धरण दे चुके हैं जो उन्होंने एडवर्ड टामसन से की थी कि वह पाकिस्तान की योजना का क्यों समर्थन करते हैं।

एक मुसलिम मित्र ने कहा कि "वह जानते हैं कि पाकिस्तान की मांग का स्वीकृत हो जाने का अर्थ यह होगा कि मुसलमानों का कब्रिस्तान बन जायगा फिर भी लीग का नाम उनको कर्ण प्रिय है। वे पाकिस्तान पसन्द करते हैं।"

इस आपत्तिकाल में जब संसार भर में लोकतन्त्र साम्राज्यवाद का मूलोच्छेदन करनेके लिये तत्पर है। भारत में अंग्रेजी राज हिल उठा है और देश के सभी वर्गों का अंग्रेजों की नेकनियती और ईमानदारी से विश्वास उठ गया है। प्रभुओं की ओर से इस मांग का स्वागत किया गया। यह सोचा गया कि इस आन्दोलन के छिड़ जाने से एक न एक वर्ग या दोनों वर्गों की सामूहिक शक्ति टूट जायगी और स्वतन्त्रता का आन्दोलन शिथिल हो जायगा। इसका प्रभाव बहुमुखी होगा जिनकी यहाँ पुनरावृत्ति अनावश्यक न होगी।

(१) इसका सबसे पहला आघात तो कांग्रेस की राष्ट्रीय पञ्चायत की मांग पर पड़ेगा है। कांग्रेस की राष्ट्रीय पञ्चायत की मांग का लीगने जोरदार विरोध किया। यह तो निश्चित है कि सरकार राष्ट्रीय पञ्चायत की मांग स्वीकार करने में अनेक प्रकार के बहाने करने का यत्न करेगी किन्तु यदि देश भर एक आवाज से राष्ट्रीय पञ्चायत की मांग करें तो सरकार की स्थिति अत्यन्त नाजुक हो जायगी। इसको रोकने के लिये पाकिस्तान की माँग पेश कर देने से यह बला स्वत: टल जाती है और मुसलिम लीग को इस बहाने सरकार की सेवा और राजभक्ति का अच्छा अवसर मिल जाता है। कांग्रेस की ओर से साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व की मांग स्वीकार हो जाने पर किसी भी निष्पक्ष और न्याय प्रिय मुसलिम को राष्ट्रीय पञ्चायत से विरोध नहीं हो सकता किन्तु लीग ने साम्राज्यबाद की रक्षा के हेतु देश के प्रति इतना बड़ा घातक कृत्य किया है। लीग ने राष्ट्रीय पञ्चायत का विरोध किया; भारत की अखण्डकता का विरोध किया इसीलिये कि मुसलिम राज्य का कल्पित चित्र देख मुसलमान राष्ट्रीय प्रगति में बाधक हों और देश की स्वाधीनता के मार्ग का खांई गहरी हो जाय।

(२) दूसरा ध्येय यह है कि सीमाप्रान्त में भी साम्प्रदायिकता फैलाई जे क्यों की लीग की दृष्टि में कांग्रेस का प्रभाव होने के कारण यह कुफ्रिस्तान

है। इसलिये इसे इस्लामिस्तान बनाना अत्यन्त आवश्यक है। लीग के नेताओं का साम्प्रदायिक जादू पठानों को अपने प्रभाव में नहीं ला सका है और वे अब्दुलगफ्फार खाँ के नेतृत्व में कांग्रेस के समर्थक और अनुयायी बने हुए है। लीग का देश भर के मुसलमानों के प्रतिनिधि के दावे में इस मांग के कारण बड़ा भारी धक्का लगता है। यदि इस प्रान्त के ९५% पठानों को लीग कांग्रेस से फोड़ सकी तो पाकिस्तान का मसला अत्यन्त सरल हो जायगा। मुसलमानों के मनमें यदि मजहबी तूफान आ गया तो लीग के लिये यह स्वर्ण अवसर होगा यह जिन्ना के नेतृत्व का बड़ा भारी साफल्य होता और साम्राज्यवाद का भी सहायक होता। किन्तु लीगको इस शुभ उद्योग में सफलता न मिल सकी।

(३) कांग्रेस के प्रत्येक आन्दोलन और उद्योग को विफल करना, कांग्रेस देश की स्वाधीनता के लिये जो कुछ भी सार्वजनिक यत्न करें उसमें रोड़ा अटकाना और मुसलमानों को उसमें सम्मिलित होने से रोकना, इसको सक्रिय रूप देकर हिन्दू मुसलिम दंगा कराना है। गान्धीजी ने हिन्द स्वराज्य नामक पुस्तिका में लिखा है कि हिन्दू मुसलिम एकता के बिना स्वराज्य मिलना सम्भव नहीं। लीगवालों को यह सूत्र मिल गया और वे दंगे कराने लगे, इसका लीग मण्डली में यह अर्थ लगाया गया कि जब दंगे आरम्भ होंगे और साम्प्रदायिक उपद्रव जोर पकड़ेगा गान्धीजी आन्दोलन को स्थगित कर देंगे।

(४) गैर मुसलिमों की भावनाओं पर कुठाराघात करना। कुछ दिनों से लीगी मुसलमानों की यह मनोवृत्ति हो गई है कि जिस चीज में भारतीय सभ्यता का कुछ भी चिन्ह हो उसका विरोध करना। कलकत्ता विश्वविद्यालय के चिन्ह के सम्बन्ध में लीग ने जो झगड़ा उठाया था वह भूलाया नहीं जा सकता। बन्देमातरम् और विद्या मन्दिर योजना का विरोध भी इसी का एक पहलू है। इसी प्रकार की अनेक चीजें हैं जिससे हिन्दुओं में क्षोभ उत्पन्न हो। कांग्रेस की दृढ़ता और हितैषिता के कारण हिन्दुओं का क्षोभ हानि कर नहीं हो सका और जब तक यह न हो कि हिन्दू कांग्रेस से विरुद्ध हो

जांय सरकार का प्रयोजन नहीं सध सकता इसके लिये हिन्दू भावना को भड़-काने और कांग्रेस की शक्ति तोड़ने के लिये पाकिस्तान से उत्तम कोई चीज नहीं हो सकती थी।

(५) अन्ततोगत्वा इसका अन्तिम ध्येय यह भी है कि भारत और ब्रिटेन के उच्चाधिकारी अंग्रेजों को यह बहाना मिल जाय की भारत की राज-नैतिक मांगों की टालमटोल कर सके। एमरी और बृटिश टोरीयों को बार बार भारत के साम्प्रदायिक मसले की चरचा करने का संकेत किस आधार पर मिला वे बार बार हिन्दू मुसलिम एकता की ओर क्यों संकेत करते हैं? यह केवल जिन्ना की चाल है। सच देखा जाय तो अपनी ऊटपटांग मांगों से कायदे आजम ने भारत को अपमानित किया और कराया है। इस प्रकार की मांगों की स्वीकृति और समर्थन असम्भव है। क्या यह सम्भव है कि मियां जिन्ना के अनुसार भारत विभाजन किया जाय? इस प्रकार की अव्यवहारिक कल्पना को कार्यान्वित करने का साहस क्या मियाँ जिन्ना स्वयम कर सकते हैं? यह सम्भव नहीं प्रतीत होता। क्या कुछ आरामतलब राजनीतिज्ञों के इशारे पर देशका विभाजन करना इतने बड़े देश के लिए लाभप्रद होगा? यह ऐसा प्रश्न हैं जिसका उत्तर लीग का नेतावर्ग छोड़ कर सभी विचार शील व्यक्ति दे सकते हैं। देश के कोने कोने में पाकिस्तान मनाया जा सकता है। आखें मूंद-कर मुसलमान मियाँ जिन्ना के इशारे पर खाँई में कूद सकते हैं; किन्तु यह सब किसका सहायक होगा? यह तो स्पष्ट ही है। इस प्रकार की योजना और आन्दोलन से सिवा इसके कि अंग्रेजों की शक्ति बढ़े और नौकरशाही की जड़ मजबूत हो भारत का उपकार किसी प्रकार नहीं हो सकता। जो मुसलमान विभाजन में ही अपना कल्याण समझते है उन्हें वह न भूल जाना चाहिये की भारत के हितों और स्वार्थों से अलग उनका कोई अस्तित्व नहीं रह सकेगा।

अध्याय ११

यदि पाकिस्तान की माग स्वीकार कर ली जाय ?

पाकिस्तान की मांग को लीग और मियां जिन्ना अपने उद्धार का सबसे बड़ा उपाय समझते हैं। कदाचित मुसलिम जनता अब इसके बिना जीवित नहीं रह सकती। उन मुसलमानों में भी पाकिस्तान के नाम पर जोश पैदा हो रहा है जो नाम के सिवा किसी प्रकार मुसलमान नहीं कहे जा सकते। हिन्दू बहुमत प्रान्तों में मुसलमानों की क्या परिस्थिति होगी पहले हमें उस पर ही विचार कर लेना चाहिये। हिन्दू प्रान्तों में जो मुसलमान बसते हैं सिवा धार्मिक भेद के उनकी सब समस्यायें समान हैं, एक प्रकार की धरती, जलवायु, उपज और अन्न, एक ही कानून, एक ही आर्थिक समस्या और रोटी का सवाल सभी एक पहलू से सोचते हैं, चाहे वे हिन्दू हों अथवा मुसलमान। कमसे कम गांवों की तो यही दशा है, शहरों की आबादी के मुसलिम भले ही आज लीग के प्रभाव में आकर पाकिस्तान का स्वप्न देखें, दंगे करें और हर प्रकार के उपद्रव में अगुआ हों, दाढ़ी चोटी का सवाल उठाये, मन्दिर मसजिद और बाजे पर छूरेबाजी करें इत्यादि। लीग को छोड़कर अगर कोई दूसरी मुसलिम जमात भी उन्हें ठीक रास्ते पर लाने की कोशिश करें तो उससे बगावत करें।

पाकिस्तान प्राप्त होजाने पर क्या यह समस्या हल हो जायगी? प्रश्न विचारणीय है।

लीग किस प्रकार का पाकिस्तान चाहती है और उसकी कौन सीमा होगी? जब तक यह प्रश्न हल न हो जाय इस पर स्पष्टरूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। जहाँ तक मालूम होता है, अब तक इस सम्बन्ध में जितनी योजनायें पेशकी जा चुकी हैं या तो वे अव्यवहार्य्य हैं अथवा मियाँ जिन्नाको पसन्द नहीं। कम से कम डाक्टर लतीफ, पञ्जाबी और सिकन्दर हयात योजना के सम्बन्ध में तो ऐसी ही धारणा है। अलीगढ़ योजना इतनी अस्पष्ट है कि उसके सम्बन्ध में कुछ कहना व्यर्थ है पर डाक्टर लतीफ की योजना को छोड़कर किसी योजना में भी आबादी की अदला-बदली पर जोर नहीं दिया गया है। अस्तु यह तय है कि अदला बदली होती नहीं फिर यह समस्यायें किस प्रकार हल होंगी? इस सम्बन्ध में यह कहा जाता है कि मुसलिम बहुमत प्रान्त के हिन्दू हिन्दू-स्तान के मुसलमानों की हिफाजत के लिये बतौर जमानत के रखे जांयगे और हिन्दुओं की जमानत के लिये हिन्दुस्तान के मुसलमान।

प्रथम यूरोपीय महायुद्ध से द्वितीय महायुद्ध का इतिहास पढ़ने पर स्पष्ट हो जाता है कि यह धारणा कितनी भयावह है, कहने की आवश्यकता नहीं। यूरोपमें बार बार युद्ध होने के कारणों में अल्प संख्यकों की समस्या ही मुख्य है। इसकी हम पूर्व पृष्ठों में चरचा कर चुके हैं पर इससे मुसलमानों की आखें नहीं खुलती क्योंकि पराधीनता से परम्परा और आदर्श का ह्रास होता है और चरित्र का इतना पतन होता है कि गुलाम जाति मेरुदण्ड हीन हो जाती है। हम यह न कहकर मान लेते हैं कि पाकिस्तान मिल गया और मियाँ जिन्ना के फतवे निकलने लगे और काफिरों पर जिहाद शुरु हो गया। इससे मुसलमानों की दशा में क्या सुधार होगा?

विभाजन की इस प्रकार भावना यदि कार्य्यरूप में परिणत हुई तो हिन्दु-स्तान एक अत्यन्त शक्तिशाली राष्ट्र हो जायगा और उसकी वह शक्तियाँ जो सदियों से नष्ट हो गई हैं पुर्नजीवित हो जायगी। उस समय दो बातें विचार

करने की होंगी। पहली तो यह होगी कि पाकिस्तान अपनी रक्षा के लिये अपने पड़ोसी मुसलिम रियासतों से सहायता की भिक्षा मांगेगा, जिनकी सहायता प्राप्त करना सहज नहीं। इसका कारण यह है कि इन स्वतन्त्र राष्ट्रों को हिन्दुस्तानी मुसलमानों से कोई हमदर्दी इसलिये न होगा कि वे राष्ट्र-धर्म को इतना महत्व नहीं देते जितना राष्ट्रीय एकता को, अस्तु जो कौम भारत ऐसे देश का मजहबी बिना पर बटवारा करायेगी वह उनकी अधिक घृणा पायेगी न की श्रद्धा और सहानुभूति। तुर्की और ईराक का उदाहरण हम अभी दे चुके हैं, इनके पास इतना साधन नहीं कि भारत ऐसे देश पर आक्रमण करने के लिए इतनी बड़ी सैनिक शक्ति संग्रह कर संचालन कर सके ? फिर क्या वे रूस और ब्रिटेन से अपनी सहायता की भिक्षा मागेंगे। रूस को यदि साम्राज्यवादरूपी रोग ने ग्रस लिया तो वह भारत की अखण्डता नष्ट करके पाकिस्तान बनाने में सहायक कभी न होगा। ऐसा करने में उसे स्वयम् भी वह खतरा मोल लेना होगा। उसके अल्प संख्यक स्वयम् अपनी अलहदगी की मांग कर बैठेंगे जिससे सोवियत भूमि का अहित होगा। अस्तु रूस से भी हमें सहायता की आशा नहीं। रही अंग्रेजों की बात यदि उन्हें भारत छोड़ कर अपने छोटे से बृटिश द्वीप में ही जाकर हत वैभव और पतित गौरव में दिन काटना है तो उन्हें भारत के मुसलमानों से कौन हमदर्दी होगी और सम्बन्ध होगा जिसके लिये ७००० मील की समुद्र यात्रा कर वे पाकिस्तान की सुरक्षा के लिये आवें। हाँ उनका हित इसी में है कि भारत में पाकिस्तान बने फिर और कितने स्तान (जैसे खालिस्तान, द्रविड़स्तान, सिखिस्तान) और अन्ततोगत्वा भारत का ही कब्रिस्तान बन जाय। इसी प्रकार भारत का बाल्कनाइजेशन (Balkanization) कर बृटिश साम्राज्य जीवित रह सकता है क्योंकि वेस्टमिनिस्टर के स्टेट्यूट (१९३१) के अनुसार अब बृटिश उपनिवेशों पर उसका नाम मात्र का अधिकार रह गया है और अगले वर्षों में सम्भवतः वे बृटिशसाम्राज्य की विरुदावली से स्वतन्त्र राष्ट्र हो जांयगे ; अस्तु बृटिश साम्राज्य के जीवन की आंशिक आशा भारत,

वर्मा और मलाया पर ही निर्भर है। लीग का ऐसी दशा में यह सोचना कि पाकिस्तान प्राप्त कर लेने पर यह अंग्रेजों की नौकरशाही से मुक्त हो जायगा असम्भव है। पाकिस्तान से अस्तु भारत की स्वतन्त्रता भी असम्भव है।

दूसरा पहलू यह है कि हिन्दुस्तान के हिन्दू रियासतों के पास इतना वैभव और सैन्य-शक्ति होगी कि वह पाकिस्तान में बसनेवाले हिन्दुओं को आर्थिक, तथा अस्त्र-शस्त्र की सहायता देगी जिससे क्रान्ति होगी और हिन्दुस्तान की सेना जाकर पाकिस्तान को उदरस्थ कर लेगी। हिटलर ने मध्य और पूर्वीय यूरोप को हड़पने के लिये क्या यही चाल नहीं चली? सूडेटनलैण्ड और चेकोस्लोवाकिया, आस्ट्रिया आदि के अल्प संख्यक जर्मन ही हिटलर की तलवार बन गये और बहु संख्यकों का रक्तपात कर बृहत्तर जर्मन साम्राज्यकी सृष्टि की, यद्यपि वह अल्पजीवी ही रहा। इतिहास के इस सत्य की क्या भारत में पुनरावृत्ति नहीं हो सकती? पाकिस्तान के विधाता यह सोचना क्यों भूल जाते हैं कि अल्पसंख्यक हिन्दू पाकिस्तान की शान्ति के लिये सदा घातक होंगे और वहाँ सदैव अराजकता फैली रहेगी। आज भी पूर्वी बंगाल और ढाका आदि के मुसलमान यद्यपि आँकड़े के अनुसार बहुमत में हैं, कितना अत्याचार और उपद्रव किया करते हैं। इसकी अधिकता बढ़ जायगी और इससे यद्यपि पाकिस्तान के हिन्दुओं को कुछ समय के लिये अपरिमित यातनाये अवश्य भुगतनी होगी परन्तु इससे उनमें एक ऐसी शक्ति का संगठन और उदय होगा कि सरकार को उनके शक्ति का सामना करना असम्भव हो जायगा। अस्तु पाकिस्तान सदैव षडयन्त्र उपद्रव और दंगों का केन्द्र बना रहेगा। यही बात पाकिस्तानी हिन्दुस्तान के लिये भी कह सकते हैं कि मुसलमान हिन्दुस्तान को चैन से न बैठने देंगे यह सही है किन्तु हिन्दुस्तान के मुसलमानों की शक्ति का ह्रास होता जायगा। कारण यह है कि आर्थिक दृष्टि से पाकिस्तान की माली हालत इतनी नाजुक होगी कि उसे अपने ऊपर शासन का भार उठाना कठिन होगा फिर वह हिन्दुस्तान के मुसलमानों को किस प्रकार सहायता दे सकेगा? यह सब अनुमान नहीं ऐतिहासिक तथ्य है और योरप को

युद्धभूमि बनाने का कारण। लीग इसे भले ही न महसूस करे पर यह सत्य है, सूर्य के समान चमकदार और प्रज्वलित।

हम ऐतिहासिक तथ्य की भी उपेक्षा नहीं कर सकते। वह यह है कि जहाँ कहीं भी लोकतन्त्रात्मक शासन प्रणाली का प्रचलन है वहाँ बहुसंख्यकों पर अल्पसंख्यकों की ही हुकूमत होती है। अस्तु पाकिस्तान में भी हुकूमत की बागडोर हिन्दुओं के ही हाथ होगी। इसी सिद्धान्त के आधार पर हिन्दू प्रधान प्रान्तों में विशेष नौकरियाँ और प्रतिनिधित्व मुसलमानों को मिले हैं और जिसके लिये हिन्दू-सभा इतनी हाय मचाया करती है। स्थिति मुसलमानों के लिये असह्य नहीं। अतः इनसे हमारा अनुरोध है कि पहले मिल जुलकर अंग्रेजों को भारत छोड़ने पर विवश करें फिर हम मुसलमानों को पाकिस्तान और हिन्दू महासभा को डा० मुन्जे और डाक्टर सावरकर चाहें हिन्दू राज्य की जो भी परिभाषा करें स्वीकार कर लेने में किसी प्रकार की आपत्ति न करेंगे। वीरवर सावरकर को "आसिंधु सिन्धु पर्यन्ता यस्य भारत भूमिका। पितृभूपुण्यभूश्चैव सवै हिन्दुरिति: स्मृताः" मान लेंगे पर हमें यह न भूलना चाहिये कि पूज्यपाद मालवीय जी महाराज ने हिन्दू महासभा के सम्बन्ध में कहा था कि राजनैतिक मामलों में यह अपना आदेश कांग्रेस से ही लेगी क्योंकि उन्होंने यह स्पष्ट प्रकट कर दिया था कि वह एक सांस्कृतिक संस्था है न की राजनैतिक (बेलगाम अधिवेशन १९२४) डाक्टर अम्बेडकर को भी हताश होने की आवश्यकता नहीं राष्ट्रीय पञ्चायत में उनके (Thoughts of Pakistan) की वकालती बहस सुनी जायगी और गान्धीजी के आछूतों पर विचार का भी फैसला किया जायगा।*

अगर सिख अपने लिये सिखिस्तान की माँग पेश करेंगे तो उस पर भी विचार किया जायगा और साम्प्रदायिक फेडरेशन बना दिया जायगा पर यह सब तो तभी हो सकता है जब भारत को अंग्रेजों के पन्जे से मुक्ति हो

---

* Gandhi and Untouchability Sept. 1945—Thacker & coy, Bombay 15/12.

जाय। इसके पूर्व यह होने का अर्थ यह होगा कि ऐसे टुकड़े हो जाने से भारतीय, संस्कृति, सभ्यता और परम्परा का सदैव के लिये लोप हो जायगा। भारतीय राष्ट्र का गौरवमय अतीत भविष्य के रूप निर्माण में नष्ट हो जायगा और भारत सदैव पराधीनता की बेड़ियों में जकड़ा हुआ एक विराट कारागार होगा। लीग या पाकिस्तान चाहें मुसलमानों को हदीस और शेरियत का युग न दिखा सके पर भारत को सम्भवत: पराधीनता में जकड़ ही रखेगा। क्या मुसलमानों के लिये यही गौरव की बात है कि इतने बड़े देश को जो विश्व का आभूषण समझा जाता है अपनी ना समझी और ज़िद्द से इस प्रकार सदैव के लिये गारद कर दें?

यदि वे इतने पर भी नहीं चेतते तो उन्हें वह दिन भी देखने के लिये तत्पर हो जाना चाहिये जब उनकी संस्कृति का नामों निशान मिट जायगा। यदि भारतीय सभ्यता की वह शक्ति मिट गई है जो दूसरों को अपना बनाकर पचा सके तो मुसलिम संस्कृति के क्षय युग का भी सूत्रपात चीन रूस और अन्य मुसलिम रियासतों द्वारा आरम्भ हो चुका है। किसी सभ्यता और संस्कृति के क्षय का जब समय आता है तो उसमें हठधर्मी और कट्टरता बढ़ जाती है और वही उसे ले डूबती है। औरङ्गजेब और सिकन्दर जैसे सम्राटों के क्षय का कारण भी वही हुआ है। हठधर्मी और कट्टरता संस्कृति और सभ्यता की घातक शक्तियाँ (disintegrating forces) हैं। उदारता, सहिष्णुता, और सामञ्जस्य ऐसी शक्तियां है जो उसकी उन्नति में सहायक हुआ करती हैं। आज नादिरशाह, अब्दालीशाह या तैमूर को दुनिया भूल चुकी है। आज बापू के युग का उदय हुआ है और यही युग हमारी आगामी परम्परा बनायेगा। किसी समय भारत की अहिंसा और शान्ति की दीप शिखा विश्व को देदीप्यमान कर रही थी, आज उसी सत्य और अहिंसा की दीप शिखा पुनः विश्व को देदीप्यमान करने जा रही है। अहिंसा पर ही विश्व का नवनिर्माण होगा और पश्चिम की वे शक्तियां जो भौतिकता के वैभव में डूबकर नरसंहार और रक्तपात द्वारा विज्ञान के उद्गार क्षेत्र को कलुषित कर रही है लज्जा से नत

होकर अहिंसा द्वारा अपना प्रायश्चित्त करेंगी—उस युग और धर्म के आगे सभी हठवादिता असहिष्णुता, और दृष्टि संकीर्णताका लोप हो जायगा। हम ऐसे युग की कल्पना क्यों न करें ? पाकिस्तान ऐसी दूषित विनाशकारी और अव्यवहारिक योजनावों पर वाक् शब्द युद्धकर अपनी शक्ति नाश कराना क्या हमारे अथवा मुसलमानों के लिये शोभनीय है ? अस्तु मुसलमानों और भारत तथा हिन्दुओं के हित के लिये यही आवश्यक है कि पाकिस्तान अथवा उस जैसी ही भारत विभाजन योजनायें जितनी ही जल्दी समाधिस्थ कर दी जाँय हमारी समस्याओं का हल उतना ही शीघ्र और सरल हो जायगा। देश की स्वाधीनता ही हमारी पहली समस्या है न की विभाजन। कभी यह भुलाया न जा सकेगा कि लीग ने भारतीय स्वाधीनता के युग में अंग्रेजों के इशारे पर चलाकर स्वतन्त्रता को संकटापन्न किया है। मियाँ फजलुल हक ने भी पाकिस्तान का विरोध प्रकट करते हुये ११-९-४५ को (अमृतबाजार पत्रिका) कहा है कि *'उसका स्वागत कम से कम बंगाल में तब तक न हो सकेगा जब तक* बंगाली सम्प्रदायवादी मुसलमान अपने अन्य सहधर्मियों से समानता का बर्ताव न करने लगेंगे'।

यदि मुसलमान यह सोचें की प्रान्तों के हिन्दू मुसलमानों में अदलाबदली होगी तो कदाचित यह असम्भव सी बात होगी, किन्तु यदि हो सके तो डाक्टर लतीफ की योजना के अनुसार सभी संकट मिट सकते हैं। इस दृष्टिकोण के सम्बन्ध में पञ्जाबी ने (Confederacy of India) में कहा है इस योजना का अभिप्राय भारत की $\frac{1}{3}$ आबादी की अदलाबदली होगी अस्तु इस प्रकार की योजना का परिणाम मुहम्मद तुगलक की राजधानी परिवर्तन योजना के समान असफल और विनाशकारी होगा। इस प्रकार का प्रयोग इतिहास में एक विचित्र चीज होगी जिसका निष्कर्ष असफला और नैराश्य के सिवा और कुछ न होगा। जिसका घोर विरोध होगा और इस प्रकार की योजना को स्वीकृत देकर अराजकता और अशान्ति का आह्वान करना होगा। इसमें सब से कठिन समस्या तो अचल सम्पति की होगी। आखिर उसका

क्या होगा ? यदि वृहत रूपसे अदलाबदली नहीं हुई तो पाकिस्तान में बहुत बड़ी संख्या गैर मुसलिम निवासियों की होगी। यदि लीग आंख मूंदकर हिन्दू और सिख हितों की अवहेलना करेगी तभी मुसलिम सभ्यता और धर्म का विकास हो सकेगा जो पाकिस्तान की सभ्यता होगी। पाकिस्तान के हिन्दू और सिख अपने अधिकारों की कानूनी माँग करेंगे और संरक्षण के लिये भिड़न्त होगी। ऐसा होने के कारण मुसलिम शरियत और हदीस का स्वप्न जो पाकिस्तान का कानून होगा खटाई में पड़ जायगा। यदि पाकिस्तान में भी मुसलमानों को इसी कठिनाई का सामना करना पड़ा तो भारत विभाजन से क्या लाभ ? बँटवारा हो जाने पर भी सम्प्रदायिक मसले आज की भांति जटिल रहेंगे अस्तु उनका यदि कोई निष्कर्ष हो सकता है तो यही कि भारत की अखंडता भंग न हो।

पाकिस्तान के समर्थक जातीय, धार्मिक और सांस्कृतिक मसलों को पाकिस्तान में एक करेंगे। इस सम्बन्ध में राजेन्द्र बाबू का मत है कि :— "पश्चिमोत्तर खण्ड में भूभाग अत्यन्त विस्तृत और धार्मिक एकता के सिवा निवासियों में किसी प्रकार की समानता नहीं। इस क्षेत्र में कम से कम पांच भिन्न भिन्न भाषायें बोली जाती हैं। ऐतिहासिक दृष्टि से कदाचित ही उनमें कभी ऐक्य रहा हो। इस पाकिस्तान में पांच मुख्य जातियां होंगी—सिख, पन्जाबी, पठान, बिलोची और सिन्धी इसमें अंग्रेजी राज्य के पूर्व कभी राजकीय एकता नहीं थी और एक दूसरे में इतनी शत्रुता थी जितनी देश के किसी भाग में नहीं। यदि पश्चिमोत्तरी खण्ड को एकता इतनी कठिन है तो हिन्दू संघकी कल्पना तो मानो असम्भव-सी है !" (खण्डित भारत पृष्ठ ३१-३२)

भारत में एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश की रहन सहन में इतनी भिन्नता होते हुए भी सब मिल जुलकर एक राष्ट्र बना हुआ है। इनमें एक को निकालने के प्रयत्न में हमारा सारा ताना बाना नष्ट हो जाता है और भारतीय राष्ट्रत्व का अस्तित्व मिटकर बालकन प्रदेश की भाँति षड़यन्त्र, युद्ध हत्यायें, और संघर्ष यहाँ भी होता रहेगा। डाक्टर लतीफ की यह धारणा है कि भारत को ग्यारह

सांस्कृतिक खण्डों में बांट देने से हिन्दू और मुसलमानों का अविश्वास मिट जायगा, भ्रमात्मक है। यदि डाक्टर साहब की बात मान ली जाय तो यह कैसे सम्भव है कि पश्चिम में एक बड़ा मुसलिम राज्य स्थापित होने पर जो अपनी सहायता की भिक्षा ईरान, तुर्की, मिश्र, अरब से मांगे हिन्दू चुपचाप बैठे देखते रहें ? इससे हिन्दुस्तान में भी संगठन होगा और हिन्दुओं की शक्ति इतनी प्रबल हो उठेगी कि किसी भी मुसलिम शक्ति के लिये उनका मुकाबला करना असम्भव हो जायगा। जातीय समस्या, साम्प्रदायिक घृणा, द्वेष का रूप धारण करेगी और दोनों में ऐसी आग लग जायेगी कि उसका परिणाम अत्यन्त भयावह होगा।

आर्थिक दृष्टि से पाकिस्तान की क्या स्थिति होगी इसका वर्णन हम पूर्व पृष्ठों में कर चुके हैं। पर इतना एक बार पुनः कह देना चाहते हैं कि विभाजन का प्रभाव मुसलिम क्षेत्र में हिन्दुस्तान के मुकाबले अधिक होगा और उसका आर्थिक मेरूदण्ड टूटा होने के कारण वह कभी सीधा न हो सकेगा। उस समय ईरानी और अफगानी कितनी सहायता करेंगे ? एक मुसलिम पत्रकार का कहना है कि गेहूँ उपजानेवाले पाकिस्तान और चावल उपजाने वाले हिन्दुस्तान का क्या मुकाबला ? यदि महाशय, क्षण भर निष्पक्ष होकर सोचें तो उन्हें विदित होगा कि भिन्नता की एकता ही भारतीय संस्कृति की महत्ता और भारत की विशेषता है।

अध्याय १२

पाकिस्तान का परिणाम।

जब तक विभाजन की कोई निश्चित योजना नहीं बन जाती, यह कहना कठिन है कि उसका परिणाम क्या होगा? रूपरेखा के आधार पर हम केवल विवेचन मात्र कर सकते हैं। मुसलिम लीग ने अपनी योजना कभी स्पष्ट न की, सम्भवतः इसी विचार से कि माँग स्पष्ट कर देने से उसकी पोल खुल जायगी। परन्तु विशेषज्ञों और राजनीतिज्ञों को इस कल्पित योजना को स्वीकार करने के पूर्व भलीभाँति विचार करना होगा। हम पूर्व पृष्ठों में कह चुके हैं कि पाकिस्तान की माँग के गर्भ में क्या निहित है। इसके फल स्वरूप देश भर में द्वेष, कटुता और घृणा का बादल छा रहा है और विदेशी शासन का बन्धन हमें जकड़ रहा है। यदि हम उग्रवादी न होकर समान दृष्टि से ही पाकिस्तान की माँग पर विचार करें तो हमें इससे पृथक् दूसरा कुछ नहीं दीखता। विभाजन से हिन्दू मुसलिम समस्या हल न होकर और जटिल हो जायगी। भारत की राजनैतिक मुक्ति का शुभ दिन बहुत दूर चला जायगा।

भारत का तीन राज्यों में विभाजन हो जाने पर लीग का यह कहना है कि मुसलमानों की दशा में सुधार होगा, भ्रम का प्रचार करना है। विचार करने

पर यह निष्कर्ष निकलता है कि उनकी दशा आज से भी गिरी हो जायगी और विशेष कर उन प्रान्तों में जहाँ वे अल्प संख्यक हैं। पूर्व और सीमा प्रान्त में हिन्दू अल्प मत होने के कारण वहाँ की प्रगति सदा रुकी रहेगी यद्यपि वे स्वतन्त्र होकर पाकिस्तान में मिल जायँगे। सिन्ध के भूतपूर्व प्रधान मन्त्री अल्लाबक्स ने इस योजना का विरोध करते हुये १९४० में कहा :— "सीमाप्रान्त, बिलोचिस्तान, सिन्ध आज केन्द्रीय सरकार की आर्थिक सहायता के कारण स्वतन्त्र और सीमा की रक्षा से मुक्त है। ऐसी परिस्थिति में यह ना समझी होगी कि हम अपनी वर्तमान स्थिति को छोड़कर ऐसी रियासत में मिले जहाँ हमारी यह स्थिति नष्ट हो जाय यद्यपि उसमें मुसलिम बहुमत ही हो।" पूर्वी पाकिस्तान की आर्थिक स्थिति निम्न और आबादी घनी है। इनके विचार यह से एक छोटा सा द्वीप होगा जिसका सहायक कोई न होगा। इसकी यातना उन मुसलमानों को झेलनी होगी जहाँ वे अल्पसंख्यक है। विभाजन के कारण हिन्दू बहुमत प्रान्त का रोष शान्त करना कठिन होगा क्योंकि विभाजन और अल्पसंख्यकों के संरक्षण, इन दोनों के लिये कभी एक साथ राजी नहीं किया जा सकेगा। संरक्षण का प्रश्न एक राज्य और समान सामाजिक परिस्थिति में उत्पन्न होता है न कि भिन्न राज्य और परिस्थिति में। इसमें यह तर्क किया जा सकेगा कि यदि दो करोड़ मुसलमानों का हिन्दुस्तान में संरक्षण आश्वासित हो सकता है तो नौ करोड़ मुसलिमों का भी हो सकेगा। एकबार मुसलमान यदि हिन्दुस्तान से अलग हो गये तो वे हिन्दुस्तान को कभी अपने जाति वालों के संरक्षण के लिये जो हिन्दुस्तान में बसते हैं बाध्य नहीं कर सकते। यदि किसी प्रकार पाकिस्तान की मांग स्वीकार भी कर ली गई तो यह निश्चित है कि मुसलिम धर्म और संस्कृति का संरक्षण कदाचित ही स्वीकार किया जाय। हिन्दुओं का यह दृष्टिकोण लीग की दृष्टि में अन्याय पूर्ण भलेही हो किन्तु हम भारत के ३० करोड़ हिन्दुओं की संस्कृति और भावनाओं की अवहेलना नहीं की जा सकती और न पृथकत्व और संरक्षण दोनों एक साथ स्वीकार किया जा सकता है।

हिन्दुस्तान के विभाजन हो जाने पर हिन्दुस्तान के मुसलमानों की स्थिति आज से बुरी हो जायगी और 'खण्डित भारत' में उनकी सत्ता का लोप हो जायगा। राजेन्द्र बाबू ने इस पर 'खण्डित भारत' में विशेष रूप से प्रकाश डाला है।

"यू० पी० और बिहार के मुसलिम अल्प संख्यकों का समाज सांस्कृतिक रूप से अत्यन्त सभ्य शिक्षित और उदार है तथा अपने हिन्दू भाई से किसी प्रकार पिछड़ा नहीं है। वे केवल संख्या में कम हैं। क्या वे हिन्दुओं की दया पर छोड़े गये हैं? क्या यह सत्य नहीं है कि मुसलिम बुद्धिवादी अधिकतर इन्हीं प्रान्तों की देन है? उनका क्या होगा?" (पृष्ठ ३०)

इस प्रकार लीग के भाग्य विधायक जो हिन्दुस्तान में रह जायगे और जिन्हें इस प्रमाद का आदेश अलीगढ़ से मिला है, उनका और उनके अलीगढ़ का क्या होगा? क्या कोई हिन्दू अलीगढ़ की उद्दण्डता, विषवमन और कटुता को भूल सकता है? अस्तु जब तक पाकिस्तान की निश्चित परिभाषा नहीं बन जाती यह अनुमान करना कठिन होगा कि हिन्दुस्तान और पाकिस्तान की आर्थिक स्थिति कैसी होगी। अभी जो आँकड़े प्राप्त हैं वह प्रान्तीय आधार पर हैं। अतः बंगाल और पंजाब के कौन-कौन जिले हिन्दुस्तान में आयेंगे जब तक यह निश्चय न कर लिया जाय हिन्दुस्तान की आर्थिक स्थितिका अन्दाजा नहीं लगाया जा सकता। बंगाल की आर्थिक स्थिति कलकत्ता क्षेत्र को निकाल देने पर दयनीय हो जायगी। कोई भी निष्पक्ष व्यक्ति यह कहने से इनकार नहीं कर सकता चाहे आधार जो हो कि ७५% गैरमुसलिम अबादी के साथ कलकत्ता हिन्दुस्तान में शामिल किया जायगा। कलकत्ता बंगाल का मुख्य औद्योगिक केन्द्र और बन्दरगाह है। इसी प्रकार पंजाब का अम्बाला डिविजन निकाल देने पर कृषि सम्बन्धी उन्नति रुक जायगी। अस्तु यदि हिन्दुस्तान और पाकिस्तान की तुलना की जाय तो अन्तर विशेष रूपसे दृष्टिगोचर होगा। कृषि वाणिज्य व्यवसाय और उद्योगों का इतना अन्तर है कि मुसलमानों की स्थिति सदा कमजोर बनी रहेगी। इसके लिये परिशिष्ट भाग में दिये गये आकड़े १ से ७ देखें।

पश्चिमोत्तर प्रदेश में १५% मजदूर उद्योग और खेतीबारी में लगे है। ६.७% कलकारखानों में। इनमें १५% मौसिमी कारखानों में काम करते हैं और ४% बरहोमासी कलकारखानों में। पूर्वीय क्षेत्र से कलकत्ता निकाल देने पर उसकी स्थिति भी पश्चिमोत्तर प्रदेश से अच्छी नहीं होगी। कृषि के योग्य भूमि भी हिन्दुस्तान में प्रति मनुष्य एक एकड़ और पाकिस्तान में ३ एकड़ होगा। हिन्दुस्तान और पाकिस्तान की माली हालत नीचे दी हुई तालिका से स्पष्ट हो जायगी।

	हिन्दुस्तान	पाकिस्तान
१—अन्न और खाद्यपदार्थ	हिन्दुस्तान के अनुकूल और प्रचुर	साधारण : अपर्याप्त
२—तेलहन	,, ,, ,,	बहुत ही कम ; प्रतिकूल
३—शक्कर	अत्यन्त अनुकूल और सहायक	इसकी उपज इतनी कम होती है कि आवश्यकता न पूरी हो सके।
४—रूई (कपास)	,, ,, ,,	साधारण—अपर्याप्त
५—पाट	इसकी उपज हिन्दुस्तान में न होगी	बंगाली पाकिस्तान में ही होगा।
६—कोयला	यहीं होता है	अपर्याप्त
७—लोहा और मेगनीज	,, ,, ,,	होता ही नहीं

हिन्दुस्तान और पाकिस्तान की खनिज और आर्थिक स्थिति कैसी होगी। इसकी विस्तृत व्याख्या हम अन्यत्र कर रहें हैं इस प्रकार पाकिस्तान की कृषि और उद्योग धन्धे की दशा यह होगी कि वहाँ के निवासियों की आवश्यकताओं के लिये भी पर्य्याप्त न होगा। लोहा और कोयले का मसला किसी हदतक जलीय-विद्युत-योजना (Hydro electric projects) से हल हो सकता है किन्तु योजना बड़ी क़ीमती होगा। इसे छोड़कर पाकिस्तान में शक्कर लोहा और रसायानिक उद्योग (Chemical Industry) का पूर्णतया अभाव होगा। पाट के व्यवसाय के सम्बन्ध में अभी निश्चय नहीं किया जा सकता क्योंकि सम्भवत: उसका उत्पादन क्षेत्र आसाम में शामिल कर दिया जायगा।

आर्थिक पहलू पर विचार कर देखा जाय तो अभी सिन्ध और बंगाल सरकार की आय इतनी नहीं कि वह अपनी आमदनी से अपना खर्च चला सके। सिन्ध सीमाप्रान्त और बंगाल को केन्द्र से आर्थिक सहायता मिलती है। अलहदगी हो जाने पर यह भार पाकिस्तान की केन्द्रिय सरकार को वहन करना पड़ेगा। डाक्टर अम्बेडकर की गणना के अनुसार हिन्दुस्तान से पाकिस्तान की आमदनी आधी होगी। आंकड़ों के अध्ययन से पश्चिमी और पूर्वी पाकिस्तान की आय मिलाकर २६ करोड़ होगी। इस आकड़े में २४ करोड़ की वह रकम नहीं जोड़ी गई है जो इन दो खण्डों के हिन्दू प्रधान जिलों की है। हिन्दुस्तान की आय १२० करोड़ होगी। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि हिन्दुस्तान की स्थिति पाकिस्तान से कितनी दृढ़ और समृद्धिशाली होगी। क्या यह बात मियां जिन्ना और उनकी लीग को नहीं दीख पड़ती। पाकिस्तान में टैक्स भी प्रति मनुष्य हिन्दुस्तान से अधिक होगा। पाकिस्तान में प्रति मनुष्य कर ७·५% होगा और हिन्दुस्तान में केवल ५·३% इसलिये आमदनी बढ़ाने का कर वृद्धि छोड़ दूसरा कोई उपाय नहीं। इस मसले में एक पहलू और है वह यह कि पाकिस्तान क्षेत्र चाहे वह पूर्वी हो या पश्चिमी पूँजी और धन हिन्दुओं के हाथ रहेगा। सीमा प्रान्त में ८०% हिन्दू आय कर देते हैं।

इस प्रकार यह प्रकट होगा कि पाकिस्तान की आर्थिक कुञ्जी हिन्दुओं के हाथ रहेगी न कि मुसलमानों के। पंजाब के गावों में साहुकार और महाजन हिन्दू है और यही लेनदेन का रोजगार करते हैं। यदि जुल्म और जबरन पाकिस्तानी हिन्दू बनियों को न लूटें और उन्हें भी यहूदियों की भाँति देश से न निकाल दें तो पाकिस्तान की आर्थिक नीति का सञ्चालन हिन्दुओं द्वारा होगा। अगर पाकिस्तान की इस्लामी सरकार किसी प्रकार हिन्दुओं से बदला लेने अथवा अत्याचार करने का प्रयास करेगी तो हिन्दू भारत उसी समय हथियार उठा लेगा और पाकिस्तान की बुरी गत बना कर छोड़ेगा।

पाकिस्तान की नियंत्रित आमदनी और थोड़ी पूंजी, विभाजन हो जाने पर उसे ऐसी स्थिति में डाल देगा कि किसी प्रकार की औद्योगिक योजना कार्यान्वित न हो सकेगी। दूसरी ओर हिन्दुस्तान इन अड़चनों से मुक्त होगा और औद्योगिक उन्नति के लिये उसे बिना प्रयास पूँजी मिल जायगी किन्तु निष्पक्ष रूप से यह दोनों के लिये हानिकारक होगा क्योंकि एक दूसरे के कट्टर शत्रु होंगे तथा आपसी द्वेष और घृणा इतनी होगी कि उससे किसी प्रकार की उन्नति होना कठिन होगा।

क्या नई सीमा निर्धारित करने का काम इतना सरल है जितना इसे लोग समझते हैं? इसके निर्धारण में इतनी कठिनाइयाँ होंगी कि दोनों कौमों में संघर्ष होना स्वाभाविक है। इस प्रकार का पहला झगड़ा तो कलकत्ते को लेकर ही खड़ा होगा जो बृटिश सम्राज्य का सबसे बड़ा नगर है और वाणिज्य व्यवसाय में योरोप के किसी भी बड़े नगर से होड़ लगा सकता है। यह हिन्दू या मुसलिम रियासत में शामिल होगा? गत बंग भंग (१६०५) के समय यह हिन्दू क्षेत्र में था। क्या इसका नुकसान हिन्दू सहन कर सकेंगे? हैदराबाद का ही मसला ले लीजीये जहाँ ९५% हिन्दू हैं। क्या हिन्दू इस पर कभी स्वीकृति देंगे कि हैदराबाद पाकिस्तान में इसलिये शामिल कर लिया जाय कि निजाम एक मुसलमान हैं। इन प्रश्नों का पारस्परिक समझौता

आपका	पूर्वी पाकिस्तान	पश्चिमी पाकिस्तान
कचहरी स्टाम्प	७५ %	८० %
मालगुजारी	८० %	
बैंकिंग इन्स्योरेन्स	७५ %	
रसायन व्यवसाय	८७ %	
अन्य व्यवसाय	८३ %	

होना असम्भव है। दूसरा प्रश्न यह भी है कि दोनों रियासतों में हिन्दू और मुसलमान अल्पमत में होंगे और केन्द्रीय सरकारें उनकी सहायता करना चाहेंगी इस प्रकार हिन्दू मुसलिम संघर्ष चिरायु होगा। अगर पाकिस्तान के हिन्दुओं से मुसलमान बदला लेना चाहेंगे तो हिन्दुस्तान के हिन्दू भी मुसलमानों को चैन से न बैठने देंगें। इस प्रकार दोनों रियासतों में बहुत बड़ी संख्या अल्प समुदाय की होगी जिसकी वफादारी पर सरकारों को सदैव सन्देह होगा। इस गुत्थी को सुलझाना कदाचित बृहस्पति और शुक्राचार्य्य की बुद्धि से ही सम्भव हो सकेगा।

दोनों रियासतें अपनी असफलता का दोष अल्प संख्यकों पर ही मढ़ेंगी और गृह युद्ध का बादल सदैव मड़राता रहेगा। इसका प्रभाव दोनों रियासतों के पारस्परिक सम्बन्धों पर पड़ना अनिवार्य है। अविश्वास के कारण हमारी शान्ति और सुख संकट में पड़ जायँगे। दोनों रियासतों में संघर्ष के कारण पञ्चमार्गियों का सितारा चमकता रहेगा और राज्य की आय का बहुत बड़ा भाग सैनिकशक्ति संचय में व्यय होगा। इस प्रकार भारत की प्राकृतिक सीमा अरक्षित रहेगी और आक्रमणकारियों को आक्रमण करने का प्रलोभन मिलता रहेगा, और प्राकृतिक सीमा की उपेक्षा करने का परिणाम प्रजा को भोगना पड़ेगा। बिना संघर्ष के बँटवारा होना कठिन है, और एक बार संघर्ष आरम्भ हो जाने पर तनातनी बराबर बनी रहेगी। इसका निपटारा बिना गृह युद्ध के सम्भव नहीं। किन्तु यह सब विचार तो उसी हालत में किया जा सकेगा जब पाकिस्तान की माँग स्वीकार कर ली गई हो। इस की स्वीकृति के पूर्व हिन्दू मुसलमान नौकरशाही की गुलामी में समान रूप से जकड़े हुये हैं। यदि पाकिस्तान से भारतीय स्वतन्त्रता निकट आती तो इसका कुछ महत्व अवश्य होता किन्तु यह न होने पर भारत का बृटेन से संघर्ष निर्बल करने का यह एक प्रधान साधन है।
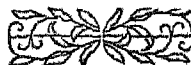
अध्याय १३

आर्थिक पहलू से पाकिस्तान

राजनीति में भावना को विशेष महत्त्व का स्थान नहीं दिया जा सकता। भावना हमें महत्वाकाक्षा और उच्च आदर्श की ओर ले जाती है। वह हमारे विचारों को दृढ़ और उच्च बना सकती है किन्तु प्रकृति के नियम नहीं बदल सकती। हमारे देश की जनता राष्ट्र, संस्कृति, भाषा-लिपी, आचार विचार के सम्बन्ध में भलेही वाक् युद्ध करले। लीग के अधिनायकगण पाकिस्तान का स्वप्न भले ही देखलें। मन माने ढंग से बंगाल, पञ्जाब सिन्ध, सीमा प्रान्त को अपना दुर्ग भलेही बनालें किन्तु उनके विरुद्ध प्रकृति की एक ऐसी शक्ति काम कर रही है जिसमें सिद्धान्तवाद का कोई चारा नहीं चल सकता। वह है देश की धरती, नदियाँ, पहाड़, जलवायु, और खनिज। पाकिस्तान के नारे लगाने वाले पाकिस्तानी मनमाना बंटवारा कर बंगाल की उर्वर–शस्य–श्यामल भूमि को सिन्ध या सीमाप्रान्त की ओर नही ले जा सकते और न पंजाब के गेहूँ की लहलहाती फसल बंगाल में पैदा की जा सकती है। अस्तु ऐसी स्थिति में भारत का विभाजन प्राकृतिक नियम के विरुद्ध होगा।

विभाजन की रट लगानेवाले पाकिस्तानी भले ही यह कहलें कि वे सब

इस्लाम धर्मानुयायी हैं किन्तु जो जिस प्रान्त का रहनेवाला है उसकी प्रकृति, उसके शरीर की बनावट, उसी देश अथवा प्रान्त के अनुरूप होती है। पंजाब और बंगाल के मुसलमान, इस्लाम धर्म के मानने के नाते एक कहे जायंगे, किन्तु उनके रहन सहन में भिन्नता रहेगी ही। इसका कारण उस प्रान्त की आर्थिक दशा पर निर्भर है। जहां की आर्थिक स्थिति दृढ़ होगी उस प्रान्त के जन समुदाय का स्वास्थ्य और रहन सहन भी वैसा ही होगा। उस प्रान्त की आर्थिक भित्ति उसकी दृढ़ता को स्थिर रखेगी। जिस प्रान्त की आर्थिक दशा ठीक नहीं वहां की जनता अपनी उन्नति कैसे कर सकेगी? यह विचारणीय है। पाकिस्तान के समर्थक लीगी भारत विभाजन की नीति का प्रतिपादन करने में प्रायः इस चीज को भूल ही जाते हैं। वे जहाँ मजहब के नाम पर मुसलिम जनता को अपनी ओर आकृष्ट करते हैं तथ्य की बातों को गुनाह की भांति जान समझ उस पर परदा डाल देते हैं। आम मुसलिम जनता अशिक्षा, दरिद्रता और अज्ञान से समाछन्न हैं। उसे भोजन वस्त्र और कुटुम्ब के पालन पोषण की आवश्यकता है। धर्म की ओर जनता का आकर्षण उस समय होता है जब उसकी साधारण आवश्यकतायें पूर्ण हों। भूख की ज्वाला से विकल व्यक्ति धर्म की बात नहीं सोचता वह सोचता है अपनी क्षुधा कैसे शान्त करें? भूख मिटाने के लिये भोजन, तन ढकने के लिये वस्त्र मिल जाने पर मनुष्य का ध्यान अन्य वस्तुओं की ओर जाता है। इन आवश्यकताओं के लिये प्राणीमात्र किसी धर्म विशेष का सहारा नहीं लेता, कोई भी धर्म, जाति, अथवा राष्ट्र हो यह मानव समाज की प्रथम आवश्यकता है। आज की स्थिति देखने से यह स्पष्ट हो जायगा की युद्ध के कारण अन्न वस्त्र नियन्त्रण हो जाने से जनता को कितना कष्ट उठाना पड़ रहा है। क्या यह कष्ट भी हिन्दू मुसलमान ढूढ़ ढूढ़ कर आया है। पर लीग के कार्यकर्त्ता इस चीज को भूल जाते हैं। वह इसलिये कि जैसा खाकसार नेता अल्लामा मशरकी कहते हैं, "लीगकी बागडोर, राजा, नवाब, खान बहादुरों के हाथ है इनके पास प्रचुरधन होने के कारण

इन्हें जनता कि वास्तविक स्थिति का सही अन्दाजा नहीं हो पाता।"

पाकिस्तान की आर्थिक भित्ति निराशात्मक है। जिन सीमाओं की चरचा लीगी नेता कर रहे हैं वे सीमायें कभी पाकिस्तान को अपने पैरों नहीं टिका सकेंगी। मियां जिना "दो राष्ट्र सिद्धान्त" को प्रमाणित करने में पूरी शक्ति लगा रहे हैं। वे जहाँ अनेक बातें कह मुसलिम जनता को पाकिस्तान का सब्ज बाग दिखाते हैं वहाँ वह उसके आर्थिक पहलू पर प्रकाश डालने की कृपा नही करते। मियां जिना के एक अनुगामी सर अली मुहम्मद खा देहलवी—के, टी, हैं। आप बम्बई में रहकर लाखों करोड़ों का व्यवसाय करते है। हाल ही में आपने डान पत्र में "दो राष्ट्र" पक्ष का समर्थन करते हुए पाकिस्तान के आर्थिक पहलू पर कुछ विचित्र बातें कहीं हैं। आपका कहना है कि "भारत की अखण्डता और अविभाजन के नारे लगाकर कांग्रेस और हिन्दू मुसलमानों का आर्थिक शोषण करना चाहते हैं और कर रहे हैं। क्या सभी राष्ट्र और देश सब पहलू से पूरे हैं? ऐसे भी तो देश हैं जहाँ सब चीजें नहीं होती तो क्या वे जीवित नहीं हैं? अथवा उनकी राष्ट्रीयता निर्बल है!" इतना ही नहीं आपका कहना है, "योरोप में तो ऐसे कितने ही राष्ट्र है जो आर्थिक दृष्टि से अपूर्ण हैं, कही खाने को हैं तो कहीं खेती करने की धरती नही। लक्समबर्ग, वेलजियम, हालैण्ड, स्वीजरलैण्ड, आदि देश क्या बहुत बड़े और खानिज दृष्टिसे परिपूर्ण हैं? यह तो हिन्दू प्रेस और कांग्रेसका प्रचारमात्र हैं।"

आगे आप कहते हैं "हिन्दू और मुसलमानों में धर्म और आचार विचार की भिन्नता है। हिन्दू सूद खोर हैं, मुसलमान के लिये सूद खाना हराम है। हिन्दुओं के लिये गो हत्या महापाप है, और मुसलमान गो वध करता है, गो मांस भक्षण करता हैं। हिन्दू कुर्बानी का विरोध करते हैं। अंग्रेजों के लिये हजारों गायें रोज कटती हैं किन्तु किसी हिन्दू की जबान भी नहीं खुलती"[1] और ऐसी ही कितनी उलूल जूलूल बातें कह डाली हैं जो आवेश पूर्ण हैं। विश्लेषण करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि देहलवी साहब के दलीलों में कितना गर्जन है। यह विचारणीय है कि देहलवी साहब करोड़ों का रोजगार

१, डान—१५ सितम्बर १९४५।

करते हैं। रोजगार के सिलसिले में उनकी हजारों लाखों की बैंकों द्वारा नित्य लेन देन होती होगी। उनकी दलीलों से प्रकट होता है कि बैंक के अमानत के रकम पर सूद में दी हुई रकम न लेते होंगे क्योंकि सूद खोरी हराम है। कृपा कर वे ही बतलायें कि इस प्रकार के कितने रोजगारी मुसलमान हैं जो सूद का फायदा नहीं उठाते ?

इन व्यक्तिगत आक्षेप की बातों में न जाकर हम लकसमवर्ग और हालैण्ड वेलजियम की स्थिति की ओर विचार करेंगे। द्वितीय विश्वमहायुद्ध का भीषण ताण्डव हो जाने पर भी लकसमवर्ग जैसे राष्ट्रों के स्वतन्त्रता और अस्तित्व की कल्पना करना हमें विडम्बना मालुम होती है। जो किसी शक्ति शाली राष्ट्र के भ्रूभंग होते ही क्षण भर में कुचल दिया जाय उसकी बात ही क्या करना। हालैण्ड वेलजियम जैसे छोटे राष्ट्र की आर्थिक और प्राकृतिक स्थिति अनुमानिक पाकिस्तान की सीमा से श्रेष्ठ है। उन देशों जैसे समुद्री बन्दरगाह, कल कारखाने और मजदूर भारत के किस प्रान्त में हैं? यद्यपि हालैण्ड वेलजियम छोटी रियासतें हैं किन्तु उनका उद्योगीकरण पूर्ण रूप से हो चुका है। आर्थिक दृष्टि से भी वे अत्यन्त दृढ़ हैं। ऐसी स्थिति में पाकिस्तान से तुलना करना अथवा उदाहरण देना अनुचित और अनुपयुक्त है। लीग के नेता इस पहलू को जितना महत्व देना चाहिये नहीं देते क्यों कि उनकी धारणा है कि पाकिस्तान की मांग स्वीकार हो जाने पर वे अपनी आर्थिक स्थिति सुधार लेंगे। यह सोचना किसी अंश तक ठीक हो सकता है किन्तु प्राकृतिक नियम को बदलने अथवा उस पर प्रभुत्व प्राप्त करने में वे पूर्णतया समर्थ नही हो सकते। अस्तु यह कल्पना अपेक्षित नही। इसके मूल में विभाजन और विभाजक हैं जिनका उद्देश्य देश पर इसी नीति के आधार पर स्थाई प्रभुत्व रखना है।

इस सम्बन्ध में हम सर अली मुहम्मद खां का एक उद्धरण पुनः देना आवश्यक समझते हैं। उनका कहना है कि "यदि आप हिन्दू और मुसलमानों को एक राष्ट्र बनाकर एक को दूसरे के साथ तलवार की नोक से मिलाकर रखना चाहते हैं तो आप तोता और कौवे को एक पिंजरे में बन्द कर रहे है

जिसका परिणाम यह होगा कि दोनों में से एक या दोनों का अन्त हं
इस उदाहरण के सूझ पर हमे हंसी आती है। एक जिम्मेदार आ
ऐसी बातें सोच सकता है यह लीग के समर्थकों की ही खूबी है।
कहते हैं कि "हिन्दू धन संग्रह करता है, मुसलमान इसकी चिन्ता न
यही कारण है कि मुसलिम जनता दरिद्र है और राजनैतिक क्षेत्र में उः
बाई नहीं।" धन संग्रह का सहारा लेकर मुसलमानों को यह कह
गरीब इसलिए हैं कि धनसंग्रह नही करते कितना विचित्र तर्क है।
बात सही हैं कि इसलाम धर्म में किसी प्रकार का भेद भाव नही तो
क्यों मानी जाय। सामाजिक संगठन में एकता होने पर भी :
रहताही है। साम्य-आर्थिक स्थिति होने से ही भेद भाव मिट सके
कठिन है यद्यपि इसकी जड़ में आर्थिक हलचल अवश्य है। हलचल
पाकिस्तान की आर्थिक समस्या कैसे सुलझेगी? उसका सुधार और उः
प्रकार होगी यह लीग के हिमायतियों के विचारने कि बात है।

ई० यच० सिद्दीकी भी बड़ी जोरदार भाषा में यही तर्क उपरि
हैं कि "इस जमाने में आर्थिक पूर्णता के नारे लगाना व्यर्थ है। ए
आर्थिक दृष्टि से दिवालिया होगा कहना किसी प्रकार उपयुक्त नहीं
यह कांग्रेसी नेताओं का तर्क है। दुनिया में कौन देश ऐसा है उ
न हो। प्रत्येक देश को अपनी आवश्यकताओं के लिये अन्य देशों प
होना ही पड़ेगा क्या पश्चिम के देश हर प्रकार निराश्रित हैं और एक
सहायता नही लेते? यह तर्क पूर्णतया मिथ्या तो नही किन्तु य
चाहिये कि इससे पाकिस्तान की समस्या कहां तक हल होती है? पि
की गान्धीवादी नीति में क्या पाकिस्तान निवासियों को चरखे और
बनाने के लिये औजार भी नहीं मिल सकेंगे?" यह कहना
[illegible]

पूर्वी और पश्चिमी पाकिस्तान का इतिहास

यह तो मानना ही होगा कि इतिहास प्रत्येक राष्ट्र की वृद्धि और समृद्धि का द्योतक है। इससे राष्ट्रीय एकत्व का बन्धन दृढ़ होता है। पूर्वी पाकिस्तान बंगाल में बनेगा। ऐतिहासिक दृष्टि से देखने पर यह स्पष्ट है कि यद्यपि बंगाल में हिन्दू और मुसलमान दोनों बसते और मुसलमान बहुसंख्यक भी हैं किन्तु उनकी रहन-सहन और खान-पान समान है। बंगाल के बहुसंख्यक मुसलमान किसी समय हिन्दू थे और मुसलिम विजेताओं के धर्मोन्माद के कारण परिवर्तित मुसलमान हो गये हैं अस्तु धर्म परिवर्तन के कारण उनका परम्परा गत संस्कार नहीं नष्ट हो सकता। धार्मिक भिन्नता होने पर भी उनके राजनैतिक और आर्थिक संगठन में किसी प्रकार की भिन्नता नहीं होगी। बंगाल के १९४३ जैसे भीषण दुर्भिक्ष हो जाने पर भी क्या यह प्रश्न पुनः उठाया जा सकता है? क्या अकाल ने हिन्दू और मुसलमानों में भेद भाव किया अथवा कांग्रेस और हिन्दुओं के इशारे पर केवल मुसलमानों को ही कालकवलित करता रहा और अकेले वे ही पीड़ित हुए? विचारणीय है। बंगाल में अकाल और दुर्भिक्ष शासकों के अनाचार के कारण हुआ किन्तु उसका दूसरा पहलू यह भी है कि बंगाल के मुसलिम शासक अपनी सफलता के लिये सदैव हिन्दुओं पर निर्भर रहे, और मुसलमानों पर हिन्दू शासक। यह तो निर्विवाद है कि बंगाल के यवन शासकों के प्रधान कार्य्यकर्त्ता सभी हिन्दू थे चाहे वे दीवान रहे हों अर्थ मन्त्री या सेनापति। दोनों सम्प्रदायों में किसी समय इतनी एकता थी कि पूजा और निमाज छोड़कर हिन्दू मुसलमान का भेद करना कठिन था। इसी एकता के बल पर अनेक बार आक्रमणकारी मुगल विजेता और अंग्रेजों को बंगाल में मुँह की खानी पड़ी। इतिहास साक्षी है कि जब मुगलों ने राजपूत राजाओं से एका किया उसी समय मुगल साम्राज्य उन्नति के शिखर पर पहुँचा। अकबर का दीने-इलाही चाहे कुछ भी रहा हो किन्तु साम्प्रदायिक कटुता मिटाने का शुभ प्रयत्न अवश्य था। जिस समय औरंगजेब ने धार्मिक कट्टरता का सहारा लिया उसी समय मुगल साम्राज्य का क्षय आरम्भ हो गया। पन्जाब

में सिख और दक्षिण में मराहठों ने साम्राज्य का अन्तकर डाला। पलासी के युद्ध में क्लाइव विजयी क्यों हुआ? इसका उत्तर हमें शिराजुद्दौला के अविश्वास में मिलेगा। उसके सभी प्रधान अधिकारी हिन्दू थे। जैसे मीरमदनमोहन लाल नन्दकुमार, दुलर्भराम, जगतसेठ इत्यादि। यदि शिराजुद्दौला अपने इन अधिकारियों को अविश्वास की दृष्टि से न देखकर उनमें ईर्षा न उत्पन्न करता तो उसका पतन सम्भव नहीं था।

पन्जाब में हिन्दू मुसलमानों में एकता थी, मेलजोल था, किन्तु औरंगजेब की अनुदार नीति ने कटुता उत्पन्न कर सिखों के हृदय में विश्वास का पौधा नपनपने दिया इसका कारण मुगल सुलतानों की अदूरदर्शिता थी जिन्होंने सिखों के गुरुओं को बलिवेदी पर चढ़ाकर सिखों को वीर जाति बना दिया। अंग्रेजी शासन के सौ साल बीत जाने पर भी अभी सिख और मुसलमानों की एकता का बीजारोपण नहीं हुआ। ऐसी परिस्थिति में पाकिस्तान बनाकर जहाँ ३७ लाख सिख बसते हों उनका अस्तित्व ही खतरे में डाल देना है। सिख सम्प्रदाय कि उत्पत्ति मुसलमानों कि कट्टरता और हिन्दुओं की संकीर्णता तथा अदूरदर्शिता के कारण हुई है। अस्तु यह कभी आशा नहीं कीजानी चाहिये कि वे मुसलमानों के आगे घुटने टेक देंगे। दूसरी बात यह भी विचारणीय है कि सिख मध्य पन्जाब के जिलों में ही केन्द्रित हैं। लुधियाना, जालन्धर, कपूरथला मलेरकोटला फरीदकोट नाम की रियासतें सिखों की मुख्य गढ़ी है। इन स्थानों में इनकी जन संख्या २५ लाख है बाकी १२ लाख सिख भी आस पास के जिलों में छिटके हुए हैं। अस्तु यहाँ पाकिस्तान बनाकर सिखों को यहूदियों जैसा स्थिति में छोड़ देना होगा अथवा यह कहा जाय की जर्मन स्युडेटन की समस्या यहाँ होगी और रक्त की नदियाँ बहेंगी। परन्तु सिख वीर जाति और भारत के गौरव हैं। इन्हें पछाड़ने में मुसलमानों को को लोहे के चने चबाने होंगे और उनके दाँत निश्चय ही टूट जायँगे। आगे चल कर हम पन्जाब के हिन्दू, सिख और मुसलिम जनसंख्या की तालिका देकर स्थिति स्पष्ट करेंगे।

सिख

भारत में पन्जाबी स्वस्थ्य, अच्छे योद्धा और सैनिक हैं। उनमें वीरता साहस और शारिरिक शक्ति है। यही कारण है कि वर्तमान और गत महायुद्ध में इस प्रान्त को सैनिक भारती में अच्छी सफलता मिली है। इसीलिये बहुत से अछूत भी सिख हो गये कि उन्हे सेना में स्थान मिल सके। यह सिख जाति की वीरता के कारण ही हुआ। सिखों को सैनिक और योद्धा बनाने का श्रेय गुरु गोविन्दसिंह को है जिन्होंने सिखों को संगठित कर वीर सिपाही और सैनिक शिक्षा देकर युद्ध प्रिय बना दिया। कंघी केश कृपाण ही सिखों को शास्त्र और शस्त्रप्रिय बना सका; यही कारण है कि १९२१ और १९३१ की जनगणना के बीच ५,४२,५९६ महिलाओं ने सिख धर्म ग्रहण किया। इतना ही नहीं हर एक योरुपीय युद्ध के समाप्त होने पर सिखों की जनसंख्या वृद्धि हुई है।

सिखों की पंजाब में संख्या वृद्धि :—

१९११ में १,३१,००० ; १९२१ में ३,१०,७००० , और १९४१ में ३७५७४०१ इस प्रकार की जनसंख्या वृद्धि का अनुपात विचारणीय है कि तीस साल के भीतर एक लाख ३१००० से बढ़कर सिख ३७ लाख ५७ हजार ४०१ हो गये। इसका कारण ढूंढ़ने की आवश्यकता नहीं। प्रकट है कि सेना में भरती होकर सिख अधिक धन कमाते हैं उनमें सामाजिक एकता होने के कारण उनके धन का अपव्यय नहीं होता। सेना से निकल कर वे अच्छे किसान और व्यवसाई बन जाते हैं। विधवा विवाह का बन्धन न होने के कारण उनमें जनवृद्धि और सन्तान उत्पत्ति सवर्ण हिन्दुओं की तुलना से अधिक है। पंजाब के मुख्य उपजाऊ जिलों में केन्द्रित होने के कारण वे इन जिलों की ३०% उपजाऊ धरती पर खेती करते हैं। वे भूमिकर का ४०% नकद के रूप में अदा करते हैं यद्यपि उनकी जनसंख्या प्रान्त के जनसंख्या की १४% ही है। सिखों के साथ ही जाट और अरोड़ाओं का गुट मिलजाने से वे प्रान्त भर के हिन्दुओं और मुसलमानों से व्यवसाय, उद्योग और कृषि में उन्नत और समृद्ध हैं।

सिख प्रधान जिलों का नकशा

	सिख	हिन्दू	मुसलमान	अन्य फिर्के
लुधियाना	४१%	२०	३७	२%
अमृतसर	३६%	१५	४७	२%
फिरोजपुर	३४%	२०	४५	१%
जालन्धर	२६%	१८	४५	११%
गुरुदासपुर	१९%	२४	५०	७%
होशियारपुर	१७%	४०	३७	६%

सिख धर्म में बहुत से ऐसी चीजें हैं जो इसलाम से खुलकर टक्कर ले सकती हैं जैसे मूर्तिपूजा निषेध अनेक मत मतान्तर के झगड़े, छुआछूत इत्यादि। साथ ही साथ सामाजिक नियमों में भी ऐसी कठोरता नहीं कि सिख सम्प्रदाय की एकता नष्ट हो। उनका धर्म उन्हें एकता के सूत्र में बाँधता है। कट्टर शास्त्रावलम्बी हिन्दू जिसे महान अपराधी समझकर त्याग देता है सिख उसे बिना किसी हिच किचाहट के ग्रहण कर लेता है। यही कारण है कि अनेक जातियाँ वर्णाश्रमी हिन्दुओं में समानता और न्याय न पा कर सिख सम्प्रदाय में सम्मिलित हो जाती है। खालसा की विशद भुजा छूत-अछूत सबका आलिंगन कर अपने में ग्रहण कर लेती है। सिख प्रचारक भी इस उद्योग में पूर्ण रूप से सहायक होता है। यह सब होते हुये भी सिखों को हिन्दूधर्म विरोधी या हिन्दुओं से पृथक् मानना भारी भूल होगा। वे भी हमारे आदर्शों का आदर करते हैं और हमारे जीवन के दार्शनिक सिद्धान्तों के परम्परा की रक्षा करते हैं। एक समय वह भी था जब मुसलमानों की निरंकुशता के कारण हिन्दूधर्म संकट में था उस समय गुरु नानक के उपदेशों ने धर्म की डूबती नैया बचाया। ऐसी स्थिति में यदि पञ्जाब के इन जिलों के सवर्ण हिन्दू ब्राह्मण और खत्रियों को छोड़कर सिखों में मिल जाय तो उनकी स्थिति अत्यन्त सुदृढ़ हो जायगी। उनका आर्थिक और सामाजिक स्थिति अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाने के कारण उनकी वतन (Homeland) प्रायः अभेद्य सा हो जायगा।

× × ×

इतिहास की परम्परा सामाजिक और राजनैतिक स्थिरता स्थापित करती है। किन्तु आधुनिक राज्यप्रणाली में राजनैतिक स्थिरता ही सब समस्याओं का हल नहीं है। भारत में यह समस्या बढ़ती हुई जनसंख्या और दरिद्रता, अशिक्षा तथा आर्थिक दिवालियापन के कारण पूर्णरूपेण लागू नहीं हो सकती। भिन्न भिन्न जाति और सम्प्रदायों की भिन्नता तथा कटुता वर्तमान राजनैतिक और आर्थिक शोषण के कारण बढ़ गई है। वही जातियाँ जो पहले एक दूसरे

से मिलकर रहा करती थी आज भेदभावों के कारण एक दूसरे की कट्टर शत्रु हो गई हैं। इसका हल केवल एक प्रकार से हो सकता है; वह है जनसाधारण के रहन सहन का सुधार, आर्थिक उन्नति हो और शिक्षा का उत्तम प्रबन्ध। शिक्षा प्रचार और आर्थिक दशा सुधार हो जाने पर धार्मिक कट्टरता और संस्कृति लोप का खतरा स्वंयमेव मिट जायगा। वह वर्ग कटुता त्याग कर सहिष्णु हो जायगा। ऐसी स्थिति हो जाने पर सामाजिक भेदभाव मिटने लगेगा। उस समय यह प्रश्न गौण हो जायगा। मुसलिम जनसमूह की कट्टरता शिक्षा से सहिष्णुता में परिणित हो जायगी। इसलिये यह आवश्यक है कि हमारी आर्थिक प्रणाली का नये सिरे से पुर्ननिर्माण हो। यह तभी सम्भव हो सकता है जब राष्ट्र की आर्थिक पुर्निनिर्माण एक संयुक्त योजना के आधार पर हो।

हमारा देश कृषि प्रधान है अस्तु सबसे पहले कृषि की उन्नति का ध्यान होना चाहिये। बंगाल के बहुसंख्यक किसान मुसलमान है। अशिक्षा अज्ञान और दरिद्रता ही उनकी पूँजी है यही कारण है कि बंगाल में मुसलिम लीग का विशेष प्रभाव है। पञ्जाब की दशा इसके विपरीत है क्योंकि वहाँ के किसानों की आर्थिक स्थिति बंगाल के किसानों से अच्छी है। पञ्जाब के मुसलमान अच्छे फौजी हैं, उन्हें देश विदेश की हवा लग चुकी है। यही कारण है कि उनमें सहिष्णुता अधिक है। इसीलिये पंजाब में मुसलिम लीग का जोर अधिक नहीं है। जिन्ना और नून को बार बार यत्न करने पर भी हताश होना पड़ता है। यद्यपि गत चुनाव में लीग को युनियन दल के विरोध में अच्छी सफलता अवश्य मिली है।

इस सम्बन्ध में प्रोफेसर कोपलैण्ड की योजना पर प्रकाश डालना आवश्यक प्रतीत होता है। कोपलैण्ड साहब देश के पुर्न विभाजन की आवश्यकता कृषि के आधार पर करना चाहते हैं। उन्होंने अपनी योजना का आधार सेन्सस कमिश्नर मिस्टर यीटस की रिपोर्ट पर स्थिर किया है। भेद केवल इतना ही है कि कोपलैण्ड साहब राजनैतिक विभाजन को ही विशेष महत्व देते हैं।

इंग्लैण्ड के डाक्टर कीथ जैसे शासनविधान दक्ष और अनेक अध्येता, जिन्होंने इस समस्या पर विचार किया है, इस आधार पर भारत विभाजन को महत्व नहीं दे सके हैं। उनका दृष्टिकोण भारत की एकता बनाये रहते हुये शासन सुधार और जनतन्त्र का प्रसार करना है। अंग्रेजों की विभाग शासन नीति को कोई विशेष महत्व इसलिये नहीं दे सके कि यह चीज बहुत दिनों तक न चल सकेगी। इसके विरोध में एक न एक दिन ऐसी आवाज उठेगी कि अंग्रेजों के लिये इसका मुकाबला करना असम्भव हो जायगा। ऐसी स्थिति में राष्ट्रीय योजना ही हमारे उद्धार का एक मात्र मार्ग हो सकता है। राष्ट्रीय योजना द्वारा ही हमारी आर्थिक और सामाजिक दशा का सुधार होगा।

कृषि के आधार पर विभाजन की योजना थीट साहब नदियों के उद्गम और संगम के आधार पर करना चाहते हैं। उनकी धारणा है कि प्रत्येक बड़ी नदी जैसे सिन्ध, गंगा, ब्रह्मपुत्र और उसकी सहायक नदियों के उद्भिज उद्गम और संगम के आधार पर हो। उनका विचार है कि प्रत्येक बड़ी नदी के आदि से अन्त तक का एक क्षेत्र हो जैसे अमेरिका की टेनासीवैली एथारटी योजना। इस प्रकार की योजना अमेरिका के लिये भले ही उपयुक्त हो किन्तु भारत की परिस्थिति में उसका क्या परिणाम होगा अभी देखना है। खेती के लिये धरती की समस्या मुख्य है। धरती का परिवर्तन होता रहता है क्योंकि उसकी रक्षा का कोई ठीक प्रबन्ध नहीं और वृष्टि होने के कारण धरती घुलती रहती है उसकी उपजाऊ शक्ति धरती घुल जाने (Soil erosion) के कारण नष्ट हो जाती है, इसी आधार पर अमेरिका में टेनासीवैली एथार्टी का संगठन हुआ। यह प्रेसिडेण्ट रूजवेल्ट की सबसे बड़ी योजना थी और इससे अमेरिका का वह भाग जहाँ पहले ऊसर और पथरीली धरती थी; बालू और धूल का तूफान आया करता था वहाँ की धरती अब हरीभरी फसलों और बागों से लहलहा रही है। इसी योजना के आधार पर थीटस भारत का विभाजन अनेक नय क्षेत्रों में करना चाहते हैं।

उत्तरी भारत की नदियों का संगम अरब समुद्र और बंगाल की खाड़ी में

हुआ है। पञ्जाब की नदियाँ अरब सागर में मिलती हैं। इसमें प्रधान सिन्धु और उसकी सहायक नदियाँ हैं। बंगाल की खाड़ी में गिरने वाली प्रधान नदियों में गंगा और ब्रह्मपुत्र हैं। उनकी सहायक अन्य बड़ी बड़ी नदियाँ हैं जिससे इन दोनों नदियों का उद्गम विस्तृत हो जाता है। लाखों बरस से वर्षा और नदियों के कारण धरती की उपजाऊ शक्ति नष्ट होती जा रही है। जनवृद्धि पहाड़ों और जंगलों के कट जाने के कारण खेती के लिये अधिक भूमि की आवश्यकता हुई और भूमि का उपयोग हुआ। भविष्य में और भी भूमि का उपयोग होने की पूर्ण सम्भावना है। जनवृद्धि के साथ ही साथ पशुवृद्धि भी हुई जिसकी समाज को अनेक प्रकार की आवश्यकतायें हुईं। भेड़, बकरियाँ, गाय बैल और अनेक घरेलू पशु धरती पर चरने लगे। धरती जुत जाने के कारण उसकी घास नष्ट हो गई और वर्षा में मिट्टी घुलघुल कर नदियां भठने लगी। इसका परिणाम यह हुआ कि नदियों का मार्ग बदलने लगा बाढ़ आने लगी और धरती का उर्वरत्व नष्ट होने लगा। इसका प्रभाव समाज की आर्थिक दशा पर पड़ा। इसका प्रयोग धीरे धीरे नदियों की रोक थाम से हो रहा है। इसी आधार पर अमेरिकन टी. वी. ए. नार्थवेस्टरीजनल कमीशन और मिसिसिपी कमीशन स्थापित हुआ है। संयुक्तप्रान्त में शारदा क्षेत्र में इसका प्रयोग दलदल सुखाकर किया गया और लाखों एकड़ जमीन की सिंचाई होने लगी। बहादुराबाद में नदी का बाँध तय्यार कर बिजली भी पैदा की जा रही है। यू० पी० बिहार और बंगाल का खासा हिस्सा इन नदियों के कारण नष्ट होता जा रहा है। इसके साथ, सोन दामोदर पद्मा, स्वर्णरेखा, महानंदी गोदावरी आदि भी हैं। टी० वी० ए० के अनुरूप मिरजापुर जिले में सोन और रेण नदी बाँधकर बँधा तय्यार होने जा रहा है जो कदाचित इस प्रकार का एशिया महाद्वीप में पहला प्रयोग होगा। यह बंधा (dam) इञ्जिनियरों के कौशल का उत्कृष्ट नमूना होगा।

प्रोफेसर कोपलैण्ड उत्तरी भारत का निम्न तीन भागों में संगठन करना

चाहते हैं। (१) सिन्धु प्रदेश जिसमें, काश्मीर, पञ्जाब, सिन्ध, बिलोचिस्तान और राजपूताना (२) संयुक्त प्रान्त और संशोधन सहित बिहार कुछ बंगाल का हिस्सा लिये हुये (३) बंगाल-आसाम। पञ्जाब सिन्धु प्रदेश छोड़कर बाकी तीनों गंगा का क्षेत्र रहेगा। इसका वर्गीकरण जलवायु, कृषि और सिंचाई व्यवस्था के आधार पर किया जाय इसी विचार से वह टी. वी. ए. और मिसिसिपी वैली एथार्टी का अनुकरण करना चाहते हैं। आर्थिक योजना के लिये गंगा का उद्गम और पद्मा नदी का संयुक्त क्षेत्र एक करना पड़ेगा किन्तु टी. वी. ए. का आधार मानकर योजना बनाने में एक कठिनाई का सामना करना पड़ेगा। वह यह है कि कोपलैण्ड साहब बिल्कुल भूल जाते हैं कि टेनासी एक नदी की सहायक मात्र है उसमें गंगा ब्रह्मपुत्र के समान डेल्टा (delta) का प्रश्न ही नहीं उठता। गंगा या ब्रह्मपुत्र किसी नदी की सहायक न होकर बंगाल की खाड़ी में समुद्र से मिलती है। इसलिये क्षेत्र विभाग (Regional divison) में डेल्टा उस नदी के ऊपरी भागों से अलग नहीं किया जा सकता। इस दृष्टि से प्रोफेसर कोपलैण्ड की विभाजन योजना इस देश के लिये बिल्कुल अनुपयुक्त है। इतना ही नहीं वे कृत्रिम राजनैतिक समस्यायें पेश कर केन्द्र में उनका सुरक्षित प्रतिनिधित्व कराना चाहते हैं जो आर्थिक दृष्टि से निर्मूल है। भाषा और संस्कृति के दृष्टि से भी यह तर्क अयुक्त है क्योंकि आसाम-बंगाल और उड़ीसा की समस्या योंही अधूरी छोड़ दी है।

प्रोफेसर साहब की योजना में यह बड़ी भारी भूल है कि वे योजना बनाते समय कृषि की उन्नति का प्रस्ताव करते हैं किन्तु यह कैसे संभव होगा जब वे नदी को हिस्सों में बाँटकर करेंगे। मुसलिम प्रदेश (Homeland) की योजना बनाते समय बंगाल आसाम और उड़ीसा को इसी स्थिति में लाकर छोड़ देते हैं। इस प्रकार की भौगोलिक भूल योजना को अक्रिय बना देती है।

कृषि की व्यवस्था का सुधार और पुर्ननिर्माण अन्तर प्रान्तीय समझौता और सहयोग द्वारा आसानी से हो सकता है न कि, हिन्दू मुसलमानों के बीच

कृत्रिम भित्ति खड़ी कर भेदभाव बढ़ाने से। दोनों जातियाँ, अपने भाषा संस्कृति और अतीत को नहीं भुला सकतीं। इतिहास भाषा और संस्कृति राष्ट्र को संगठन सूत्र में बाँधने की सीमेंण्ट है। इसी के आधार पर आर्थिक और राजनैतिक योजना की सफलता निर्भर है। भारत का भौगोलिक पहलू उपेक्षा की स्थिति में नहीं छोड़ा जा सकता क्योंकि इस महाद्वीप में अनेक भाषाओं और संस्कृतियों का समन्वय हो जाने के कारण भिन्न भिन्न प्रान्तों की भिन्न भिन्न भाषा और ऐतिहासिक परम्परा स्थापित हो गई है। इसलिये केवल टी. वी. ए. या वर्गीकरण योजना पर अतीत की परम्परा द्वारा स्थापित राजनैतिक एकता कैसे मिटाई जा सकती है? यह भौगोलिक परिस्थिति की खाल खींचकर विभाजन करना है। ऐसी स्थिति में विरला ही भारतीय होगा जो कोपलैण्ड योजना को किसी रूप में स्वीकार कर सके। यदि रूस और संयुक्तराष्ट्र की सभी नदियों का विभाजन इस आधार पर होता तो सम्भवतः आज रूस या संयुक्तराष्ट्र का मान चित्र ही दूसरा होता। बल्की इसके विरुद्ध हमें दूसरा प्रमाण मिलता है, वह है रूसियों का वोल्गा नदी को स्टालिन ग्रेड के द्वार पर उसकी गति बदल कर लेजाना। क्या इससे उनकी आर्थिक स्थिति में महान अन्तर नहीं हो गया?

क्षेत्री करण क्या है?

समाज शास्त्र की परिभाषा के आधार पर क्षेत्र (region) की भावना यह है कि उस खण्ड के लोगों का रहन सहन, व्यवसाय, भाषा; आर्थिक और सामाजिक परम्परा एक प्रकार की हो और उनकी सभ्यता-संस्कृति का सूत्र भी वही हो। अमेरिकन अध्येताओं की परिभाषा भी करीब करीब इसी प्रकार की है। इस लिये भारत का विभाजन केवल आर्थिक अथवा राजनैतिक दृष्टिकोण से निर्दोष और ग्राह्य नहीं हो सकेगा। यहाँ उसी प्रकार का विभाजन सफल होगा जो आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक और भौगोलिक दृष्टि से पूर्ण और निर्दोष हो। इस दृष्टि से उड़ीसा, आन्ध्र, महाराष्ट्र, कर-नाटक और करेल के भिन्न प्रान्तीय करण की माँग अस्वीकार नहीं की जा सकेगी। भाषा और सांस्कृतिक परम्परा की अवहेलना कर वर्गीकरण करना कभी सफल नहीं हो सकता। साइमन कमीशन ने प्रान्तों के सम्बन्ध में एक कमीशन नियुक्त कर प्रान्तों की पुन: सीमा करण की शिफारिश की थी। उनका इससे

यही अभिप्राय था कि भाषा और सांस्कृति तथा ऐतिहासिक परम्परा के दृष्टि-कोण से पुनः सीमा करण हो और उन्हीं को सिफारिश पर उड़ीसा और सिन्ध अलग प्रान्त बना दिये गये।

भाषा की एकता

विहार की वर्तमान सीमा के आधार पर यदि भाषा और बोली की गणना की जाय तो उसका औसद् निम्न होगा। पूर्वी जिलों की प्रधान भाषा बंगाली है। मानभूमि—६७% सिंघभूमि १६% संन्थाल परगना १२% पुरनियाँ ३३% इसी प्रकार आसाम में जहाँ हिन्दुओं की आबादी ८२ लाख है और मुसलमान केवल ३२ लाख हैं प्रान्त भर में आसामी बोलने वालों से बंगाली बोलने वालों की संख्या दूनी है। सिलहट, सचार, और गोलपारा में बंगाली बोलने वालों की संख्या ६५, ६० और ४०% है।

भारत के भाषाओं की परम्परा और अतीत योरुप की भाषाओं से कहीं अधिक प्राचीन होने के कारण प्राचीन सामाजिक और आर्थिक परम्परा का द्योतक हैं। अस्तु भाषा ही उस प्रान्त की सामाजिक आर्थिक और राजनैतिक एकता का कारण है। इस परम्परा से धर्म का कोई सम्बन्ध नहीं। अभी तक आसाम बंगाल के अनेक मुसलमान परिवारों में हिन्दू परम्परा चली आ रही है केवल बंगाली भाषाही नहीं बोलते अपितु हिन्दू सामाजिक और धार्मिक परम्परा काभी किसी न किसी अंश में पालन होता है। यह धर्मकी नहीं भाषा की एकता का प्रभाव है। भारत के विभाजन में भाषा और सांस्कृतिक परम्परा की अवहेलना नहीं की जा सकती क्योंकि उसी आधार पर राजनैतिक संगठन करने में सफलता मिल सकेगी।

पंजाब और बंगाल में हिन्दू द्वीप

इसलिये यदि धार्मिक दृष्टि से भी विभाजन किया जाय तो पन्जाब में जहाँ मुसलिम बहुमत है, सिक्खों को अलग कर देना होगा, और इसी प्रकार हिन्दू क्षेत्र में मुसलमानों का पृथक द्वीप बनाना होगा। इसका परिणाम यह होगा कि एक दूसरे के मित्र अथवा कट्टर शत्रु होकर रहेंगे क्योंकि इनमें भिन्नता और भेदभाव के रहते हुए भी एक दूसरे का उन्मूलन नहीं कर सकेंगे। पन्जाब में हिन्दू प्रधान ज़िले जिसकी आबादी ५०% से हिन्दू बहुमत की है १५ हैं। इनका क्रम इस प्रकार है।

पंजाब के हिन्दू बहुमत जिलें

१—हिसार	हिन्दू बहुमत	६४ %	९—सिरमौर (नाहन)	हिन्दू बहुमत	९३ %
२—लोहरू	,,	८५ %	१०—शिमला	,,	७६ %
३—रोहतक	,,	८१ %	११—शिमला की पहाड़ी	रियासतें	९६ %
४—दुर्गाना	,,	७७ %	१२—विलासपूर	,,	९८ %
५—गुड़गाँव	,,	६६ %	१३—काँगड़ा	,,	९३ %
६—पटावदी	,,	८२ %	१४—मण्डी	,,	९३ %
७—करनाल	,,	६७ %	१५—सुकेत	,,	९२ %
८—झीन्द	,,	७४ %	१६—चम्बा	,,	९२ %

१७—टेहरी गढ़वाल ९९ %

मुसलिम प्रधान जिले

जिला	प्रतिशत	जिला	प्रतिशत
१—कपूरथला	५६%	१०—माटगोमरी	६९%
२—लाहौर	६०%	११—शाहपुर	८३%
३—गुजराँवाला	७०%	१२—मियाँवली	८६%
४—शेखूपुरा	६२%	१३—लायलपुर	६३%
५—स्यालकोट	६२%	१४—बहावलपुर रियासत	८१%
६—गुजरात	८५%	१५—झाँग	८२%
७—झेलम	८९%	१६—मुलतान	७८%
८—रावलपिण्डी	८०%	१७—मुजफ्फरगढ़	८६%
९—अटक	९०%	१८—डेरागाजीखाँ	८९%

बंगाल के हिन्दू प्रधान जिले जिसकी हिन्दू आबादी ५० प्रतिशत से अधिक है

जिला	प्रतिशत	जिला	प्रतिशत
१—बाकुड़ा	९५ प्रतिशत	४—हवड़ा	८० ,,
२—हुगली	८५ ,,	५—बर्धमान	८१ ,,
३—मेदनीपुर	६२ ,,	६—दारजीलिंग	८५ ,,

पहाड़ी जातियों के साथ जो मुसलिम नहीं हैं ।

जिला	प्रतिशत	जिला	प्रतिशत
७—वीर भूमि	७२ प्रतिशत	१०—कूचबिहार	६९ प्रतिशत
८—२४ परगना	७६ ,,	११—त्रिपुरा रियासत	७१ ,,
९—जालपाइगुड़ी	७५ ,,	१२—खुलना	५१ ,,

बंगाल के मुसलिम प्रधान १६ जिले

१—बोगरा	८४ प्रतिशत	९—चट्टग्राम	७४ प्रतिशत
२—रंगपुर	७१ ,,	१०—नदिया	६१ ,,
३ राजशाही	७४ ,,	११—जैसोर	६५ ,,
३—पबना	७७ ,,	१२—फरीदपुर	६१ ,,
५—मेमन सिंह	७७ ,,	१३—ढाका	६४ ,,
६—त्रिपुरा	७७ ,,	१४—दीनाजपुर	५० ,,
७—बाकरगंज	७२ ,,	१५—मालदा	५३ ,,
८—नोआखाली	८१ ,,	१६—मुर्शिदाबाद	५६ ,,

पाकिस्तानी बंगाल की सामूहिक हिन्दू संख्या १ करोड़ ५६ लाख होगी। इसमें ध्यान देने योग्य बात यह है कि १९४१ की जन गणना में हिन्दू बहुसंख्यक न होने पावें इसलिये अछूत और वे उपजातियाँ जिनकी आचार विचार और परम्परा हिन्दू हैं हिन्दू से पृथक् कर दिये गये हैं और कदाचित् हिन्दुओं की गणना भी ठीक ठीक नहीं की गई है यही कारण है कि बंगाल मुसलिम बहुमत प्रान्त बना हुआ है।

विचार करने पर यह तर्क युक्त नहीं मालूम होती कि जहाँ साम्प्रदायिक दृष्टि में हिन्दू बहुसंख्यक हैं और जहाँ दोनों जातियों की आर्थिक समस्या एक दूसरे में मिली हुई है गाँवों में दोनों के रहन-सहन की परम्परा भी एक हो वहाँ केवल धार्मिक आधार पर विभाजन कर पाकिस्तान कि सृष्टि करने की बात सोचना केवल लीगी बुद्धिवादियों के बुद्धि का काम है। इस तर्क का उत्तर लीगी ही दे सकते हैं किन्तु वे धर्म्मोन्माद और शक्ति वृद्धि में इस प्रकार तल्लीन हैं कि उन्हें वास्तविकता की कल्पना भी नहीं होती। यदि बिना धार्मिक आधार के सन्धि का विभाजन किया जाय और जहाँ एक धर्मावलम्बी हिन्दू इतनी बड़ी संख्या में हो उनसे साम्प्रदायिक मसला हल करने के लिये सन्धि-समझौता करना ही होगा बिना इसके साम्प्रदायिक समस्या किसी प्रकार न हल हो सकेगी। अगर अल्पसंख्यकों के सुलह समझौते से किसी प्रकार साम्प्रदायिक मसला हल भी हो जाय तो हमारे लिये बुद्धिमानी की बात यह होगी कि उसका उपयोग हम अपनी मातृभूमि की दृढ़ता के लिये करें। इसका उपयोग यदि हम हिन्दू और मुसलिम वतन के कृत्रिमतामय वातावरण में करेंगे तो उससे हिन्दू और मुसलिम वतन की समृद्धि और शान्ति चिरकालीन नहीं हो सकेगी यह निश्चित है। इसलिये बंगाल-आसाम और पञ्जाब के अल्पसंख्यकों से समझौता कर एकता कायम रखी जा सकती है।

लीग नेता कहते हैं "हमें आत्मनिर्णय का अधिकार है इसलिये हम अलग होकर अपनी सरकार बनायेंगे।" इस नारे में कितनी कठिनाई

और अव्यवहारिकता है कदाचित इसका उन्हें अन्दाजा नहीं। पञ्जाब के उन जिलों में जहाँ हिन्दू और सिख बहुमत में हैं वहाँ उन लोगों को अपना वतन बनाने का अधिकार होगा। इसलिये सिख और हिन्दू वतन बन जाने पर पञ्जाब और सीमा प्रान्त दोनों मिलाकर पश्चिमी पाकिस्तान बनाने की योजना विफल हो जायगी क्योंकि वे सिद्धान्ततः अपनी एकता का दावा नहीं कर सकते। इसी भाँति बंगाल के उत्तरी-पश्चिमी जिलों में भी हिन्दू बहुमत होने के कारण मुसलमान बंगाल में पाकिस्तान कायम करने का दावा नहीं कर सकते। आसाम की तो बात ही छोड़ दीजिये वहाँ मुसलमान केवल ३३% हैं। हिन्दू, आदि जातियों को मिलाकर ६६% के लगभग हैं, अस्तु भाषा, राजनीति–अथवा अर्थनीति किसी भी आधार पर आसाम का पाकिस्तान की सीमा में शामिल करना अन्याय है और कोई भी तर्क इसे सिद्ध नहीं कर सकता।

यह प्रकट है कि पृथकत्व से लोगों में कटुता और वैर बढ़ता है और वह नित्य प्रति बढ़ता ही जाता है। ऐसी दशा में बहुमत निर्णय का प्रश्न सुलझाना कैसे सम्भव हो सकता है। इस सम्बन्ध में एक बात और भी विचारणीय है। वह है उन जिलों के सम्बन्ध में जो हिन्दू वतन और मुसलिम वतन की सीमा पर होंगे। यह निश्चय है कि मुसलमान अपनी संख्या बढ़ाने के लिये उन जिलों में आकर लूट मार और बलात्कार द्वारा हिन्दुओं को मुसलमान बनाने का यत्न करेंगे। बंगाल में इसी प्रकार के बलात्कार द्वारा हिन्दुओं की संख्या घटी है। बंगाल के रहने वाले तो यह बात भलीभाँति जानते ही हैं। ढाका में प्रायः दंगे क्यों हुआ करते हैं? इसलिये कि मुसलमान पशुबल द्वारा अपनी शक्ति बढ़ाते हैं। मौका पाते ही वे हिन्दू स्त्रियों को जबरन उठा ले जाते हैं और उनके साथ बलात्कार कर उन्हें भ्रष्ट कर देते हैं। हिन्दू समाज में उन्हें कहीं शरण न मिलने के कारण लाचार होकर मुसलिम मतविनी बन जाना पड़ता है। बंगाल और आसाम के लिये तो यह मानना होगा कि आगमन द्वारा मुसलमानों की वृद्धि नहीं हुई। इसके मूल में सामाजिक

और आर्थिक दुर्बलता है। सवर्ण हिन्दुओं की कट्टरता और आर्थिक शोषण के कारण कुछ पीड़ित और अछूत अपनी तबियत से मुसलमान और ईसाई हो गये। किन्तु अधिक के लिये यही ठीक है कि या तो उनकी स्त्रियों का सतित्व नष्ट किया गया अथवा ज़बरन ले जाकर मुसलमान बना ली गई। बाकी तलवार के जोर पर मुसलमान हुए। इस प्रकार बंगाल में निरन्तर मुसलिम संख्या वृद्धि हुई। लीग के ललकार पर लीगी मन्त्रिमण्डल आज भी मुसलमानों की गुण्डई प्रोत्साहित कर रहा है जिसके परिणाम स्वरूप बंगाल के बड़े बड़े नगरों में नित्य खून खराब हुआ करता है।

इस प्रकार के विभाजन व्यवस्था का उन जिलों के आर्थिक दशा पर भी बुरा प्रभाव पड़ेगा जो हिन्दू वतन और मुसलिम वतन के बीच में होंगे। चिरसंघर्ष के कारण उन जिलों में हमेशा अराजकता और अशान्ति बनी रहेगी। कोई भी उद्योग-धन्धा अथवा खेती-बारी उन्नति नहीं कर सकेगी क्योंकि उन लोगों को आक्रमण, दंगा, लूट-पाट का भय बना रहेगा। इसलिये इस आधार पर की गई हदबन्दी को कोई स्वीकार नहीं कर सकेगा। आर्थिक, भौगोलिक और सांस्कृतिक आधार पर हदबन्दी करने का परिणाम इतना कटु नहीं जितना इसका व्यवस्था से होगा। इसका अर्थ यही होगा जैसे "जिमि दशननमह जीभ बिचारी।"

अल्प-संख्यकों से सन्धि और समझौता करने पर आर्थिक, राजनैतिक और सामाजिक उन्नति में किसी प्रकार की बाधा नहीं हो सकती क्योंकि वे सन्धि और समझौते के सूत्र में बँधे रहेंगे। इस मसले को रूस ने भली-भाँति हल किया है। रूसी शासन-विधान के अनुसार प्रत्येक प्रान्त का संगठन भौगोलिक आर्थिक और भाषा के आधार पर हुआ है। भिन्न-भिन्न जातियों को पूरी आज़ादी है। अल्प-संख्यकों को अपनी भाषा, सभ्यता, स्कूल और अदालतें कायम करने की आज़ादी दे दी गई है जिससे वे अपने प्रान्त में अपनी भाषा और सभ्यता का विकास समझते हैं। परिणाम यह हुआ है कि वर्ण भिन्नता होने पर भी अन्तर किसी प्रकार नहीं हुआ। यद्यपि

रूसी विधान के आधार पर कोई भी अल्पसंख्यक वर्ग अलग हो सकता है; किन्तु इस नीति के कारण कोई भी अल्प-समुदाय रूसी संघ से अलग नहीं होता। यह उदाहरण हमारे देश के लिये अत्यन्त उपयुक्त है। इसके अलावा कनाडा, स्वीजरलैण्ड और बाल्कन स्टेटस में भी इसी प्रकार की व्यवस्था है जहाँ अल्पसंख्यकों को अनेक सुविधायें देकर विधान उन्हें एकता के सूत्र में बाँधे हुए हैं। सोवियटस्टेट की शक्ति उसके अल्पसंख्यक सूत्रों के योग से ही हुई है। इसमें विचित्रता यह है कि आन्तरिक भिन्नता होने पर भी शासन की बागडोर एक सत्ता के हाथ है। आन्तरिक भिन्नता को उत्साहित करते हुए भी सम्बन्ध-विच्छेद की कल्पना सोवियट कानून में सबसे बड़ा द्रोह है। सोवियट आर्थिक योजना संसार के समस्त अर्थ और विधान शास्त्रिओं को स्टेट प्लैनिंग का आर्थिक योजनाओंको स्वरूप दिया है। इसके पहले कोई भी सरकार स्टेटप्लैनिंग की बात नहीं सोचती थी। यही देन समाजवाद की विशेषता है। राष्ट्रीय आर्थिक योजना बनजाने के कारण किसी यूनिट के लिए पृथक होना असम्भव-सा है; चाहे उनकी जाति अथवा भाषा भिन्न ही हो। केन्द्रीय शक्ति के हाथ में राष्ट्रीय योजना होने के कारण सबकी कुञ्जी केन्द्र के ही हाथ में रहती है।

भारत के लिए इन कठिनाइयों से मुक्ति पाने का यही एकमात्र मार्ग है कि केन्द्रीय सरकार शक्तिशाली हो। वह राष्ट्रीय योजना बनाये और अल्पसंख्यकों को अपनी भाषा और संस्कृति के व्यवहार की स्वतन्त्रता दे दी जाय। इस प्रकार का विधान बनाने में हरएक अल्प-समुदाय मिलकर आपसी समझौते से मतभेद की चीजें तय कर लेंगे। इस प्रकार की योजना बना लेने पर शायद ही कोई वर्ग अलग होने की बात सोच सके। इसके उपयुक्त वातावरण बनाने के लिए सामाजिक सुधार की बड़ी आवश्यकता है। सामाजिक सुधार को सुधारकों के हाथ छोड़ देने से सुधार इतनी तेजी से नहीं हो सकेगा जितनी तेजी से होने की आवश्यकता है। इसलिये सामाजिक बुराइयों को दूर करने के लिये कानून बनना चाहिये। दूसरा काँटा हमारे

मार्ग में साम्प्रदायिकता का है। साम्प्रदायिक कटुता किस प्रकार मिटे ? यह मसला दो प्रकार से हल हो सकता है। वह है शिक्षा-प्रचार और जन-समुदाय की आर्थिक दशा का सुधार। शिक्षा और आर्थिक उन्नति होने पर धार्मिक कटुता अपने आप नष्ट हो जायगी। उसे नष्ट होने पर साम्प्रदायिक तिल का ताड़ अपने आप नष्ट हो जायगा। मुसलमानों में अशिक्षा और दरिद्रता होने के कारण उनमें इतनी साम्प्रदायिक कटुता है और यही कारण है कि "इसलाम खतरे में है" "कुफ्र, गुनाह और काफिरों की ज्यादती" के नारे अनयास मुसलमानों की बुद्धि पर परदा डाल हुये हैं।

अभीतक गाँवों में हिन्दू-मुसलिम समस्या इतनी जटिल नहीं हुई है क्योंकि उनकी आर्थिक समस्याओं की भित्ति भूमि है। सभी किसान धरती पर परिश्रम कर अन्न उपजाते हैं। जलवायु और अन्य परिस्थितियाँ सभी के लिए एक हैं, चाहे वह हिन्दू हो अथवा मुसलिम। गाँव के किसान एक हैं। लीगी नेताओं के रहन-सहन की भिन्नता की आवाज देहातों के लिए निरर्थक है क्योंकि गाँव के हिन्दू-मुसलमानों के रहन-सहन, खान-पान और बोल-चाल में किसी प्रकार का अन्तर नहीं उत्पन्न किया जासकता।

जनता की आर्थिक परिस्थिति भिन्न नहीं !

जनता की परिस्थिति का द्योतक उनकी आर्थिक दशा है। हमारी आर्थिक दशा का शासक-शासन और समाज संगठन से आधार आधेय का सम्बन्ध है, इसलिये एक की दशा सुधारने में दूसरी की व्यवस्था में भी परिवर्तन करना पड़ेगा। अगर देश आजाद होता तो यह झगड़े अब तक कभी मिट जाते। इसी ध्येय को दृष्टि में कर कांग्रेस ने सन् ४२ में "भारत छोड़ो" का क्रान्तिकारी प्रस्ताव स्वीकृत किया। वह प्रस्ताव निश्चय ही बड़ा महत्वपूर्ण है। इसके कार्यान्वित हो जाने से भारत की दो सौ वर्ष की अंग्रेजों की गुलामी से उत्पन्न क्लैव्य स्वयमेव नष्ट हो जायगा। मुसलिम लीग इसके महत्व को जान-

बूझकर भी उपेक्षा की दृष्टि से देखती है। वे कहते हैं—"पहले बाँट दो तब जाओ" (Divide and then Quit) यह साधारण समझ की बात होनी चाहिये कि विभाग और शासन (Divide and Rule) की नीति पर ही आजतक भारत में अंग्रेजों की सत्ता कायम है; जिसके कारण हमारा शोषण हो रहा है और हम गुलामी के जंजीरों में जकड़े हुए हैं फिर वे बाँटकर मुसलमानों के कहने से देश से चले जायँ, यह बात लड़कों के खेल-सी है। भला ऐसा कभी हो सकता है ? यदि यही दशा रही तो अंग्रेज भारत से क्यों जाने लगे। लीग और मुसलमान उन्हें भारत में अपनी सत्ता दृढ़ करने का बहुत अच्छा अवसर दे रहे हैं। यदि मुसलमानों की यही नीति रही तो देश का अंग्रेजों की गुलामी से मुक्त होना असम्भव है।

द्वितीय विश्वमहायुद्ध के समाप्त होने के कारण क्रान्तिकारी राजनैतिक और सामाजिक परिवर्तन की सम्भावना है। किन्तु सबकी जड़ में आर्थिक समस्या है जिसका संचालन नौकरशाही और उसके चन्द पिट्ठू पूँजीपति कर रहे हैं। आर्थिक योजना का अभी कोई आयोजन नहीं किया गया जो राष्ट्रीय हो अथवा जनसमुदाय के कल्याण की दृष्टि से किया गया हो; अस्तु रहन-सहन का ढंग बिना राजनैतिक स्वाधीनता प्राप्त किये उच्चस्तर नहीं प्राप्त कर सकता। पाकिस्तान के समर्थक लीगी वास्तविक स्थिति को क्यों भूल जाते हैं ? मुसलमान शहरों में ही नहीं रहते, बहुसंख्यक प्रान्त में अथवा अल्पसंख्यक प्रान्त में वे सबकी भाँति गाँवों में भी रहते हैं। हिन्दू-मुसलमान किसानों में क्या अन्तर है ? फिर उस समय जब राष्ट्रीय योजनायें बनेंगी जिससे आर्थिक दशा का स्तर उच्च होगा ऐसी व्यवस्था का परिणाम क्या होगा। दोनों के लिए दो योजना बनाने की बात सोचना व्यर्थ है। धन और उत्पत्ति का समान वितरण तभी हो सकता है जब दोनों जातियों के लिए एक योजना बनाई जाय।

हिन्दू और मुसलिम किसान, खेतीवारी और कलकारखानों के मजदूरों

के सम्मुख एकही समस्या है, वह है रोटी कपड़े का प्रश्न। इसलिये उनको आगामी समय में संयुक्त मोर्चा लेने की आवश्यकता होगी इसलिये कि पूँजी और मजदूर में न तो किसी प्रकार का संघर्ष हो और न पूँजीपति मजदूर को दबा सकें। भूमि, श्रम, और पूँजी, सामाजिक दृढ़ता, कानून, यह सब इस प्रकार के बनाये जायँ जिससे किसान और मजदूर भी अपने दायित्व को समझ सके। इसके लिये शिक्षा प्रसार कि आवश्यकता है। अशिक्षित समुदाय कभी उन्नति नहीं कर सकता। किसान और मजदूर का असाम्प्रदायिक आधार पर दृढ़ संगठन होने की आवश्यकता है क्योंकि आर्थिक उन्नति कि कुन्जी किसान और मजदूरों के संगठन में है। इनमें संगठन हो जाने पर कोई शक्ति हमारी स्वतन्त्रता नहीं रोक सकती। यह संगठन तभी सफल होगा जब इसका आधार आर्थिक होगा। हिन्दू संगठन, मुसलमीन मिल्लत और तबलीग के नाम पर यह मसले कभी हल नहीं हो सकते। मुल्ला और मौलवी सदा अपने फतवे से 'काफिर और कुफ्र' का संघर्ष करते रहेंगे। प्राचीनकाल में धार्मिक संगठन की जो भी उपोदयता रही हो किन्तु आजकल की हलचल में जब तक हमें आजादी नहीं मिल जाती धर्म का मार्ग यदि सम्प्रति साम्प्रदायिकत्व की आग भड़ाकता हो तो हमारे लिये यही उचित है कि उसे एक ओर टालकर हम पहले आजादी की लड़ाई जीतें।

हमें रूस और चीन के किसानों से शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये, जहाँ एकता के बलपर उनका सारा राष्ट्रीय जीवन बदल गया है। उनके अलावा अन्यदेशों में भी मजदूर और किसान आपस में संगठन कर रहे हैं। इस संगठन का आज इतिहास में ब्रिटेन के मजदूर सरकार से बढ़कर कौन प्रमाण हो सकता है। इङ्गलैण्ड के पूँजीपतिओं के परम्परा की दीवार आज टूट रही है। किसी समय भारत में जब गणतन्त्र थे, उस समय यद्यपि यह समस्यायें नहीं थी, ग्राम पंचायतें अपने क्षेत्र में पूर्णतया स्वतन्त्र थी। आज की आवश्यकताओं का हल मजदूर संगठन और ट्रेड युनियन्स द्वारा हो सकेगा। इनका संगठन समाजवादी सिद्धान्त के अनुसार होना चाहिये आज

जैसी गुटबन्दी के आधार पर जनसमुदाय का प्रतिनिधित्व अखिल-भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस जैसी संस्था अथवा किसानों के लिये कोई ऐसी ही संस्था बनानी होगी जिसका दृष्टिकोण आर्थिक हो जो जात पाँत या धर्म के व्यर्थ झगड़ों में न पड़े। ऐसी संस्था के सहयोग से इस प्रकार की आर्थिक योजना बन सकेगी जो सचमुच राष्ट्रीय हो और रोटी का सवाल हल कर रहन-सहन का स्तर ऊँचा उठा सके। ऐसी ही संस्था देश की बढ़ती हुई आवश्यकताओं के अनुकूल उद्योग धन्धों की उन्नति में सहायक हो सकेगी।

ऐसी परिस्थिति में मियाँ जिन्ना और लीग के मांग के अनुसार पाकिस्तान स्वीकार कर लेने का अर्थ यह होगा कि भारत कभी गुलामी से आजाद न हो सकेगा चाहे उसका शासनसूत्र हिन्दू या मुसलमान किसी के हाथ क्यों न हो। इसका दूसरा पहलू यह भी होगा कि टुकड़े २ में बँटा हुआ भारत पूंजीपति, जमींदार और मौलवियों की कठपुतली बना रहेगा जिसका तार यवनिका की ओट से गोरी सरकार खींचती रहेगी। इससे कभी किसान और मजदूरों की मांग पूरी न होगी और न देश का औद्योगीकरण ही हो सकेगा जिससे देशकी राष्ट्रीय पूंजी बढ़े और आर्थिक उन्नति हो सके। इस प्रकार एक ओर शोषक वर्ग हमारी छाती पर हमेशा सवार होकर मजदूर और किसान का शोषण करता रहेगा। एक नहीं लाख जिन्ना आवें पर भारत के मुसलमानों को ऐसी परिस्थिति और वातावरण में कभी आजाद नहीं करा सकते।

हिन्दू सभ्यता का प्रभाव

अभी गाँवों में हिन्दू-मुसलिम भेद भाव इतना गहरा नहीं है जैसा शहरों में देखने में आता है। लीग और जिन्ना की बहक में ज्यादातर शहरी मुसलमान और कारखाने के मजदूर ही आये हैं। देहातों में यह आम तौर पर देखने में आता है कि हिन्दू मुहर्रम और ताजिये मनाते हैं। शीतला के प्रकोप

में मुसलमान जाकर शीतला की मन्नत मानते हैं। बंगाल में वह तुलसी और बेलकी पूजा भी करते हैं तथा हिन्दू पर्व जैसे भातृद्वितीया और रक्षाबन्धन आदि का विश्वास के साथ पालन करते हैं। मैं स्वयम् एक ऐसे भारत प्रसिद्ध कलाकार को जानता हूँ जो मुसलमान होकर भी दुर्गा और काली-तारा की उपासना करते रहते हैं। इतना ही नहीं बहुत सी मुसलमान औरतें सिन्दूर का टीका लगाती हैं और हिन्दू स्त्रियों की भाँति चूड़ी और आभूषण धारण करती हैं। बंगाल में सत्यपीर की पूजा इसका सबसे बड़ा और जीवित उदाहरण है जिसे हिन्दू और मुसलमान सभी बिना किसी भेदभाव के पूजते हैं। इतना ही नहीं बहुत से बंगाली परिवारों में आधा हिन्दू और आधा मुसलमान नाम का भी रक्खा जाता है।

पश्चिमी और उत्तरी भारत में भी क्या इसका प्रभाव नहीं था। अकबर की दीने इलाही भी इसी का एक व्यापक स्वरूप था जिसे कट्टर मौलवी सम्प्रदाय नहीं ग्रहण कर सका। इसके गिर जाने पर सूफीयों ने एकबार इसका पुनः उद्योग किया। सूफीमत स्पष्ट रूप से वेदान्त से प्रभावित हुआ है। द्वैत और अद्वैत का विवेचन फारसी भाषा में सूफी सन्तों ने किया और बहुत से मुसलमानों ने सूफी मत ग्रहण किया। आज भी बहुत से हिन्दू और मुसलमान सूफीमतावलम्बी हैं।

आज के लीगी यह परम्परा गत एकता फूटीं आँखों भी नहीं देखना चाहते इसीलिये वे "दो राष्ट्र" सिद्धान्त की नींव डाल रहे हैं और "इसलाम खतरे में" के नारे से गाँव के भोले भाले मुसलमानों में कटुता और साम्प्रदायिकता का बीज बो रहे हैं। शहर और गाँवों में हर जगह इसका सवाल उठाया जा रहा है पर रोटी का सवाल आर्थिक मसले के हल से जुड़ा हुआ है इसलिये जब तक आर्थिक मसला हल न हो जाय 'इसलाम खतरे' में का नारा अलहिदगी का मसला कभी हल न कर सकेगा बल्कि आपस में वैर और फूट की वृद्धि होगी परिणाम स्वरूप रोज दंगे होंगे। कितनों कि गर्दनें कटेगी और क्या क्या

अनर्थ होगा। इसी बहाने गोरी सरकार को कुछ दिनों और जामकर बैठने का अवसर मिल जायगा।

भारत की सबसे बड़ी समस्या धर्म नहीं गरीबी है। गरीबी का मसला इसलिये हल नहीं होता कि इनके बीच जात पाँत और धर्मकी गहरी खाई खुदी हुई। राजनैतिक शक्ति भी इसी खाई के कारण नहीं भर सकती क्यों कि साम्प्रदायिक प्रश्न उपस्थित हो जाता है। दुर्भाग्य की बात है कि मुसलमान ही सबसे अधिक साम्प्रदादिक है और ऐसा मौका आने पर उनकी निरपेक्षिता डाँवाडोल हो जाती है। उनका यह दृष्टिकोण सचमुच देखा जाय तो उन्हीं के लिये घातक सिद्ध हो रहा है क्योंकि किसी जाति के दस या पचास आदमियों के सरकारी नौकरी पाजाने अथवा १००; ५० व्यापार से धन कमा लेने पर अपने जाति भाइयों की गरीबी दूर करने में सहायक नहीं हो सकते।

भारतीय इतिहास की परम्परा इस पहलू से सदा हिन्दू मुसलमानों में सामाजिक एकता स्थापित करती रही है। यही हिन्दू सभ्यता और संस्कृति की विशेषता रही है कि वह चाहे किसी धर्म अथवा समाज का क्यों न हो उस पर अपनी छाप डाल कर अपने में धीरे धीरे मिला रही है। जब एक दूसरे के सम्पर्क में आवेगा तो एक दूसरे का गुण दोष ग्रहण होना स्वाभाविक है। अभी हाल ही में करांची में लीगी मुसलमानों की एक सभा में एक सज्जन ने कहा था कि "यदि लीग की नीति मुसलमान बरतते होते तो आज मुहम्मद कासिम के वशजों को छोड़कर भारत में कदाचित कोई मुसलमान ही न होता।"

अस्तु अनेक प्रकार के भारत खण्ड जैसे, हिन्दुस्तान, पाकिस्तान, सिखि-स्ताना द्राविड़स्थान या अनेक "स्तान" जो कल्पित होसकें भारत की गरीबी का मसला हल नहीं कर सकते बल्कि इससे राजनैतिक गुत्थी और जटिल ही होगी। सामाजिक और आर्थिक प्रश्न भी एक बड़े पर्वत के समान भविष्य में इन मसलों के बीच आकार खड़ा हो जायगा और देश की आर्थिक और राज-नैतिक सत्ता के लिये महान घातक सिद्ध होगा।

भारत से बढ़कर संसार के किसी देश में आर्थिक सीमा का निर्धारण इतना अच्छा नहीं मिल सकेगा। भारत क्षेत्रीकरण का सबसे अच्छा उदाहरण है क्योंकि यहाँ के एक एक क्षेत्र सभ्यता, भाषा और आर्थिक सत्व (Economic interest) से बँटा हुआ है यही आर्थिक और सामाजिक एकता भारत के अतीत समृद्धि, और गौरव का कारण थी न कि धार्मिक मतभेद और साम्प्रदायिक फूट। मुगलों के और ईस्टइण्डिया कम्पनी के समय में, यानी १६ वीं से लेकर १८ सदी तक भारत की समृद्धि से पश्चिम के सभी देश पीछे थे और आर्थिक कारणों से ही आज अंग्रेज भारत नहीं छोड़ना चाहते।

पाकिस्तान का उद्योग धंधा

आर्थिक दृष्टि से भारत का हिन्दुस्तान और पाकिस्तान में विभाजन हो जाने से केवल हदबन्दी बदल जायगी लेकिन, कलकारखाने, खनिज और जलवायु का मसला किसी प्रकार हल न होगा। हिन्दुस्तान और पाकिस्तान नामके दो 'स्तान' बन जाने पर पाकिस्तान में खनिज सम्पति न होने के कारण आर्थिक दृष्टि से पाकिस्तान कभी उन्नति न कर सकेगा। उदाहरण के लिये भारत में कुल कोयले की उपज में ९० प्रतिशत कोयला हिन्दुस्तान की खानों में होगा। कच्चा लोहा ९२ प्रतिशत ; तांबा, मेंगजीन और बैक्साइट भी कल्पित पाकिस्तान से अधिक मात्रा में होगा। आजकल की सभ्यता में सब से बड़ा काम कोयला और लोहे का है। जिस देश में कोयला और लोहा न होगा उसकी आर्थिक दशा कैसे उन्नति कर सकेगी ? उत्तरी पश्चिमी और पूर्वी पाकिस्तान में बहुत ही रद्दी किस्मका ५ प्रतिशत लोहा कोयला और बैक्साइट (Bauxite) पाया जायगा। औसद लगाने पर समस्त भारत की निकासी का केवल ५ प्रतिशत से कुछ कम खनिज की उत्पत्ति दोनों पाकिस्तान मिलाकर होगी ऐसी दशा में पाकिस्तान का स्वप्न देखनेवाले मुसलमानो की आर्थिक दशा सुधार की क्या आशा की जासकती है ? सदियों से मुसलिम समुदाय दरिद्रता और अशिक्षा के कारण पिछड़ा हुआ है। इस प्रकार

का पाकिस्तान बन जाने पर क्या उनकी दशा और न बिगड़ जायगी ? सुधार का केवल एक ही मार्ग है वह है दोनों पाकिस्तानों का उद्योगीकरण (Industrialization)। हिन्दुस्तान से कटुसम्बन्ध हो जाने पर उन्हें वे सहुलियतें जो आज प्राप्त हैं कैसे प्राप्त होने की उम्मीद की जा सकेगी ? आसाम में कोयला होता है किन्तु उसमें गन्धक इतनी अधिक मात्रा में होता है कि वह किसी व्यवसाय के काम में नहीं आसकता। पंजाब में कोयला नहीं के बराबर है लोहे और बैक्साइट की खाने बिलकुल नहीं है। सीमाप्रान्त के अटक जिले में कुछ तेल के सोते अवश्य हैं किन्तु तेल कि निकासी बहुत ही साधारण है। बिहार इस स्थिति से बहुत ही सम्पन्न है क्योंकि बिहार में कोयला, लोहा, मेगनीज, अबरक और बैक्साइट की खाने हैं। टाटा का लोहे का कारखाना जिसे एशिया में सब से बड़े लोहे के कारखाने होने का गौरव प्राप्त है बिहार के जमशेदपुर में है।

अबरख बिजली के व्यवसाय में सबसे आवश्यक वस्तु है। उसकी उपज बिहार के ही खानों में होती है। पंजाब की नदियों से बड़े बड़े जलीय विद्युतशक्ति के केन्द्र बन जाने पर उनका विद्युतव्यवसाय उन्नति नहीं कर सकती क्योंकि वहाँ अबरक नहीं है। अबरक के लिये पाकिस्तानियों को बिहार, सी. पी, और मद्रास की कृपा पर ही रहना होगा। बिहार और मद्रास मिलाकर १,०६,००० हंडरवेट के लगभग अबरख खानों से निकाला जाता है। यह संसार के सभी खानों की उत्पत्ति से अधिक है। इसके अलावा और भी धातुयें जिससे कलकारखानों कि उन्नति हो हिन्दुस्तान में ही पाये जाते हैं। आसाम और बिलोचिस्तान में कुछ खनिज निकलते हैं किन्तु औद्योगिक दृष्टि से उनकी निकासी नहीं के बराबर है इसी तरह सीमेन्ट के कारखाने सुविधा के बिचार से हिन्दुस्तान में ही है। हिन्दुस्तान में करीब २०००००० टन के चूना निकाला जाता है जिसपर सीमेन्ट का व्यापार निर्भर है। पाकिस्तान क्षेत्र में केवल ३,६१, ४८१ टन चूना सन १९३७–३८ में निकला। खेती के लिए खाद बनाने के लिये Rock Phosphate

सिंहभूमि और नियमापल्ली में निकलता है इसलिये खाद के उद्योग की भी पाकिस्तान में गुन्जायश नहीं। पूर्वी बिलोचिस्तान में गन्धक की खानें हैं उससे Sulphate of Ammonia बनाया जा सकता है जिससे किसी हद तक खाद का काम चल सकता है किन्तु Phosphatic maunre का मुकाबला Ammonia manure नहीं कर सकता।

पाकिस्तान की योजना में पाकिस्तान व्यवसायिक नहीं माना गया है। पाकिस्तान कृषि प्रधान ही रहेगा। प्रो० कोपलैण्ड ने हिन्दुस्तान को कृषि प्रधान माना है। वे भारत के उद्योग धन्धे की उन्नति नहीं चाहते है। कारण स्पष्ट है, यदि भारत औद्योगिक उन्नति कर गया तो इंगलैण्ड की नष्ट विभूति पूर्णतया लुप्त हो जायगी। कृषि से गरीबी दूर नहीं हो सकती। खाने को अन्न मिल जायगा किन्तु अन्य आवश्यकताओं के के लिये उन्हें विदेशों पर निर्भर रहना पड़ेगा। इससे न तो आर्थिक उन्नति होगी और न रहन सहन का स्तर ही उच्च होगा। इसका प्रभाव बिना किसी जातिधर्म और भेदभाव के सब पर पड़ेगा चाहे वह हिन्दू हो अथवा मुसलमान।

बिना उद्योग धन्धों की उन्नति के पाकिस्तान निर्जीव रहेगा। औद्योगिक उन्नति के लिये लोहे और कोयले की आवश्यकता होती है उसके न होने पर पाकिस्तान को स्वनिर्भर (Self Supporting) होने का स्वप्न देखना निरा स्वप्न होगा। इसलिये पंजाब, काश्मीर, सीमाप्रान्त, बिलोचिस्तान, सिन्ध और पूर्वी बंगाल केवल कृषि प्रधान देश होगा। उसमें भी पंजाब और बंगाल को छोड़ अन्य हिस्सों में इतना अनाज नहीं पैदा होगा जिससे वहाँ के ७ करोड़ मुसलमानों को दोनों वक्त भरपेट भोजन मिल सके। सिन्ध, बिलोचिस्तान और सीमाप्रान्त की जलवायु और धरती खेती के काम की नहीं। पथरीली, बालूकामय भूमि में क्या पैदा हो सकता है विचारने की बात है ? इस भूखण्ड की कृषि उन्नति करने के लिये पाकिस्तान को इतना धन लगाना पड़ेगा जो सम्भवतः उसके खज़ाने की पहुँच के बाहर की चीज होगी।

बंटवारे से उत्पन्न कटुता के कारण पाकिस्तान बन जाने पर हिन्दुस्तान उन्नति करने में अपनी सारी शक्ति लगा देगा। पाकिस्तान में करांची और चिट्टगांव छोड़कर कोई बंदरगाह भी नहीं है। कराची का ही बंदरगाह ऐसा है जो साल भर खुला रहता है। चिट्टगाँव का बन्दरगाह वर्षा में करीब बन्द सा रहता है। दूसरी बात यह है कि पाकिस्तान की दोनों भुजायें एक दूसरे से इतनी विलग और दूर हैं कि आवश्यकता के समय एक दूसरे से किसी प्रकार की सहायता नहीं पा सकती।

युद्ध समाप्त होगया। इसका प्रभाव भारत पर पड़ रहा है। औद्योगीकरण होजाने पर हिन्दुस्तान और चीन सबसे विराट देश होंगे। जापान और जर्मनी के कलकारखाने नष्ट हो गये हैं। अफ्रिका, ईरान, ईराक, पूर्वी द्वीप समूह और प्रशान्त द्वीपों में चीन और हिन्दुस्तान के माल की सस्ता होने के कारण खपत होगी। इंगलैण्ड और अमेरिका के माल की खपत तलवार के नोक पर हो सकेगी। इसका उदाहरण देने की आवश्यकता नहीं। आज देश में कपड़े की गोदामें भारी हुई हैं किन्तु अंग्रेजी माल की खपत करने के लिये मिल के कपड़े या तो गोदामों में बन्द हैं अथवा अफ्रीका और मिश्र आदि देशों को भेजे जा रहे हैं। इससे भी भयावह परिस्थिति का पाकिस्तान को सामना करना पड़ेगा क्योंकि अंग्रेजों को भारत से चले जाने पर हिन्दुस्तान इतना शक्तिशाली राष्ट्र होगा कि संसार की कोई शक्ति उसके विरुद्ध सर उठाने की हिम्मत नहीं कर सकेगी।

हिन्दुस्तान का उद्योगीकरण होजाने पर हिन्दुस्तान दुनियाँ के तिजारत में जापान का स्थान ग्रहण करेगा। इस समय इसका पूर्ण अवसर आगया है। हिन्दुस्तान का बहुत बड़ा पावना इंगलैण्ड के सिर पर लदा हुआ है। जर्मनी और जापान का उद्योग धन्धा नष्ट होगया है। इंगलैण्ड के कलकारखाने भी लड़ाई का सामान बनाते बनाते बेकाम से हो रहे हैं। अमेरिका ने उधार पट्टे पर माल देना बन्द कर दिया है। इन कारणों से ब्रिटेन की परिस्थिति

विषम है किन्तु भारत को हिन्दू मुसलिम पचड़ों में डालकर ब्रिटेन न तो कोई राजनैतिक अधिकार देना चाहता है और न उद्योग धन्धों की उन्नति करने देना। इसी प्रकार समय पाकर वह अपनी कमर फिर सीधी कर लेगा। राजनैतिक गत्यावरोध उत्पन्न कर अपने उजड़े हुये व्यवसाय का पुर्न निर्माण करेगा। नीति शास्त्र में ब्रिटेन निपुण है। इसी निपुणता के कारण ब्रिटेन का सितारा अभी टिमटिमा रहा है। उसने चालाकी से रूस और जर्म्मनी को लड़ाकर अपनी जान बचा ली। अमेरिका से पूर्ण सहयोग प्राप्तकर उसके धन जन से युद्ध संचालित करता रहा और अन्त में विजयी होगया। किन्तु इसमें हमें निराश होने की बात नहीं। अभी रूस और चीन पर हमें भरोसा करना चाहिये यद्यपि व्यापारिक दृष्टि से रूस की चालें हम शंका की दृष्टि से देख सकते हैं।

इसलिये इस समय यह आवश्यक है कि एक बलवान और शक्तिशाली केन्द्रीय सरकार संगठित हो जिसमें जनता के सच्चे प्रतिनिधि हों। सरकार के हाँ में हाँ मिलाने वाले जनता के सच्चे प्रतिनिधि नहीं कहे जा सकते। इसके अलावा समस्त देश के लिये राष्ट्रीय औद्योगिक योजना बनाई जाय। उस योजना में किसी प्रकार की अड़चन न हो। ब्रिटेन पर भारत का जो कुछ पावना है उसे ब्रिटेन इमानदारी से हमारी आवश्यकताओं के अनुसार अदा करे। भारत को हीले हवाले में डालकर ब्रिटेन अपने पावों में कुल्हाड़ी न मारे। एक दिन वह समय आसकता है जब गोरों की शोषण नीति से ऊब कर कोई भी हिन्दुस्तानी चाहे हिन्दू हो या मुसलमान अंग्रेजों का साथ नहीं दे सकेगा। आखिर यह जादू का खेल लीग और अंग्रेज मिलकर कब तक खेलते रहेंगे। जिन्ना के बाद लीग का नेतृत्व टुकड़े टुकड़े हो जायगा। किसी भी लीगी नेता में इतनी शक्ति नहीं जो उसे पुनः संगठित कर सके। हाँ यदि आज की भाँति ही सरकार का सहारा मिलता रहा तो बात दूसरी है। किन्तु क्या इसमें मुसलमानों का सचमुच हित है यह बात स्वयं लीगी और उसके नेता इमानदारी से बतलाये? गुलाम, शुहरावर्दी, जियाउद्दीन या अलीगढ़ के

छात्रों की नीति अथवा गुण्डाशाही से मुसलमानों का उद्धार नहीं होगा और न इनके नेतृत्व में मुसलमान पाकिस्तान ही पा सकेंगे। लूटमार और खून खराबी कर भलेही मुसलमान दस बीस हजार हिन्दुओं का कत्ल कर लें पर मुसलमानों सावधान ! एक बार हिन्दू जाति के जागृत और संगठित हो जाने पर तुम्हारी गुण्डई सदा के लिये भूल जायगी ; यह न भूलो। अस्तु भले आदमी की भांति एक अच्छा पड़ोसी बनकर रहो ; इसी में तुम्हारा कल्याण है। भारत के बाहर न तुम्हें कोई पूछने वाला है और न ठिकाना ही देनेवाला।

अध्याय १४

मुद्रा विनियम

पाकिस्तान में अर्थनीति का आरम्भ से सतर्क होकर संचालन करने की आवश्यकता होगी। मुद्रा और विनियम की नीति निर्धारण केन्द्रीय व्यवस्था द्वारा होने पर हिन्दुस्तान और पाकिस्तान में व्यापार में सुगमता होगी। केन्द्रीय व्यवस्था द्वारा देश भर के लिये एक प्रकार की नीति होने से व्यापार उन्नति करेगा और विदेश विनिमय भी हमारे अनुकूल होगा। ऐसा न होने पर अनेक प्रकार की अनियमित मुद्रा प्रचलित होगी। अनियमित और अनेक मुद्राओं के प्रचलन से बहुत सी अड़चनें उत्पन्न होती हैं। इसका उदाहरण योरोप की अनेक मुद्रायें हैं जिससे विनियम में कितनी बार ऐसी उलझनें पड़ जाती है कि व्यापार प्राय: रुकजाता है। एक प्रकार की समान मुद्रा नीति ही भारत जैसे पीछड़े हुए और कृषि प्रधान देश को लिये उपयुक्त है। समान मुद्रा नीति, कृषि, वाणिज्य व्यवसाय, बैंकिंग, यातायात की उन्नति के लिये आवश्यक है। संयुक्त राष्ट्र होने पर यदि केन्द्र शक्तिशाली न हुआ तो प्रान्तों और भिन्न-भिन्न रियासतों के वाणिज्य व्यवसाय पर इसका प्रभाव विनाश कारी होगा। अनेक प्रान्तों का जिस शासन विधान में सन्धि और समझौते द्वारा सम्बन्ध

स्थापित हो उस देश में केन्द्र द्वारा ही मुद्रा नीति का संचालन होना हितकर है। रूस और स्वीजरलैण्ड में ऐसी ही व्यवस्था है।

एक दूसरे देश से व्यापार सम्बन्ध होने तथा एक प्रकार की मुद्रानीति स्थापित होने पर भारतीय और विदेशी मुद्राओं के विनिमय की दर कायम करना जरूरी होगा। अब प्रायः सभी देश स्वर्णमुद्रा छोड़ चुके हैं इसलिये यह कठिनाई और भी विशेष है। एक देश का दूसरे से मुद्रा विनियम स्थापित करने की इस समय सबसे अधिक आवश्यकता है क्योंकि युद्ध के कारण उन देशों को जिसे हम माल देते अथवा लेते थे उथल पुथल मच रही है। इस समय यदि भारत और अन्य देशों से मुद्राविनियम न तय हो सके तो इसका परिणाम यह होगा कि या तो विदेशी माल से हमारे बाजार भर उठेंगे अथवा आन्तरिक आयनिर्यात कर का द्वन्द्व आरम्भ हो जायगा। यह युद्ध प्रान्तों और रियासतों में भी चल सकता है।

राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण से इसलिये मुद्रा और विनियम अखिल-भारतीय विषय होना चाहिये। भाग्यवश इसमें सम्प्रदायिकताका कोई प्रश्न नहीं उठता जिससे किसी सम्प्रदायिक समुदाय की भावना को ठेस लगती हो। हाँ एक बात अवश्य है, यदि पाकिस्तान को अलग होने का अधिकार मिल जाय तो सम्भव है वह इस नीति में कोई अड़ंगा खड़ा करे। लीग के 'दो राष्ट्र वादी' यदि इस तरह की कोई बात सोचें तो इसमें आश्चर्य नहीं। आत्म निर्णय के बाल की खाल इस हद तक खींची जाय यह भी हो सकता है क्योंकि लीग के गर्जन में औचित्य से अधिक हठवादिता पाई जाती है।

युद्ध समाप्त हो जाने पर ऐसे अनेक प्रश्न उपस्थित होगये हैं जिस पर राष्ट्र के जीवन मरण का प्रश्न है। पिछले युद्ध और इस युद्ध की समस्याओं में बड़ा अन्तर है। पिछले युद्ध की तुलना से इस युद्ध में कितना धन जन संहार हुआ विचारणीय है, इसलिये इस युद्ध की समस्यायें उससे भिन्न हैं। इसकी गुत्थी सुलझाने के लिये नवीन दृष्टिकोण से विचार करना

होगा। वर्त्तमान युद्ध इंगलैण्ड जापान और जर्मनी के सभी उद्योग धन्धे नष्ट कर चुका हैं। बाजार में रूस नया सौदागर बनकर उतरा है। अमेरिका भी इस समय अपने कौशल से प्रत्येक देश में अपना माल खपाना चाहता है। ऐसी परिस्थिति में पड़कर भारत का आर्थिक प्रश्न अत्यन्त जटिल हो उठा है। भारत के साथ पाकिस्तान का भी आर्थिक प्रश्न जुड़ा हुआ है। भारत से पृथक पाकिस्तान की आर्थिक समस्या का कोई हल नहीं। अफगानिस्तान और ईरान से सम्बन्ध कर अथवा अरब का भाई चारा बनकर पाकिस्तान कोई लाभ नहीं उठा सकेगा। अस्तु लीगी अशिक्षित और गरीब मुसलमान भाइयों को पाकिस्तान के नाम पर चाहे जैसा सब्ज बाग दिखलायें इससे न तो मुसलमानों की आर्थिक दशा का सुधार होगा और न उनका राजनैतिक बलही बढ़ेगा।

विदेशों से व्यापार सम्बन्ध स्थापित होने पर विनियम की नीति स्थिर करना आवश्यक है, साथ ही साथ कर-नीति (Tariff policy) का भी निर्णय होना चाहिये। बिना इन दो प्रश्नों के हल हुए व्यापार की उन्नति नहीं हो सकती। यदि इसमें पूर्ण सतर्कता और राष्ट्रीय दृष्टिकोण से काम न लिया जाय तो देश का सम्पूर्ण वाणिज्य व्यवसाय नष्ट हो जायगा। इसी प्रकार की नीति द्वारा अंग्रेजी सरकार भारत का शोषण कर रही है। तरह तरह के (Imperial preferences और Restrictions) लगाकर देश के उद्योग धन्धे की उन्नति में बाधा डाली जा रही है। आर्थिक नीति के अन्तरगत fiscal policy और Tariff policy निश्चित होनी चाहिये। पाकिस्तान के नम्बर एक और दो (अर्थात पंजाब और बंगाल) की अलग अलग नीति होगी या एकही नीति दोनों पर लागू होगी विचारणीय है। यह बात लीग के नेताओं को स्पष्ट कर देना चाहिये।

अर्थनीति के अन्तर्गत यातायात, सिंचाई और खेती-बारी भी आती है। पंजाब और बंगाल के बीच यातायात सम्बन्ध स्थापित करने के लिये हिन्दुस्तान से पूरा सहयोग होना चाहिये अन्यथा कभी भी एक दूसरे से अलग कर दिये जा सकते हैं। इस प्रकार का सम्बन्ध बिच्छेद होने पर कौन कह सकता है कि

बंगाल की दशा पोलैण्ड की न होगी पंजाब के लिये तो और भी बड़ा खतरा है। आपसी झगड़े से फायदा उठाने के लिये किसी समय रूस और ईरान का अफगानिस्तान पर हमला हो सकता है। हिन्दुस्तान से मनमुटाव होने के कारण ऐसे अवसर पर सहायता की आशा नहीं की जा सकेगी।

खेतीबारी की दृष्टि से भी बंगाल के जिन जिलों में बंगाली पाकिस्तान बनेगा चावल, ताड़ और जूट की विशेष उपज नहीं होती। हिन्दू प्रधान जिले इसकी अपेक्षा अत्यन्त उपजाऊ और समृद्ध है। उनमें चावल, ईख, नारियल, अनेक फल, कपास, पाट हैशियन की उपज होती है। पश्चिमी पाकिस्तान की सीमा इस प्रकार है—पश्चिम में अफगानिस्तान, बलूचिस्तान की पहाड़ियां और रेगिस्तान। उत्तर में काश्मीर की पहाड़ी घाटी। दक्षिण में राजपूताना का थार रेगिस्तान और पूरब में उपजाऊ हिन्दू-सिख प्रधान जिले।

भौगोलिक दृष्टि से भारत का पश्चिमी हिस्सा करीब-करीब उजाड़ खण्ड-सा है। उसमें राजपूताना का थार रेगिस्तान और सिन्ध की रेतीली धरती और पथरीला बिलोचिस्तानी पठार है। इसका क्षेत्रफल ३०,२५६ वर्गमील है। आबादी १९६४७००० । यह भारत की सीमा का १५ प्रतिशत क्षेत्रफल है, किन्तु आबादी के लिहाज से केवल ५ प्रतिशत है। इस भू-भाग पर वर्षा कभी-कभी होती है और कभी ऐसे साल भी गुजर जाते हैं जब एक बूँद भी मेह नहीं गिरता। पेड़ पत्तियों के नाते कटीली झाड़ियाँ हैं। लोगों का मुख्य उद्योग भेड़-बकरी चराना है। कुछ हिस्सों में जहाँ नहरों से सिंचाई होती है थोड़ी खेती-बारी हो जाती है। आबादी इतनी छिट-फुट है कि बिलोस्तान में ९ प्रति मील रेगिस्तानी हिस्से में और सिंचाई वाले हिस्से में ८७ प्रति वर्गमील आबादी है। यदि सिन्ध नदी न होती और लायड डाम बन जाने के कारण नहरें न निकल आई होती तो सिन्ध रेगिस्तान ही होता। ४-९ लाख एकड़ भूमि में खेती होती है जिसमें ४-६ लाख एकड़ पर नहरों की सिंचाई होती है। काम करने लायक आदमियों में ६५ प्रतिशत खेती-बारी में लगे हैं

१० प्रतिशत कल-कारखानों में। करांची द्वारा इस खण्ड का व्यवसाव बाहरी दुनिया से होता है (आबादी ३,००,०००)।

बिलोचिस्तान में उबड़ खाबड़ पहाड़ियाँ हैं जहाँ एक पेड़ पौधे नाम नहीं। यह समुद्र की सतह से १००० से ३००० फीट ऊँचाई पर है। साल भर में १० इञ्च से अधिक कहीं वर्षा नहीं होती जलवायु खुष्क और शीतल है। बाशिन्दे अफगान, बलूची और बरूही है। इस भौगोलिक वर्णन से स्पष्ट हो जायगा कि इनकी वास्तविक स्थिति क्या है।

बंगाल के तेरह जिलों की भौगोलिक स्थिति इस प्रकार है। पूर्वी बंगाल में वर्षा १०० इञ्च होती है। फसल के नाते चावल, पाट और हैशियन की खेती होती है। ईख, तम्बाकू और तेलहन की भी खेती हो जाती है किन्तु चिट्ट गाँव की पहाड़ियों में कुछ विशेष उपज नहीं होती वर्षा १०० इञ्च के लगभग हो जाती है। लोगों की जीविका प्रायः मछली का व्यवसाय है। नारियल, ताड़, सोपाड़ी बहुतायत होती है।

अध्याय १५

वाणिज्य व्यवसाय

प्रत्येक प्रान्तों की राजनैतिक सीमा चाहे जो हो यह सम्भव नहीं यदि उनमें कटुता और तनातनी न हो तो उनमें व्यवसाय खूब बढ़ेगा। रह गया इन दोनों प्रदेशों की आर्थिक दशा और उनके औद्योगिक योजना का विस्तार। जैसा पहले कहा जा चुका है यदि साम्प्रदायिक कटुता का विष जड़ से ही न काट दिया जाय तो वाणिज्य और व्यवसाय की दृष्टि से दोनों पाकिस्तानों की दशा दयनीय होगी। इनके खनिजों के सम्बन्ध में पहले ही कहा जा चुका है। किसी देश की औद्योगिक उन्नति के लिये लोहा और कोयला प्रधान है यद्यपि आजकल कोयले का स्थान तेजी से जल-विद्युत-शक्ति ले रही है। पंजाब नदियों का देश है। वहाँ इस समय हाइड्रो एलेकट्रीक योजनायें चल रही हैं। मण्डी और योगेन्द्रनगर में इस समय बिजली के बड़े कारखाने हैं; और बहुत से कारखानों की युद्धोत्तर योजना में स्कीमें हैं पर टी. बी. ए. और अन्य अमेरिकन बिजली घरों की भाँति नहीं। दूसरी बात ध्यान देने यह योग्य है कि यह नदियाँ पंजाब की हिन्दू रियासतों में पड़ेगी। वैमनस्य रहने के कारण सम्भव है बिजली

घरों के बनने में अड़चन हो और इस प्रकार योजनायें भी खटाई में पड़ सकती है। इसके खटाई में पड़ जाने से औद्योगिक उन्नति में भारी बाधा आ पड़ेगी।

दूसरा पहलू यह है कि इस प्रकार दोनों रियासतों में खूब व्यापार बढ़े उस समय व्यापारिक समझौते, और धोखेबाजी रोकने के लिये अत्यन्त कठोरता से नियम का पालन करना होगा। इसमें उद्योग की पूर्ण प्रगति होने पर और दृढ़ता दिखानी होगी क्योंकि ऐसा न होने से दोनों में मुक्त व्यवसाय नहीं होगा। संरक्षण की ऊँची ऊँची दिवारें खड़ी हो जायँगी और देश की स्थिति नाजुक हो जायगी क्योंकि ऐसी परिस्थित में योरुप और अमेरिका का माल खूब तेजी से खपने लगेगा। उनका खुलकर मुकाबला करना हमारे वाणिज्य व्यवसाय के लिये अत्यन्त घातक सिद्ध होगा। याद रखना चाहिये कि संरक्षण के कारण ही अनेक बार देशों की अन्तराष्ट्रीय सम्बन्ध में गलतफहमी, द्वेष और युद्ध तक हो गया है। स्वतन्त्र देशों के लिये संरक्षण एक बड़ा भारी प्रलोभन हो रहा है क्योंकि इससे वे बदला लेने और दमन करने का अच्छा शस्त्र समझते हैं। क्षोभ और क्रोध में आकर कोई भी स्वाधीन उद्योगोन्नतिशील राष्ट्र समझौता तोड़कर व्यवसायिक युद्ध आरम्भ कर सकता है जिसका भारत ऐसे पिछड़े देश के लिये अत्यन्त घातक परिणाम होगा।

ऐसी दशा में देश का अन्य देशों से व्यापारिक सम्बन्ध का मसला अत्यन्त महत्वपूर्ण होगा। पश्चिमी पाकिस्तान में केवल एक ही बन्दरगाह करांची होगा जो बम्बई की भाँति उन्नतिशील और समृद्धशाली नहीं हो सकेगा। उसे बम्बई के दर्जे तक पहुँचने में काफी वक्त लगेगा। इस दशा में दोनों अपनी टेरिफ की दिवालें ऊँची उठाते उठाते इस ऊँचाई को पहुँच सकते हैं जब कि एक दूसरे का सम्बन्ध युद्ध का उग्र रूप ग्रहण कर ले और व्यापार पूर्णतया असम्भव हो जायगा ऐसी दशा में यह आवश्यक प्रतीत होता है कि एक ऐसी समान शक्ति हो जो दोनों के स्वार्थों को दृष्टि में रखते हुये संरक्षण की नीति निर्धारित करे।

तीसरे यह कि पश्चिमोत्तरी पाकिस्तान का व्यवसायिक जीवन बिहार के खानों पर ही निर्भर रहेगा जिसका ऊपर संकेत किया जा चुका है। कोयला, लोहा, मेगनीज, अवरक और अन्य खनिज पदार्थों की उपज पश्चिमोत्तरी पाकिस्तान में होती ही नहीं जो आधुनिक यान्त्रिक व्यवसाय की उन्नति के लिये आवश्यक एवम् अत्यन्त महत्वपूर्ण है। किसी प्रकार के मतभेद होने में जो अंग्रेजों और जिनासाहब ऐसे नेताओं की उपस्थिति में अनिवार्य है संरक्षण के कारण भारी संकट उत्पन्न होगा। इस प्रकार कल्पित पाकिस्तान का औद्योगिक चित्र अत्यन्त उदासीन और धुँधला है। हिन्दुस्तान में सभी वस्तुओं की प्रचुरता है। उसकी औद्योगिक उन्नति के लिये कोई ऐसी चीज हिन्दुस्तान में न हो और उसकी उन्नति में किसी प्रकार की रुकावट या बाधा पड़े। इस प्रकार भारत कल कारखानों की दृष्टि से अत्यन्त उन्नत और महत्वपूर्ण होगा। संरक्षण की ऊँची दिवारें अगर पाकिस्तानवाले अमल में लाने की कल्पना कर उसे कार्य रूप में परिणित करने की धृष्टता दिखावें तो हिन्दुस्तान इस हमले से साफ साफ बचा रहेगा। मुक्त भारत में कलकत्ता, विशाखपट्टन, मद्रास और बम्बई के अतिरिक्त काठियावाड़ के बन्दरगाह भी होंगे जिनसे अनेक प्रकार की सुविधायें मिलती रहेंगी और इतने माल का आयात निर्यात होगा कि उससे हिन्दुस्तान की आर्थिक समृद्धि निरन्तर बढ़ती रहेगी। यह सब अड़चनें इसीलिये सामने आती हैं कि आर्थिक और भौगोलिक दृष्टि से भारत एक है। अतः उसके काटबाँट करने में अड़चनों का आना स्वाभाविक है। इस प्रकार की योजना का अर्थ यही होगा कि शरीर का हाथ पाँव काटकर उसे पंगु बन जाने पर उसका फायदा उसे बनानेवाला उठा सकेगा न कि और कोई। पर पाकिस्तान के दृष्टिकोण से इसका फायदा हिन्दू मुसलमान दो में से कोई न उठा सकेंगे। इसका परिणाम यह होगा कि मुसलमान न तो स्वतन्त्रता प्राप्त कर सकेंगे और न भारत विभाजन कराने में ही कामयाब होंगे। हिन्दू मुसलिम वैमनस्य का वृक्ष हराभरा होता रहेगा। इसका वास्तविक लाभ अंग्रेज सरकार उठायेगी जो इसी बहाने भारत पर अपना शिकञ्जा कसकर

बैठेगी। अस्तु मुसलमान स्वयम्, विचार कर बतावे कि पाकिस्तान ऐसी भ्रष्ट योजना की माँग कर वे अपनी दशा किस प्रकार सुधार सकेंगे।

इस प्रकार का चिर वैषम्य होने के कारण यदि मुसलमान यह सोचें कि अंग्रेज उनकी सहायता करेंगे, तो यह उनका भ्रम है। अंग्रेजों का स्वार्थ इसी में है कि हिन्दू और मुसलमानों की प्रगति शीलता में बाधा डाली जाय। प्रगति होने पर धार्मिक भावनाओं की कट्टरता उदारता के स्रोत में परिणत हो जाया करती है और वही मजहबी कट्टरता जो एक दूसरे के खून का प्यासा बनाये रहती हैं दोनों को अभिन्न मित्र बना देती हैं। भारत के मुसलमान तुर्की, मिश्र और फारस से इतनी हमदर्दी और सांस्कृतिक-धार्मिक एकता का अनुभव करते है सबक़ क्यों नहीं लेते? गत युद्ध के थपेड़ों में टर्की कभी रसातल के गर्भ में पहुँच चुका होता और किसी बड़ी ताकत का आज्ञाकारी सामन्त बनकर रहता, यदि वह महापुरुष जिसे संसार आज कमालअतातुर्क के नाम से स्मरण करता है अपने सुधारों को कानूनी बल से अमल में न लाता। यूरोप का विमार तुर्की आज कब्र में होता। उसने धार्मिक फिरकों को देशोन्नति और सुधार में बाधक समझ उनका सफाया कर दिया, औरतों के बुरके लुचवा डाले और अनिवार्य्य शिक्षा का प्रबन्ध कर दिया। उसी का यह परिणाम हुआ कि टर्की आज योरुप से कन्धा मिलाकर आजाद भाई की भाँति खड़ा है यद्यपि हिन्दुस्तान के पैमाने पर यह छोटा सा देशहै। तुर्की आज हमसे उन्नतशील और समृद्ध है। योरूपीय नीति विशारदों की चालें टर्की में न चल सकीं। अब अरब लोग भी अरब राजनीति में अत्यन्त महत्वपूर्ण भाग ले रही है। जो कुछ फिलस्तीन में हो रहा है वह बातें क्या मुसलिम नेता प्रस्ताव पास कर और हमदर्दी के तार भेजने के बाद बिल्कुल भूल जाते हैं? मुसलमानों का हित अन्तराष्ट्रीय घटनाओं से जुदा होकर चलने में नहीं। हमें भय है इस प्रकार चलकर लीगी नेता अपना समूचा अस्तित्व खतरे में डाल दें और मुसलिम जाति वैसी ही गरीब और अशिक्षित बनी रहे और सम्भवतः पाकिस्तान का स्वप्न कभी फलीभूत न हो सके।

अध्याय १६

क्रिप्स योजना के पश्चात

ब्रिटेन की संकट के घड़ी में सर स्टैफर्ड क्रिप्स भारत में चर्चिल मन्त्रिमंडल की एक योजना लेकर आये। समाजवादी क्रिप्स को रूस में सफलता मिल चुकी थी, अस्तु उन्हें विश्वास था कि भारत में भी उन्हें सफलता मिलेगी। इसमें उनका व्यक्तिगत स्वार्थ यह था कि इस कामयाबी के पश्चात् वे प्रधान मन्त्री होने का स्वप्न देख रहे थे। उनका अभिप्राय किसी न किसी रूप से कांग्रेस को युद्धोद्योग में सहायता के लिये तत्पर कर युद्ध काल के लिये प्रत्येक दलों के सहयोग से एक आरसी सरकार बनाना था। अंग्रेजों की मिथ्या मौखिक प्रतिज्ञाओं से कांग्रेस इतनी सावधान हो गई है कि उसे ठगना असम्भव था। क्रिप्स को पं० जवाहरलाल के व्यक्तिगत सम्पर्क का भी भरोसा था, किन्तु वह भी जैसा का तैसा ही रहा।

अपनी वार्ता के आरम्भ क्रिप्स साहब ने ऐसा सौजन्य और शिष्टता दिखाई कि जान पड़ने लगा सचमुच ब्रिटेन अपने जर्जरित साम्राज्य की रक्षा के लिये कुछ करने जा रहाहै, किन्तु बात-चीत और वाद-विवाद में प्रकट हुआ कि यह व्याघ्र किंकण मात्र है। जो इसके निकट गया वह उसका ग्रास हुआ।

भारत पहले से ब्रिटेन का ग्रास बन चुका है फिर भी उसका सहयोग केवल आंशिक रूप से प्राप्त है क्योंकि उसके साथ वही लोग हैं जिनका स्वार्थ उससे जुड़ा है अथवा वे इतने पतित हैं कि उन्हें अपने मातृभूमि का अभिमान नहीं। ऐसे लोगों में लीग और उसके अनुयायी तो हैं ही, साथ ही साथ राजा नवाब, ताल्लुकेदार, उपाधिधारी और सरकारी अफसरों की महती सेना भी है जिन की दृष्टि में ब्रिटेन-भक्ति ही उनका जन्मसिद्ध अधिकार है।

क्रिप्स योजना पर विस्तार भय के कारण हम विशेष प्रकाश नहीं डाल सकते। इतने से ही बोध कर लेना चाहिये कि तीन सप्ताह की बात-चीत में वे कांग्रेस, हिन्दू सभा, सिख, अछूत अथवा लीग को अपने प्रस्तावों को स्वीकार करने के लिये राजी न कर सके। अस्तु, वे निराश होकर चले गये। किन्तु अपनी योजना में निहित साम्प्रदायिक विष जिसका श्रीगणेश मिन्टो मार्ले सुधार में दिये गये साम्प्रदायिक निर्वाचन से आरम्भ हुआ था उग्रतर बना गये। लीग ने लाहौर में प्रस्ताव पास कर मुसलमानों के लिये अलग रियासत बनाने की घोषणा कर दी थी। उसे इनकी योजना में अगस्त सन् १९४० के लिनलिथगो घोषणा की पुष्टि मिली, जिसमें यह स्वीकार किया गया था कि 'लीग का भारतीय राष्ट्रीय जीवन में महत्व पूर्ण स्थान है*। क्रिप्स अपनी योजना में इससे एक कदम आगे बढ़ गये और भारत की एकता विच्छिन्न करने की माँग सिद्धान्ततः स्वीकार कर ली। प्रस्तावित योजना का क्लाज ९ (सी) स्पष्ट संकेत देता है:—

"कि सम्राट की सरकार ऐसे शासन व्यवस्था को स्वीकार करने का विश्वास दिलाती है, बशर्ते कि:—(१) (सी). ब्रिटिश भारत के किसी भी प्रान्त को शासन-विधान स्वीकार करने को बाध्य न करेगी। यदि वह वर्तमान व्यवस्था जारी रखना चाहता है और यह भी व्यवस्था रहेगी कि बाद में यदि वह चाहे तो नई व्यवस्था में पुनः प्रविष्ट हो जाय। उन प्रान्तों को लेकर जो

---

* Large and powreful element in India's national life.

प्रविष्ट नहीं हो रहे हैं, यदि वे चाहें तो सम्राट की सरकार उन्हें ऐसा नवीन विधान देने को तैयार हो जायगी जो उन्हें उतना और वैसा ही अधिकार देगी जो भारतीय संघ को होगा जो अनुरूप विधान द्वारा प्रस्तुत होगा।"

इस प्रकार का स्पष्ट संकेत देना ही प्रकट करता है कि चर्चिल की सरकार का विचार भारतीय राष्ट्रीयता को बलवान बनाना या उसका विघटन करना था। भारत एक महाद्वीप है उसकी एकता विच्छिन्न करना तथा उसकी स्वाधीनता की माँग को एक दल के नेता की स्वेच्छा पर छोड़ देना घोर अन्याय है। और तो और जिन्ना के इशारे पर देश को नचाने का अभिप्राय उसे पराधीनता और दैन्य की चिर-निधि में डुबा देना है। इस सम्बन्ध में सर तेजबहादुर सप्रू की स्पष्टोक्ति विचारणीय है। उनका कहना है कि "ब्रिटिश सरकार का पाकिस्तान की माग स्वीकार करने का अर्थ भारत के साथ अत्यन्त नीच आत्मघात करना होगा† ।"

क्रिप्स योजना की आपत्तिजनक रेखा का अन्त पृथकत्व को प्रोत्साहित कर नहीं हुआ। वह भारत के देशी रियासतों का दरजा भी ज्यों का त्यों बनाये रखना चाहती थी, जिसके शासन में देश का तृतीयांश भूखण्ड है। इन नौ करोड़ मनुष्यों का क्रिप्स चित्र में कहीं स्थान ही न था। भारतीय कांग्रेस के अप्रैल सन् १९४२ के प्रस्ताव में इसका स्पष्टीकरण हो जाता है। यदि योजना स्वीकार कर ली गई तो देशी रियासतें भारतीय स्वाधीनता के मार्ग में बाधक होंगी। जहाँ विदेशी शक्ति जैसी की तैसी बनी रहेगी और आवश्यकता होने पर विदेशी सेना भी रखी जायगी जो देशी प्रजा के लिये अनिष्टकारी तो होंगी ही भारतीय स्वतन्त्रता में भी घातक होंगी। इस प्रकार की दूषित योजना को यदि कांग्रेस और भारत के अन्य दलों ने अस्वीकार कर दिया तो क्रिप्स के साथ कौन-सा अन्याय हुआ, किन्तु सहस्र जिह्वाओं

† If would be an act of blackest treachery if the British Govrnment sought to implement the demand of Pakistan; Statement of Sir Tej Bahadur Sapru.

से क्रिप्स और चर्चिल की सरकार ने कांग्रेस को बदनाम करने का यत्न किया। इस पर भी जो लोग कांग्रेस पर दोषारोपण करना चाहते हैं उन्हें कलकत्ते के अर्ध गोरेपत्र स्टेट्समैन की सम्मतिसे लाभ उठाना चाहिये। उसका कहना है कि:-

"जबतक इण्डिया आफिस और भारत सरकार किसी योजना का मसविदा तैयार करेगी, कोई भी दूत चाहे वह कितना ही योग्य और प्रभावशाली क्यों न हो सफल नहीं हो सकता और न देश के प्रत्येक क्षण आनेवाले खतरे से बचाव का ही कोई सफल उपाय हो सकता है। आवश्यकता यह है कि व्यक्तिगत मुखापेक्षण की नीति त्याग दी जाय। इसकी आवश्यकता नहीं कि अतीत में अधिकारोपभोग करनेवाले लोगों की बाट देखी जाय। उन्होंने अपनी नीति का यथासाध्य पालन किया; किन्तु उनका प्रकाश क्षीण हो रहा है। सर स्टैफर्ड क्रिप्स चले गये, किन्तु योजना अपना काम कर जायगी।"

"यदि अन्त तक झगड़ने वाले राजनीतिज्ञों का उद्देश्य यही है कि वे परास्त होकर लौटें तो वह फलीभूत न होगा। होनेवाली घटनायें ही प्रतिक्रियावादियों का रहस्य प्रकट कर देंगी‡।"

अस्तु, इतने बड़े नामवाला क्रिप्स प्रस्ताव भी भारत के लिये निराशा का कारण हुआ। आमतौर पर देश को चाहे जो क्षोभ और पश्चात्ताप हो, किन्तु लीग को निराशा होने का कोई कारण नहीं हुआ क्योंकि एमरी का यह कथन कि भारत को तबतक किसी प्रकार की स्वाधीनता प्राप्त न होगी जबतक देश दो या दो से अधिक संघों में न बँट जाय पुनः सत्य हुआ।

क्रिप्स के खाली हाथ लौट जाने पर भी भारतीय गत्यावरोध दूर करने का यत्न होता रहा, किन्तु सफलता से दूर। इन्हीं यत्नों में भारतीय कांग्रेस का वह ऐतिहासिक अधिवेशन भी है जो बम्बई में ८ अगस्त (सन् १९४२) को स्वीकृत हुआ। इसके पूर्व कि कांग्रेस राष्ट्रीय माँगको कार्यान्वित करने का कदम उठाती देश भर के कांग्रेसजन जेलों में ठूँस दिये गये। उसके बाद देश

‡ 'Statesman" April 1942.

में क्या होनेवाला था, इसका स्पष्टीकरण कांग्रेस सूत्र से नहीं बल्कि भारत-मन्त्री एमरी के ब्राडकास्ट द्वारा प्रकट हुआ जो १०, ११ अगस्त को कामन्स सभा में दिये हुए वक्तव्य का सारांश था। कांग्रेस को बदनाम करने और असल में अमेरिका की दृष्टि में भारत को द्रोही व्यक्त करने के विचार से यह स्वांग रचा गया था। यद्यपि अमेरिकन धारणा का सूत्र कर्नल जानसन के उद्योग से प्रकट हो चुका था।

नेताओं और कांग्रेसजनों के जेलों में बन्द हो जाने पर लीग को पाकिस्तान का ज़िहाद करने के लिये मुक्त क्षेत्र मिल गया। मियाँ जिन्ना इससे इतने आशान्वित हुए कि दिल्ली के १५ दिसम्बर १९४२ के भाषण में कह डाला कि:—

"हम अपने ध्येय की प्राप्ति जैसा सोचते थे उससे पहले प्राप्त होगी, हमें इससे बढ़कर और अधिक प्रसन्नता न होगी कि अपने जीवन-काल में ही हमें पाकिस्तान प्राप्त हो जायगा।"

मियाँ जिन्ना हर बात में भारत गौरव बापू से अपना सादृश्य स्थापित करना चाहते हैं और यह भी विधि की विचित्रता है कि दोनों अपने जीवन-काल में देशको मुक्त देखने का विश्वास करते हैं। इतने पर भी मियाँ जिन्ना की ईर्षा का अन्त नहीं। उन्होंने किस प्रकार मिथ्याभिमान, अहंकार और हठ अपना लिया है कि उसे देख काइदे आजम शब्द भी कदाचित उनसे अपने सम्बन्ध को देख लज्जित होता होगा।

अगस्त सन् १९४२ के 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव पास हो जाने पर देश भर में क्रान्ति की लहर दौड़ गई। कांग्रेसजन जेलों में ठूँस दिये गये। असन्तुष्ट और क्षुब्ध जनता तरह-तरह के काले कानूनों से पिस रही थी। वह एक बार पुनः अंग्रेजी शासन का अन्त करने के लिये कटिबद्ध हो गई। सरकार ने जिस क्रूरता और हृदय-हीनता का परिचय दिया उसका परिणाम यह हुआ कि देश भर जालियाँवाला बाग और बलिया बन गया। अनेक हिन्दुस्तानी और अंग्रेज अफसर डायर और नीदरसोल के रूप में अत्याचार करने के लिये

प्रकट हुये। गैर कांग्रेसी नेताओं की सतत पुकार और उद्योग करने पर भी सरकार के कानों जूँ न रेंगी और नाजी तथा फासिस्टी जापान को लज्जित करनेवाले बर्बर उपायों का नौकरशाही तत्परता से प्रयोग करने लगी। कितने हिन्दुस्तानी हाकिमों ने दमन करने में गोरों से होड़ लगा दी। उनके पाशविक कृत्य प्रकट करते थे कि काली चमड़ी में गोरा खून बह रहा है। इन हिन्दुस्तानियों को अपने ही भाई बहनों का खून बहाने में लज्जा न आई। इन देश द्रोहियों ने प्रकट कर दिया कि एक बार इनका कलंक भी धोना पड़ेगा।

महात्मा गान्धी को सरकार के इस रवैयेपर अत्यन्त क्षोभ हुआ। निर्वासन काल में गान्धीजी आगाखाँ महल (पूना) से सरकार से पत्र व्यवहार द्वारा वस्तु स्थिति स्पष्टीकरण का यत्न करते रहे किन्तु सरकार किसी प्रकार के समझौते पर सहमत न हुई। लाचार होकर महात्माजी ने २१ दिन का अनशन करने की घोषण १० फरवरी सन् १९४३ को कर दी। उनकी अवस्था और कोमल स्वास्थ्य की दृष्टि से इस प्रकार का उपवास भयावह परिस्थिति उत्पन्न करता था। इन्हें मुक्त करने के लिये देशविदेश में आवाज उठाई गई। किन्तु पाषाणवत निर्जीव सरकार न पिघली।

उपवास के नव दिन बीतते बीतते देश में हाहाकार मच गया। दिल्ली में सरकार से महात्मा गान्धी को कोई अशुभ परिणाम होने के पूर्व मुक्त करने के लिये सर्वदल सम्मेलन आरम्भ हुआ। प्रत्येक विचार वर्ण जाति और सम्प्रदाय के नेता सम्मेलन में भाग लेने के लिये एकत्र हुये किन्तु मियाँ जिन्ना ने भाग लेना अस्वीकार कर दिया। निमन्त्रण के उत्तर में आपने कहा:—

"मिस्टर गान्धी के उपवास की चिन्ता हिन्दू नेताओं की व्यथा है। यह उनका कर्त्तव्य है कि विचार करके उन्हें सलाह दें" *

मियाँ जिन्ना एक भिन्न कल्पित राष्ट्र का नागरिक होने के नाते यह कहने

---

* The Sititution arising out of Mr. Gandhi's fast is really a matter for Hindu Leaders to consider and advise him accordingly.

की शिष्टता नहीं दिखा सके कि देश की अपील में सम्मिलित होकर महात्माजी के जीवन रक्षा के प्रयास में सभ्य संसार के सम्मुख सहयोग करते। उनके सम्मिलित न होने पर भी सम्मेलन के सर्वदलीय प्रतिनिधित्व में किसी प्रकार का अन्तर न हुआ। सर तेज ने गान्धीजी की मुक्ति के लिये मर्मस्पर्शी प्रार्थना की। सम्मेलन में भाषण करते हुए आपने कहा कि:—

"इस अवसर पर हम बृटेन के विचारशील और संयुक्त राष्ट्र के सूत्रधारों से अभ्यर्थना करते हैं कि यदि यही विचार हो कि यह देश निर्माण कार्य्य करे तो यह नितान्त आवश्यक है कि महात्मा गान्धी तत्काल मुक्त कर दिये जाय"

सर्वदल सम्मेलन की पुकार गोरों की नौकरशाही और ब्रिटेन की सभ्य चेतना का जागरण न कर सकी जो महात्माजी की रिहा कर सकते थे। महात्माजी बन्दी की दशा में अपनी २१ दिन की कठोर तपस्या में सफल हुये। इस प्रकार सम्मेलन में भाग न लेकर मियाँ जिन्ना ने अपनी स्वार्थ परता का परिचय तो दिया ही साथ ही साथ सरकार और गान्धीजी को बदनाम करने के लिये एक नई चाल चली। आपने २४ अप्रैल १९४३ को एक वक्तव्य दिया कि यदि महात्मा उनसे समझौता करने लिये पत्र व्यवहार करें तो सरकार उस पत्र को रोकने का साहस नहीं कर सकती✻ अस्तु मई ४३ में गान्धीजी ने जिन्ना से सम्पर्क करने की चेष्टा की किन्तु सरकार ने पत्र रोक दिया। इस स्थितिमें पड़ कर जिन्ना ने जिस मनोवृत्ति का परिचय दिया और जो वक्तव्य प्रकाशित कराया उसे पढ़कर सभ्य संसार स्तब्ध रह गया।

"मिस्टर गान्धीका यह पत्र केवल इसी अभिप्राय से लिख गया है कि वह मुसलिम लीग को उत्तेजित करें कि सरकार से उनकी रिहाई के लिये वह झगड़े ताकी रिहा होकर जो चाहें करने के लिये वह पुनः मुक्त हो जाय।"

हमें यह देखकर आश्चर्य्य होता है कि बापू का हृदय कितना विशाल और ईर्षा द्वेष मुक्त है कि इस तरह की भावना प्रकट करने वाले दम्भी से भी वे

---

† The Government dared not stop the letter.

बारबार समझौता करने की चेष्टा करते हैं। जून १९४३ में चर्चिल की सरकार को जाने क्या सद्‌बुद्धि उत्पन्न हुई की जर्मन-जापान आत्मसमर्पण के पूर्व ही उसने गान्धीजी को मुक्त कर दिया। सरकारी नीति कि अमेरिका में भी कठोर आलोचना हो रही थी। वेन्डेलविल्की और पर्लबक तथा लिन-यूटांग भारत के प्रति किये गये अत्याचरों के विरोध में आन्दोलन कर रहे थे। राष्ट्रपति रुजवेल्ट के व्यक्तिगति प्रतिनिधि विलियम फिलिप्स स्वयम् ब्रिटिश सरकार का क्रूरताण्डव देख चुके थे। इनको प्रसन्न करने के लिये और अमेरिकन जनमत का सहयोग प्राप्त करने तथा भारतीय वातावरण में प्रतिक्रिया का अध्ययन करने के विचार से व्हाईटहाल ने रिहाई की आज्ञा दे दी इसका रहस्य उसकी उदारता अथवा न्याय प्रियता नहीं वरन अन्तराष्ट्रीय परिस्थिति थी। अंग्रेज सरकार देखने में उदार अवश्य है किन्तु मनोवृत्ति में पाषाणवत्त कठोर। देश में भयंकर अत्याचार, निर्वासन बा और महादेव भाई की मृत्यु से बापू का हृदय अत्यन्त व्यथित हो उठा था। वृद्धावस्था के कारण उनका स्वाथ्य भी इतना अच्छा नहीं हो सकता था। अस्तु जिस समय वे रिहा किये गये उनका स्वास्थ्य अत्यन्त शोचनीय हो रहा था। इसकी चिन्ता न कर रिहा होते ही उन्होंने समझौते का पुन: प्रयत्न आरम्भ कर दिया।

गत्यवरोध और साम्प्रदायिक जड़ता को दूर करने के विचार से राजाजी ने एक सूत्र बनाया जिसके आधार पर लीग और कांग्रेस में किसी प्रकार समझौता होकर ज़िच टूटती। प्रयाग सन् ४२ के कांग्रेस अधिवेशन में राजाजी इसी प्रकार का एक प्रस्ताव पेश कर चुके थे। अस्तु अनेक विचारशील व्यक्ति राजाजी के इस कदम से शंकित हो उठे। अस्तु महात्माजी समझौता के लिये मियाँ जिन्ना से पत्रव्यवहार करने के लिये तत्पर हो गये। गान्धीजी का स्वास्थ्य अभी भलीभाँति सुधरा न था पर लीग के कर्णधार में इतनी शिष्टता न आई कि गान्धीजी से वे स्वयम् मिलते। उन्होंने गान्धीजी को मलाबारहिल के आलीशान बँगले पर मिलने के लिये बुलाया।

गान्धी जिन्ना सम्मेलन की तिथि ९ सितम्बर १९४३ निश्चित हुई जो

तीन सप्ताह तक चलती रही। उसका पूर्ण विवरण विस्तारभय से देना सम्भव नहीं। इस सम्बन्ध में लीग की ओर से एक पुस्तिका प्रकाशित हुई है जिसमें गान्धी जिन्ना पत्रव्यवहार का पूरा ब्यौरा दिया गया है। इसकी प्रस्तावना मियाँ लियाकत अली ने लिखी है। मुख पृष्ठ पर गान्धी जिन्ना का एक चित्र भी है जिसका शीर्षक "Long arm of diplomacy" यानी "कूटनीति की लम्बी भुजा" दिया गया है। इस शीर्षक में जितना ओछापन है प्रस्तावना उससे किसी अंश में कम नहीं। मियाँ लियाकतअली ने गान्धीजी और कांग्रेस पर आरोप लगाने में जैसी भाषा और भाव व्यक्त किया है उसे पढ़कर मनुष्य चकित हो उठता है। उनको किसी बात में सत्य और ईमानदारी नहीं दीखतीं। उन्हें कांग्रेस का प्रत्येक प्रस्ताव केवल लीग को फँसाने की चाल के सिवा कुछ नहीं समझ पड़ता। सच है "नलूकोऽप्यवलोकिते यदिदिवा सूर्य्यस्यकिम् दूषणम्"।

उनका कहना है कि एक ओर तो गान्धीजी लीग से समझौता करने की चाल चल रहे थे दूसरी ओर प्रेस्टन ग्लोवर की मध्यस्थता द्वारा वाइसराय से भी लिखा पढ़ी कर रहे थे। जिसकी उन्होंने काइदेआजम के पत्रों में चरचा भी न की। प्रेस्टन ग्लोवर ने गान्धीजी द्वारा प्रस्तावित राष्ट्रीय सरकार की योजना का जिसमें हिन्दू बहुमत होगा की सरकारी नीति का स्पष्टीकरण लार्ड वेवल ने कर दिया। निःसन्देह लार्ड वेवल ने इस बीच व्हाइट हाल से सम्बन्ध स्थापित कर नीति निर्धारित कर ली होगी। मियां लियाकतअली ने यह अभियोग लगाया कि एक ओर तो गान्धीजी लार्ड वेवल की अभ्यर्थना में थे दूसरी ओर जिन्ना मियां को छलने का स्वांग रच रहे थे। "हिन्दू मुसलिम एकता का स्वप्न तो केवल बृटिश प्रक्रियावादी और वे महाजन जिनकी भारत में पूँजी लगी हुई है देखते हैं, क्योंकि हिन्दू मुसलिम एकता की ओट में भारत में अब उनका व्यापार चलना असम्भव है। महात्मा गान्धी की राष्ट्रीय सरकार बनाने की आकांक्षा ऐसी सरकार बनाने की है जो धारा सभा के अन्तर्गत हिन्दू बहुमत के आधार पर हो और जो कांग्रेस हाई कमाण्ड के इशारे पर

चले ; जिसके साथ पूँजीवालों का स्वार्थ जुड़ा हुआ है। इन पूजीपतियों को वश में कर कांग्रेस अपनी शक्ति को बढ़ाने का उद्योग कर रही है।''

आगे चलकर इसी पुस्तिका में लिखा हुआ है कि लोग नितान्त बहुमत का अर्थ नहीं समझते जिसे गान्धीजी चाहते हैं। इसका अपने मतलब के अनुसार मनमाना अर्थ किया गया है। अन्त में आपने यह कह डाला है कि गान्धीजी के एक पत्र से प्रकट होता है कि वे समझौता करना नहीं चाहते और एक न एक बहाना भी करते रहते हैं। आगे पेज १७ पर आप कहते हैं।

समझौते की बात टूट जाने पर गान्धीजी ने अपने पत्र में लिखा है "लीग को मियाँ जिन्ना का नेतृत्व समाप्त कर मुसलमानों की ओर से बोलने के लिये किसी दूसरे नेता की खोज करना चाहिये।" मैं कहता हूँ यदि समझौता न होने पर हिन्दुओं ने सबक न सीखा तो हमें हिन्दुओं के लिये पश्चाताप है। समझौता न होने पर देश भर के प्रतिक्रियावादी लीगी मुसलमानों ने सन्तोष प्रकट किया और अपने नेता के प्रति विश्वास प्रकट किया।" इस प्रकारकी अतर्क-युक्त उक्ति पेश करनेवाले नवाबजादा साहब क्या यह बताने की कृपा करेंगे कि आज चन्द साल से लीग के इतने बड़े हिमायती होने के पूर्व वे अपनी जमीनदारी में कौन नीति बरते थे और तीन चार पुश्त पहले उनके पूर्वज कौन थे? क्या वे स्वयम् उन परिवर्तित राजपूतों को सन्तान नहीं जो किसी कारण कभी मुसलमान होगये थे? यहाँ हम स्पष्ट रूप से प्रकट कर देना चाहते हैं कि विरला ही हिन्दू होगा जो अपनी प्रसन्नता से मुसलमान हुआ हो फिर इतने बड़े देश में दो चार प्रसन्नता पूर्व हो भी गये तो वह हमारे लिये व्यापक सूत्र नहीं।

समझौते की बात समाप्त होने पर महात्माजी ने २६ सितम्बर १९४४ को पहली बार प्रेस वक्तव्य दिया।

"तीन सप्ताह का मेरा यह अनुभव है कि तृतीय शक्ति के रहते किस प्रकार का निपटारा होना सम्भव नहीं। गुलाम दिमाग स्वतन्त्र की भाँति

नहीं हो सकता। जो सत्य प्रतीत होता है उसे कहने के लिये हम किसी प्रकार का संकोच नहीं करते।"

आगे आपने कहा "काइदेआजम से मुलाकात भी स्वाधीनता के युद्ध का एक कदम था"। राष्ट्रीय मुसलमानों के सम्बन्ध में प्रश्न करने पर आपने कहा।

"निश्चय ही राष्ट्रवादी मुसलमान राष्ट्र भर का प्रतिनिधित्व करता है पर मिस्टर जिन्ना केवल लीगी मुसलमानों के ही प्रतिनिधित्व का दावा कर सकते हैं जो राष्ट्र के एकमात्र अङ्ग हैं। वह गद्दारी के अपराधी होंगे यदि वे मुसलिम स्वार्थों का अहित करते हैं। किन्तु मेरी राष्ट्रीयता ने हमें यह शिक्षा दी है कि यदि मैं किसी हिन्दुस्तानी के स्वार्थों का अहित करूँ तो मैं गद्दारी का दोष भागी होऊँगा।" अन्त में गान्धीजी ने एक पत्रकार के प्रश्नोत्तर में कहा—

"मेरा दिमाग संकुचित है। मैंने विशेष साहित्य का अध्ययन नहीं किया है। मैंने दुनियाँ भी बहुत नहीं देखी है। मैंने जीवन की चन्द समस्याओं की ओर ही अपनी शक्ति केन्द्रित की है उन्हें छोड़कर हमारी दिलचस्पी और चीजों की ओर नहीं। इसीलिये मैं राजाजी के सूत्र को ठीक ठीक न समझ सका और मैंने उन्हें नापसन्द किया। किन्तु जब राजाजी एक निश्चित योजना लेकर हमारे पास आये—हाड़ मांस का बना हुआ पुतला मैं स्वयं इस निश्चित स्वरूप को स्पर्श करने के लिये तत्पर हो गया। इसीसे प्रकट होता है कि आज और सन् ४२ में कितना अन्तर है। फिर भी मैं कांग्रेस के दृष्टिकोण से अलग नहीं हुआ हूँ। कांग्रेस ने आत्मनिर्णय का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया है। राजाजी के समझौते का आधार भी आत्मनिर्णय है। अस्तु दोनों में सामञ्जस्य है।"

गान्धीजी ने कहा "वे सावरन स्टेट का अर्थ सिद्धान्ततः समझते हैं कि वह मित्रता का द्योतक है मित्रता का अर्थ यह है कि दुनिया के सामने हम एक राष्ट्र के रूप में प्रकट हों और यह सिद्ध कर दें कि हमारी एकता विदेशी शक्ति के बल पर नहीं, या हम अंग्रेजों की तलवार के बल पर संयुक्त नहीं वरन उससे भी बड़े आत्मबल की शक्ति से एक सूत्र में संयुक्त हैं।

न्यूज क्रानिकल पत्र के संवाददाता को २६ सितम्बर को वक्तव्य देते हुये गान्धीजी ने कहा—

"मैं दो राष्ट्र सिद्धान्त नहीं स्वीकार कर सका। मिस्टर जिन्ना की यही माँग है। वह चाहते हैं कि सीमा प्रान्त, सिन्ध और पूरा पंजाब तथा आसाम बंगाल मिलकर पाकिस्तान की स्वतन्त्र रियासत स्वीकार कर ली जाय। मि० जिन्ना चाहते हैं कि मैं उनके प्रस्तावों पर उन प्रान्त निवासियों का जन मत जाने बिना ही विघटन स्वीकार कर लूँ। मिस्टर जिन्ना ने राजगोपालाचारी की योजना अस्वीकार कर दी है।"

प्रश्न करने पर कि वह पाकिस्तान को क्या समझते हैं और भविष्य में किस आधार पर समझौता हो सकेगा? उन्होंने कहा "मैं विश्वास करता हूँ। कि मियाँ जिन्ना ईमानदार आदमी हैं किन्तु वे मानसिक जड़ता ग्रस्त है। जब वे अनुमान करते हैं कि भारत का अस्वाभाविक विभाजन ही विभाजित लोगों में सुख समृद्धि ला सकेगा जो जनता को सम्मति के बिना करना अनुचित है। मैंने सुझाया कि जनमत के आधार पर भारत और पाकिस्तान की एकता द्वारा दोनों स्वतन्त्र रियासतें सर्वशक्तिमान हो सकेगी। विदेशी नीति और रक्षा यातायात पर समझौते द्वारा समान नीति का प्रतिपालन हो। इस नीति से मुसलमानों की आन्तरिक रहन-सहन में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं होता और दोनों जातियों का इसी में कल्याण भी है। किन्तु मियाँ जिन्ना इनमें से किसी को स्वीकार न कर हमें दो राष्ट्र सिद्धान्त स्वीकार करने के लिये बाध्य करने लगे। पर यह तो सिद्धान्त गलत चीज़ है इसलिये मैं इसे स्वीकार न कर सका। यदि मैं जानता कि मियाँ जिन्ना की माग न्यायोचित है तो सारी दुनियाँ के विरोध करने पर भी मैं उसकी स्वीकृति दे देता।

पुनः प्रश्न करने पर "यदि मिया जिन्ना आप के विभाजन सिद्धान्त को स्वीकार कर लेते और इस बातपर इसरार करते कि जनमत का संग्रह न हो अथवा यदि उसमें मतदाता हों तो केवल मुसलिम हो।" गान्धीजी ने उत्तर

दिया "कदापि नहीं। मैं व्यक्तिगत अथवा किसी अन्य हैसियत से करोड़ों मनुष्यों के भविष्य की स्वीकृति उनके एक शब्द कहे बिना कैसे दे देता।"

प्रश्न—आपने जूलाई में जिस प्रकार के आरसी राष्ट्रीय सरकार की हमसे चरचा की थी उस सम्बन्ध में मिस्टर जिन्ना की क्या धारणा है ?

उत्तर:—"मिस्टर जिन्ना ने कहा कि स्वतन्त्रता की ओर उनकी गहरी दिलचस्पी अवश्य है पर मेरा ध्यान यह है कि पाकिस्तान की स्वीकृति ही उनका वर्तमान राजनैतिक ध्येय है। पर मेरी निश्चित धारणा है कि जब तक हम परतन्त्र है हमें आन्तरिक स्वतन्त्रता नहीं प्राप्त हो सकती। हमें सबसे पहले साम्राज्यवादियों से पीछा छुड़ाना चाहिये।"

गान्धीजी के इन वक्तव्यों का प्रतिकार करने के लिये मिस्टर जिन्ना ने ४ अक्टोबर १९४४ को एक प्रेस सम्मेलन बुलाया। गान्धीजी पर अनेक प्रकार का आरोप लगाते हुये आपने जिस अदूरदर्शिता का परिचय दिया उसे जानकार प्रत्येक स्वतन्त्रता प्रियव्यक्ति का उद्वेजित हो उठना अस्वाभाविक नहीं। उनका अभियोग निम्नलिखित है :—

(१) गान्धीजी ने लीग के प्रतिनिधित्व को चुनौती दी और साथ ही साथ हमारे विरुद्ध मुसलमानों को भड़काने का यत्न किया। वह बार-बार यह दिखाने का यत्न करते हैं कि राजाजी की योजना में उन्हें लाहौर प्रस्ताव का सारांश मिला है और उनके स्वयम् प्रस्ताव में उसका सारांश है जो उन्होंने अन्तिम घड़ी पेश किया।

(२) भारत की स्वतन्त्रता की माँग एक राष्ट्रीयता के आधार पर स्वीकार कर ली जाय।

(३) उनके १५ सितम्बर के पत्र में निर्धारित योजना के आधार पर तत्काल आन्तरिक सरकार बनाना स्वीकार कर लिया जाय तो वर्तमान केन्द्रीयएसेम्बली अथवा निर्वाचित केन्द्रीय सरकार को उत्तरदायी हो। जिसका प्रधान सेनापति के अधिकार छोड़ सभी अधिकार प्राप्त हों जो युद्ध समाप्त होते ही आन्तरिक सरकार को प्राप्त हो जाय। इसका अर्थ तो यह हुआ कि तत्काल

केन्द्र में समझौते या सन्धि से संघ सरकार देश का नागरिक शासन अपने हाथ लेले जो ऐसी केन्द्रीय धारासभा के आधीन हो जिसके ७५ प्रतिशत हिन्दू सदस्य हों।

(४) यदि इस प्रकार की कोई सरकार बनी तो उसीके हाथ भावी-शासन विधान बनाने का सूत्र होगा। वह चाहे अंग्रेजों के रहते या चले जाने पर स्वतन्त्र भारत का चाहे जैसा विधान बनाने को मुक्त होगी।

(५) यही राष्ट्रीय सरकार हर प्रकार की सन्धि समझौता इत्यादि करे जिसका मतलब होगा कि इतने महत्व पूर्ण विषय जिसका प्रभाव किसी राष्ट्र के जीवन मरण का प्रश्न हो सकता है संघ सरकार के आधीन हो जिसके हाथ आगे चलकर पूरी शक्ति और जिम्मेदारी सौंप दी जाय। इस प्रकार की सरकार और शासन व्यवस्था का मतलब यह होगा कि 'हिन्दू राज' की स्थापना हो जाय।

(६) गान्धीजी के विचार से हमारी सीमा में वे ही जिले लिये जाँय जिसकी मुसलिम आबादी ७५ प्रतिशत से कम हो जैसे सिन्ध विलोचिस्तान, और सीमा प्रान्त। राजगोपालाचारी इसमें भी कानूनी अड़ंगा लगाने को तय्यार है। अस्तुस्वयम् गान्धीजी और राजाजी में मतभेद है।

(७) इस प्रकार निर्धारित क्षेत्र में बालिग जनमत लिया जाय और ऊपर से निर्णय राष्ट्रीय सरकार का हो जो ऊपर कहे हिन्दू बहुमत के आधार पर हो मानने को बाध्य होना पड़ेगा।

(८) यह भी केवल उसी दशा में विचार कर निश्चय किया जायगा जब युद्ध समाप्त चुका हो और भारत सरकार की सारी जिम्मेदारी ब्रिटेन राष्ट्रीय सरकार को सौंप चुका हो। यह राष्ट्रीय सरकार एक कमीशन नियुक्त करे जो पाकिस्तान की सीमा निर्दिष्ट करे। इस प्रकार अनेक बन्धनों के बीच में पड़कर लीग अपने ध्येय की प्राप्ति में सफल न हो सके और हिन्दुओं के मकड़ी जाल में फँस कर मुसलमानों का अस्तित्व लुप्त हो जाय।

आगे चलकर मियां जिन्ना ने यह कहकर कि "एक सांस में गान्धीजी

स्वीकार-अस्वीकार दोनों करते हैं झूठ बोलने का भी आरोप लगा दिया। वे लीग को बदनाम करना चाहते हैं साथ ही साथ उससे समझौता भी करना चाहते हैं ? उसे मुसलमानों की प्रतिनिधि संस्था भी नहीं मानते अस्तु उसका मुसलमानों की ओर से बोलने का हक भी छीन लेना चाहते हैं।" अन्त में आप कहते हैं "मिस्टर गान्धी स्वयम् एक पहेली हैं।* मिस्टर गान्धी ने हमें और लीग को बदनाम करने की कोशिश की इससे मैं क्षुब्ध हूँ और इसका उन्हें उत्तर मिलेगा। अवश्य मिलेगा।"

न्यूज क्रानिकिल के सम्वाददाता से आपने ४-१०-४४ को बतलाया कि हिन्दू मुसलिम भेद भाव के मसले को हल करने का एक मात्र उपाय यह है मुल्क का हिन्दुस्तान और पाकिस्तान की दो पृथक रियासतों में बटवारा हो जाय जिसमें पूरबी और पश्चिमी पाकिस्तान बने आसाम बंगाल तथा सिन्ध, बिलोचिस्तान सीमा प्रान्त, और पंजाब स्वतन्त्र मुसलिम रियासतें हों जिसकी वर्तमान प्रान्तीय सीमा हो। हम लोगों में पारास्परिक विश्वास हो और पाकिस्तान में अल्प हिन्दू समुदाय के साथ समानता और इन्साफ का बर्ताव हो। वैसाही न्याय हिन्दुस्तान के मुसलमानों के साथ। हम हिन्दुस्तान में बसनेवाले डेढ़ करोड़ मुसलमानों को हिन्दुओं की रक्षा में सौंपने को तय्यार हैं।"

इस प्रकार मियाँ जिन्ना की हठवादिता और दुराग्रह के कारण नौकरशाहों को यह गर्जना करने का पुन: अवसर मिला कि भारत में बिना साम्प्रदायिक समझौता हुए किसी प्रकार का विधान कैसे बन सकता है। अंग्रेज चाहे अपनी वाक्विभूति में कितने उदार हों। कितने ही सिद्धान्त छाँटे किन्तु साम्राज्य के अन्तिम दुर्ग भारत को कभी हरा-भरा नहीं देख सकते। एक न एक अड़चन लगाकर वे ऐसी समस्या उत्पन्न करते रहेंगे

---

* Mr. Gandhi is an enigma

† न्यूज क्रानिकल के सम्वाददाता स्टुअर्ट गिल्डर को मिया जिन्ना द्वारा दिये गये वक्तव्य का सारांश।

जिससे गत्यवरोध बना रहे और स्वतन्त्रता अथवा स्वशासन का उद्योग विच्छिन्न हो। गांधी-जिन्ना मिलन के समय कुछ लोगों को आशा हो गई थी कि कदाचित् किसी प्रकार का समझौता हो जाये। ऐसी आशा करने वाले भ्रम में थे; भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन के मार्ग में अंग्रेजों के बाद यदि सबसे बड़ा कण्टक कोई है तो वह साम्प्रदायिक मसला नहीं वरन् मिस्टर जिन्ना और मुसलिम लीग है।

बात-चीत समाप्त हो जाने पर सर्वदल सम्मेलन की बैठकें बम्बई और पूना में सर तेज के सभापतित्व में होती रहीं। कमेटी का उद्देश्य यह था कि किसी प्रकार गत्यवरोध दूर हो और स्वत्व प्राप्ति का कोई-न-कोई उपाय ढूँढ़ निकाला जाय। राजाजी का सूत्र भी किसी प्रकार की सफलता न पा सका; पता भी कैसे, एक नाद में दो भैंसों का एक साथ रहना असम्भव है। सरकार की ओर से नित्य नये-नये काले कानून पास किये जा रहे थे। केन्द्रीय असेम्बली यद्यपि जीवित थी पर वाइसराय के विटो के आगे वह निर्जीव हो गई थी। मेरुदण्ड हीन वाइसराय की शासन-परिषद् के सदस्य चर्चिल सरकार की दमननीति में सहयोग कर रहे थे। यदि सरकार का किसी ओर संकेत होता तो वे उसे अपनी शुभेच्छिता का परिचय देने के लिये तिल का ताड़ बना देने में एक दूसरे से होड़ लगा देते। इसी प्रकार की नीति से ऊबकर होमी मोदी और नलिनी रञ्जन् सरकार ने पद-त्याग भी कर दिया। त्रिवेदी, श्रीवास्तव, हैदरी, सुल्तान, मेहता, आदि को अपना जौहर दिखाने का अवसर मिला। सिवा इसके कि यह लोग सरकारी नीतिका पृष्ठ पोषण करते गांधीजी के जीवन-मरण प्रश्न पर भी अपनी दृढ़ता नहीं दिखा सके। सर ज्वाला ने तो मानों हद कर दी। उनके वक्तव्यों से स्पष्ट प्रकट होता था कि काली चमड़ी में से गोरी साँस निकल रही है। हाँ, यह अवश्य हुआ कि इन लोगों के नीति संचालन के कारण देश भर में अन्न-वस्त्र का अकाल हो गया। बंगाल में ५० लाख नर-नारी भूख प्यास की ज्वाला से तड़प-तड़प कर गृद्ध और शृगालों के आहार हुये, चोर बाजार, मुनाफाखोरी, घूसखोरी

आदि कितने ही अनाचार इस तरह बढ़ गये मानो सुव्यवस्था का लोप हो गया हो। इधर डी० आई० आर० की ओट में पुलिस के अत्याचार और जेलों में बन्द देशभक्तों की यातनाओं से प्रकट होने लगा मानो दया, न्याय और ईश्वर का भारत से अस्तित्व ही लुप्त हो गया हो। तरह-तरह के नियंत्रण और आज्ञाओं का इस प्रकार जाल बिछा मानो पराधीन भारत विराट कारागृह बन गया।

इतना होते हुए भी गत्यवरोध का अन्त करने का यत्न होता रहा। अबकी बार केन्द्रीय असेम्बली में विरोधी दल के नेता श्री भूलाभाई देसाई एक कामचलाऊ समझौता करने का यत्न करने लगे। उन्होंने मियाँ लियाकत अली से परामर्श कर एक हल निकाली जिससे किसी प्रकार का क्षणिक अथवा आरसी समझौता हो जाय। यह देसाई-लियाकत समझौते के नाम से प्रसिद्ध हुआ। कहा नहीं जा सकता कि मियाँ जिन्ना इसमें सहमत थे या नहीं। मियाँ लियाकत अली भी ईमानदारी से इसके लिये यत्नशील थे या नहीं? इस योजना की प्रतिक्रिया शिमला सम्मेलन के अन्त तक प्रकट हो गई। देसाई लियाकत समौते की शर्तें पुस्तक के परिशिष्ट भाग में देखिये।

सन् ४२ के जन-आन्दोलन को कुचलने वाले योद्धा लार्ड लिनलिथगो सहस्रों और लाखों नर-नारियों को कारागार और यातनायें भुगताने की ख्याति तो पाते ही हैं साथ ही साथ अगस्त सन् ४० में की गई घोषणा से लीग को पाकिस्तान योजना को सींचने का सूत्र भी दे गये। किन्तु उनकी अवधि समाप्त हो चली थी। अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति के कारण भारत में अब एक ऐसे वाइसराय की आवश्यकता थी जो दक्षिणोत्तर एशिया में चलनेवाले युद्ध कमान का भली-भाँति संचालन कर सके; साथ ही साथ यदि हो सके तो भारतीय-गत्यावरोध का अन्त करने में भी यत्नशील हो। ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल की दृष्टि इस बार पराक्रमी फील्ड मार्शल वेवल पर पड़ी। वे भारत के वाइसराय घोषित कर दिये गये। भारत में आने पर उन्होंने कुछ समय परिस्थिति अध्ययन करने के लिये लिया। महीने भर बाद आपने प्रथम भाषण में भारत

की अखण्डता पर जोर दिया। उन्होंने स्पष्ट रूप से कह दिया कि भारत का किसी राजनैतिक हल की माँग पर खण्ड नहीं हो सकेगा। लीग को इस भाषण से बड़ी निराशा हुई और लीगी नेताओं ने मनमानी आलोचना प्रकट की। दुर्भाग्यवश नौकरशाही का वातावरण इतना दूषित है कि जो व्यक्ति इस काजल की कोठरी में घुसता है रंग ही जाता है। यही हालत बेचारे लार्ड वेवल की भी हुई। अगले बजट सेशन में जिस प्रकार सरकार पराजित हुई और जितने निन्दा प्रस्ताव पास हुये उससे लार्ड वेवल को अगला कदम उठाना आवश्यक हो गया। इधर लीग भी इन निन्दा प्रस्तावों में कांग्रेसदल के साथ आंशिक सहयोग करती रही जिसके फलस्वरूप देसाई-लियाकत समझौते का गर्भाधान हो सका।

लार्ड वेवल समस्या को हल करने के विचार से लन्दन गये। देश भर में अनुमान होने लगा कि सम्भवत: देसाई लियाकत योजना के आधार पर समझौता हो। इसके अन्तराल में क्या था इसका वास्तविक रहस्य तो लार्ड वेवल और ह्वाइट हाल के सूत्रधार ही जान सकते हैं। यह धारणा पुष्ट इसलिये हुई कि युद्ध शीघ्र समाप्त हो जिसके लिये भारतीय जनमत अपनी ओर करना आवश्यक प्रतीत हुआ। मई सन् ४५ में जर्मन युद्ध का अन्त हो गया। इसका परिणाम यह हुआ कि इंगलैण्ड में चुनाव तत्काल आवश्यक हो गया। ब्रिटिश जनता युद्ध भार और चर्चिल से ऊब उठी थी। यद्यपि ब्रिटिश सत्ता और राज्य की रक्षा चर्चिल की लौह नीति द्वारा हुई, फिर भी ब्रिटिश जनता मन्त्रिमण्डल का परिवर्तन चाहती थी। चुनाव की हवा चर्चिल दल के प्रतिकूल थी। चुनाव में वातावरण मजदूर के अनुकूल था। चर्चिल और एमरी के विरुद्ध भारतीय समस्या लेकर बड़ा आन्दोलन हुआ। परिणाम यह हुआ कि चर्चिल का दल बहुमत न प्राप्त कर सका। भारत को स्वशासन अधिकार देने की डींग मारनेवाले एमरी भी बुरी तरह हार गये। यह मजदूर दल का ब्रिटिश और भारतीय जनता को छलने का एक रूपक था कि लार्ड वेवल लौटकर पुनः लन्दन गये। भारतीय जनता सहानुभूति और

सभ्य संसार को यह दिखाने के लिए कि ब्रिटिश जनता मक्कार नहीं अपनी घोषणाओं पर अटल है वह शिमला सम्मेलन का स्वांग रचा गया।

भारतीय समस्या और गत्यावरोध दूर करने की गठरी में शिमला सम्मेलन एक और गाँठ थी। आज यह स्वीकार किया जा रहा है कि गत्यावरोध (१) ब्रिटिश सरकार की करनी थी (२) यह युद्धजनित नहीं था। १६३६ में भी कांग्रेस-विधान चलाने को प्रस्तुत नहीं थी। यह सभी जानते हैं कि कांग्रेस ने विधान का अन्त करने के विचार से मंत्रिमण्डल बनना स्वीकार किया था यद्यपि लार्ड लिनलिथगो द्वारा गांधीजी के प्रस्तावों की स्वीकृति कांग्रेस की एक सफलता थी। युद्ध छिड़ जाने पर एक बार संघर्ष का पुनः अवसर मिल गया, क्योंकि सरकार ने युद्धोद्देश्य का स्पष्टीकरण न किया। अगस्त सन् १६४० की घोषणा के अनुसार वाइसराय की कार्यकारिणी-समिति का विस्तार हो जाने के कारण परिषद् में भारतीय सदस्यों की संख्या बढ़ गई जिससे उनका बहुमत हो गया, किन्तु साथ ही साथ इस घोषणा का कु-परिणाम यह हुआ कि मुसलिम लीग को एक ऐसी नकारात्मक शक्ति मिल गई कि उसी राग से उसने क्रिप्स प्रस्तावों का स्वागत किया और शिमला कान्फरेंस के अवसर पर बड़े प्रेम से उसे आलापा। क्रिप्स योजना और वेवल प्रस्ताव से भारत की राजनैतिक प्रगति एक इञ्च आगे न बढ़ सकी। यह अवश्य देखने में आया कि जब जब अंग्रेज सरकार ने भारत को किसी राजनैतिक अधिकार देने का स्वांग रचा है एक न एक ऐसा अड़ंगा लगा दिया कि प्रगति के स्थान पर अप्रगति हुई। भारतीय राष्ट्रवाद का मार्ग-कण्टक दूर करने का प्रत्येक प्रयत्न अंग्रेजों की कुटिल नीति द्वारा और गहरा होता गया।

पहली जून को लार्ड वेवल लन्दन से भारत के लिये रवाना हुये। रूटर का लन्दन स्थित संवाद कहता है कि "राजनैतिक दलों में यह आशा की जा रही है कि बृटिश मन्त्रिमण्डल से बातचीत कर लार्ड वेवल आज भारत के लिये रवाना हो रहे हैं। उन्हें सम्भवतः यह अधिकार दिया गया है कि

वे भारतीय गत्यवरोध का अन्तकर भारतीय नेताओं से शासन में सहयोग प्राप्त करेंगे।"

लार्ड वेवल देहली पहुँच गये और कार्यकारिणी समिति की बैठक बुलाई। एक सप्ताह के पश्चात वाइसराय महोदय की घोषणा हुई। इस घोषणा से किसी प्रकार की प्रतिक्रिया अथवा सरगर्मी नहीं दिखाई पड़ी। देश के मुख्य पत्रों ने योजना को महत्व न दिया अमृत बाजार पत्रिका ने तो यहाँ तक कह डाला कि "कांग्रेस को योजना अस्वीकार" इसमें सबसे बड़ा कण्टक वाइसराय का विटो था। गान्धीजी देखना चाहते थे कि क्या सचमुच अंग्रेजी सरकार का हृदय परिवर्तन हुआ है?" उन्होंने एक वक्तव्य में कहा कि यदि राजनैतिक कैदियों की रिहाई आम तौर पर न हो सके तो बातचीत के लिये उपयुक्त वातावरण उत्पन्न करने के लिये कांग्रेस हाई कमाण्ड की रिहाई आवश्यक है।"

लार्ड वेवल ने घोषित किया कि यह योजना किसी प्रकार का वैधानिक समझौता नहीं और न किसी प्रकार भारतीय जनमत के नेतृत्व के विरुद्ध अमल में ही लाया जायगा। प्रान्तीय और केन्द्रीय नेताओं को आमन्त्रित कर एक विस्तारित कार्यकारिणी समिति का नवनिर्माण करना ही इस आमन्त्रण का मुख्य ध्येय है। प्रस्तावित शासनपरिषद में हिन्दू और मुसलमानों का समान प्रतिनिधित्व होगा। यदि यह बनी तो वर्तमान विधान के अनुसार उसी के अन्तर्गत होगी किन्तु इसका रूप पूर्णतया हिन्दुस्तानी होगा। इसके सदस्य युद्ध सदस्य की हैसियत से कमाण्डर इन चीफ और गैरहिन्दुस्तानी की हैसियत से वाइसराय प्रेसिडेण्ट होंगे। विदेशी सम्बन्ध का पद भी काउन्सिल के भारतीय सदस्य को सौंप दिया जायगा।"

"इस प्रकार की शासनपरिषद बनने का अर्थ यह होगा कि यह स्वशासन की ओर खासी प्रगति उत्पन्न करेगा। यह पहली बार ऐसी समिति होगी जिसके सभी सदस्य हिन्दुस्तानी होंगे। सबसे खास बात इस सम्बन्ध में यह होगी

कि दलों के नेताओं के परामर्श से वाइसराय इसका चुनाव स्वयम् करेंगे जिसकी स्वीकृति सम्राट की सरकार द्वारा होगी।

इस शासन परिषद् का मुख्य काम निम्नलिखित होगा।

(१) जापान के विरुद्ध तब तक युद्ध जारी रखना जब तक वह पराजित न हो जाय।

(२) बृटिस भारत का युद्धोत्तर पुनर्निर्माण आदि की योजना के साथ शासन विधान प्रचलित रखना जब तक नव विधान बनकर कार्यान्वित न हो जाय।

(३) अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य्य यह होगा कि सम्राट की सरकार के सहयोग से ऐसा समझौता करना जिससे नया शासनविधान बनाया जा सके जिससे लम्बी अवधि के लिये निपटारा हो जाय और वर्तमान समझौते द्वारा इस प्रकार के सहयोग में सहायता मिले।

मैंने इस कार्य्यसाधन के लिये इसको अत्यन्त महत्वपूर्ण समझा है और यह निश्चय किया है कि कांग्रेस पार्टी के केन्द्रिय दल के नेता, उपनेता और मुसलिम लीग के नेता उपनेता, काउन्सिल आफ स्टेट, राष्ट्रीय दल, योरोपियन दल को आमन्त्रित करूँ जिसमें महात्मा गान्धी और मिस्टर जिन्ना दोनों प्रमुख दलों की नेता की हैसियत से शामिल हों।

अगर हमारी योजना सफल हुई तो केन्द्र में हम नई शासन परिषद् बनावेंगे और उन प्रान्तों में जहाँ गवर्नर विधान की ९३ धारा के अन्तर्गत हुकूमत कर रहे हैं पुनः मन्त्रिमण्डल स्थापित हो जायँगे। यह मन्त्रिमण्डल मिले जुले होंगे।

अगर दुर्भाग्यवश हमारी योजना स्वीकार न हुई और इसे हम कार्यान्वित न कर सके तो हम वर्तमान व्यवस्था चालू रखेंगे"—

देशी रियासतों के सम्बन्ध में आपने कहा "इस योजना का सम्बन्ध बृटिश भारत से नहीं। देशी नरेशों के सम्बन्ध में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं होगा।"

अन्त में आपने अपील की कि "मैं ऐसा वातावरण बनाना चाहता हूँ जिसमें क्षमा और विस्मृति की भावना और पारस्परिक आत्मविश्वास तथा सद्भावना हो जो प्रगति के लिये आवश्यक है। मैं विश्वास करता हूँ कि भारत महान देश है और जहाँ तक हमसे बन सकेगा मैं उसकी वृद्धि में सहायक होऊंगा। मैं आप सबसे सद्भाव और सहयोग चाहता हूँ।"

मिस्टर एमरी का वक्तव्य

इधर भारत में लार्डवेवल का ब्राडकास्ट हुआ उधर कामन्स सभा में भारतमन्त्री मिस्टर एमरी ने भी एक समान वक्तव्य दिया। इस वक्तव्य का सारांश निम्नलिखित है :—

"भारत का नया शासनविधान बिना उसके करोड़ों निवासियों के सहयोग के कार्यान्वित होना असम्भव है। सम्राट के सरकार की यह इच्छा नहीं कि भारत की अनिच्छा से उसकी स्वीकृति बिना उसपर शासन विधान लादा जाय। वैधानिक स्थिति अभी सन ४२ की क्रिप्स योजना के पूर्व के समान ही है। हमारी सरकार आशा करती है कि भारतीय जनमत के नेता पारस्परिक समझौता कर एक राय होंगे ताकि भारत का विधान आसानी से निश्चित किया जा सके। हमारे सम्राट की सरकार उत्सुक है कि किसी प्रकार गत्यावरोध का अन्त हो। भारत के लिये जापान का हराना और युद्धोत्तर योजना की रूपरेखा स्थिर करना आवश्यक है।

सम्राट के सरकार की यह इच्छा नहीं कि भारतीय जनमत के विरुद्ध उसपर जबरन शासन भार लादे किन्तु सरकार की यह इच्छा है कि आन्तरिक व्यवस्था इस भाँति हो कि जापान को परास्त कर नवनिर्माण व्यवस्था में सहायक हो। इसके लिये यदि विधान में परिवर्तन की आवश्यकता हो तो उस परिवर्तन में हम सहयोग देंगे।

हमारा यह प्रस्ताव है कि वाइसराय केन्द्र और प्रान्तीय प्रतिनिधित्व के आधार पर हिन्दू मुसलमानों को बराबर प्रतिनिधित्व देंगे जिससे सन्तुलन

बना रहे। मुसलमान और हिन्दू बराबर की संख्या में हों। काउन्सिल के सभी सदस्य वाइसराय और प्रधान सेनापति के अलावा हिन्दुस्तानी होंगे। इससे देशी नरेशों और वृटिश सरकार के सम्बन्ध में किसी प्रकार का अन्तर न होगा। प्रान्तों में संयुक्त मन्त्रिमण्डल होगा। जिससे साम्प्रदायिक सम्बन्ध में सुधार हो।

विदेशी सम्बन्ध का पूरा उत्तरदायित्व भी सरहदी कौमों को छोड़कर और सीमा प्रश्न के अलावा पूरी तौर पर हिन्दुस्तानियों के हाथ होगा। वृटेन के सम्बन्ध के लिये एक हाई कमिश्नर नियुक्त कर दिया जायगा जो भारत में वृटिश स्वार्थों की देख देख करता रहेगा।"...इत्यादि।

इसका पुन: स्पष्टीकरण करने के लिये एमरी ने एक प्रेस सम्मेलन बुलाया जिसकी बैठक इण्डियन आफिस में १६ जून को हुई। इसमें विशेषकर अमेरिकन पत्रकार थे जिनको यह समझाने का यत्न किया गया कि वाइसराय का विटो भारत के हित के लिये ही रखा गया है न कि वृटेन के हितार्थ।

एक भारतीय पत्रकार के प्रश्न करने पर "क्या वाइसराय, यदि हिन्दुस्तानी काउन्सिल डालर पूल का अन्त करने का निश्चय करे जो वृटिश स्वार्थों के लिए अनिष्टकर होगा तो अपनी नकारात्मक शक्ति का प्रयोग करेंगे?"

"इस प्रकार के प्रश्न पर वाइसराय अपने विटोका प्रयोग नहीं करेंगे। मिस्टर एमरी ने कहा, इस प्रकार की चीजों के सम्बन्ध में वृटिश हाई कमिश्नर काउन्सिल के सम्मुख अपनी सम्मति व्यक्त करेंगे।"

"अल्प संख्यकों के सम्बन्ध में आपने कहा कि "कुछ अल्प समुदायों के रक्षार्थ अपनी शक्ति का जरूरत होने पर प्रयोग करना आवश्यक होगा। हमारी सरकार इसको स्पष्ट कर देना चाहती है कि वाइसराय के अधिकार हिन्दुस्तानियों के विरुद्ध व्यापक रूप से बरतने के लिये नहीं है बल्कि आन्तरिक व्यवस्था के अन्तर्गत हिन्दुस्तानी जब तक भावी शासनविधान का मसविदा तयार न कर लें उनके रक्षार्थ हैं। अगर किसी प्रकार हिन्दुस्तानी अपने लिये एक शासन व्यवस्था की योजना न बना सके तो विभाजित भारत के शासन-

विधान तक यही नीति बरती जायगी ; किन्तु वाइसराय ने अपनी रिजर्व शक्ति का पाँच साल के मेरे मन्त्रित्व में एक बार भी प्रयोग नहीं किया है। जो कुछ हुआ काउन्सिल के सदस्यों के बहुमत के आधार पर किया गया है।'

इन प्रस्तावों में ऐसी एक चीज भी नहीं जो विधान बनाने में भविष्य में किसी प्रकार की अड़चन पेश करे। उन्हें स्वतन्त्रता होगी कि वे चाहे जैसा विधान बनावें। इसका उन्हें अधिकार होगा कि चाहे जिस देश के लिये जिसे राजदूत नियुक्त करें और यह उनकी इच्छा पर होगा कि किस देश में उनके राजदूत हों। तीन वर्ष पूर्व स्टाफर्ड क्रिप्स ने अपनी योजना में राष्ट्रीय पञ्चायत की ओर संकेत किया था। यह एक सुझाव है ऐसे ही अन्य सुझाव भी हो सकते हैं।"

इन वक्तव्यों कि भिन्न भिन्न नेताओं पर भिन्न भिन्न प्रतिक्रिया हुई। मिस्टर एटली ने कहा "यह केवल चुनाव की एक चाल है, इससे वाइसराय की शक्ति बहुत बढ़ जाती है। हिन्दुस्तानियों को इस अवसर से लाभ उठाने की पुनरावृत्ति क्रिप्स और लास्की द्वारा भी की गई। आम तौर पर लोगों की राय योजना स्वीकार करने की ओर थी। मिस्टर जिन्ना ने कोई मत न प्रकट किया।

हिन्दू सभा के नेता मुसलमानों से समान प्रतिनिधित्व के आधार पर समझौता करने की बात पर अत्यन्त क्रुद्ध हुये। उनके क्षोभ का कारण यह भी था कि हिन्दू सभा को आमन्त्रित न कर उसकी अवहेलना की गई। राष्ट्रवादी मुसलिम भी लीग के आमन्त्रण से रुष्ट हुये क्योंकि लीग को वे अपना प्रतिनिधि नहीं समझते।

इस समय कांग्रेस के कार्यकारिणी के सदस्य रिहा कर दिये गये किन्तु मौलाना आजाद का नाम आमन्त्रितों की सूची में न होने के कारण कांग्रेसजनों का क्षुब्ध होना स्वाभाविक था अस्तु सम्मिलित होने में कांग्रेसजन अड़चन का अनुभव कर रहे थे। मौलाना आजाद को निमन्त्रण मिलने पर भी प्रश्न यह उठ रहा था कि यदि सचमुच ईमानदारी से समझौते की चेष्टा हो रही है

तो जहाँ तक साध्य हो कांग्रेस योजना के सफल बनाने में सहायक हो, किन्तु यदि यह चुनाव का धोखा मात्र है तो उसकी पोल अपने आप खुल जायगी। गान्धीजी ने सवर्ण हिन्दू शब्द पर न्यायोचित आपत्ति की और कहा कि जिस प्रकार की साम्प्रदायिकता का रंग वाइसराय की योजना में है, श्री भूलाभाई देशाई की योजना में उसकी अनुपस्थिति के कारण ही मैंने उसे आशिष दिया।

गान्धीजी के सुझाव को वाइसराय ने स्वीकार कर लिया। सवर्ण हिन्दू शब्द को निकाल तथा मौलाना आजाद को निमन्त्रित कर पहली अड़चन दूर की गई। यह करने का परिणाम यह हुआ कि "लार्डवेवल की शुभैषिता और भारतीय गुत्थी सुलझाने की सत कामना का परिचय कांग्रेस दल को मिला।"

पहली बार कांग्रेस कार्य्य समिति की सन ४२ के पश्चात् बिरला हाउस (बम्बई) में २१ जून को बैठक हुई। इसमें सम्मिलित होने वाले नेताओं का स्वास्थ्य इतना बिगड़ गया था कि फ्री प्रेस जनरल के संवाददाता ने इसे 'मरीजों की परेड' कहा। १३ घंटे के विचार विमर्श के पश्चात निश्चय हुआ कि कांग्रेस वाइसराय के निमन्त्रण को स्वीकार कर शिमला सम्मेलन में भाग लें। कांग्रेस कार्य्यसमिति के प्रस्ताव के सम्बन्ध में पं० जवाहर लाल ने यूनाइटेड प्रेस आफअमेरिका के प्रतिनिधि स्टुअर्ट हेनली से वक्तव्य देते हुए कहा:—"हमें प्रत्येक निर्णय अगस्त सन् ४२ के आधार पर करना होगा। उस प्रस्ताव का जन आन्दोलन वाला भाग अब लागू नहीं किन्तु अन्यभाग तो जैसा का तैसा है ही। उसका परिवर्तन कार्य्यसमिति भी नहीं कर सकती। अभी अखिल भारतीय कांग्रेस गैरकानूनी संस्था है। आश्चर्य है कि सरकार कांग्रेस का गैरकानूनी संस्था बनाकर भी यह आशा करती है कि वह अपनी नीति की पुनः समीक्षा करे। जैसा कहा जा चुका है सन १९४५ सन ४२ नहीं। तब से अब तक महान परिवर्तन न हो चुका है। भारत में कठोर दमन के कारण, जो अब भी उसी प्रकार ज़ारी है हिन्दुस्तानियों की आत्मा कठोर होगई है। पूर्ण स्वतन्त्रता से कम किसी वस्तु को देश स्वीकार न कर सकेगा।"

शिमला सम्मेलन

२४ जून (१९४५) को महात्मा गान्धी, मौलाना आजाद और मियां जिन्ना वाइसराय से अलग-अलग व्यक्तिगत रूप में मिले। कांग्रेस क्षेत्र में इससे संतोष प्रकट किया गया। सबसे मार्के का काम इस सम्बन्ध में गान्धीजी ने किया। उन्होंने सम्मेलन में भाग न लेने की घोषणा कर दी। यद्यपि सम्मेलन के दौरान उन्होंने शिमला में रहने का आश्वासन दिया और स्वीकृति दी कि वे एक सलाहकार की हैसियत से वहाँ मौजूद रहकर वाइसराय कांग्रेस अथवा मियाँ जिन्ना को आवश्यक होने पर सलाह देंगे।

२५ जून को ११ बजे सवेरे वाइसराय भवन की लान पर नेताओं का आगमन आरम्भ हुआ। पहली बैठक में नियम और पद्धति पर बहस हुई। मध्याह्न काल की बैठक के मुख्य वक्ता मौलाना आजाद थे जो सम्मेलन में हिन्दुस्तानी ही में सदा बोले। समानता (Parity) के प्रश्न पर मौलाना ने कहा "कांग्रेस इसके लिये चिन्तित नहीं होती कि किस कौम को कितनी सीटें दी जा रही है बल्कि वह यह देखती है यह प्रतिनिधि किस दरवाजे से आते हैं।" दूसरे दिन पुनः अधिवेशन हुआ, इस क्षणिक बैठक में सम्मेलन ने वाइसराय के शासन परिषद का ध्येय, कर्त्तव्य, और क्षेत्र का सिद्धान्त निर्णय किया। उसी दिन सायंकाल मियाँ जिन्ना के निवेदन करने पर पं० पन्त सिसिल होटल में १३५ मिनट लीग अधिनायक से विचार विमर्श करते रहे। इस बातचीत के परिणाम स्वरूप दोनों दलों को बैठकें होती रहीं। पर पन्तजी ने कोई वक्तव्य न दिया। जिसका परिणाम यह हुआ कि अनेक अफवाहें उड़ीं। इसी बीच मियां जिन्ना और वाइसराय में लम्बी लम्बी वार्तायें हुई और आगामी शुक्रवार तक के लिये सम्मेलन स्थगित कर दिया गया।

गत्यवरोध कहाँ ?

शुक्रवार २९ जून को मौलाना आजाद और जिन्ना ने वाइसराय को सूचित किया कि कांग्रेस और लीग में किसी प्रकार का समझौता नहीं हो सका।

इस निर्णय के फलस्वरूप वाइसराय ने सब दलों से अनुरोध किया कि वे ६ जुलाई तक अपने नामों की सूची देदें और सम्मेलन को १४ जुलाई तक के लिये स्थगित कर दिया। सम्मेलन स्थगित होने के पूर्व नेतागण निम्नलिखित प्रस्तावों स्वीकार कर चुके थे।

(१) जापान के प्रति युद्ध जारी रखा जाय जब तक वह पराजित नहीं हो जाय।

(२) नवीन शासनपरिषद के लिये ऐसे योग्य व्यक्तियों की सूची पेश की जाय जो अवसरोचित निर्णय कर सकें।

(३) नवीन शासनपरिषद के बनते ही भारतीय समस्या को सुलझाने का दीर्घकालीन (Long term) हल निकाले और भावी भारत के नव विधान निर्माण में सहायक हों।

(४) जब तक नवीन विधान न बन जाय वर्तमान विधान के अन्तर्गत शासन सूत्र संचालित करते रहें।

(५) लार्ड वेवल और एमरी द्वारा दिये गये वाइसराय के नकारात्मक अधिकार (Veto) पर दिये गये आश्वासन स्वीकार कर लें।

सभी दलों ने इन सिद्धान्तों को स्वीकार कर लिया। नामावली देना भी स्वीकार कर लिया गया किन्तु लीग ने नव शासनपरिषद के लिये इस शर्त पर नाम सूची देना स्वीकार न किया।

मियाँ जिन्ना का भय

मियाँ जिन्ना ने समानता के प्रश्न पर स्पष्ट करते हुये कहा :—हमें समानता के सम्बन्ध में किसी प्रकार भ्रम नहीं है क्योंकि प्रस्तावित परिषद में मुसलिम कोटा १/३ के अल्प मत में होंगे। हिन्दू कोटा मुसलमानों के समान अवश्य होगा किन्तु साथ ही साथ सिख और अछूत तथा न जाने कौन कौन सदस्य होंगे। इस परिषद में कितने सदस्य होंगे इसका भी हमें पता नहीं। अस्तु इस प्रकार की अस्पष्ट योजना से सहयोग करने में हम असमर्थ हैं।"

आगे चलकर आपने कहा "किसी महत्वपूर्ण विषय पर सिख, अछूत तथा अन्य प्रतिनिधि सम्भवतः कांग्रेस मत का समर्थन करेंगे।" कांग्रेस ने मुसलमानों के प्रतिनिधि चुनने का भी दावा किया है सम्भवतः ऐसा ही दावा अन्य दल भी करेंगे। यद्यपि हम समझौता करने के लिये तय्यार हैं पर यह शर्त हम कदापि स्वीकार नहीं कर सकते कि कोई अन्य दल मुसलमानों के प्रतिनिधि चुनने का दावा करे।"

इसमें ध्यान देने योग्य यह बात है कि आपने अछूतों को भड़काने का भी यत्न किया जिसके गर्भ में अछूतों की समस्या निहित है। आप पाकिस्तान की भाँति अछूतस्थान की माँग को प्रोत्साहित कर बलवान बनाना चाहते हैं। इसी हेतु आपने कहा हमें अछूतों से पूर्ण सहानुभूति है और हम उनकी सामाजिक तथा आर्थिक दशा में सुधार करना चाहते हैं पर उनका मत भी दुर्भाग्यवश कांग्रेस के ही पक्ष में जायगा।

"सिखों के सम्बन्ध में कुछ कहना ही व्यर्थ है क्योंकि वे भारत विभाजन के पूर्णतया विरोधी हैं। उनका राजनैतिक आदर्श और ध्येय कांग्रेस के समान है। अस्तु उनसे हमें कोई उम्मीद नहीं करनी चाहिये। परिषद में दो बृटिश सदस्य भी होंगे। वाइसराय और प्रधान सेनापति। अतः इस परिषद में कांग्रेस बहुमत होना निश्चित है। यद्यपि एमरी और लार्ड वेवल हमें विश्वास दिलाते हैं कि उनका विटो (Veto) अल्प जातियों की रक्षा के लिये होगा। मैं जानता हूँ वह नाजुक परिस्थिति में पड़कर उसका जिक्र न कर सकेंगे।"

"मैं विश्वास करता हूँ कि ९९ प्रतिशत हिन्दुस्तानी मुसलमान लीगी हैं और वे सरकार से समझौता करने के लिये उत्सुक हैं। हम लोग १९३७ से करीब ७० पुर्न निर्वाचन में से एक भी नहीं हारे। प्रान्तीय और केन्द्रीय धारा सभाओं में लगभग ६०० मुसलिम सदस्य हैं जिसमें केवल ३० कांग्रेसी मुसलमान है। केन्द्रीय धारा सभा में एक मुसलमान कांग्रेस टिकट पर नहीं चुना जा सका। अस्तु हमारा अधिकार है कि हम मुसलमान सदस्य निर्वाचित करें।

जिन्ना के इस मिथ्या अभियोग का प्रतिकार पं० गोविन्दवल्लभ पन्त और प्रो० हुमायूँ कबीर ने किया। हम पुस्तक में अन्यत्र दे चुके हैं लीगी सदस्यों की सन् ३७ के चुनाव में क्या स्थिति थी। इस कठोर सत्य के सम्मुख इस प्रकार का अनृत भाषण मियाँ जिन्ना की जिह्वा से ही हो सकता है। नोआखाली डिस्ट्रिक्टबोर्ड के चुनाव में लीग के ५० प्रतिशत सदस्य चुने जा सके और जिला लीग मन्त्री की जमानत तक जब्त हो गई। जहाँ मुसलिम आबादी लगभग ८० प्रतिशत है। स्यालकोट के चुनाव में लीगी बुरी तरह हारे। कैम्पबेलपुर में लीग का एक उम्मीदवार भी कामयाब न हो सका। आसाम और सिन्ध तथा बंगाल में लीग मन्त्रिमण्डल की दुर्गति का हम भलीभाँति दिग्दर्शन करा चुके हैं। इससे मियाँ जिन्ना का लीग द्वारा मुसलमानों के एकमात्र प्रतिनिधित्व का हठ भलीभाँति प्रकट हो जाता है।

लीग का नाटक

कांग्रेस अपनी पूरी ताकत लगा रही थी कि किसी प्रकार समझौता हो जाय उससे मौलाना हुसेन अहमदमदनी और राष्ट्रवादी मुसलिम भी सहयोग कर रहे थे कि किसी प्रकार गत्यवरोध भंग हो। दूसरी ओर काइदेआजम की विजयगीत लीग कार्य्यकारिणी समिति सुन रही थी। उन्होंने निम्नलिखित आपत्ति वाइसराय से पेश की :—(१) शासनपरिषद् में मुसलिम सदस्यों की संख्या कितनी होगी इसका स्पष्टीकरण हो। (२) लीगपेनल का नाम न देगी बल्कि उतने ही सदस्यों का नाम देगी जितने मुसलमान प्रतिनिधि होंगे। (३) जो नाम लीग दे उसे वाइसराय को स्वीकार करना अनिवार्य होगा। यदि किसी नाम पर आपत्ति हो तो उसे अलग करने के पूर्व काइदेआजम को कायल करना होगा। (४) जब तक इसका स्पष्टीकरण न हो जाय लीग मुसलिम नामों की सूची देने से इनकार करती है।

लीग की बाधा

लीग की कार्य्य समिति की ९ जुलाई को बैठक हुई। उसने वाइसराय

को उत्तर देने के लिये मसविदा तय्यार किया। ११ जुलाई को मियां जिन्ना ने वाइसराय से मुलाकात की। वाइसराय ने अपने नामों की सूची दिखा दी। जिसे मियां जिन्ना ने स्वीकार न किया। ११ और १२ के बीच में गान्धीजी और मौलाना आजाद से भी वार्तालाप हुआ। अन्त में वाइसराय ने मौलाना आजाद से कहा कि "लीग के विरोध के कारण योजना अग्रसर करना उनके लिये सम्भव न होगा।" वाइसराय ने अपने अधिकारों का प्रयोग करने की दृढ़ता न दिखाई। जान पड़ने लगा मानो वाइसराय मियां जिन्ना के इशारे पर ही चल रहे थे। इस प्रकार लीग और जिन्ना की आंट में ब्रिटिश कूटनीति एक बार पुन: विजयिनी हुई। मियां जिन्ना के इन प्रस्तावों के ठुकराने पर राजाजी ऐसे आशावादी व्यक्ति भी क्षुब्ध हो उठे।

शिमला सम्मेलन का अन्त

वाइसराय ने १४ जुलाई को सम्मेलन का अन्त करने के लिये अन्तिम अधिवेशन बुलाया। निमन्त्रित नेताओं की उपस्थिति में भाषण देते हुये आपने कहा कि "मैंने दलों से नामावली मांगी और इस विचार से कि एक सूत्र निकालूँ जो सम्मेलन और नेताओं को स्वीकार हो। मुझे लीग और योरोपियन दल को छोड़कर सभों ने सूची दी। मैं कटिबद्ध था कि सम्मेलन असफल न हो। इसलिये मैंने अपने नाम चुने जिनमें लीगी मुसलमान भी थे। मुझे विश्वास है कि अगर सम्मेलन मेरे नामों की सूची को स्वीकार कर लेता तो वह सूची सम्राट की सरकार द्वारा भी स्वीकृत हो जाती। मेरी धारणा है कि मेरा चुनाव शासन परिषद में सन्तुलित प्रतिनिधित्व देता जो प्रत्येक दल के लिये न्याय था।"

मियाँ जिन्ना ने प्रस्ताव ठुकरा दिया

"मैं किसी भी दल के दावे को पूरा पूरा स्वीकार करने में असमर्थ हूँ। जब मैंने अपना सूत्र मियां जिन्ना को समझाया तो उन्होंने कहा कि यह सूची और नीति मुसलिम लीग को स्वीकार नहीं। मिस्टर जिन्ना ने ऐसी दृढ़ता

दिखाई कि उसे देखकर मैंने अनावश्यक समझा और अपनी पूरी सूची जिन्ना को न प्रकट की। अस्तु उसे अन्य नेताओं को दिखाने की भी आवश्यकता न हुई। इसलिये यह सम्मेलन असफल हुआ।"

मियाँ जिन्ना का निदान

लीग के तानाशाह जिन्ना मियाँ ने अपनी शोध का स्पष्टीकरण १४ जुलाई को निम्नलिखित शब्दों में किया :—"अन्वेषण करने पर हमें विदित हुआ कि वेवल योजना केवल एक धोखा है। इसमें शामिल होने का अर्थ यह होगा कि गान्धी प्रधान हिन्दू कांग्रेस जो हिन्दू राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के लिये तत्पर है एक ओर, दूसरी ओर भौगोलिक एकता के सूत्रधार लार्ड वेवल और ग्लैन्सी-खिजर हैं जो पञ्जाब के मुसलमानों में फूट और वैर फैलाना चाहते हैं। लार्ड वेवल की योजना पर स्वीकृति देने का अर्थ यह होगा कि हम स्वयम् अपने मौत के हुक्मनामें पर दस्तखत करें।"

"मैं सन ४० से स्पष्ट रूप से कहता आया हूँ कि यदि हमारे आत्म-निर्णय की माँग न स्वीकार कर ली जायगी हम सरकार की किसी आन्तरिक योजना में भाग न लेंगे। साथ ही साथ बृटिश सरकार जब तक यह आश्वासन न देगी कि युद्ध समाप्त होते ही लाहौर प्रस्ताव के सिद्धान्तिक आधार पर पाकिस्तान की स्थापना हो जायगी हम उससे सहयोग न करेंगे। इस शर्त की स्वीकृति के विना हम आन्तरिक व्यवस्था में सम्मिलित नहीं हो सकते थे। हमारी दूसरी शर्त यह भी है कि मुसलमान अल्पसंख्यक नहीं वरन एक पृथक राष्ट्र हैं। वेवल योजना ने हमारे माँग और शर्तों पर कुठाराघात करने का यत्न किया। यद्यपि यह कहा गया है कि इस योजना से पाकिस्तान की माँग पर बट्टा नहीं लगेगा पर वस्तुतः यह बात सत्य नहीं। प्रत्येक व्यक्ति यह समझ सकता है कि यदि इस योजना को स्वीकार कर लें तो इसका अर्थ यह होगा कि हम पाकिस्तान की माँग पर कुठाराघात कर रहे हैं। दूसरी ओर इससे कांग्रेस की शक्ति बहुत बढ़ जायगी और जो कुछ वह चाहती हैं प्राप्त कर लेगी अर्थात् हिन्दू भारत

की राष्ट्रीय स्वतन्त्रता की स्थापना का मार्ग निष्कण्टक हो जावेगा क्योंकि शासन परिषद की हुकूमत और रवैया समझौते की सरकार की नीति और अनिश्चितकालीय होने के कारण हमारी योजना परास्त हो जावेगी। हमें भय है, बृटिश सरकार और लार्ड वेवल की भारत को विभाजित करने की मंशा नहीं। मिस्टर एमरी ने कामन्स सभा में जो वक्तव्य दिया है उससे भी हमें निराशा प्रकट हुई। उन्होंने श्वेत पत्र में यह स्पष्ट प्रकट कर दिया है कि वे अखिल भारतीय संयुक्त रियासत चाहते हैं। साथ ही साथ वह यह भी कहते हैं कि *"यद्यपि हिन्दू मुसलमानों में समझौता सम्भव न हो"* इसलिये किसी प्रकार का आन्तरिक व्यवस्था अन्तिम समझौते में बाधक न हो चाहे संयुक्त अथवा विभाजित भारत का ही निश्चय क्यों न करे।"

वाइसराय का विटो

मियां जिन्ना ने वाइसराय के सम्बन्ध में आपत्ति करते हुये कहा कि यह अधिकार मुसलमानों को एक तिहाई के अल्प मत श्रेणी में ढकेल देगा क्योंकि सिख अछूत और इसाई जिनका ध्येय संयुक्त भारत और हिन्दू आदर्श के अनुकूल है वह कांग्रेस के साथ हो जायँगे। उनकी सहानुभूति भी हिन्दुओं और कांग्रेस के साथ है। दूसरी अड़चन यह है कि दो मुसलिम सीटों पर कांग्रेस अपना आधिपत्य चाहती है और एक्सेलेन्सी के कृपापात्र खिजरहयात भी पञ्जाब की सेवाओं के लिये एक सीट चाहते हैं। इस प्रकार तीन सीटें निकल जाने पर लीग की दशा शोचनीय हो जावेगी। हमने योजना को खासकर इसीलिये अस्वीकार कर दी कि लार्ड वेवल खिजर को पञ्जाबी मुसलमानों के प्रतिनिधित्व के लिये रखना चाहते हैं। आगे आप पुनः कहते हैं :—

"*ऐसा व्यक्ति चक्षुहीन ही होगा जो लीग को मुसलमानों के मुज्जसिम* नुमाइन्दगी के दावे को ठुकरा सके। यदि हम लार्ड वेवल की योजना स्वीकार कर लेते तो इसका अर्थ यह होता कि हम सत्वहीन हो जाते और अपनी कौम के साथ गद्दारी करलें। इसलिये लाचार होकर हमें योजना ठुकरा देनी पड़ी।"

"नवाबजादा लियाकतअली खां ने सम्मेलन की असफलता का सारा दोष हिन्दू-कांग्रेस-खिजरहयात खाँ और सरवर्टग्लैन्सी (पञ्जाब गवर्नर) के मत्थे मढ़ा। उनके कथनानुसार "इस योजना के कार्य्यान्वित करने का अर्थ पाकिस्तान की मांग खतरे में डालना था। इस योजना में सहयोग कर कांग्रेस "भारत छोड़ो" प्रस्ताव को वलाय ताख रख लार्ड वेवल के चरणों पर झुक गई। कांग्रेस का यह दावा की यह समस्त भारत का प्रतिनिधित्व करती है जनता की आँख में धूल झोंकना है। कांग्रेस शुद्ध हिन्दू संस्था है।"

कांग्रेस दृष्टिकोण

कांग्रेस प्रेसिडेण्ट मौलाना आजाद ने कांग्रेस दृष्टिकोण का स्पष्टीकरण करते हुये कहा :—"अगर बृटिश सरकार कुछ करना चाहती थी तो उसे साम्प्रदायिक अड़चन पर पहले ही विचार लेना चाहता था। उन्हें चाहता था कि किसी दल की विटो की माँग स्वीकार न करते और इस प्रकार कांग्रेस के मार्ग में रोड़ा अँटकाते। यद्यपि हमारे मार्ग में अनेक अड़चने थीं फिर भी रिहा होते ही गत्यवरोध दूर करने के लिये हमने सम्मिलित होने का निश्चय कर लिया। कांग्रेस संगठन का राष्ट्रीय स्वरूप होने के कारण राष्ट्रहित की दृष्टि से सम्मिलित होना आवश्यक हुआ। इसपर भी वाइसराय से हमने जिन अड़चनों की चरचा की उसका उन्होंने सन्तोषप्रद स्पष्टीकरण किया। यदि वर्तमान समझौता हो जाता तो जापान का युद्ध भारत के सिर पड़ जाता और बृटेन इस जिम्मेदारी से मुक्त हो जाता। हमारा यह कर्तव्य हो जाता कि हम जापान के पराजय तक यह लड़ाई लड़ते।"

"अन्त में मियां जिन्ना के असद्भाव के कारण हमारा उनसे किसी प्रकार का समझौता न हो सका। जिन्ना मियाँ इस बात पर अड़ गये कि उनके सिवा मुसलमानों को चुनने का कोई अधिकारी नहीं और न कोई संस्था उनका प्रतिनिधित्व ही कर सकती है। कांग्रेस के लिये ऐसी शर्त स्वीकार करना असम्भव था। हमलोग मुसलिमलीग को संस्था की हैसियत से उचित महत्व

देते हैं पर मियाँ जिन्ना किसी प्रकार के समझौते के लिये तय्यार नहीं थे। वाइसराय ने भी बातचीत के दौरान में कहा कि वे मिस्टर जिन्ना को किसी प्रकार राजी न कर सके। क्योंकि अन्त तक वे यही इसरार करते रहे कि मुसलिम प्रतिनिधियों का चुनाव लीग की वर्किङ्ग कमेटी द्वारा हो। वाइसराय इस शर्त को स्वीकार करने में असमर्थ थे।"

आगे आपने असफलता का कारण बताते हुये कहा कि "हमारी असफलता का पहला कारण मुसलिम लीग है। दूसरा प्रश्न यह है कि लार्ड वेवल को पहले विचार कर लेना चाहिये था कि इस प्रकार की परिस्थिति उत्पन्न हो जाने पर उन्हें अगला कदम उठाना है अथवा नहीं। इस सम्बन्ध में मैं यह कह देना चाहता हूँ कि समझौता न होने की जिम्मेदारी से सरकार बरी नहीं हो सकती। जब तक भारत में तीसरी शक्ति रहेगी भारत में साम्प्रदायिक समस्या का जीवित रहना स्वाभाविक है जो कि समझौते में इसी भाँति बाधक होती रहेगी। आज या कल उन्हें इस समस्या के न्यायोचित निपटारे के लिये दृढ़तापूर्वक खड़ा होना ही होगा। एक बार निश्चय हो जाने पर हमें दृढ़तापूर्वक उस निश्चय की ओर अग्रसर होना पड़ेगा। मुझे इस सम्मेलन में कांग्रेस के रुख के प्रति जरा भी दुःख नहीं है क्योंकि साम्प्रदायिक मसला नया नहीं। एक बार एक निश्चय कर उसपर अग्रसर न होकर हिचकिचाना दुर्बलता है।"

जिन्ना के इस दुराग्रह की देशव्यापी प्रतिक्रिया हुई क्योंकि एक बार यदि वे कांग्रेस से सहयोग कर लेते तो बृटिश कूटनीतिज्ञों को बड़ी जटिल परिस्थिति का सामना करना पड़ता और उन्हें भारतीय मसले को टालने के लिये कोई बहाना सोचने में कठिनाई होती। इसकी सबसे कटु प्रतिक्रिया पण्डित जवाहर लाल पर हुई है और परिणाम स्वरूप उन्होंने एँड़ी चोटी से लीग और जिन्ना का विरोध करने में अपनी शक्ति लगा दी। इसीलिये आपने पाकिस्तान के मसले को हल करने की चार युक्तियों की चरचा की।

(१) गृहयुद्ध द्वारा निपटारा (२) आपसी समझौता (३) अन्तर्राष्ट्रीय

पञ्चायत का फैसला (४) शासकों का निर्णय। इन चारों में पहले के सम्बन्ध में आप इसलिये विरुद्ध है कि वह अहिंसात्मक सिद्धान्त विरोधी है दूसरा सम्भव नहीं प्रतीत होता। अन्तराष्ट्रीय पञ्चायत के फैसले को मानना न मानना बृटिश सरकार की स्वेच्छा पर निर्भर है। (४) निर्णय वह स्वयम् नहीं करना चाहती क्योंकि इसी आधार पर भारत में उन्हें रहने का बहाना मिलता है। इसके अलावा पण्डितजी ने अपने भाषणों में लीग और जिन्ना को चुनौती देकर ऐसी दलीलें पेश की जिसका खण्डन करना लीग के लिये कठिन ही नहीं असम्भव है।

सिख दृष्टिकोण

मास्टर तारासिंह सम्मेलन में सिखों का प्रतिनिधित्व कर रहे थे उन्होंने सिख दृष्टिकोण का स्पष्टीकरण करते हुये कहा। "जिन्ना मियाँ और लीग का साम्प्रदायिक प्रश्न तो सम्मेलन के पूर्व से ही था। देश के नेतागण भी इससे परिचित थे। यह प्रबन्ध तो आरसी था इसके लिये ऐसा अड़ंगा लगाना जिन्ना मियाँ की हठवादिता है। मैंने तो यह सुझाव पेश किया कि इसका निपटारा पञ्चों के निर्णय द्वारा कर लिया जाय। लार्ड वेवल का प्रस्ताव वर्तमान कठिनाइयों को दूर करने का अच्छा और उचित उपाय था। यदि प्रत्येक दल इसको कामयाब बनाने के लिये सहयोग करते तो स्वतन्त्रता प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त हो जाता।"

"पाकिस्तान का झगड़ा लीग और कांग्रेस का ही नहीं यह प्रधानतः मुसलिम-सिख प्रश्न है क्योंकि इसका प्रभाव खासकर सिखों पर ही पड़ता है। इसलिये लीग को यह समझ लेना चाहिये कि जिस प्रकार वे हिन्दू प्रधानता स्वीकार नहीं कर सकते उसी प्रकार सिख भी मुसलमानों का बाहुल्य नहीं स्वीकार कर सकते। पञ्जाब में सिख वर्तमान मुसलिम बाहुल्य के भार से दबे जा रहे हैं और इसका अन्त करने के लिये उस अवसर की प्रतीक्षा में है जो उन्हें युद्ध समाप्त होने पर अवश्य प्राप्त होगा।"

इस प्रकार शाहंशाहे पाकिस्तान के इशारे पर शिमला सम्मेलन समाप्त हो गया। लीग के ओट में नौकरशाही ने अच्छा अभिनय किया। नौकरशाही किस प्रकार मियाँ जिन्ना का समर्थन कर रही है इसकी पोल भी राष्ट्रीय पत्रों ने खोल दी। इस कार्य्य का अभिनय करने के लिये मियाँ जिन्ना को देशी रियासतों की मारफत सरकार उन्हें ६ लाख सालाना खिराज दिया करती है। इसलिये यदि सरकार के क्रीतदास ऐसा करते हैं तो अपना ही नमक अदा करते है।

कान्फरेन्स के आरम्भ में प्रत्येक विवादास्पद विषय का समाधान हो चुका था अस्तु जब लार्ड वेवल को अपना निर्णय और दृढ़ता प्रकट करने का समय आया उस समय सम्मेलन का नहीं अपितु उनके निर्णय का प्रश्न था। अस्तु उन्होंने पुनः सम्मेलन से इस बात की सम्मति भी न ले कि क्या लीग के सहयोग अथवा असहयोग बिना भी योजना कार्य्यान्वित हो सकती है? वाइसराय ने अपनी सूची में मुस्लिम नामों को इस प्रकार चुना था कि यदि लीग से स्वीकार भी होती तो कांग्रेस को वह सूची स्वीकार न होती। दूसरी बात यह है कि वाइसराय ने कांग्रेस की मुस्लिम नामावली से एक भी नाम नहीं लिया था। कांग्रेस इस प्रकार केवल हिन्दू मात्र का प्रतिनिधित्व करने के लिये मजबूर की जा रही थी। अस्तु यह प्रकट हो गया कि यह बृटेन की गुड़ियाचाली मात्र थी और इसका परिणाम यह होता कि क्या बृटेन अपने से भारत को स्वशासन देगा? जिससे वह स्वाधीन हो सके अथवा हमें उस घड़ी की बाट जोहनी पड़ेगी जब अन्तर्राष्ट्रीय कारणों से बाध्य होकर बृटेन भारत को शक्ति हस्तान्तरित करेगा? बृटेन की नीति और वर्तमान परिस्थिति से हमें अपने जाँच की यह कसौटी मिलती है कि "क्या बृटेन भारत से निकलकर हमें आपसी झगड़ों का निपटारा करने का स्वयम् अवसर देगा? अथवा वह जाने के पूर्व हमें आन्तरिक झगड़ों में इस प्रकार फँसा देगा कि उसका निपटारा असम्भव हो जाय। इसका अर्थ यह है कि वह भारत नहीं छोड़ना चाहता और न छोड़ने का यही बहाना बना रखा है।

× × ×

शिमला सम्मेलन के अन्त होने के पश्चात् विश्व के सबसे भयंकर और प्रचण्ड अस्त्र परिमाणु बम के प्रयोग से जापान अस्त्र समर्पण करने को बाध्य हुआ। इस प्रकार पूर्वी और पश्चिमी दोनों क्षेत्रों के युद्ध समाप्त हो गये। सरकार की ओर से चुनाव की घोषणा कर दी गई, किन्तु गत्यावरोध का अन्त करने की दिशा में प्रगति नहीं हुई और ९३ धारा के अनुसार नये चुनाव हो जाने तक फिर ज्यों की त्यों सलाहकारों की सरकार बनी रहने की व्यवस्था कर दी गई।

चुनाव के लिये लीग का नारा "पाकिस्तान" और कांग्रेस का "भारत छोड़ो" घोषित हुआ। केन्द्रीय असेम्बली के चुनाव हो गये जिसमें शतप्रतिशत जनरल और हिन्दू सीटें कांग्रेस को मिलीं। लीग और राष्ट्रवादी मुसलमानों में गहरा संघर्ष हुआ। सरकारी पदाधिकारियों ने लीगी उम्मीदवारों के प्रति इतना ममत्व दिखलाया कि उनके चुने जाने में कोई कठिनाई न हुई। प्रान्तीय चुनाव में भी लीग की स्थिति अच्छी ही रही और अधिकांश सीटें प्राप्त हुईं। यह निश्चय है कि लीगी उम्मीदवारों के साथ सरकारी मुसलिम अफसरों की पूरी हमदर्दी है और परोक्ष अपरोक्ष रूप से वे उनकी सहायता करते रहते हैं। प्रान्तीय मुसलिम निर्वाचन सूची में जैसी धांधली की गई है क्या इसका पर्याप्त प्रमाण नहीं? काशी ऐसे नगर में जहाँ की मुसलिम आबादी ६६००० हो वहाँ ४१००० मुसलिम वोटर हों और राष्ट्रवादी मुसलमानों के १८०० नामों की दरख्वास्त ही गायब हो, इससे बढ़कर और क्या प्रमाण हो सकता है।

दूसरी बात यह भी है कि लीग अब गुण्डाशाही पर उतारू हो गई है। उसे उचित या अनुचित का बोध नहीं रहा। लूट-खसोट मार-पीट दंगा और हुल्लड़बाजी यही उसके चुनाव जीतने का तरीका है। मौलाना आजाद और जमैयतउलेमाओं को भी अपमानित करने में इन्हें लज्जा और संकोच का अनुभव नहीं होता। सच देखा जाय तो लीग की नीति ने मुसलमानों के वीरतामय अतीतको कलंकित कर दिया है। इनके अत्याचारों की कहानी नित्य-प्रति दैनिक पत्रों में प्रकाशित हो रही है। यदि इनकी यही नीति अबाधगति

से चलती रही तो हमें भय है कि एक दिन देशभर में रक्तपात का ताण्डव होने लगे तो आश्चर्य न होगा। इतना उपद्रव करने पर भी लीग का भविष्य उन प्रान्तों में जिसमें वे पाकिस्तान स्थापित करना चाहते हैं, उज्ज्वल नहीं।

बंगाल में कृषक प्रजा, पंजाब में यूनियनिष्ट और सिन्ध में नेशलिष्ट मुसलिम दल लीग का विरोध करने को प्रस्तुत है। भारत के अन्य मुसलिम दल, जिसमें मोमिन, अहरार अनसार, खाकसार, जमैयतउलेमा आदि हैं नेशनलिस्ट मुसलिम पार्लियामेंटरी बोर्ड के अनुसार चलने को कटिबद्ध हैं और लीग का विरोध कर रहे हैं। सीमाप्रान्त में कांग्रेस का बहुमत है। सिन्ध मुसलिम लीग के सभापति जी० एम० सईद भी लीग सभापतित्व त्याग लीग का विरोध कर रहे हैं। ऐसी स्थिति में लीग का भविष्य उन प्रान्तों में जहाँ वह पाकिस्तान स्थापित करना चाहती है अत्यन्त अन्धकारपूर्ण है।

लीग की ओछी और पतित मनोवृत्ति का इसीसे पता चलता है कि वह अपने दल को किस प्रकार निर्देश देती है। नवाबजादा लियाकत अली खाँ ने एक गुप्त सरकुलर में कहा है कि—"यह चुनाव लीग के जीवन-मरण का प्रश्न है इसलिये जाति के जीवन-मरण प्रश्न पर उचित अनुचित उपाय नहीं देखे जाते। जीत के लिये कानूनी गैरकानूनी सभी उपाय जायज हैं। हरएक स्थानीय लीग को तत्काल मजहबी सवाल पैदा कर देना चाहिये ताकि लीगको मुसलमानों की हमदर्दी मिल सके। मुसलमानों में मजहबी सरगर्मी पैदा करने में किसी प्रकार का भय नहीं होना चाहिये, यद्यपि इसका परिणाम अच्छा न हो क्योंकि ऐसा झगड़ा खड़ा होने से कांग्रेस की ताकत कमजोर होगी और हिन्दू सभा की ताकत बढ़ेगी। प्रान्तीय लीगों को सूचना दी जाती है कि वे इस प्रकार का प्रचार करें कि कांग्रेस शासनकाल से कांग्रेस द्वारा बड़ी ज्यादतियाँ हुई और मुसलमानों के साथ कांग्रेस ने बड़ा अन्याय किया।"

लीग का मुखपत्र "डान" तो अनर्गल असत्य का प्रचार करता ही है। प्रचार के लिये लीग कौंसिल ने निम्नलिखित पुस्तिकाओं का वितरण किया। उनके नाम निम्नलिखित हैं:—

(1) Living space for Muslims (2) League not Responsible for Bengal famine (3) Achievement of League Ministories (4) Benefits of Pakistan (5) Place of Ministeries in Pakistan (6) Cripps Talks (7) Simla Conference (8) Sikandar Jinnah Pact.

इसके साथ ही साथ यह भी निर्देश किया जा रहा है कि जहाँ तक हो सके उलेमा-मौलवियों की सेना गाँवों में राष्ट्रवादी मुसलमानों के विरुद्ध भेजी जाय और बताया जाय कि गैर मुसलिम काफिर हैं। इन पुस्तिकाओं का विषय क्या होगा और इसमें सत्य कितने अंश में होगा, इसका अन्दाजा लगाना कठिन नहीं। निश्चय ही मुसलमानों को बहगलाने के लिये जैसी बातें पीरपूर रिपोर्ट में कही गई हैं उसी तरह की बातें घुमा-फिराकर कही गई होंगी। हमें पुस्तिकायें लब्ध नहीं कि उसपर प्रकाश डाल सकें।

इस प्रकार मिथ्या प्रचार और नाजायज तरीके से लीग ने चुनाव में अपना बहुमत प्राप्त कर लिया है। वह अब दिखाना चाहती है कि भारत के ६ करोड़ मुसलमानों की वही प्रतिनिधि संस्था है और उसे ही मुसलमानों की ओर से बोलने का अधिकार है। इसलिये उसका पाकिस्तान का दावा सही है और वह उसका माँग पेश कर सकती है, किन्तु सरकार की कृपा से ६ लाख पानेवाले लीग के सर्वेसर्वा क्या अपने प्रभु की इच्छा के विरुद्ध मुसलमानों को आजादी की लड़ाई लड़ने को संगठित कर सकते हैं? इसका स्पष्ट अर्थ यह है कि लीग के नेतृत्व में भारत स्वाधीन नहीं हो सकेगा। साम्प्रदायिक आग से खेलनेवाली लीग मुसलमानों का हित खतरे में डाल पारस्परिक कटुता फैलाकर, गुलामी, अराजकता और रक्तपात के जंजीरों से देश को जकड़े रहेगी। ऐसी संस्था का जितना ही जल्दी अन्त हो लोक और समाज के लिये हितकर होगा।

× × × ×

सप्रू कमेटी की रिपोर्ट

सन् ४२ से गत्यवरोध दूर करने के लिये एक निर्दल नेताओं की कमेटी बनी जो सप्रू कमेटी कहलाती है। इस कमेटी ने पाकिस्तान और लीग के सम्बन्ध में जो निर्णय प्रकट किया है उसे व्यक्त कर देना आवश्यक है क्योंकि लीग छोड़कर कोई भी राजनैतिक दल ऐसा नहीं जो भारत को खण्डित करने का सिद्धान्त स्वीकार करता हो। इस योजना का विरोध कांग्रेस ही नहीं वरन् प्रत्येक विवेकशील व्यक्ति करता है। संक्षेप में हम इसका पाकिस्तान संबंधी निर्णय दे रहे हैं। कमेटी का कहना है :—

"कमेटी चाहती है कि भारत में एक संयुक्त रियासत हो, जिसमें ब्रिटिश भारत और देशी रियासतें हों। किसी प्रान्त अथवा रियासत संघ से अलग होने अथवा मिल जाने का सिद्धान्त नहीं स्वीकार किया जा सकता। लीग की परिभाषा में भारतीय विधान से किसी प्रकार का सम्बन्ध रखनेवाला पाकिस्तान की सर्व-शक्तिमान रियासत नहीं बन सकती। यदि अल्पसंख्यक जातियाँ अपना अकारण भय त्याग दें कि उनपर बहुसंख्यक का प्रभुत्व स्थापित होगा तो वे एक दूसरे को आदर और सद्भाव की दृष्टि से देखेंगी और अल्प-संख्यक समस्या स्वयमेव इस प्रकार बहुत कुछ मिट जायगी।"

हिन्दू-मुसलिम सम्बन्ध

"अंग्रेज नेताओं का यह कहना कि हिन्दू-मुसलिम भेद-भाव नहीं मिट सकता, अप्रमाणित किया गया है। दो जातियाँ जो हजारों वर्ष से परस्पर प्रेम-भाव और एकता से, वाणिज्य-व्यवसाय और सामाजिक रहन-सहन में एक साथ रह चुकी हों उन्हें चिर-अविश्वास के साथ नहीं रखा जा सकता। इसलिये उन लोगों ने पारस्परिक सहयोग द्वारा अपना रहन-सहन ठीक कर लिया था जो यदि विदेशी शासन में भारत न आ गया होता तो आजतक अवश्य परिपूर्ण हो जाता। यह स्वीकार किया जाता है कि इधर चन्द सालों में दोनों जातियों का सम्बन्ध शोचनीय हो उठा है। किन्तु इसका यह अर्थ

नहीं कि ऐसी दशा हमेशा बनी रहेगी, जिससे यह आवश्यक हो कि वर्तमान संयुक्त विधान और प्रदेशों का विघटन किया जाय। इस प्रकार की चिर-कालीन व्यवस्था चलना सम्भव नहीं कि दोनों रियासतें इतनी शक्तिमान हो जायँ कि भारत से विदेशी शासन का अन्त हो जाय।" सन् सत्तावन के विप्लव के पश्चात् किस प्रकार ब्रिटेन की नीति भारत को विभाजित करती रही है। इसी हेतु आगा खाँ डिप्यूटेशन जो १९०६ में वाइसराय से मिला। प्रति-क्रियावादी ब्रिटिश नेताओं ने किस प्रकार इसका संचालन कर साम्प्रदायिक समस्या की सृष्टि की इसका भली-भाँति रहस्योद्घाटन किया गया है। यह भी प्रमाणित किया गया है कि सारे फसाद की जड़ ब्रिटिश-नीति और शासन-प्रणाली है।

संयुक्त निर्वाचन

"साम्प्रदायिक निर्वाचन केवल अल्पकालीन व्यवस्था है, किन्तु यह कहकर कि हिन्दुओं के हस्तक्षेप से मुसलमानों का उचित प्रतिनिधित्व नहीं हो सकता और सरकार मुसलमानों से प्रतिज्ञा भंग करेगी, इसे स्थाई बना दिया गया। यद्यपि १९३२ में भी मुसलमान संयुक्त निर्वाचन को स्वीकार कर चुके थे। किन्तु ब्रिटिश सरकार की नीति इस सम्बन्ध में स्पष्टरूप से संदिग्ध और अचल थी। कमेटी का कहना है कि गत ४० साल का साम्प्र-दायिक निर्वाचन भारत के लिये सबसे बड़ा अभिशाप सिद्ध हुआ है। जबतक साम्प्रदायिक निर्वाचन प्रणाली रहेगी तबतक भारत की स्वाधीनता अथवा स्वशासन स्वप्नमात्र होगा। अस्तु, स्वाधीनता अथवा स्वशासन प्राप्ति के लिये साम्प्रदायिक निर्वाचन का अन्त कर तत्काल संयुक्त निर्वाच-प्रणाली आरम्भ कर दी जानी चाहिये।

मुसलमान भिन्न कौम नहीं

भिन्न राष्ट्र सिद्धान्त की गवेषणा करते हुए कमेटी की राय है कि:— पंजाब और बंगाल के सम्बन्ध में राष्ट्रीयता की परख से भिन्न राष्ट्रत्व जाति के

आधार पर प्रमाणित नहीं हो सकता। दूसरा आधार मज़हबी हो सकता है वैसी दशा में अन्य जातियाँ भी अपने पृथकत्व की माँग करेंगी और अपनेको भिन्न राष्ट्र बतायेंगी। मुसलमानों का यह कहना है कि उनके वतन में सियासी आजादी होना चाहिये सम्भव नहीं क्योंकि मौजूदा प्रान्तों की हदबन्दी हुकूमत की सहूलियत के ख्याल से की गई है न कि और किसी उद्देश्य से। जिन सूबों को मुसलमान अपना वतन कहने का दावा करते हैं, उसे हिन्दू और सिख भी अपना वतन कहते हैं। इन सूबों की हदबन्दी मजहब कौम और भाषा के लिहाज से नहीं की गई। इसके बाद आत्म-निर्णय सिद्धान्त का विवेचन किया गया है। इस सम्बन्ध में कमेटी का कहना है कि प्रेसिडेण्ट विलसन की परिभाषा के अनुसार आत्म-निर्णय के सिद्धान्त पर गत महायुद्ध (१९१४-१८) में योरुप के जातियों का बँटवारा हुआ, जिससे आत्म-निर्णय के नाम पर योरुप में कितनी छोटी रियासतें बनीं, जिसका परिणाम वर्तमान महायुद्ध हुआ है। यद्यपि उसने आत्मनिर्णय का कारण आर्थिक असमानता बतलाया है जो एक राजनैतिक संगठन में दूसरी जाति अनुभव करती है। इसीलिये रूसी योजना में उन क्षेत्रों का जो आर्थिक रीति से पिछड़े हुए है उन्नति का यत्न किया जा रहा है।

पाकिस्तान की अव्यवहारिकता

भारतीय राजनैतिक परिस्थिति के दृष्टिकोण से विचार करते हुए कमेटी का मत है कि "आत्म-निर्णय के सिद्धान्त का प्रयोग किसी देश के वातावरण के अनुसार किया जा सकता है।" हमारे राजनैतिक परिस्थिति के विचार से अव्यवहारिक है क्योंकि मि० जिन्ना का आयोजित पाकिस्तान बंगाल और पंजाब के हिन्दुओं को स्वीकार नहीं। इसे स्वीकार करने के लिये न तो कांग्रेस और न हिन्दू-सभा ही तैयार है। जिन्ना मियाँ ने राजाजी के सूत्र को भी अस्वीकार कर दिया। अस्तु, हिन्दू, सिख और कांग्रेस इस प्रकार की किसी योजना को नहीं अपना सकती। यदि कोई दल ऐसा करने का साहस भी

करे तो उसे घोर विरोध का स्वागत करना होगा। पञ्चायती निर्णय से देश भर के विभाजन का प्रश्न नहीं हल हो सकता। यदि पाकिस्तान किसी प्रकार देशपर लादा जा सकता है तो उसका दो मार्ग दृष्य हो रहा है या तो ब्रिटिश राज द्वारा दिया जाय अथवा लीग गृहयुद्ध से 'लड़कर लेंगे पाकिस्तान" ले। क्या ब्रिटिश सरकार किसी प्रकार पाकिस्तान का स्पष्ट रूप से समर्थन करने का दावा कर सकती है? वर्तमान महायुद्ध से तो यही निष्कर्ष निकला है कि छोटी रियासतों का जीवन सदैव संकटापन्न होगा। उन्हें अपनी रक्षा के लिये किसी बड़ी रियासत का आश्रय लेना होगा। मुसलिम दृष्टि से पाकिस्तान में दो दूर की रियासतें होंगी जो एक दूसरे से पृथक् होंगी। इनके बीच में हिन्दुस्तान का वृहत् भूखण्ड होगा, क्या ऐसी रियासत अपने पाँवों खड़ी होगी अथवा हिन्दुस्तान का आश्रय ग्रहण करेगी?

डाक्टर मथाई और सर होमी मोदी का मत है कि इस आधार पर पाकिस्तान के लोग पूर्वोत्तर युद्धकाल के स्तर पर रहन-सहन और आय-व्यय का संतुलन न कर सकेंगे। इसमें रक्षा का व्यय पृथक होगा जो सम्मिलित नहीं। वर्तमान स्तर पर जीवन लाने के लिये तथा रक्षण में आवश्यक अस्त्रशस्त्र का उपार्जन बिना हिन्दुस्तान के सहयोग के असम्भव है। रक्षण और आर्थिक योजना की व्यवस्था समग्र भारत के लिये एक प्रकार की सहयोग समिति द्वारा ही साध्य और सम्भव है। कमेटी के तीसरे सदस्य नलिनीरंजन सरकार का कहना है कि यह योजना इतनी दोषपूर्ण और असम्भव है कि इसपर विचार करना व्यर्थ है। इसकी अव्यवहारिकता का कारण बताते हुये आप कहते हैं "एक बार राजनैतिक पृथकता हो जाने पर पुन: आर्थिक और सैन्य एकता की बात सोचना यदि असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है।"

विभाजन योजना अस्वीकृत

कमेटी का यह निर्णय है कि:—"पाकिस्तान से ऐसा साम्प्रदायिक प्रश्न हल नहीं होता वरन नई नई समस्यायें उत्पन्न होंगी। अन्य कारणों को छोड़कर

विचार करने से प्रकट होगा कि भारत का दो स्वाधीन राज्यों में विभाजन हो जाने के कारण दोनों का अस्तित्व संकट में पड़ जायगा। यदि बृटिश सरकार इसमें ईमानदारी से विश्वास करती है कि भारत विभाजन नहीं होना चाहिये तो उसे इस प्रकार की योजना का समर्थन कदापि नहीं करना चाहिये क्योंकि उनका यही कहना है कि भारत की एकता उन्हींके उद्योग से स्थापित हुई है।

कमेटी ने प्रोफेसर कोपलैण्ड के योजना की भी समीक्षा की है जिसका अभिप्राय देश को चार खण्डों में विभाजित करने का है। इनकी योजना के आधार पर दो खण्ड इस प्रकार बनने चाहिये जिनमें मुसलिम बहुमत हो। कमेटी की सम्मति में यह योजना अव्यवहार्य्य, भ्रान्तिपूर्ण और शाब्दिक मात्र है क्योंकि इस विभाजन में परम्परा, इतिहास, भाषा और संस्कृति का कोई विचार नहीं किया गया है। ऐसी केन्द्रीय सरकार केवल भिन्न रियासतों का डाकघर होगा। समानता की ऐसी खाल खींची गई है कि न्यायालयों की नौकरियों में भी समान प्रतिनिधित्व की ओर संकेत कर दिया गया है।

समस्त विभाजन योजनाओं का खण्डन करते हुये कमेटी का मत है कि विभाजन किसी आधार पर स्वीकार नहीं किया जा सकता। यदि यह स्वीकार किया गया तो परिणाम यह होगा कि देश में या तो सदैव गृहयुद्ध होगा अथवा विदेशी शासन से उद्धार होना असम्भव होगा। अल्प संख्यकों की समस्या इससे किसी प्रकार हल न होगी, देश १८ सदी के पिछड़े हुये युग में ठेल दिया जायगा। हिन्दू मुसलिम एकता स्थापित नहीं रह सकती। हिन्दू मुसलमान उसी भाँति एकता से रह सकते हैं जैसे गत हजार बरसों से रहते आये हैं।

समानता का प्रश्न

समानता के प्रश्न पर कमेटी सर्व सम्मत है कि संयुक्त निर्वाचन प्रणाली के आधार पर संरक्षित प्रतिनिधित्व के साथ प्रचलित कर दी जाय। यदि

मुसलमान इस प्रस्ताव को न मानकर हठपूर्वक अपने पृथक प्रतिनिधित्व के लिये अड़े रहे तो हिन्दुओं को यह अधिकार होगा कि वे साम्प्रदायिक निर्णय के परिवर्तन की माँग करें क्योंकि मुसलमानों के हठ के कारण यह प्रस्ताव निष्क्रिय रहेगा।

यदि भारत में जन तन्त्रात्मक प्रणाली स्थापित करना है तो यह आवश्यक होगा कि प्रत्येक बालिग को मत प्रदान करने का अधिकार प्राप्त हो। राष्ट्रीय जीवन में सन १९३७ के चुनाव के पश्चात प्रबल राजनैतिक प्रगति उत्पन्न हुई है ऐसी दशा में उसे मत प्रदान करने का अधिकार देने में कोई आपत्ति नहीं हो सकती क्योंकि उसकी दशा योरोप के उन नर नारियों से बुरी नहीं हो सकती जिन्हें गत महायुद्ध के पश्चात मत प्रदान का अधिकार मिला हुआ है।

पाकिस्तान के माँग के पहले मुसलिम माँगों में प्रान्तों को अवशिष्ट अधिकार देने की माँग की गई थी। यद्यपि केन्द्र को ही सर्व सत्तात्मक और बलवान होना न्यायोचित है किन्तु मध्य मार्गी दृष्टिकोण से यह सिद्धान्त समझौते के तौर पर स्वीकार किया जा रहा है। केन्द्रीय सरकार को कम से कम अधिकार देते हुये उसे यह अधिकार दिया जाना चाहिये कि किसी अंश तक वह धारा सभाओं का एकीकरण और प्रबन्ध कर सके।

अप्रवेश और पृथकत्व

भारत का कोई प्रान्त खण्ड अथवा इकाई रियासतें एक बार हिन्दुस्तानियों द्वारा शासन विधान बना लेने पर न तो उससे पृथक होगी और न वह उसमें पुनः प्रविष्ट हो सकेगी। कमेटी क्रिप्स योजना के दो खण्ड बनाकर अनुरूप विधान बनाने की रूप रेखा का घोर विरोध करती है। उन देशी रियासतों को इतनी सुविधा दी जा सकेगी जो भारतीय संघ विधान को न स्वीकार करें उन्हें संघ से पृथक नहीं किया जा सकता। वे भारतीय फेडरल सरकार की सत्ता के आधीन होंगे। क्रिप्स योजना के अनुसार भारतीय प्रान्तों को पृथक होने का

अधिकार देना सिद्धान्ततः गलत है क्योंकि अब बृटिश भारत एक वैधानिक खण्ड है जो प्रान्तीय एकत्व से बना हुआ है। कमेटी के मत से यह सुविधा अवश्य हटा लेनी चाहिये क्योंकि इसका परिणाम विपरीत होगा।

विधान निर्णायक समिति को एक राज्य के आधार पर विधान बनाना होगा। इस निर्णायक समिति का संघटन क्रिप्स प्रस्तावित सूत्र में कुछ अदल बदल कर स्वीकार कर लेना चाहिये। इसके १६० सदस्य निम्नलिखित रूप में होंगे। वाणिज्य व्यवसाय, विशेष स्वार्थ, भूस्वामी, विश्वविद्यालय, श्रम, महिला—१६, हिन्दू ५१; मुसलमान ५१ अछूत २०; हिन्दुस्तानी ईसाई ७; सिख ८; प्रादेशिक जातियाँ ३; एंग्लोइण्डियन २ योरुपियन १; अन्य १ = १६०। क्रिप्स योजना से कमेटी का मतैक्य नहीं। क्रिप्स साहब ने अपनी योजना में समांशिक प्रतिनिधित्व द्वारा राष्ट्रीय विधान विधायक समिति की सलाह दी है। इसका परिणाम यह होगा कि व्यवस्थापिका सभा में वर्ण प्रतिनिधित्व, स्थार्थ और श्रम पूंजी के आधार पर होता और आज जैसे प्रतिनिधित्व का अनुकरण होता। कमेटी इसमें उपरोक्त मार्ग का अनुसरण कर साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व का अन्त ही साम्प्रदायिक कटुता का शमन होगा।

विधान समिति का कोई भी निर्णय जब तक उसके ३/४ सदस्य उपस्थित होकर उस निर्णय के पक्ष में मत दान न करें न मान्य होगा। इस प्रकार का नियंत्रण कर कमेटी जनमत को प्राधान्य देती है।

अल्प संख्यक कमीशन

केन्द्र और प्रान्तों में पृथक पृथक अल्प संख्यक कमीशन नियुक्त होगा। इसमें प्रत्येक सम्प्रदाय के प्रतिनिधि होंगे। इसके उद्देश्य अल्प संख्यक जातियों के हितों का संरक्षण कर यह नियन्त्रण रखना होगा कि कोई वर्ग अपने प्रतिनिधित्व से असमान न हो जाय। यह कमीशन अपनी सम्मति प्रधान मन्त्री

को देगा। उसका यह कर्त्तव्य होगा कि वह व्यवस्थापिका के समक्ष उसका विवरण देकर उसका कारण भी बतायें।

कमेटी की विस्तृत रिपोर्ट पढ़ने से इसके रचयिताओं का अध्यवसाय और अनुभव प्रकट होता है। भारतीय प्रश्न को लेकर इस जैसी कोई योजना अब तक नहीं बनी है यद्यपि यह कहना कठिन है कि सक्रिय होने पर यह कितनी व्यवहार्य्य है। भारतीय कांग्रेस और अन्य दलों की सम्पूर्ण स्वाधीनता की माँग पूरी नहीं होती। इस विधान को कार्य्यान्वित करने पर औपनिवेशिक स्वराज्य अवश्य प्राप्त होता है। यदि स्टैच्यूट आफ वेस्ट मिनिस्टर (१६३१) की व्याख्या में देश का विधान बन जाय तो देश को स्वतन्त्रता प्राप्त होने में देर न लगेगी क्योंकि इससे उपनिवेशों को साम्राज्य संगठन से पृथक होने का अधिकार प्राप्त हो जाता है। ऐसी परिस्थिति में यदि प्रगतिकालीन विधान में जाँच के रूप में दे दिया जाय तो उससे हमारे मार्ग में कोई कठिनाई न होनी चाहिये।

भारत के महत्व का ऐसा प्रश्न नहीं जिसका विचार कमेटी ने न किया हो। कमेटी की सम्मति में एक भारतीय संघ बनना चाहिये, जिसमें ब्रिटिश भारत और देशी रियासतें दोनों हों। यह प्रवेश और पृथकत्व को आवश्यक समझ कर उसे महत्व नहीं देती, क्योंकि विधान में ऐसी व्यवस्था रहने पर प्रान्त और रियासतें विघटन की ओर आकृष्ट होंगी। पाकिस्तान का विरोध किया गया है। राजाजी के सूत्र को भी कमेटी ने अस्वीकृत किया है। यद्यपि कमेटी की धारणा है कि अल्प-संख्यकों को सहयोग का संकेत करना चाहिये। इसी आधार पर समान प्रतिनिधित्व की नीति स्वीकार की गई है। यह समानता केन्द्रीय धारा सभा और केन्द्रीय शासन में होगी। यह समानता इसी आधार पर की गई है कि संयुक्त निर्वाचन हो और आवश्यकतानुसार संरक्षण भी दिया जाय। यदि मुसलमान इस प्रस्ताव को अस्वीकृत कर दें तो हिन्दुओं को भी साम्प्रदायिक निर्णय के विरुद्ध आन्दोलन कर उसे पलटवाना

होगा। कमेटी जिस आधार पर भारत-विधान बनाने की रूप-रेखा प्रकट करती है, वह कांग्रेस दृष्टिकोण से भिन्न है। कांग्रेस ने अपने निर्वाचन घोषणा में जो रेखा बनाई है उसका स्पष्टीकरण पं० जवाहरलाल के आसाम में दिये गये भाषणों से भली भाँति प्रकट किया।

कमेटी ने भारत विभाजन का घोर विरोध किया है। विभाजन की दो प्रकार से संभावना हो सकती है। पहली ब्रिटिश नीति द्वारा दूसरी गृह-युद्ध द्वारा। यह दोनों प्रकार अनावश्यक है। रिपोर्ट में एक साधारण त्रुटि भी है वह है उन निर्णयों के सम्बन्ध में जिस पर विधान-समिति का मतैक्य नहीं। ऐसी दशा में उसका निर्णय ब्रिटिश सरकार पर छोड़ दिया गया है। इस दृष्टि से यह प्रस्ताव क्रिप्स प्रस्तावों से भी पिछड़ा हुआ है और कहीं-कहीं तो इससे भी अधिक अकार्यान्वित है। अस्तु, यह कदाचित् ही देश को स्वीकार्य होगा।

देशी रियासतों के सम्बन्ध में कमेटी की राय है कि वह ब्रिटिश छत्र से शासित न होकर भारतीय संघ सरकार द्वारा शासित हों। इस प्रकार का नियन्त्रण कर कमेटी ब्रिटिश प्रतिक्रियावादी राजनीतिज्ञों को रियासतों को अपना अखाड़ा बनाने से रोक देती है जो किसी समय दुर्गपंक्ति की भाँति स्वतन्त्र भारत और देशी रियासतों के बीच मुठभेड़ करा दे सकेंगे। अपने दोषों के साथ रिपोर्ट ब्रिटिश सरकार और उसकी नीति का पृष्ठ पोषण न कर विरोध करती है और कहती है कि जबतक भारत में सरकार की विभाग-विभाजन नीति चलती रहेगी। देश की समस्या हल न होने का उत्तरदायित्व उसी के सिर होगा। सब दलों में मतैक्य न होने का बहाना केवल देश की प्रगति रोकने के लिये है जो साम्राज्यवादी सरकारें आधीनस्थ देशों को आधीन रखने के लिये किया करती है। ब्रिटिश साम्राज्यवादी इस परम्परा से भिन्न नहीं।

रिपोर्ट पढ़कर यह प्रसन्नता अवश्य होती है कि इसके अध्यक्ष सर तेज-बहादुर सप्रू, सर एन० गोपाल स्वामी, कुँवर सर जगदीश प्रसाद, डाक्टर

जयकर प्रभृति जो भारत सरकार के कल-पुरजे रहकर सरकार के विशेष कृपापात्र और भक्त थे, सरकार की नीति का भण्डाफोड़ किया है। उनके प्रस्ताव कार्यान्वित हो सकते हैं या नहीं ? इसका निर्णय लोकमत द्वारा होगा। हम यह अवश्य कह सकते हैं कि जिस वातावरण में इन लोगों ने अपना जीवन व्यतीत किया, उस दृष्टि से इनका परिश्रम प्रशंसनीय और सराहनीय है।

× × × ×

भारत-विभाजन योजनाओं से भिन्न अनेक योजनाओं की आजकल समय-समय पर चरचा हुई है। विस्तारभय से केवल उनका संक्षेप में उल्लेख कर देते हैं। यथास्थान पुस्तक में उनकी आलोचना कर दी गई है। योजनायें निम्नलिखित है :—

क्रिप्स योजना

इस योजना की समीक्षा भली-भाँति कर दी गई है।

कोपलैण्ड की खण्डीकरण योजना

इसकी आलोचना पुस्तक में आर्थिक दृष्टि से पाकिस्तान शीर्षक में कर दी गई है। खण्डीकरण योजना का सूत्र आपने सर सिकन्दर हयात की "Out lines of a sehme of the Indian federation" नामक पुस्तिका से लेकर (The Future of India) "भारत का भविष्य" नामक पुस्तक रची है। इसकी प्रस्तावना में भारतीय जन-गणना १९४१ के सरकारी कमिश्नर यीट्स (M. W. M. Yeatts) ने इस योजना पर जोर दिया है। इसका ढाँचा अमेरिकन टी० वी० ए० स्कीम से मिलता-जुलता है।

सर सुल्तान अहमद की योजना

वाइसराय के युद्ध-कालीन शासन-परिषद् के सदस्य और आल इण्डिया रेडिओ के हिन्दुस्तानी प्रवर्तक सर सुल्तान ने A Treaty between India and the United Kingdom नामक पुस्तक में अपनी योजना का विस्तार किया है। आप पाकिस्तान का विरोध कर कहते हैं कि "यदि पश्चिमोत्तरी और पूर्वोत्तरी पाकिस्तान की रियासतें सर्व-शक्तिमान हों और शेष भारत से उनकी किसी प्रकार की वैधानिक एकता न हो तो वह कार्यान्वित नहीं हो सकेगा क्योंकि न तो उनकी सैनिक संगठन और न आर्थिक भित्ति ही बलवान होगी। वे भारत के उन मुसलमानों के साथ भी अन्याय करेंगे जो हिन्दुस्तान में होंगे, क्योंकि उनका जीवन सुख और समृद्धिमय न हो सकेगा। इसलिये इसका कोई दूसरा पहलू उपस्थित किया जाना चाहिये। ऐसा करने में हमें यह भूल जाना चाहिये कि हमें हिन्दुस्तान भर के उन मुसलमानों को निर्भय और सन्तुष्ट कर देना होगा जो हिन्दू बहुमत के कारण भयभीत हो रहे हैं।* योजना पढ़ जाने पर हिन्दुओं के साथ अन्याय और अनौचित्य की भावना प्रकट होती है। सर सुल्तान साम्प्रदायिकता से भली-भाँति रंगे हुए हैं। हिन्दू-संस्कृति सभ्यता पर कुठाराघात करने में अपनी वकालत चमका दी है। भाषा और लीपि का प्रश्न हल करने के लिये आप रोमन लीपि में हिन्दुस्तानी भाषा चाहते हैं।

सर अरदेशर दलाल की योजना

सर अरदेशर पारसी हैं। अस्तु, उनके ऊपर साम्प्रदायिकता का आरोप नहीं लगाया जा सकता। वे संयुक्त सरकार बनने की सिफारिश करते हैं।

---

* Sir Sultan Ahmed—A Treaty between India & U. K. page 88.

चाहे वह केन्द्रीय अथवा प्रान्तीय हो। मुसलमानों का प्रतिनिधित्व व्यवस्थापिका और मन्त्रि-मण्डल में स्थिर कर दिया गया है। अल्प-संख्यकों को भी ५०% तक प्रतिनिधित्व प्राप्त करने का आश्वासन दिया गया है। जहाँ तक रिपोर्ट का साम्प्रदायिकता से सम्बन्ध है, उस दोष से योजना पक्षपात रहित है। इस योजना का प्रकाशन आपके कतिपय लेखों द्वारा हुआ था, जिसे आपने सन् १९४३ की मई में प्रकाशित कराया था।

डाक्टर राधा कुमुद मुखर्जी की योजना

डाक्टर राधाकुमुद प्राचीन भारतीय इतिहास के आदरणीय अध्येता और लखनऊ विश्वविद्यालय के इतिहास के प्रोफेसर हैं। आपकी "A New Approach to Communal Problem" बम्बई के पद्मा पब्लिकेशन द्वारा प्रकाशित हुई है। उसमें आपने अपने विधान की रूप-रेखा खींची है। आपका अल्पसंख्यक मसलों पर विशेष अध्ययन है अस्तु आप जो कुछ कहते हैं अधिकारपूर्वक कहते हैं। आपका तर्क विचारणीय है जिसका उल्लेख किया जा चुका है। पुस्तक में इस पर भली-भाँति प्रकाश डाला गया है कि रूस, कैनाडा, टर्की आदि देशों ने अल्प-संख्यकों का प्रश्न किस प्रकार हल किया।

कम्यूनिस्ट पार्टी का पाकिस्तान समर्थन

कम्यूनिस्ट पार्टी का पाकिस्तान के समर्थन की प्रेरणा स्टालिन के लेखों† से मिली है जिनके आधार पर कम्यूनिस्ट पार्टी का अक्टूबर क्रान्ति के पश्चात् विकास हुआ है। स्टालिन ने रूस की कम्यूनिस्ट पार्टी का विधान बनाया था। उसमें जिन सिद्धान्तों का उन्होंने प्रतिपादन किया है वह रूस

† M. Stalin—Marxism and the National and Colonial Question.

के अनुकूल है न कि भारत के। स्टालिन ने राष्ट्र की जो व्याख्या की है क्या इसके अन्तर्गत मुसलमान लीग की धारणा और व्याख्या के अनुसार आ सकते हैं ? भारतीय कम्यूनिस्ट यह स्वीकार करते हैं कि उनकी परिभाषा के अनुसार मुसलमान भिन्न राष्ट्र नहीं। यद्यपि श्री पी० सी० जोशी यह प्रतिपादन करते हैं कि भारत अनेक जातियों का कुटुम्ब मात्र है।‡

डाक्टर अम्बेडकर की योजना

डाक्टर अम्बेडकर अछूत जाति के नेता और वाइसराय की शासन-परिषद् के सदस्य रह चुके हैं। आप गत गोलमेज सम्मेलनों में भी भाग ले चुके हैं। आपने हाल में एक योजना प्रकाशित कर साम्प्रदायिक समस्या हल करने का यत्न किया है जिसे वे पाकिस्तान से अच्छा कहते हैं। वस्तुतः वह क्या है इसका निर्णय जनमत स्वयं कर देगा। उनका हाल यह है कि *बहुसंख्यक अन्योपेक्षा बहुसंख्यक रहेंगे, किन्तु वह सम्पूर्ण बहुमत नहीं प्राप्त* कर सकेंगे। यह सिद्धान्त उन सब प्रान्तों में लगाया गया है जिनमें हिन्दू या मुसलिम बहुमत हैं। इस प्रकार बहुसंख्यकों को ४०% से अधिक प्रतिनिधित्व नहीं दिया गया है। डाक्टर साहब राष्ट्रीय पंचायत का विरोध करते हैं जो उनके विचार से अनावश्यक है। भारतीय शासन-विधान (१९३५) में आवश्यकता से अधिक वैधानिक विषय का समावेश किया जा चुका है; वह उपनिवेशिक स्वराज्य से मिलता-जुलता है। उन्होंने व्यवस्थापिका, शासन और नौकरियों में भिन्न-भिन्न जातियों का प्रतिनिधित्व स्थिर कर दिया है। आप हिन्दू-मुसलमान और अछूतों को समान प्रतिनिधित्व देने का यत्न करते हैं और इस रोग को दूर करने का यही उपाय बताते हैं। पर इसमें सबसे बड़ा दोष यह है कि कोई वर्ग अछूत प्रतिनिधियों को अपनी ओर मिला

‡ P. C. Joshi—They Must Meet Again.

कर मन्त्रि-मण्डल बना सकता है। यह अन्य अल्प-संख्यक वर्गों को किसी प्रकार महत्व दिये बिना अछूतों को ट्रैम्पकार्ड दे देते हैं। देना स्वाभाविक भी है, क्योंकि अपने वर्ग को महत्व देने की आकांक्षा निन्दनीय नहीं कही जा सकती।

श्री मानवेन्द्रनाथ राय का प्रस्तावित विधान

श्री राय प्रगतिवादियों में अग्रणी हैं। आप किसी समय स्टालिन के साथ रूस में भी काम कर चुके हैं। यह प्रधान समस्याओं और विवादास्पद विषयों पर विचारशील अध्ययन है, किन्तु योजना समूची नहीं क्योंकि इसमें विधान का सविस्तार वर्णन नहीं किया गया है। मुख्य विषयों में निम्नलिखित हैं :—

(१) शक्ति हस्तान्तरित करने का विधान (२) राज्य-निर्माण (३) अधिकार प्रयोग। "योजना का ध्येय मूल प्रश्नों का उत्तर देना है और विवादास्पद विषय को सुलझाना। इस मसविदे की मूल कल्पना यह है कि लोकतन्त्रात्मक विधान सारे भारत की जनता के हाथ में अधिकार आने की बात सोचकर ही आगे बढ़ता है। क्रान्ति के बिना विधान सम्मेलन अव्यवहार्य है। अतः अधिकार हस्तान्तरित करने के लिये ब्रिटिश पार्लियामेंट ही पहले कदम उठायेगी, जो कानून और जाब्ते से भारतीय जनता के हाथ अधिकार हस्तान्तरित करेगी। दूसरे यह भारत में एक वैधानिक सत्ता का जन्म देगी, ताकि भारतीय जनता प्रभु सत्ता के अधिकार को व्यवहृत कर सके। इसके लिये पार्लियामेंट एक बिल द्वारा अधिकार हस्तान्तरित करने के लिये कुछ व्यक्ति नियुक्त करेगी, जिसका अधिकार देशी रियासतों और भारत के सभी प्रदेशों पर प्राप्त होगा। अधिकृत सरकार किसी निर्वाचित संस्था की उत्तरदायी न होगी। यही सीमा और प्रतिनिधित्व का निर्धारण करेगी। एक गवर्नर जनरल ऐसी ही स्थाई सरकार की नियुक्ति करेगा। इस समिति को अधिकार

होगा कि वह सभी झगड़े के प्रश्नों का निबटारा करे। देशी नरेशों की स्थिति से उत्पन्न होनेवाली कठिनाई को दूर करने के सम्बन्ध में यह उपाय बताया गया है कि ब्रिटिश सरकार उनसे उनके अधिकार त्याग के लिये पुनः समझौता करे तथा उनको सम्मानजनक रीति से जीवन यापन करने के लिये कुछ भत्ता नियुक्त कर दे। विधान में मौलिक सिद्धान्तों और अधिकारों की चर्चा की गई है। 'सभी निर्वाचित संस्थाओं में अल्प-संख्यकों के अधिकार पृथक निर्वाचन की पद्धति से अनुपातिक प्रतिनिधित्व द्वारा सुरक्षित रहेंगे।' संघ-राज्य का ढाँचा और रूप के सम्बन्ध में कहा गया है कि 'जो प्रान्त संघ-राज्य से पृथक रहना चाहेगा वह उसकी सम्बद्ध इकाई न बन सकेगा।' इसमें यह भी आयोजन है कि किसी प्रान्त की कौन्सिल द्वारा यदि यह प्रस्ताव रखें कि उनका प्रान्त संघ से पृथक हो जाय तो यह तभी सम्भव हो सकेगा जब प्रान्त के बालिग जनमत का दो तिहाई मत इसके पक्ष में हो। भारत का संघराज्य अकात मुद्रा और रेलवे व्यवस्था आदि का पारस्परिक हित के प्रश्नों पर सहयोग और पारस्परिक मैत्री द्वारा संधि कर लेगा।' इसी प्रकार की इसमें कितनी ऐसी बातें हैं जो श्रीराय के हिमालीय प्रवास के समान ही हिमालीय हैं। इस प्रकार की योजनाओं द्वारा लीग का पृथक्करण विष शान्त होने का नहीं। उसे तो तत्कालिक विभाजन चाहिये। हिन्दू-मुसलिम एकता का प्रश्न उसके लिये गौण हो गया है। वह अपनी ही ज़िद पर अड़ी रहेगी और "लड़कर लेंगे पाकिस्तान" की रट लगाती रहेगी। उसका इसीमें हित है, क्योंकि अंग्रेज़ों के रहते उनका बोलबाला रहेगा। सत्य, न्याय और औचित्य को तिलांजलि देकर देश का मूलोच्छेद होता रहेगा। यही बृटिश कूटनीति है और पाकिस्तान के गर्भ में निहित रहस्य।

॥ इति ॥

उत्तराभास

पुस्तक लेखन समाप्तकर मुद्रणालय से प्रकाशित होने में जितना समय लगा है उतने में विश्व की राजनैतिक परिभाषा और वातावरण में आकाश पाताल का अन्तर हो गया है। समुद्र में कितनी तरंगे उठी और गंगाजी में कितना जल प्रवाहित हुआ है इसका अनुमान करना कठिन है। राजनीति काल चक्र की भाँति गतिमान है अस्तु वह बिना किसी रुकावटके अपनी मन्थरगति पर चलाता ही रहेगा। लीग या लीग के मसीहा पाकिस्तान की अटूट रट लगाते रहें किन्तु राजनैतिक गति रोकने की क्षमता उनमें नहीं यद्यपि उन्हें केवल पाकिस्तान और पाकिस्तान ही चाहिये।

शिमला सम्मेलन का अन्त हो जाने पर भी लीग और उसके फयूरर के हठधार्मी का श्राद्ध न हो सका। ब्रिटेन में लेबर मन्त्री मण्डलने आते ही भारतीय गत्यवरोध का अन्त करने की सक्रियता दिखाने लगा। उसकी धारणा है कि भारत का गत्यवरोध दूर होना नितान्त आवश्यक है। भारतका प्रश्न दिनो दिन इतना जटिल होता जा रहा है कि उसका किसी न किसी प्रकार का हल हो जाना ही ब्रिटेन के लिये हितकारी है। वह समय नहीं रहा जब दमन और मशीनगनों के बल पर भारत में ब्रिटिश नौकरशाही चलती रहे। नौकरशाही के ढाचें में क्षयकीट का प्रवेश सभी ब्रिटिश कूटनीतिज्ञ समझने लगी हैं अस्तु उनकी भी यही धारण है कि भारत स्थायी प्रबन्ध भले ही न हो किन्तु कुछ ऐसा प्रबन्ध तो करना होगा जिससे भारतीय लोकशक्ति का ब्रिटेन विरोधी संगठन अवरुद्ध हो जाय। इस कला में ब्रिटिश कूटनीतिज्ञ दक्ष हैं।

शिमला सम्मेलन के नाश से देश के राजनैतिक क्षेत्रों में क्षणिक उदासी छा गई। जिन्ना साहब ने लीग को लेकर जिस प्रकार का सौदा करना चाहा

था उसमें उन्हें सफलता न मिली। लार्ड वेवल ने आरोप स्वयम् अपने माथे ले लिया। यद्यपि न्यायतः इसकी असफलता का साराकलंक जिन्ना साहब पर ही है।

कुछ ही दिनों बाद मन्त्री मण्डल के आदेश पर देश में चुनाव की घोषणा कर दी गई। फल स्वरूप कांग्रेस और लीग दोनों अपना अपना मसला लेकर चुनाव के मैदान में आडटे। कांग्रेस ने एक लम्बा चौड़ा मेनिफेस्टो निकाल कर "भारत छोड़ो" के नाम पर जनमत का आह्वान किया। लीग के पास तो कोई मसला नहीं। वह भारत को आजाद करने के प्रश्नपर विचार ही नहीं करती क्यों कि उसे तो पाकिस्तान चाहिये जिसकी रक्षा के लिए भारत में अंग्रेजों का सत्व स्थाई करना होगा। इसलिये उसने मुसलमानों को मजहब के खतरे के नाम से पुकारा। मुसलमानों को नींद से जगाने के लिये मजहब की पुकार ही सब से प्रभावशाली वस्तु है। मजहब में तर्क और बुद्धि का स्थान नहीं। वह विश्वास और अन्धविश्वास की चीज हो रहा है। यद्यपि आज का शिक्षित वर्ग इस प्रकार के तर्क को सुनने के लिये तय्यार न होगा। हमसे यदि आज कोई कहे कि "आपके धर्म पर वज्र पड़ा रहा है" तो मैं उसका यही अर्थ लगा कि यह पागलपन मात्र है। जो हो अलीगढ़ के छात्रों ने जिस प्रकार का अलीगढ़ काण्ड कर डाला, दिल्ली में लीग व्यवस्थापकों की मजलिस में फिरोजखाँ नून और शुहरावर्दि ने जिस प्रकार का प्रलाप कर डाला है उस से हमें यह स्पष्ट प्रकट हो जाता है कि आज भी मुसलिम लीग और उसकी जमत के लोग कितने जड़ता ग्रस्त है। एक व्यक्ति जो भारत का हाई कमिश्नर रह चुका हो; और दूसरा व्यक्ति जो इस प्रलाप के दो ही चार दिन बाद बंगाल का प्रधान मन्त्री हो, इस प्रकार हिन्दू जाति, धर्म और सभ्यता पर कुठाराघात करे। यह कहाँ तक क्षम्य और सहनीय हो सकता है? किन्तु इसी प्रकार के प्रलाप और उत्तेजन द्वारा लीग ने वैमनस्य उत्पन्न कर हिन्दू मुसलिम एकता के परम्परागत सहिष्णुता पर आघात कर ऐसा

वातावरण उत्पन्न कर डाला है जिससे यह प्रतीत हो रहा है कि हिन्दू मुसलिम प्रश्न कभी हल न हो सकेगा।

लीग के अग्रनेताओं ने मुसलिम चेतना के जागरण का यही मार्ग ग्रहण किया है। वह इस उद्योग में लगे हैं कि मुसलिम जनता का प्रतिनिधित्व लीग के सिवा कोई नहीं कर सकता। शिमला सम्मेलन में मिस्टर जिन्ना ने यह चुनौती दी है कि यदि कोई संस्था भारत के मुसलमानों की वास्तविक प्रतिनिधि है तो वह लीग ही है। उन्होंने बार-बार यह दुहराया कि कांग्रेस एक हिन्दू संस्था है और वह हिन्दुओं का प्रतिनिधित्व करती है। राष्ट्रवादी, जमैयत और अन्य मुसलिम संगठनों के विरुद्ध प्रचार किया गया और कहा गया कि कांग्रेस ने उन्हें उभाड़ा है। यह सुझाया गया कि उनके मजहब को कुफ्र से लीग ही बचा सकती है। इन संस्थाओं का विरोध करने में लीग ने सभी प्रकार के वैध और अवैध उपायों से काम लिया। लीग ने जिस प्रकार की गुण्डाशाही अपनायी उसका चित्रण समाचार पत्रों में भलीभाँति हो चुका है। निःसन्देह यदि लीग वाले इस प्रकार उपद्रव न मचाते तो उन्हें चुनाव में वह सफलता मिलनी असम्भव थी जिसे वे आज पा सके हैं।

इस प्रकार के प्रचार ने लीग विरोधियों में भी संगठन और जाग्रति उत्पन्न कर दी जिसका परिणाम यह हुआ कि लीग से डट कर मोरचा लिया गया। लीग केवल मुसलिम जनमत का २/३ मत अपने अनुकूल प्राप्त कर सकी। यद्यपि लीग विरोधी उम्मीदवारों को केवल १।३ मत मिले और अधिकांशों को हारना पड़ा किन्तु लीग का दावा तो टूट ही गया। २।३ जनमत पर लीग का एकमात्र मुसलमानों की प्रतिनिधि संस्था होने का दावा स्वीकार नहीं किया जा सकता। दूसरा प्रश्न यह भी उपस्थित हो जाता है १।३ मुसलमानों ने जिन्होंने लीग के विरुद्ध वोट दिये यह प्रमाणित कर दिया कि लीग का पाकिस्तान की माँग मुसलमानों को भी स्वीकृत नहीं; यह केवल उन्हीं लोगों की माँग है जो अपने स्वार्थ के आगे देश का प्रश्न स्थगित कर सकते हैं। पाकिस्तान की

माँग के साथ शासकवर्ग का स्वार्थ किस प्रकार जुड़ा हुआ है कहने की आवश्यकता नहीं। इस पर पूर्व पृष्ठों में भलीभाँति प्रकाश डाला जा चुका है।

चुनाव में लीग के समर्थक मुसलमानों का साथ कहीं खुलकर और कहीं छिप कर सरकारी मुसलिम अधिकारियोंने साथ दिया। बंगाल के एम. एल. सी. प्रोफेसर हुमांयूँ कबीर ने इस सम्बन्ध में एक लेख प्रकाशित कर अभियोगों को प्रमाणित किया है। उन्होंने प्रमाण द्वारा लीग की धाँधली और अवैध उपायों को सिद्ध कर दिया है। उनका कहना है कि यदि खुलकर सरकारी अफसर लीग उम्मीदवारों की मदद न करते तो उनकी जीत आसान नहीं थी। अन्यदलों का जोर भी कम नहीं था किन्तु सरकारी सहायता मिलने पर तो सबल भी निर्बल हो जाते हैं चाहे यह स्थिति क्षणिक ही हो। इस प्रकार प्रत्येक प्रान्तों में खुलकर नौकर शाही के मुसलिम पेंच पुरजे हाकिमों ने लीग उम्मीदवारों की सहायता की। इसका परिणाम यह हुआ कि लीग टिकट पर खड़े उम्मीवारों ने देश भर की मुसलिम सीटों का दो तिहाई हिस्सा प्राप्त कर लिया। परिशिष्ट दी गई तालिका से स्पष्ट हो जायगा कि गत चुनाव में कांग्रेस, लीग, राष्ट्रवादी और अन्यदलों की क्या स्थिति थी।

मुसलिम लीगने सभी मुसलिम सीटों के लिये उम्मीदवार खड़े किये। लीग का सर्वत्र बहुत जबरदस्त विरोध हुआ। लीग के सरकार की प्रकाश्य और अप्रकाश्य सहायता मिलने पर भी करीब एक तिहाई विरोधियों की ही जमानतें जब्त हो सकीं। हाँ एक वस्तु इसमें स्पष्ट है। वह है लीग का गैर मुसलिम प्रान्तों में बहुमत। संपूर्ण रूप में लीग के विरुद्ध पर्याप्त वोट मिले। परिणाम यह हुआ कि वह किसी प्रान्त में इतना बहुमत न प्राप्त कर सकी कि स्वत: मन्त्री मण्डल स्वत: अपनी शक्ति पर अकेले बना सके। सरकारी पक्षपात का सिन्ध से बढ़कर सभ्य संसार में प्रमाण मिलना कठिन है। यहां के गवर्नर सर आर. एफ. मूडी अपनी लीग और दमनप्रियता के कारण भविष्य में काली स्याही से अंकित किये जायँगे। स्मरण रहे कि यही महाशय सन १९४२ के आन्दोलन

कालमें यू.पी. के चीफ सिक्रेटरी थे और विहारके गवंनर बना कर भेजे गये। यह हैलेट शाही के दमन चक्र की धूरी थे। इन्हीं की कृपा के कारण सिन्ध में लीग को मिनिस्टरी प्राप्त हो सकी है। सन १९३७ की अपेक्षा सन १९४५-४६ में लीग को अधिक स्थान प्राप्त हुआ है। कारण स्पष्ट हैं, जब अन्य दल राजनैतिक उथल-पुथल के कारण राष्ट्र की जीवन समस्या हल करने में व्यस्त थे लीग आँख मूँदकर मुसलमानों में साम्प्रदायिकता का दूषित विष बो रही थी।

कांग्रेस का विरोध बहुत कम हुआ यद्यपि कांग्रेस ने सभी सीटों के विरोध में उम्मीदवार खड़े किये। हिन्दू जनता में कांग्रेस ने प्रत्येक सीटों के लिये उम्मीदवार खड़े किये। हिन्दू जनता में कांग्रेस का विरोध करने से विरोधी थर्राते थे। जिन्होंने विरोध भी किया उनकी भारी हार हुई और जमानतें जब्त होने तक की वारी आ गई। सन सैंतीस के चुनाव से इस बार कांग्रेस ने आसाम बंगाल, बम्बई सिन्ध, सीमा प्रान्त और पंजाब में बहुत बड़ी उन्नतिकी। इसी लिये आसाम में शुद्ध और पंजाब में संयुक्त मन्त्री मण्डल बन सका। कांग्रेस की प्रगति जितनी तेजी से मुसलमानों में होनी चाहिये नहीं हो रही है फिर भी मुसलमानों में राष्ट्रीय जागरण के लक्षण स्पष्ट प्रकट हो रहे हैं। सम्भव है वह दिन शीघ्र आये जब मुसलमान लीग की चालों से सावधान हो जायँ और राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेकर अपनी शक्ति दृढ़ बनाकर राष्ट्र को शक्तिशाली बनाने में समर्थ हों।

जिस प्रकार जनरल और हिन्दू सीटों को कांग्रेस ने जीता उसी प्रकार मुसलमानों की दो तिहाई सीटें लीग ने जीत ली। इस विजय से लीग के अरमान बहुत बढ़ गये और वह रूस से मैत्रीकर पाकिस्तान का स्वप्न देखने लगी, यदि अंग्रेज उनके सहायक न हुये और कांग्रेस से मिलकर उन्होंने भारत की राजनैतिक प्रगति में सहायता दी। रूसी अधिनायक स्टालिन की मध्यपूर्व की नीति और कुछ वक्तव्यों से मुसलिम लीग को चारा मिल गया और उन्होंने षड्यन्त्र करने का यत्न किया और रूस का आवाहन करने लगे। इसमें उन्हे ईरान से संकेत मिला जिसके शासकवर्ग रूस के पक्षपाती हो गये हैं।

आज का ईरान वस्तुत: रूसका अंकित हो चुका है। ईरान के लिये रूस और ब्रिटेन में युद्ध होगा। अस्तु ब्रिटेन और रूस हर प्रकार इस्लामी मुल्कों को अपनाने की पूर्ण चेष्टा कर रहे हैं। इसी हेतु रूस के हँसिया हँथौड़े वाले झण्डे पर अब चाँद और तारा भी अंकित किया गया है। अब लीग को भी आगण्डूका द्वारा यथेष्ट सहायता दी जा रही है। भारत के मुसलमानों में अराजकता फैली हुई है। मियाँ जिन्ना को षड्यन्त्रकारी रूसीने गुप्त पत्र द्वारा निम्नलिखित संकेत तक कर दिया है। यह महत्वपूर्ण पत्र रूपस्थित अब्दुल्ला द्वारा लिख गया है। यही कारण है कि कम्यूनिस्ट लीग की पाकिस्तान के माँग का समर्थन करते हैं जिसका आभास उक्त पत्र से स्पष्ट मिल जाता है। मियाँ फिरोज खाँ नून तथा अन्य लीगी नेताओं का संकेत इससे स्पष्ट प्रकट हो जाता है:—

"यू. पी. से लेकर तुर्की तक एक शुद्ध मुसलिम धुरी की स्थापना की जाय। रूस भी जिसकी आबादी में एक तिहाई मुसलमान हैं—मुसलमानों की इच्छा के प्रतिकूल नहीं जा सकता और उनके स्वार्थों की उपेक्षा नहीं कर सकता। अब आपका अन्तिम और दृढ़ निश्चय यही होना चाहिये कि आप पाकिस्तान से कम कुछ भी स्वीकार न करें। जब वस्तु स्थिति अन्तत इस प्रकार का रूप धारण करने जा रही है तब हम रूस और मुसलिम राज्यों की इस सम्मत योजना को नष्ट क्यों करें?" (सरस्वती, जूलाई १९४६)

अंग्रेज साम्प्रदायिक विष का बीजारोपण कर चुके हैं फिर एक संकेत यह भी मिल गया। मियाँ जिन्ना इसे पाकर क्यों मानने लगे? यही कारण है कि अबाधगति से लीगी गुलामहुसेन, सुहरावर्दी, गजनफार अली और फिरोजखाँ नून प्रभृतिनेता बिना किसी रोक-टोक गुण्डई और लूट खसूट का प्रचार करते हैं जिसका उग्ररूप भविष्य की घटनाओं से प्रकट हो रहा है।

× × ×

चुनाव के दौरान में पार्लियामेण्ट के सदस्यों का सद्भाव मण्डल भारत आया जिसके सात सदस्यों में भारत हितैषी, श्री सारनसन, को व और श्री कोबी भी थे। सदस्यों ने भारत का एक ओर से दूसरे छोर तक दौरा किया

और प्रत्येक दल और मत के नेताओं से वार्तालाप कर यत्न करने लगे कि भारतीय गुत्थी सुलझाने के लिये यदि पारस्परिक समझौते द्वारा कोई हल निकल आवे किन्तु, मियां जिन्ना और उनकी लीगके हठवादिता द्वारा निराशा और क्षोभ हुआ। इन लोगों ने सिन्ध और बंगाल में चुनाव के समय लीगी गुण्डों का राष्ट्रीय मुसलमानों के विरुद्ध उपद्रवों का नमूना देखा और साथ ही साथ सरकारी हाकिमों की साजिश और निष्क्रयता का भी नमूना देखा। उद्योग में असफल होकर मंडल वापिस चला गया और भारतीय वस्तु स्थिति को प्रधान और भारत मन्त्री को रिपोर्ट दी। इसी रिपोर्ट के आधार पर पार्लियामेण्ट ने भारत में एक आमात्य मण्डल भेजने की घोषणा की जो भारत जाकर राजनैतिक प्रगति को गति मान करे और गत्यावरोध का अन्त हो।

ब्रिटिश प्रधान मन्त्री एटली ने अपने एक भाषण में कहा था "जैसी स्वाधीनता हम अपने लिये चाहते हैं वैसी ही दूसरों के लिये भी। हम इस स्वाधीनता की घोषणा करते हैं। हम अपनी घोषणा को कार्यान्वित देखना चाहते हैं। भारतवर्ष इसका साक्षी है"। इस घोषणा की सुखद कल्पना का आरम्भ भारत में आमात्य मण्डल के पदार्पण से आरम्भ हुआ। अब कदाचित वह सुखद स्वप्न भग होने जा रहा है।

अमात्यमण्डल ने जिस प्रकार का समझौता लादने का यत्न किया उसका परिणाम वस्तुत: भारत को तीन भागों में विभक्त करने का सफल प्रयत्न है जो कभी न बन सकेगा। मण्डल के तीनों सदस्य—लार्ड पेथिक लारेन्स सर स्टाफर्ड क्रिप्स और ए. वी. एलिकजाण्डर थे। कांग्रेस, लीग, और देशी नरेशों से बात-चीत कर भारत मन्त्री लार्ड पेथिक लारेन्स ने १६ मई को घोषणा की कि वह किस आधार पर क्या करना चाहते हैं। कांग्रेस लीग और देशी नरेशों से बात-चीत होती रही। इसी के आधार पर २४ जून को भारत मन्त्री ने रेडियो द्वारा भाषण कर अपने प्रस्तावों को देश के सन्मुख पेश किया किन्तु आपसी बात-चीत से किसी प्रकार मसला हल न हो सका। कांग्रेस अपने निर्णय पर डटी रही। उसने अन्तःकालीन सरकार में शामिल होना स्वीकार न

किया किन्तु व्यवस्था में सहयोग देना स्वीकार कर लिया। प्रेस में इसकी प्रति-क्रिया आरम्भ हुई जो जनमत का द्योतक है। मियां जिन्ना अपनी पुरान डफली पर चर्चिल का दुराग्रही राग अलापते रहे। अमात्य मण्डल के प्रस्तावों की स्वीकृति देकर भी जब उत्तर दायित्व ग्रहण करने का समय आया अपनी प्रतिज्ञा से मुकर गये। राष्ट्रवादी पत्रों ने यह आशंका प्रकट की कि आमात्यमण्डल पाकिस्तान की माँग के प्रति उदार है। यह प्रश्न उठने लगा कि मिशन भारत में इसलिये आया है कि वह निश्चित करे कि ब्रिटिश नौकरशाही से भारतवासियों को किस प्रकार स्वाधीन कर शासन भार हस्तान्तरित किया जाय न कि साम्प्रदायिक गुत्थी में फँसाना जो इसके रवैये से स्पष्ट प्रकट हो रहा था। मिशन के लिये केवल तीन मार्ग थे जो वह ऐसे मौके पर ग्रहण करता। इसमें पहला रास्ता लीग की मांग ठुकराकर कांग्रेस से सहयोग करना था। दूसरा यह कि लीग से गांठ जोड़कर चले जाय। इससे लीग कांग्रेस या अन्य परस्पर विरोधी दलों को मौका मिल जायगा कि वह अपना मतभेद लाचार होकर किसी न किसी प्रकार मिटाने में बाध्य होंगे।

पाकिस्तान के प्रश्न को लेकर गोलमाल करने से यह धारणा उत्पन्न हुई कि मिशन सम्भवतः अन्तःकालीन सरकार की स्थापना भी नहीं करना चाहता एक पत्र ने यह सुझाव पेश किया कि पाकिस्तान की माँग का फैसला अन्तरा-ष्ट्रीय पञ्चायत (U. N. O.) को सौंप दिया जाय जिस पर जिन्ना मियां रज़ा न हुये किन्तु अन्तःकालीन सरकार की तत्काल स्थापना के लिये देश एक मत था। अस्तु अनेक प्रयत्न करने पर भी मिशन को सफलता न मिली, यद्यपि इसकी घोषणा के पैरा ८ का बी, सी ग्रूप विभाजन की ओर स्पष्ट संकेत करता है। इसमें सन्देह नहीं कि अनेक वर्षों से कटुसम्बन्ध कर लीग और राष्ट्रीयनेता इसके पहले एक साथ टेबुल पर न बैठे थे। लीग नेता शामिल हुये किन्तु पाकिस्तान की रट लगाते रहे। आमात्य मण्डल का प्रयास प्रकट कर रहा था कि वे सभी गुत्थियों को सुलझाना चाहते हैं लीग प्रेस इस प्रयोग से अत्यन्त रुष्ट हुआ और यह विचार प्रकट किया कि मिशन पाकिस्तान का अंगविच्छेद

करना चाहता है। उधर से इसके उत्तर में कहा गया कि मिशन कांग्रेस और लीग का मतभेद मिटाने नहीं आई है बल्की भारत और ब्रिटेन का सम्बन्ध दृढ़ करने। इससे यह बात अवश्य हुई कि स्थूल सिद्धान्तों का निर्णय हो गया।

मन्त्रि मण्डल मिशन ने जो भी प्रयत्न किये उससे साम्प्रदायिक स्थिति सुदृढ़ होने के ही लक्षण प्रकट हुये। उन्होंने प्रान्तों के समूही कारण के ए. बी. सी. तीन खण्ड बनाये। इनका आधार केवल मजहब है। इनकी योजना के अनुसार ए० में हिन्दू और बी० सी० में मुसलिम होंगे। इसे देख मियां जिन्ना का मजहबी जोश उमड़ आया और वे पागल की भाँति बी और सी को पाकिस्तान बनाने के लिये मचल पड़े।

बी० समुदाय में सीमा प्रान्त और पंजाब है। सीमाप्रान्त के मुसलमान कांग्रेसी हैं और पाकिस्तान में नहीं होना चाहते। पंजाब के हिन्दू भी पाकिस्तान विरोधी है। सिख तो विद्रोह करने की चुनौती दे ही रहे हैं। उनका मत है कि पाकिस्तान की जो भी कीमत हो हम तन मन धन से उसको विध्वंस कर दम लेंगे। समूहीकारण की इस अनिवार्यता को मिटाना मिशन ने स्वीकार न किया यद्यपि मूल प्रस्तावों में प्रान्तों को विशेष समुदायों में सम्मिलित न होने या होने की स्वाधीनता स्वीकार की गई थी।

आमात्य मण्डल ने देशी नरेशों को मनमाने तरीके पर आने न आने की छूट दे दी और उन्हें आपने राज्य में जो चाहें करने की भी मुक्ति दी गई। इनका असलीसूत्र संचालक पोलिटिकल विभाग है जिसका उद्देश्य यह है कि देशी राज्यों की प्रजा में किस प्रकार की आजादी न आने पाये और वे राज्य की व्यवस्था और सुशासन की चिरनिद्रा में सोते रहें।

शिमला में त्रिदल सम्मेलन के समक्ष लीग का पक्ष समर्थन करते हुए मियाँ जिन्नाने कहा कि संघ में लीग केवल निम्नलिखित शर्तें मन्जूर होने पर ही योग दे सकेगी (१) बी और सी समुदाय के लिये जिसे वे पाकिस्तान कहने में फूले नहीं समाते, उसके लिये पृथक विधान निर्मात्री परिषद हो (२) संघ की विधान निर्मात्री एक हो; इस प्रश्न को विधान निर्मात्री परिषद

के निर्णय के लिये छोड़ दिया जाय। (३) संघ सरकार को कर लगाने का अधिकार न दिया जाय बल्कि उन्हें प्रान्तों से ग्रान्ट के रूप में सहायता मिले। केन्द्रीय धारा सभा मे ए ग्रुप के प्रतिनिधियों की संख्या के बराबर ही बी और सी ग्रुपों के प्रतिनिधियों की संख्या हो।

इसका अभिप्राय यह है कि उसमें मुसलमानों के भी उतने ही प्रतिनिधि हो जितने हिन्दू और भारत के अन्य निवासियों के यानी मुसलमान भी तीस करोड़ हिन्दूओं के समान प्रतिनिधित्व पावें। साथही साथ यह भी शर्त रखी गई कि सभा के ७५ प्रतिशत सदस्य उसके पक्ष में हों। इस पर भी मियां और उनकी लीग राजी न हुई। सभावतः उन्हें मिशन से कोई आश्वासन मिल गया और उन्हें इन मांगों में सम्भवतः कोई तत्व भी नहीं दिखाई दिया। जो हो मण्डल की ओर से उन्हें कोई संकेत अवश्य मिला जिससे लीग काउन्सिल ने विधान योजना में शामिल होना स्वीकार कर लिया। मियां जिन्ना का विश्वास है कि इसमें इन्हें पाकिस्तान का सारांश मिला है।

लीग देश को एक राष्ट्र और इकाई के रूप में संगठित नहीं देखना चाहती और बारबार बी० सी० का अलग विधान बनाना चाहती है। इस दृष्टि कोण से राष्ट्रीय मतभेद होना अवश्यंभावी है। कांग्रेस ने भी अपने शामिल होने से पूर्व निम्नलिखित शर्त का आश्वासन चाहा और इनकी स्वीकृति पर ही वह अन्त: कालीन सरकार में प्रविष्ट हो सकेगी:-(१) विधान निर्मात्री परिषद स्वतन्त्र सर्व भौम संस्था स्वीकार कर ली जाय (२) प्रत्येक प्रान्त के समुदाय विशेषका उसमें सम्मिलित अथवा का असम्मिलित होने का अधिकार हो (३) बंगाल और आसाम की प्रान्तीय धारा सभाओं से योरोपियन प्रतिनिधित्व का अन्त कर दिया जावे। इन शर्तों के आधार पर मन्त्रिमण्डल में १५ सदस्य हों जिनमें ५ मुसलमान और दस, अछूत, पारसी, सिख इसाई और सवर्ण हिन्दुओं के प्रतिनिधि हों। मन्त्री मण्डल में लीग को आधेपद देना कांग्रेस नही स्वीकार कर सकती। इस पत्र से सन्धिवार्ता का अल्प कालीय विराम आरम्भ हो गया। किन्तु वाइसराय अन्त काल तक समानता को किसी न

किसी रूप में उलझाते रहे। कभी उसे कांग्रेस लीग समानता का। कभी हिन्दू मुसलिम समानता का रूप दिया। उनका विचार यह भी रहा है कि मन्त्री मण्डल में कांग्रेस और लीग को समान पद दिये जाँय कांग्रेस समानता को इन शर्तों पर किसी प्रकार स्वीकार करने में समर्थ न थी। कांग्रेस की इन शर्तों को मन्त्री मण्डल ने अस्वीकार कर दिया।

अगला कदम पुनः लार्डवेवल ने उठाया और कांग्रेस तथा लीग को अस्थाई अन्तःकालीन सरकार बनाने के लिये आमन्त्रित किया। लीग तनाशाह ने जैसा पहले कहा जा चुका है अन्तः कालीन व्यवस्था में शामिल होने की घोषणा कर ऐन मौके पर इनकार कर दिया। अब सरकार की निगाह कांग्रेस की ओर घूमी। कांग्रेस को लार्डवेवल ने अस्थाई अन्तःकालीन (Interim) सरकार बनाने के लिये आमन्त्रित किया और कांग्रेस की शर्तों को स्वीकार कर १४ सदस्यों की अन्तःकालीन सरकार बनाने की घोषणा कर दी गई जिसमें प्रतिनिधित्व निम्न प्रकार से किया गया हिन्दू ५ : मुसलिम ५ : अछूत १ सिख १ पारसी १ और ईसाई १। अथवा इसे यों भी कहा जा सकता है कांग्रेस ५ गैर लीगी मुसलिम ५ अछूत १ सिख १ पारसी १ ईसाई १। कुल १४। इसके सभापति वाइसराय और उपसभापति पं० जवाहरलाल नेहरू हुए। उन्होंने अपनी सरकार में सर्वश्री राजगोपालाचारी, राजेन्द्रप्रसाद, सरदार पटेल, शरतचन्द्रवसु, जगजीवन राम, सर शफात अहमद खाँ, सैय्यद अली ज़हीर, सी, एच, भाभा, डाक्टर मठाई, सरदार बलदेवसिंह, आसफ़अली प्रभृति एक स्थाई मन्त्री का मण्डल बनाया जो उस समय तक शासन भार सम्हाले जब तक विधान निर्मात्री परिषद् विधान निर्माण कार्य्य समाप्त न कर ले। इसमें प्रधान मन्त्री का पद नेहरूजी को प्राप्त हुआ। वाइसराय ने कांग्रेस की यह शर्त स्वीकार कर ली थी कि मन्त्रियों का उत्तरदायित्व संयुक्त होगा (Joint Responsibility) अरौ वाइसराय इसमें हस्तक्षेप न करेंगे। इन शर्तों के अनुसार मन्त्री मण्डल की घोषणा कर दी गई और २ सितम्बर से अन्तःकालीन मन्त्रीमण्डल ने शपथ ग्रहण कर शासन भार उठाया। देश विदेश में ब्रिटिश सरकार के

इस उद्योग की सराहना की गई । भारतीय जनमत ने इसका स्वागत किया । स्वतन्त्रता के सिंह द्वारपर खड़ा भारत आजादी के तराने गाने लगा । गत जुलाई मास में विधान निर्माण परिषद् के सदस्यों का भी चुनाव होगया । सम्भवतः अगले दिसम्बर मास से परिषद् का अधिवेशन आरम्भ हो जायगा ।

आजादी की हिलोरें लेता राष्ट्रीय भारत एक ओर राजनैतिक प्रगति की ओर अग्रसर हो रहा था दूसरी ओर मियां जिन्ना और उनके सिपहसालार चंगेज तैमूर और हलाकू का स्वप्न देख रहे थे । वह तो पहले ही से बारबार धमकी दे रहे थे कि यदि पाकिस्तान की माग न स्वीकार की गई और उनके अन्यशर्तों की मन्जूरी न हुई तो वह लड़कर पाकिस्तान लें लेंगे । अस्तु लीग काउन्सिल की बम्बई में बैठक हुई । इस बैठक के पूर्व मियां जिन्ना चर्चिल से भी पत्र व्यवहार कर रहे थे । सम्भवतः इसीलिये कि इनका टोरी प्रभु इनकी योजनाओं को स्वीकार करे । इन पत्रों के सम्बन्ध में समचार पत्रों में काफी चरचा हो चुकी है । दूसरी बात यह भी विचारणीय हैं कि भारत अंग्रेजों का जीवन सूत्र है । सिद्धान्तवाद के मौखिक आस्वासनों द्वारा ब्रिटेन भारत न छोड़ सकेगा । यह भी स्पष्ट है कि भारत को ब्रिटेन की ओर से जब जब राजनैतिक सत्ता देने का प्रश्न आया एक न एक ऐसी अड़चन खड़ी करदी गई जिससे भारत का भविष्य निराशा और पतन् के गर्त में गिरगया । सरकार जानती है कि उसकी छद्मनीति हिन्दुओं को न छल सकेगी । इसीलिये लीग को इतना प्रश्रय दिया जाता है । लीग में बुद्धि या तर्क नहीं । वह ब्रिटिश नौकरशाही की पराधीनता की बेड़ियों में भारत को जकड़ने का सिकन्जा मात्र है ।

अब लीग कौन्सिल ने १६ अगस्त को विरोध में "प्रत्यक्ष काररवाई" या डाइरेक्ट ऐक्शन डे" मनाने की घोषणा कर दी । लीगियों को आदेश दिया गया कि वे उपाधि त्याग करें, कर बन्दी हो, सरकारी नौकरियों से स्तीफे दिये जाय इत्यादि । प्रत्यक्ष कारवाई के संकेत में क्या निहित था यह कलकत्ता के १६ से २० अगस्त के रक्त-स्नान नोआखाली में भलि भाँति प्रगट हो गया ।

सक्रिय आन्दोलन दिवस

मियां जिन्ना और उनकी लीग को देश के राजनैतिक प्रगति में स्व बाधक नीति ग्रहण करने के कारण किसी दल का सहयोग नहीं प्राप्त हुआ। कांग्रेस अथवा लार्डवेवल को मियां का हठ न झुका सका, अस्तु लाचार होकर लीग काउन्सिल को सक्रिय आन्दोलन का कदम उठाना पड़ा। इस सम्बन्ध में पहला काम यह करना था कि प्रत्येक उपाधिधारी राजा, नवाब, खान बहादुर और नाइट् अपनी उपाधि त्याग कर सरकार की अवहेलना करे। बड़ी खुशामद और आरजू मिन्नत से उपार्जित उपाधियों का त्याग नैतिक मेरुहीनसरकार की कृपा पर पलनेवाले अमीर उमरावों के लिये इतना आसान नहीं। परिणाम यह हुआ कि केवल १५% व्यक्तियों ने अभी तक उपाधि त्याग की है। इसी से प्रकट होता है कि व्यक्तिगत स्वार्थ के आगे मियां की कितनी हूकूमत चलती है। हां इस वहक में सक्रिय आन्दोलन दिवस पर बंगाल में हसन सहीद सुहरावर्दी की सरकार कलकत्ते की महानगरी में जैसा पैशाचिक ताण्डव कराया उसका दूसरा उदाहरण संसार के २००० साल के लिखित इतिहास में पाना कठिन है।

१६ अगस्त से लेकर आज तक कलकत्ते में जैसे नारकीय कृत्य हुये उनकी कालिख मियां जिन्ना और उनकी लीग पर से धुलना कदाचित कठिन ही नहीं असम्भव है किन्तु लीग के हृदय हीन मानवता रहित नेताओं को इस ग्लानि का अनुमान होना कठिन है। कहा जाता है सुहरावर्दी और नाजिमुद्दीन ने पिशाच के इस ताण्ड के लिये पहले से ही तयारी कर रहे थे। गुण्डे बुलाये गये उन्हें लारी पिट्रोल और अस्त्र शस्त्र का प्रबन्ध किया गया ताकि वे हिन्दू जनता को लूट कर खून की नदियां बहायें और हिन्दुओं में यह आतंक उत्पन्न करें कि यदि आज से २५० वर्ष पूर्व नादिर शाह का हमला हुआ था तो आज भी हो सकता है क्योंकि मुसलमानों की नादिर शाह से पाई हुई आत्मा अभी जीवित है। यद्यपि इनकी नसल और धमनियों में नादिरशाह, तैमूरलंग, और चंगेज खाँ का रक्त प्रवाहित नहीं होता फिर भी उन्हें पाकिस्तान

चाहिये अस्तु उनके लिये बेगुनाहों के खून की नदियाँ बहें। आतिशज़नी हो निरीहस्त्री बच्चों का कत्ल किया जाय। क्या लीगी मुसलमानों का गौरव और जीवन लक्ष्य यही है ?

जो हो इस प्रकार आक्रमण कर हिन्दू-जाति का न तो खातमा किया जा सकता है और न मियां जिन्ना और उनके लाड़ले, गुलाम, सुहरावर्दी, नाजिमुद्दीन पीर इलाहीबक्स और गजदर को स्वप्न कल्पित पाकिस्तान हीं मिल सकता हैं। हमें तो मुसलिम जनता की बुद्धि हीनता पर तरस आती है कि ऐसे नृशंस नेताओं के हाथ वे किस प्रकार कठपुतली बन रक्त पात कर रहे हैं। यह युग ज़िहाद का नहीं। इसलिये खून की नदियाँ बहाकर मुसलिम लीग मुसलिम कौम को बलवान नहीं बना सकती। क्या बंगाल की जतना यह भूल गई कि सन् १६४३ के भीषण अकाल का दायित्व सुहरावर्दी पर ही है जो उस समय खाद्य मन्त्री थे और इस्पहानी से मिलकर बंगाल का सारा चावल गायब करा दिया। क्या अकाल में काल कवलित ३०।४० लाख मानव हत्या का प्रेत उन पर नहीं फिर भी बंगाल की मुसलिम जनता की आँखें नहीं खुली और आज हत्यारों का समर्थक दल बंगाल सरकार का सूत्र संचालक है। इनके शासननीति द्वारा मुसलिम जनता अपनी उन्नति नहीं कर सकेगी और न उसका पाकिस्तान ही फलीभूत होगा।

मियां जिन्ना के आदेश पर मनाया गया प्रत्यक्ष आन्दोलन दिवस (१६ अगस्त) बंगाल का ही एक मात्र प्रश्न नहीं। मियां जिन्ना ने यह भी आदेश दिया था कि इस दिन ऐसा कोई काम न हो जिससे कानून तोड़ा जाय और अशांति हो किन्तु कलकत्ते और नोआखाली में ठीक इसका उलटा किया गया। सुहरावर्दी कीसरकार और उसके संकेत पर की गई चीजों की करुणा कहानी लीगी मुसलमानों के लिये इतने बड़े कलंक का टीका है जिसका धुलना असम्भव है। मियां जिन्ना की लीग इसे भलेही न स्वीकार करे, उनके समर्थक इसे भले ही कांग्रेस और हिन्दुओं की ज्यादती कहलें किन्तु सच्ची बात झूठ के आवरण में अधिक काल तक न छिपी रह सकेगी। आज तक जितने वक्तव्य प्रकाशित हुये हैं

और जिन असहाय व्यक्तियों के सिर लीग के आततायी गुण्डों की विपदा का पहाड़ टूट पड़ा है, इससे स्पष्ट प्रकट होता है कि इन उपद्रवों की जिम्मेदारी किस पर है। पर आश्चर्य तो यह जानकर होता है कि बंगाल के शासक अब भी नहीं चेतते। क्या उनका शासन यही है कि उनके प्रान्त में नित्य खून खच्चर हो और निरीह नरनारियों का कत्ल हो। डान और अन्य लीगी पत्रों ने सारे दोष का टीका हिन्दुओं के मत्थे मढ़ा है। उनका कहना है कि दंगे का आरम्भ हिन्दुओं द्वारा हुआ।

अभी कलकत्ता का वातावरण शान्त नहीं हुआ था कि लीगी गुण्डों ने पूर्वी बंगाल के नोआखाली जिले को जहाँ कि मुसलिम आवादी ८० प्रतिशत हैं वहाँ के हिन्दुओं पर जिहाद बोल दिया है। दो सौ मील के क्षेत्रफल में हिन्दू मारकाट खून, आतशज़नी, बलात्कार, अपहरण और ज़बरी मुसलमान बनाने जाने की यातना मूक होकर सह रहे हैं। अब लीग का सब से नया नारा "युद्ध के लिये कूई" हुआ है। भगवान ही जाने इससे क्या अनर्थ होगा।

नेहरू सरकार की बढ़ती हुई शक्ति देखकर ब्रिटिश कूट नीतिज्ञों इसके कलेजे पर साँप लोटने लगे। उनको कोई ऐसी चाल चलनी चाहिये जिससे भारतीय राजनैतिक गुत्थी में गहरी गांठ बँधे। नेहरूजी ने भी मन्त्री मण्डल बनाते समय दो सीटें लीगके लिये छोड़ दी और ९ सितम्बर के ब्राडकास्ट भाषण में लीग सहयोग का स्वागत किया था किन्तु किसी प्रकार लीग तानाशाह से समझौता नहीं हो पाया क्योंकि वे ऐसी शर्तें पेश कर रहे थे जिसे स्वीकार करने का अर्थ अन्त: कालीन सरकार की पुनीत कामना का मूलोच्छेद कर देना था। इनकी शर्तें यह थी की लीग एक मात्र मुसलमानों की प्रतिनिधि संस्था मानी जाय। मन्त्री मण्डल में संयुक्त उत्तरदायित्व न हो। राष्ट्रीय मुसलमान का प्रतिनिधित्व कांग्रेस की ओर से न किया जाय। यह समझौता वस्तुत: इन्टेरिम सरकार के प्रधान मन्त्री से होना चाहिये था किन्तु ऐसा न हुआ। वाइसराय के आमन्त्रण पर लीग "अपने अधिकारों से" (In its own rights) प्रविष्ट हुई है। इससे मयां

जिन्ना ने एक चाल फिर चली है। चार मुसलमानों के साथ बंगाल के एक अछूत योगेन्द्रनाथ मण्डलको भी अपने कोटे में रखा है। लीग के इस चाल का रहस्य पुस्तक पढ़ने वालों से अप्रकट न रह सकेगा। अछूत प्रेम का यह उदाहरण विचित्र तो नहीं तर्क हीन अवश्य है। इसचाल में ब्रिटिश कूटनीति की लम्बी भुजा का संचालन है। पाकिस्तान मिलना तो दूर रहा लीग—अंग्रेजों के ग्रन्थिबन्धन से भारत अकाल, दरिद्र और साम्प्रदायिक तथा पारस्परिक कलह का अड्डा अवश्य बना रहेगा। भविष्य में सम्भवतः ईरान और मध्य पूर्व के होने वाले रूसी युद्ध में भारत भी योरोप की भाँति ही तहस नहस हो जाने की सम्भावना है। ऐसी परिस्थिति में यदि पाकिस्तान के बदले देश कब्रिस्तान बन जाय तो आश्चर्य नहीं। अस्तु यह आवश्यक है कि तृतीय शक्ति के बहकावे में आकर लीगी कटुता द्विष और सम्प्रदायिकता को तिलाञ्जुली देकर अखण्ड भारत की स्वाधीनता के लिये उद्योगशील होकर मातृ भूमि के रिण से मुक्त हो और पाकिस्तान जैसी कपिलत वस्तु का दुराग्रह त्याग दे।

जै हिन्द

परिशिष्ठ

डाक्टर लतीफ की योजना

"भारत का संस्कृतिक भविष्य" (The Caltural future of india.) नामक पुस्तक के रचयिता डाक्टर सैयद अब्दुल लतीफ पी. एच डी. उसमानिया विश्वविद्यालय हैदराबाद (दक्खिन) के अङ्गरेजी साहित्य के रिटायर्ड प्रोफेसर, मुसलिम कलचरल सोसायटी के अवैनतिक मन्त्री और हैदराबाद एकेडमी के उपसभापति हैं। पाकिस्तान इन्हीं के मस्तिष्क की उपज है। प्रोफेसर साहब ने पहली बार जब वह १६३७ में विलायत में शोध कर रहे थे। इसका उल्लेख किया। इन्होंने अपनी पुस्तिका में यह तर्क किया कि "एक राष्ट्र का बिचार छोड़ देना चाहिये। उनका ख्याल है कि भारत भूमि में एक राष्ट्र नहीं फूल फल सकता।" सन् १६३८ में सिन्ध प्रान्तीय मुसलिम लीग के सम्मेलन में में जिसका सभापतित्व जिन्ना साहब कर रहे थे। निम्न लिखित प्रस्ताव पास किया।

"सिन्ध प्रान्तीय मुसलिम लीग सम्मेलन भारत की आर्थिक, संस्कृतिक, राजनैतिक और धार्मिक उन्नति के लिये यह अत्यन्त आवश्यक समझता है कि भारत दो समान राष्ट्र हिन्दू और मुसलिम राष्ट्रों में विभक्त हो जाय और भावी विधान में हिन्दुओं और मुसलमानों का अलग अलग संघ स्थापित हो।

यह सम्मेलन इसलिये अखिल भारतीय मुसलिम लीग से यह अनुरोध करता है कि वह ऐसी योजना बनाये जिससे हिन्दोस्तान के मुसलिम, अपना अलग स्वतन्त्र संघ बना कर स्वाधीनता प्राप्त करें। यह विधान उन प्रान्तों में जहाँ मुसलिम बहुमत में हैं, और मुसलमानी रियासतों को शामिल कर के बनाया जाय और संघ को भारत से बाहर की मुसलिम रियासतों से भी संपर्क

और सन्धि करने की सुविधा हो तथा इन प्रान्तों में हिन्दू अल्प संख्यकों को वैसी ही सुविधा दी जाय जो हिन्दू प्रान्तों में अल्प संख्यक मुसलमानों को मिलेगी। हिन्दुओं को इस संघ में वैसे ही संरक्षण दिये जायँगे। जैसे हिन्दू मुसलमानों को अपने प्रान्त में देंगे।"

यदि इस प्रस्ताव को कभी अमल में लाने का दुर्भाग्य प्राप्त हुआ तो भारत का नकशा वैसी छोटी छोटी रियासतों में बँट जायगा जैसा कि डाक्टर सैयद अब्दुल लतीफ ने अपनी पुस्तिका में मुसलमानों को सुझाया है। योजना की रूप रेखा का अभिप्राय भारत को बालकन्स रियासतों की भाँति छोटे छोटे टुकड़ों में बाँट देना होगा। योजना की रूप रेखा निम्न लिखित है।

(१) उत्तरी पश्चिमी खण्ड (N. W. Block) इसमें उत्तरी पश्चिमी भारत में मुसलिम बहु संख्यक प्रान्त; पञ्जाब, सिन्ध, बिलोचिस्तान, सीमाप्रान्त और खैरपुर, बहावलपुर प्रभृति देशी रियासतें होंगी। यह क्षेत्र एक स्वायत्त प्रान्त बनाया जाय जिसका कि अन्य मुसलिम खण्डों से संघ सम्बन्ध स्थापित हो। इस प्रकार उत्तर पश्चिम में मुसलमानों का अपना वतन हो जायगा, जो मुसलिम संघ का प्रमुख केन्द्र होगा। इसमें मुसलमानों की आबादी दो करोड़ ५० लाख है।

(२) उत्तरी पूर्वी खण्ड (N. E. Block) यह पूर्वी बङ्गाल और आसाम होगा जहाँ कि संयुक्त मुसलिम आबादी ३ करोड़ है। यह एक स्वतन्त्र प्रान्त बने और इसे स्वतन्त्र सत्ता मिले।

(३) दिल्ली लखनऊ ब्लाक:—इस खण्ड में बिहार और यू० पी० के मुसलमान होंगे जो संख्या में करीब १ करोड़ २० लाख के हैं। यह ब्लाक पटियाला रियासत के पूर्वी सीमा से आरम्भ होकर रामपुर को शामिल करता हुआ लखनऊ तक होगा। दिल्ली इसमें शामिल होगा। इस खण्ड के निकटवर्ती मुसलिम बाशिन्दों को प्रोत्साहन दिया जायगा कि वह आकर मुसलिम ब्लाक में बस जाँय।

(४) दक्षिण ब्लाक:—दक्षिणी भारत में मुसलिम समस्या पर विशेष

सङ्गठन की आवश्यकता है, क्योंकि १ करोड़ बीस लाख मुसलमान छिट फुट विन्ध्या पर्वत से कुमारी अन्तरीप तक फैले हुये हैं। इनके लिये एक खण्ड विशेष की रचना करनी होगी। उसकी रूप रेखा इस प्रकार होगी। हैदराबाद की रियासत खीच कर दक्षिण तक बढ़ाई जाय जिसमें करनूल, कड़प्पा, चित्तौर, उत्तरी अर्काट, और चिङ्गलपेट जिला, मद्रास शहर तक हो। इस प्रकार दक्षिण भारत के मुसलमानों को समुद्र में निकास मिल जायगी और प्राचीन नाविक और व्यापारिक शक्ति जो आज मुसलमानों से लुप्त हो चुकी है फिर जग पड़ेगी।

इस योजना का सब से अच्छा प्रभाव दक्षिण भारत की पाँच प्रधान हिन्दू जातियों को मिलेगा जो अपनी रियासतें बना लेंगे उनमें अलग अलग मरहठा, कनरीज मलायली, तामिल और आन्ध्र प्रान्त होंगे। हैदराबाद की मौजूदा सीमा इस लिहाज से मिली जुली हैं। उत्तर पश्चिम में मरहठी दक्षिण में कन्नड़ और पूर्व में तेलगू भाषा भाषी बसते हैं। राजके तेलगू भाषाभाषी आन्ध्र प्रान्त में मिल जाँय जिसमें उत्तरी सरकार, गुन्टूर, निलौर करनूल का कुछ हिस्सा और सी. पी. का कुछ हिस्सा मिला कर होगा। मरहठा और कनरियों का एक अलग संयुक्त प्रान्त बना दिया जाय। दक्षिण भारत के मुसलमान जो चारो ओर छिट फुट बसे हुए हैं इस प्रकार एक हो जायँगे और अपनी अतीत अवस्था और शक्ति का एक बार पुन: अनुभव करने लगेंगे। इस प्रकार मुगल सल्तनतें की दक्खिन के सूबे की भाँति एक सूबा फिर बन जायगा जो मुस-लिम शक्ति का द्योतक होगा। इसमें बम्बई, सी. पी. और उड़ीसा तथा मदरास प्रान्त के मुसलिम धार्मिक और संस्कृतिक एकता के कारण आकर बस जायँगे। हैदराबाद रियासत के क्षेत्र फल के अनुसार अभी आबादी कम है, और बहुत सी धरती ऐसी दशा में पड़ी हुई हैं, जिसका उपयोग किया जा सकता है। अस्तु, वहाँ से आकर बसने वाले मुसलमानों को किसी प्रकार की कठिनाई का सामना न करना होगा।

छोटी मुसलमानी रियासतें:— इन चार खण्डों के बन जाने पर भी राज-पूताना, गुजरात, मालवा, पश्चिमी भारत की देशी रियासतें बच जाती है,

जिनके शासक मुसलमान हैं। इस सम्बन्ध में हमारी तजवीज है कि वे भोपाल टोंक जूनागढ़ जावरा आदि छोटी रियासतों के सम्बन्ध से एक संयुक्त मुसलिम रियासत बनायें। जिनका आधार आबादियों के अदल बदल पर हो और अजमेर मुक्त नगर (Free city.) बनाया जाय।

इस योजना के आधार पर हिन्दू सांस्कृतिक क्षेत्र को विकास के लिये खुलासा मैदान मिल जायगा। इस प्रकार भाषा और सांस्कृतिक आधार पर १६ हिन्दू रियासतें बन जायगी। इसका विभाजन इस प्रकार होगा। पूरब (१) बङ्गाल और उत्तर पश्चिम में बिहार के वे जिले जहाँ का रहन सहन और भाषा बङ्गालियों के समान हो, वह बङ्गाल का हिन्दू बङ्गाल प्रांत होगा। उड़िया बोलने वालों का बृहत्तर उड़ीसा प्रान्त बनेगा। (२) उत्तरी बिहार और लखनऊ, दिल्ली ब्लाक के बाहर का भूखण्ड मिलाकर एक प्रान्त बनाया जाय जो कि उत्तर में हिमालय की तराई से लेकर दक्षिण में विन्ध्या तक होगा। इस प्रकार के सीमाबन्दी होने से सभी प्राचीन हिन्दू तीर्थ, काशी अयोध्या, प्रयाग, मथुरा, और हरिद्वार इस खण्ड के भीतर आ जायेंगे। इनकी भाषा और धार्मिक सांस्कृतिक एकता हिन्दू शक्ति को दृढ़ और सङ्गठित करेगी। (३) राजपूताने की हिन्दू रियासतों का एक संयुक्त ब्लाक इसमें मध्य भारत की हिन्दू रियासतें भी शामिल कर ली जायगी। (४) गुजरात और काठियावाड़ के हिन्दू रियासतों का एक भिन्न प्रान्त बने। (५) मरहठा रियासतें अलग होगी। (६) कन्नड़ की रियासतें अलग बने जिसमें मैसूर और वह क्षेत्र हो जहाँ के लोगों की भाषा कन्नड़ है। (७) आन्ध्र, तेलगू भाषा भाषियों का अलग प्रान्त बने। (८) तामिल भाषा भाषियों का प्रान्त अलग। (९) मलायली प्रान्त। (१०) इसी प्रकार उत्तर पश्चिम के मुसलिम ब्लाक में भी हिन्दुओं के लिये एक एक अलग रियासत बनानी होगी जिनका सम्बन्ध काठियावाड़ और गुजरात की रियासतों से कर दिया जायगा। उत्तर के लिये सिक्खों की एक अलग संयुक्त हिन्दू सिख रियासत होगी। काश्मीर की हिन्दू रियासत—हिन्दू सिख क्षेत्र में शामिल कर दी जायगी।

काश्मीर रियासत में बहुसंख्यक मुस्लिम आबादी होने के कारण वे पंजाब में शामिल कर दिये जाँय और वहाँ के हिन्दू काश्मीर भेज दिये जाँय। कुछ बचे हुये लोग काँगड़ा और कुल्लू से अदला बदली कर दिये जायेंगे। महाराज काश्मीर की रियासत में पूर्वी उत्तरी पञ्जाब का एक भाग शामिल कर दिया जायगा जिसमें हिन्दू और सिखों को बसने की काफी गुंजाइश होगी।

शाही कमीशन

इस प्रकार की हदबन्दी हो जाने से हिन्दू मुसलमान प्रत्येक को अपनी आर्थिक सांस्कृतिक और धार्मिक उन्नति का अवसर मिलेगा। हद बन्दी का काम शाही कमीशन के सिपुर्द किया जाय जो इसी सिद्धान्त के अनुसार भारत की सीमा बन्दी करे।

हिन्दू मुसलमानों की अदली बदली

अदला बदली का प्रश्न कठिन सा मालूम होगा। क्योंकि उस मनुष्य को जो एक स्थान पर पैदा हुआ और पुश्त दर पुश्त से रह रहा है उसे उस स्थान से एक प्रकार की ममता और अनुरक्ति होगी जिस कारण वह उस स्थान को त्याग कर अन्यत्र न जाना न पसन्द करेंगे। यद्यपि इसमें अनेक अड़चनें हैं किन्तु यह काम आगे चल कर दोनों जातियों के लिये अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध होगा। हिन्दू और मुसलमानों को अपने अपने खण्ड में आर्थिक दृढ़ता और जाति संस्कृति की समानता बड़ा भारी आकर्षण होगा। इस प्रकार एक दूसरे में सद्भाव बढ़ेगा, एकता बढ़ेगी और हिन्दू मुसलमानों का पारस्परिक संबंध मैत्री-पूर्ण हो जायगा। अदला बदली के लिये पन्द्रह बीस सालका समय देने से किसी प्रकार की अड़चन और असुविधा भी न होगी। हाँ इसमें मुसलमानों को जरूर दिक्कतें होंगी। क्योंकि छोटी संख्या में वह देश भर में फैले हुये हैं। उनको दक्खिन ब्लाक और लखनऊ दिल्ली ब्लाक में आकर बसने के लिये बहुत बड़ा त्याग करने की आवश्यकता होगी। इस पीढ़ी को चाहिये कि

अगली पुश्त की भलाई के लिये वह इतना त्याग करे और अपने बाल बच्चों को चैन की जिन्दगी बसर करने के लिये उपयुक्त अवसर प्रदान करें। हिन्दुओं को इसमें इतनी अड़चन का सामना नहीं करना होगा। क्योंकि उन्हें थोड़े ही दायरे में घूम फिर कर जाना होगा और जल वायु में भी ज्यादा भिन्नता नहीं होगी। दक्षिण के हैदराबाद ब्लाक की अदला बदली में किसी प्रकार की कठिनाई नहीं होगी क्योंकि यहाँ खान पान, रहन सहन और बोलचाल में विशेष फर्क नहीं है। मरहठे मराठी में तामिल और कनरीज अपने अपने प्रान्तों में जा बसेंगे और हिन्दू जीवन में एक प्रकार की राष्ट्रीय एकता हो जाने से उनका जीवन सुखमय और सम्पन्न हो जायगा।

प्रस्तावित संघयोजना में संरक्षण

इस प्रकार का जातीय और सांस्कृतिक संघ बन जाने के उपरांत कुछ लोगों को उन स्थानों में अनिवार्य्य रूप से रहना ही होगा जो भिन्न भिन्न जाति के हैं। ऐसे व्यक्तियों की हिफाजत की जायगी। मन्दिर मसजिद और प्राचीन स्मारकों की रक्षा का भार भी केन्द्रीय सरकार के ऊपर होगा। इसके लिये (Public law of Indian nation) यानी भारतीय राष्ट्र का सार्वजनिक आईन बनाना होगा।

अन्य जातियाँ

ईसाई, गोरे पारसी और बौद्ध सम्प्रदाय के सम्बन्ध में यहाँ चरचा नहीं की गई है क्योंकि उनका प्रश्न अभी ऐसा नहीं जिसका कुछ विशेष सोच विचार की आवश्यकता हो। जब तक उनका कोई अलग प्रबन्ध होने का समय नहीं आ जाता तब तक हिन्दू मुस्लिम रियासतें उनके आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतक और राजनैतिक सत्वों की रक्षा करती रहेंगी।

अछूतों की समस्या का आकार भिन्न है। उनकी संख्या इतनी कम नहीं की वे हिन्दू अथवा मुसलमानों की मरजी पर छोड़ दिये जा सकें। ये करोड़ों की संख्या में देशभर में फैले हुये हैं। वे हर एक गांव और कस्बे में है किन्तु

उनके सामाजिक जीवन का स्तर इतना नीचे गिरा हुआ है कि उनकी अपनी खास कहलानेवाली सभ्यता और संस्कृति कुछ भी नहीं है। इसलिये उनको इस बात की पूरी आजादी दी जायगी कि वे जिस धर्म को चाहें ग्रहण करें और हिन्दू अथवा मुसलमानी रियासत में जाकर बसें। उन्हें अपने आप अकेले छोड़ देना उनके स्वार्थों के लिये घातक होगा क्योंकि अपने आप उन्नति करने में उन्हें सदियों का समय लग जायगा।

अलीगढ़ योजना

(१) हिन्दुस्तान के मुसलमान स्वत: एक राष्ट्र है। उनकी जातीयता हिन्दू और अन्य जातिओं से भिन्न है। वे हिन्दुओं से इतने भिन्न हैं जितने सम्भवत: स्यूडेटन जर्मन यहूदियों से नहीं।

(२) भारत के मुसलमानों का राष्ट्रीय भविष्य पृथक है और उनके पास संसार की उन्नति के लिये अपने विशेष तरीके हैं।

(३) भारत के मुसलमानों का भविष्य हिन्दू अंग्रेज या किसी अन्य जाति से सर्वथा भिन्न है और उनकी मुक्ति इन कौमों के प्रभाव क्षेत्र से अलग होने में ही हैं।

(४) मुसलिम बहुमत प्रान्त एक केन्द्रीय सरकार की हुकूमत में नहीं रह सकते जिसमें हिन्दुओं की बहुत मत हो।

(५) यह कि मुसलिम बहुमत प्रान्तों में मुसलमानों को फिरकेवराना मजहबी आजादी होगी और सरकार की ओर से उसमें किसी प्रकार की अड़चन न पेश की जायगी और हर प्रकार की सहूलियतें दी जायगी।

इस योजना का उद्देश्य भारत को अनेक स्वतन्त्र सर्व शक्तिमान रियासतों में बांटना है जिसका विवरण निम्नलिखित है:—

१. पाकिस्तान, जिसमें पन्जाब, सीमाप्रान्त, सिन्ध बिलोचिस्तान, जम्मू और कश्मीर की रियासत, मण्डी चम्बा, सुकेत, सुमोन, कपूरथला, मलेरकोटला, चितराल, दीर लोहरू बिलासपूर कलात बहावलपूर इत्यादि हैं।

आबादी संयुक्त—-३, ६२, ७४, २४४
मुस्लिम आबादी २, ३६, ६७, ५३८ यानी ६०·३ प्रतिशत.
२. बंगाल (हावड़ा और मिदनापुर जिला को छोड़कर) पुर्णिया जिला और सिलहट कमिश्नरी आबादी ५, २५, ७६, २३२,
मुसलमान ३, ०१, १८, १८४: यानी ५७ प्रतिशत,
(३) हिन्दुस्तान:—हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के बाहर की हिन्दू रियासतें पाकिस्तान हैदराबाद और बंगाल को छोड़ कर—
आबादी २१, ६०,००,००० ।
मुसलिम, २, ०१६००००००, यानी ६-७ प्रतिशत
(४) हैदराबाद करनाटक, (मद्रास उड़ीसा)
आबादी २, ९०६५०६८,
मुसलिम २१, १४०१०,
(अ) दिल्ली प्रान्त—दिल्ली मेरठ के मिश्नरी रूहेलाखण्ड और अलीगढ़ जिला आबादी १, २६. ६००००
मुसलमान ३५, २०, ०००यानी २८, प्रतिशत
(ब) मलाबार प्रान्त—मलाबार और दक्षिणी कनाड़ा—
आबादी ४६, ००, ०००
मुसलिम १४, ४०, ०००—२७ %.

भारत के वे नगर जिनकी जनसंख्या ५०००० या उसके अधिक होगी, उसका दर्जा मुक्त नगर का होगा और उन्हें विशेषाधिकार प्राप्त होगा। इनमें १३८८६-६८ मुस्लिम आबादी होगी। हिन्दुस्तान की देहाती आबादी में बसनेवाले मुसलमानों को यह समझना चाहिये कि छोटी संख्या में चारो ओर छिटपुट रहने से अच्छा यह होगा कि वे एक जगह संयुक्त रूप में आकर बस जांय। पाकिस्तान, बंगाल और हिन्दुस्तान की सरकारों में आपसी समझौता निम्न आधार पर होगा —

१. एक दूसरे के प्रति भरोसा और विश्वास

२. पाकिस्तान और बंगाल मुसलिम वतन होगा और हिन्दुस्तान हिन्दुओं का जिसमें उन्हें इच्छानुसार एक खण्ड से दूसरे खण्ड में जाकर बसने का अधिकार होगा।

३. हिन्दुस्तान में मुसलिम अल्प समुदाय में और बृहत् मुसलिम भूखण्ड पाकिस्तान की भुजायें समझी जायगी।

(४) हिन्दुस्तान में मुसलिम अल्पसंख्यक और पाकिस्तान में हिन्दू अल्पसंख्यक का प्रतिनिधित्व (१) आबादी के अनुसार होगा (२) पृथक निर्वाचन और प्रत्येक पद पर अलग प्रतिनिधित्व और संरक्षण होगा जो तीनों रियासतों को मान्य होगा।

अलग प्रतिनिधित्व का तीनों रियासतों में हिन्दू, सिख और अछूतों का आयोजन और संरक्षण होगा।

(५) एक संयुक्त और सुदृढ़ मुसलिम राजनैतिक संगठन हिन्दुस्तान में मुसलमानों की बेहतरी और देख रख करेगी।

पाकिस्तान बंगाल और हिन्दुस्तान की तीनों स्वतन्त्र रियासतें ब्रिटिश सरकार से अलग अलग सन्धि समझौता करेंगी और उनमें सम्राट के प्रतिनिधि भी पृथक पृथक होंगे। उनके झगड़ों का फैसला करने की एक पन्चायत बनेगी जिसका काम हिन्दुस्तान की रियासतों, और अङ्गरेजी सरकार द्वारा पैदा जिच को दूर करेगी और फैसला देगी जो सर्वमान्य होगा।

सर सिकन्दरकी योजना

सर सिकन्दर की योजना पहलीबार २९ जुलाई सन १६३६ को एक पुस्तिका के रूप में प्रकाशित हुई। उनका कहना था कि उनकी योजना का यह निश्चित रूप नहीं, इसमें समझौता और सुधार की गुञ्जायश है। सिद्धान्त निर्णय हो जाने पर उसमें आंशिक परिवर्तन हो सकेगा; ऐसा उनका कहना था। उनके योजना की मुख्य बातें निम्न लिखित हैं:—(१) देश का विभाजन सात भूखण्डों में हो (२) प्रत्येक खण्ड (Zone) के लिये अलग अलग धारा सभा

होगी। (३) संघ की धारा सभा (Unicameral) होगी। योजना का विवरण नीचे दिया जाता है।

(१) फेडरल इज़क्यूटिव में वाइसराय होंगे और उनके कार्य्य परिषद में सात से कम सदस्य न होंगे। सन् १९२५ के शासन विधान को हिन्दू महासभा छोड़कर किसी भी संस्था ने स्वीकार नहीं किया है। हिन्दू महासभा ने इस पर जो भाव व्यक्त किये उसकी प्रतिक्रिया मुसलमानों पर विशेषरूप से हुई और देशी रियासतों को भी इस प्रकार के शासन विधान से भय उत्पन्न हुआ है। इसलिये ऐसा विधान तय्यार होना चाहिये जिसमें अल्पसंख्यकों और देशी नरेशों को किसी प्रकार की आशंका और भय न हो। इस विधान में सबसे बड़ी कमजोरी यह है कि केन्द्र के अकारण हस्तक्षेप रोकने का अल्पसंख्यको, प्रान्तों और देशी रियासतों में किसी प्रकार का उपाय नहीं है। इससे यह सन्देह उत्पन्न होता है कि केन्द्र हस्तक्षेप करने में इतना तत्पर होगा कि प्रान्तीय सत्ता केवल नाम के लिये ही होगी और विधान में दिये गये संरक्षण इसमें सहायक न हो सकेंगे। सर सिकन्दर के विचार से इतने बड़े देश के लिये संघशासन चलाने के लिये ऐसा विधान बनाना होगा जिसमें अल्प संख्यकों के लिये जायज संरक्षण हो और उनके धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक और आर्थिक मामलों में पूर्ण स्वतन्त्रता हो तथा उनके इन तत्वों का पूर्ण संरक्षण हो। भारतीय नरेशों को भी यह आश्वासन और संरक्षण दिया जाय कि केन्द्रीय सरकार उनके आन्तरिक शासन में किसी प्रकार का हस्तक्षेप न करेगी। यही संरक्षण और आश्वासन बृटिश प्रान्तों को भी दिये जांय। बिना इस प्रकार की गारण्टी दिये हुये संघव्यवस्था का चलना असम्भव होगा।

देश को कैसा विधान चाहिये ?

देश के भिन्नदलों में चाहे जैसा भी मत भेद हो किन्तु देश लिये सभी का आदर्श और मांग एक ही है। कोई पूर्ण स्वतन्त्रता चाहता है, कोई पूर्ण स्वराज्य और कोई पूर्ण अधिकार पर सभी देश के शासन पर अपना अधिकार चाहते

हैं। इसका यह अभिप्राय नहीं हो सकता कि यह सभी बृटिश कामनवेल्थ से सम्बन्ध त्याग चाहते हों और कुछ को छोड़ कर अधिकाधिक लोग बृटेन से सम्बन्ध बनाये रखना चाहते हैं। हमें यह विचारना चाहिये कि हमारे अपने उद्देश्यों की किस प्रकार सिद्धि होगी। इतिहास से यह प्रकट होता है कि इस आदर्श की सिद्धि सैनिक शक्ति और बल प्रयोग से ही हुआ करती है। बहुत से देशों में तो यह परिवर्तन हिंसा, रक्तपात और क्रान्ति द्वारा हुआ है। किसी परतन्त्रत राष्ट्र का शान्ति मय उपायों द्वारा उद्धार इतिहास में अज्ञात है। इसका एक मात्रा उपाय यही है कि हम अपनी सरकार दर्जा ब दर्जा बनाते हुये अधिकार प्राप्त करें। इस सम्बन्ध में १९१९ के विधान में काफी गुन्जायस है। जिसकी घोषणा सम्राट की सरकार द्वारा हो चुकी है। इस बीच में हम दोशासन सुधार की व्यवस्था देख चुके जिसका परिणाम यह हुआ कि वर्गवादी अपनी ताकत मजबूत करने की फिकर में लग गये और साम्प्रदायिक कटुता की बाढ़ सी आर ही है। एक दल दूसरे दल से शक्ति छीनने के लिये विकल हो रहा है। अपनी शक्ति का संगठन न कर वर्गवादी आपस में ही लड़ भिड़ कर अपना सिर फोड़ रहे हैं जिसका परिणाम यह हो रहा है कि देश की सामुहिक शक्ति का ह्रास और प्रगति में बाधा पड़ रही है। साम्प्रदायिक समस्या जिसके समझौते पर देश का भविष्य निर्भर है गाड़ी के आगे काठ सा आकर पड़ गया है। इसलिये हमें अपना घर ठीक करना चाहिये बिना घर ठीक हुये हमारे आदर्श और उद्देष्य की प्राप्ति न हो सकेगी और हम शक्ति शाली और संयुक्त भारत का निर्णय न कर सकेंगे। हमारे विचार में उस समय तक के लिये जब तक हम आजाद नहीं हो जांय इस मसले को तय करना टाल देना बुद्धिमानी की बात नहीं। हम लोग दो साल से प्रान्तीय स्वराज का नमूना देख रहे हैं। जिसका परिणाम यह हुआ है कि यह समस्या अभी भी वैसे ही उग्र रूपमें है, साम्प्रदायिक कटुता, पारस्परिक अविश्वास और साम्प्रदायिक दंगों से वातावरण दूषित हो उठा है और उन्नति अथवा प्रगति का चिन्ह भी नहीं दीखता।

सर्वोत्तम उपाय

हमारे लिये सर्वोत्तम उपाय क्या होगा ? इस पर हमें विचार करना चाहिये। सशस्त्र क्रान्ति का मार्ग हमारे लिये अनुपयुक्त है। न हमारे पास साधन है और न शक्ति जिससे हम अंग्रेजों को देश से बाहर निकाल सकें। विप्लव हमारे लिये उपयोगी और सुलभ न होगा क्यों कि इस तरह के आन्दोलनों से सरकार की गति और भी मन्द पड़ जाती है और जो कुछ भी अधिकार धीरे धीरे मिल सकते हैं उनमें रुकावट होने लगती है। ऐसी स्थिति में ऐसा कदम उठाना चाहिये जिससे हम शासन सुधार और योजना द्वारा अधिकाधिक अधिकार प्राप्त कर सकें। वह कदम उस प्रकार की योजना होगी जिसका विवरण निम्न लिखित है। इस विवरण में गहराई तक न जाकर केवल उसकी रेखा खींची गई है।

(१) भारत के संघ शासन विधान में देशी रियासतों और ब्रिटिश प्रान्तों का अलग अलग समझौता होगा इससे सुविधा अनेक यह होगा कि प्रान्तों और रियासतों का झगड़ा तोड़ कर फिर से उनके क्षेत्रिक आधार पर बँटवारा हो जिससे देश की एकता और केन्द्र शक्तिशाली होगा।

(२) इस प्रकार की योजना से भिन्न खण्डों में एकता की वृद्धि होगी क्यों कि उनका आर्थिक भौगोलिक और भाषा का प्रश्न एक सा होगा। उदाहरण के लिये इस प्रकार के एक क्षेत्र की समस्यायें समान होने के कारण वे एक समान नीति का व्यवहार कर सकेंगे। आर्थिक क्षेत्र में भी उनका विधान समान न होने के कारण कृषि और वाणिज्य व्यवसाय की विशेष उन्नति होगी।

(३) इस प्रकार की समान योजना और व्यवस्था होने के कारण उनमें भेद भाव की वृद्धि न होगी। ऐसा न होने से पारस्परिक संघर्ष सदा बना रहेगा। वर्तमान विधान द्वारा देशी रियासतें और भारतीय प्रान्त एक दूसरे से बिलकुल अलग रखे गये हैं।

(४) कुछ विषय ऐसे होंगे जिन पर (Fedral Executive) संघ सरकार और धारा सभा समान रूप से अपना नियन्त्रण रखे और बाकी मामलों

में प्रान्तों और रियासतों को स्वतन्त्रता हो। इससे एक दूसरे में विश्वास बढ़ेगा और भ्रान्ति न होगी।

(५) इससे उन खण्डों में केन्द्र के प्रति भक्ति और वफादारी बनी रहेगी।

(६) यह रियासतों और प्रान्तों के एकता और अधिकारों की रक्षा करेगा।

(७) इससे अल्प संख्यकों में विश्वास होगा कि उन पर किसी प्रकार का हस्तक्षेप न होगा।

सात खण्ड किस प्रकार होंगे

(१) आसाम बंगाल, और बंगाल की देशी रियासतें। इसमें से पश्चिमी बंगाल के कुछ जिले इसलिये निकाल दिये जायँ की प्रत्येक खण्डका क्षेत्रफल बराबर हो।

(२) बिहार उड़ीसा और बंगाल के वे जिले जो क्षेत्र से बाहर निकाल दिये गये हैं।

(३) संयुक्त प्रान्त और उसकी देशी रियासतें।

(४) मद्रास, त्रावणकोर, कुर्ग और उनकी देशी रियासतें।

(५) बम्बई हैदराबाद, मैसूर, सी. पी और मरहठा स्टेट, सी. पी. स्टेटस

(६) राजपूताना की रियासतें बीकानेर, जैसलमेर को छोड़कर) + ग्वालियर + मध्य भारतीय रियासतें बिहार, उड़ीसा की रियासतें + सी. पी + बरार।

(७) पंजाब, सिन्ध, सीमा प्रान्त, + काश्मीर, पन्जाब की रियासतें बलूचिस्तान, जैसलमेर बीकानेर ने यह केवल योजना मात्र है इनमें परिवर्तन की। आवश्यकता होने पर आपसी समझौते द्वारा परिवर्तन कर पुनः नवीन खण्ड बना दिये जायँ।

किस प्रकार का शासन विधान हो

(१) प्रत्येक खण्ड के लिये एक धारा सभा हो जिसमें उस खण्ड के

ब्रिटिश प्रान्त और देशी रियासतों के प्रतिनिधि हों। उसका प्रतिनिधित्व सन १९३५ के शासन विधान के अनुपात से होगा जैसा प्रतिनिधित्व उन्हें संघ केन्द्र में दिया गया।

(२) भिन्न खण्ड के धारा सभाओं के प्रतिनिधि केन्द्रीय संघ धारा सभा के सदस्य होंगे २५० ब्रिटिश भारत से, १२६ देशी रियासतों से।

(३) केन्द्रीय धारा सभा के सदस्यों में २/३ संख्या में मुसलमान होंगे।

(४) अन्य अल्प संख्यकों को १९३५ के शासन विधान के अनुसार प्रतिनिधित्व दिया जाय।

(५) खण्ड की धारा सभायें उसी सम्बन्ध में कानून और निर्णय करेंगी जो उनकी सूची में होगा। दो खण्ड की धारा सभाओं के पारस्परिक सहयोग द्वारा उस विषय पर भी निर्णय होगा।

(६) किसी खण्ड की धारा सभा में कोई भी बिल तब तक स्वीकृत न किया जायगा जब तक उसकी संख्या के २/३ सदस्य उसी विषय के पक्ष में अपना मत न देंगे।

(७) खण्ड की धारा सभायें केन्द्रीय धारा सभा को किसी भी प्रान्तीय विषय पर कानून बनाने की स्वीकृति दे सकते हैं।

(८) केन्द्रीय व्यवस्थापिका सभा द्वारा बनाया हुआ कोई भी कानून रद्द किया जा सकेगा यदि तीन खण्ड उसका विरोध करें और उनकी व्यवस्थापिका सभाओं के ५० प्रतिशत सदस्य उसके विरुद्ध हों।

(९) फेडरल इक्जक्यूटिव में निम्नलिखित सदय होंगे। वाइसराय और उनकी समिति जिसमें ७ से कम और ११ से अधिक सदस्य होंगे। इसमें भारत के प्रधान मन्त्री भी होंगे।

(११) भारतीय प्रधान मन्त्री की नियुक्ति वाइसराय द्वारा होगी। जो केन्द्रिय व्यवस्था सभा का सदस्य होगा। अन्य मन्त्रियों की नियुक्ति वाइसराय प्रधान मन्त्री की सलाह से करेंगे। इन नियुक्तियों में निम्नलिखित शर्तों का ध्यान रखा जायगा :—

(क) मन्त्री मण्डल में प्रत्येक खण्ड का एक प्रतिनिधि होगा।

(ख) नियुक्त मन्त्रियों में से १/३ मुसलमान होंगे।

(ग) यदि मन्त्रियों की संख्या ६ से ज्यादा नहीं होती तो २ और ९ से अधिक होने पर ३ मन्त्री देशी रियासतों के प्रतिनिधियों में से होंगे। अन्य अल्प संख्यकों के प्रतिनिधित्व का पूरा ख्याल रखा जायगा।

(घ) इस सभा के पहले १५:२० वर्षों तक वाइसराय दो मन्त्री अपने विचार से चुनेंगे और उन्हें रक्षा और वैदेशिक सम्बन्ध का काम सौंपा जायगा।

(११) आम तौर पर मन्त्रियों की अधिकार व्यवस्थापिका सभा की अवधि तक होंगे यानी ५ साल और वह वाइसराय की इच्छा तक ही मन्त्री होंगे।

(१२) खण्ड व्यवस्था सभा के सदस्य निम्न क्रम से निर्वाचित होंगे।

(१३) ब्रिटिश प्रान्तों के प्रतिनिधि १९३५ के भारतीय शासन विधान में दिये गये केन्द्रीय व्यवस्था सभा के अनुसार।

(२) देशीरियासतों के प्रतिनिधियों के निर्वाचन में २।४ उसे रियासत शासक होंगे १।४ का चुनाव रियासत की धारा सभा के सिफारिश पर हो या इसी प्रकार के निर्वाचन पद्धति पर जिसको रियासत ने स्वीकार किया हो। यह व्यवस्था पहले दस साल तक रहेगी। दूसरे ५ साल में २।३ और १।३ और १५ साल पूरा होने पर ५० प्रतिशत निर्वाचन द्वारा और ५० प्रतिशत शासक के चुनाव पर और २० पूरा होने पर २।३ निर्वाचित हों और १।३ शासक द्वारा नियुक्त हों।

(१३) रक्षा के सम्बन्ध में वाइसराय की एक सलाह समिति होगी जिसके निम्नलिखित सदस्य होंगे (१) वाइसराय, (२) भारतीय प्रधान मन्त्री (३) रक्षा मन्त्री (४) विदेश मन्त्री (५) अर्थ मन्त्री (६) यातायात मन्त्री (७) कमाण्डर इनचीफ (८) नवसेना प्रधान (९) वायु सेना प्रधान (१०) चीफ आफ जनरल स्टाफ (११) प्रत्येक खण्ड से एक मन्त्री (१२) प्रेसिडेन्ट द्वारा नियुक्त चार विशेषज्ञ (१३) वाइसराय द्वारा नियुक्त दो गैर सरकारी सदस्य (१४) रक्षा विभाग के मन्त्री।

(१४) विदेश सम्बन्ध पर सलाह के लिये एक समिति हो जिसमें सात सदस्य हों।

(१५) फेडरल रेल अधिकारी एक समिति बनायेंगे जिसमें प्रत्येक खण्ड से एक सदस्य होगा।

(१६) संशोधित विधान में संरक्षण का पूर्ण विचार होगा और जहाँ तक सम्भव होगा अल्प संख्यकों को संरक्षण दिया जायगा। सात प्रकार के संरक्षण होंगे। विवरण के लिये सिकन्दर हयात की पुस्तक पढ़े। विस्तार भय से अधिक नहीं दिया जा रहा है।

(१७) सेना का चुनाव और नियुक्ति पहली जनवरी १६३७ के अनुसार होगी।

(१८) केवल धारा सभा में केवल एक धारा सभा होंगी (Unicameral)

(१६) किसी ऐसे प्रश्न पर जो फेडरल, कांकरन्ट, रीजनल या प्रान्तीय होगा उस पर वाइसराय का निर्णय सर्वमान्य होगा।

(२१) फेडरल धारा सभा में केवल एक ही सभा होगी बशर्ते सातों खण्डों को सामन रूपसे अतिरिक्त प्रतिनिधित्व दिया जाय जो उन स्वार्थ विशेषों का प्रतिनिधित्व भी करे। जिसका प्रतिनिधित्व राज परिषद् करती है।

(२२) विशेष प्रकार के विधान द्वारा ऐसी व्यवस्था हो जो प्रान्तों और केन्द्र में अल्प समुदाय के स्वार्थों का संरक्षा करती है।

संघ योजना

पंजाबी ने अपनी (The confederacy of India) नामक पुस्तक में भी भारत को बाटने की नीति पर जोर दिया है। उनकी योजना का संक्षेप रूप निम्न हैं:—वे भारत को अनेक मुल्कों में बाँटना चाहते हैं जो भारतीय संघ का अंग बनेगा। इससे यह प्रतीत होता है कि योरोपीय शासन विधान का अध्ययन करते समय पंजाबी साहब स्वीटिजरलैण्ड का शासन विधान देखकर अत्यन्त प्रभावित हुए और भारत को भी उसी प्रकार बाँटने का स्वप्न देखने

लगे किन्तु उनमें वे उन साधारण बातों को भी। जिसे हम "मोटी समझ" कहा करते हैं न समझ सके, वह है स्विट्जरलैण्ड की भौगोलिक स्थिति और क्षेत्र-फल की लघुता कुल देश का क्षेत्रफल हमारे मध्यप्रान्त से छोटा बड़ा होगा। उसके साथ और भी ऐसे मामले हैं जो भारत के लिये लागू नहीं हो सकते।

(१) सिन्ध क्षेत्रिय संघः—पंजाब, पूर्वीय हिन्दू क्षेत्र, अम्बाला कमिश्नरी, कांगड़ा जिला, उना और होशियार पुर जिले की गढ़शंकर तहसील छोड़कर : सिन्ध सीमा प्रान्त काश्मीर, बिलोचिस्तान, बहावलपुर, अम्ब, दिर-सवात, चितराल खानपुर, कलात लसबेला कपूरथला, मलेरकोटला इसकी (संघ इकाई) होंगे। लेखक ने गणना कर निकाला है कि यह संघ जिसका नाम वह हिन्दुस्तान रखना चाहते है क्षेत्रफल में ३, ९८८३८ वर्ग मील होगा। जिसमें ३. ३० हजार हिन्दू और सिख निवासी होंगे जो क्रमशः ९ और ८% होंगे इस प्रकार इसमें करीब ८२% मुसलिम बहुमत होगा।

(२) हिन्दू भारत संघ में संयुक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त बिहार और बंगाल का कुछ हिस्सा उड़ीसा, आसाम मदरास, बम्बई और भारत की अन्यदेशी रियासतें, राजपूताना और दक्षिण की रियासतों को छोड़कर हों। इन क्षेत्रों का ब्यौरा यों है।

क्षेत्रफल ७, ४२, १७३ वर्ग मील

संयुक्त आबादी २१, ६०, ४१५४१

हिन्दू प्रतिशत ८३०७३%

मुसलिम " ११%

(३) राज्यस्थान संघ जिसमें राजपूताने और मध्य भारत की सभी देशी रियासतें होंगी।

क्षेत्रफल १८०६६५ वर्ग मील आबादी १७८ ५०२, हिन्दू ८९. ३६% मुसलमान ८, ० ६%

(४) दक्षिण की रियासतें :— हैदराबाद, मैसूर बस्तर की देशी रियासतें।

क्षेत्रफल १२५०८६ वर्ग मील आबादी २१५१८१७१ हिन्दू ८५, २६% मुसलिम ८, ६६%

(५) बंगाल संघ में वे जिले शामिल किये जायगें जिनमें ५०% से अधिक मुसलमानों की आबादी है हिन्दू रियासतों को छोड़कर इस संघ का विवरण यों है।

क्षेत्रफल ५६७६४ वर्ग मील आबादी ३१०, लाख है जिसमें मुसलमान ५६% और हिन्दू ३३, ९% है। लेखक ने स्वीकार किया है कि हमारे आकड़ों में गलती हो सकती है। भारतीय संघ का इस प्रकार का रूप अनोखा होगा। प्रत्येक स्वयत्त प्रान्त में गर्वनर होंगें जो केन्द्रीय गर्वनर जनरल के आधीन होंगे जो कि केन्द्रीय सरकार के आधीन होंगें।

जिन्ना की १४ माँगे

मुहम्मदअली जिन्ना ने सन् १९३८-३९ में साम्प्रदायि समझौते के सम्बन्ध में गान्धीजी, सुबाष बाबू और पं० नेहरू से जो पत्र व्यवहार हुआ उसमें किसी प्रकार के समझौता होने के पूर्व अपनी निम्न लिखित १४ माँगे स्वीकार करने का प्रस्ताव पेश किया। शर्तं निम्नलिखित है:—

(१) मुसलिम लीग के उन माँगों की स्वीकृति जो सन् १९२९ में निर्धारित की गई थी।

(२) कांग्रेस न तो साम्प्रदायिक निर्णय का विरोध करे और न उसे राष्ट्रीयता विरोधी बताये।

(३) सरकारी नौकरियों में मुसलमानों का प्रतिनिधित्व शासन विधान द्वारा निर्धारित किया जाय।

(४) विधान द्वारा मुसलमानों के कानून और संस्कृति की रक्षा की जाय।

(५) कांग्रेस शहीदगंज मसजिद आन्दोलन में भाग न ले और उसे मुसलमानों को वापिस दिलाने में सहायक हो।

(६) अंग्रेज, निजाम, या मुसलमानों की धार्मिक स्वाधीनता के अधिकार में बाधा न डाली जाय।

(७) मुसलमानों को गो कशी करने की आजादी रहे।

(८) प्रान्तों के प्रति संगठन में जहाँ मुसलिम बहुतम हो किसी प्रकार का रद्दोबदल न किया जाय।

(९) बन्देमातरम् राष्ट्रीयगान के रूप में न स्वीकार किया जाय।

(१०) मुसलमान उर्दू को राष्ट्रीय भाषा बनाना चाहते हैं इसलिये उसमें किसी प्रकार की रुकावट न डाली जाय और न उसका प्रयोग ही कम किया जाय।

(११) स्थानीय संस्थाओं में मुसलमानों का प्रतिनिधित्व साम्प्रदायिक निर्णय के आधार पर हो।

(१२) तिरंगा झंडा बदल दिया जाय या मुसलिमलीग के झण्डे को उसकी बराबरी का स्थान दिया जाय।

(१३) मुसलिमलीग मुसलमानों की एक मात्र प्रतिनिधि संस्था स्वीकार की जाय।

(१४) प्रान्तों में संयुक्त (Coaliton) मन्त्री मण्डल बनाया जाय।

लाहौर प्रस्ताव

अखिल भारतीय मुसलिम लीग ने २६ मार्च १९४० के लाहौर अधिवेशन में निम्नलिखित महत्वपूर्ण प्रस्ताव पास किया। अधिवेशन के सभापति लीग के प्राण महम्मद अली जिन्ना थे।

"इस सभा कि सम्मति में ऐसा कोई भी शासन विधान देश के मुसलमानों को न स्वीकृत होगा और न व्यवहार्य्य होगा यदि उसके आधार में निम्नलिखित बुनियादी सिद्धान्त न होगा। वह यह कि किसी प्रकार का भौगोलिक और आर्थिक भेद और रुकावट न डाल कर पूर्वी और पश्चिमी भारत में जहाँ मुसलमानों की आबादी बहुसंख्यक है स्वाधीन रियासतें हों। यह रियासतें सर्वशक्तिमान और अधिकार पूर्ण होंगी। और यह कि पर्य्याप्त और सर्व-शक्तिशाली अधिकार एवम् संरक्षण मुसलमानों को उन रियासतों में मिले

जहाँ वे अल्पमत हों और उनके राजनैतिक, आर्थिक धार्मिक, संस्कृतिक और अन्य स्वार्थों की रक्षा बहुसंख्यक मुसलिम रियासतों की सम्मति और सहयोग से हो। इन शर्तों और प्रस्तावों का अर्थ तो यह होगा कि लीग ही सर्व शक्तिमान है और अपनी मरजी के मुताबिक शर्तें कराकर भारत की आजादी का मसला हल करेगी। इस प्रस्ताव से लीग की सङ्कीर्णता के सिवा और क्या प्रकट होता है। ऐसी शर्तों के अनुसार कभी किसी प्रकार का समझौता होना असम्भव सा जान पड़ता है। दूसरे यह कि जिन्ना की १४ शर्तें जो इस प्रकार की है वह हमारे राष्ट्रीयता के लिये अपमान जनक और तिरस्कार सूचक है। कोई भी व्यक्ति जिसे स्वदेशाभिमान हो इस प्रकार की कुटिल और शर्तों के सामने न झुका सकेगा। हाँ इनसे उस प्रतिक्रियावादी नीति पर अवश्य प्रकाश पड़ता है जिसने लीग के नेताओं और मुसलमानों से सन् १९२९-३० में जब की देश भर में साइमान कमीशन का एक स्वर से विरोध और वहिष्कार हुआ, स्वागत कराया, कांग्रेस के विरुद्ध मिथ्या आन्दोलन कराया कि उनके सम्पर्क और सहयोग से कांग्रेस सरकारों के अन्तर्गत मुसलमानों का हित और इमान खतरे में है। कांग्रेस मन्त्रियों के विरुद्ध मिथ्या अभियोग लगाया गया। और अन्त में मुक्ति तथा प्रार्थना दिवस भी मनाया गया। लाहौर प्रस्ताव मुसलिम राजनीति का आखरी ताश है इसे फेंककर भी मुसलिम लीग भोले भाले मुसलमानों में द्वेष और फूट फैलाने के सिवा और कुछ न कर सकी। प्रस्ताव के मानने वालों में उसका प्रभाव कितना है यह तो इसी बात से प्रकट हो जाता है कि आज करोड़ो मुसलमान और मुसलिम नेता एक स्वर से लीग की घातक नीति का विरोध कर रहे हैं और पाकिस्तान की माँग को अव्यवहारिक और पागलपन के सिवा कुछ नहीं समझते।

हारुन कमेटी की योजना

लीग की विदेश सम्बन्ध समिति के निमन्त्रण पर एक कमेटी बनी जिसने लाहौर प्रस्ताव के आधार पर विभाजन कोरेखा प्रस्तुत की इसे सर अब्दुल्ला

हारुन ने उपस्थित किया। इस योजना में बृटिश भारत के सिवा देशी राज्यों के सम्बन्ध में भी विचार प्रकट किये गये है इस प्रकार यह योजना पाकिस्तान योजना से स्पष्ट है। कमेटी का निर्णय निम्नलिखित है:—

(१) पश्चिमोत्तर में मुसलिम रियासत बने जिसमें मुसलमानों का औसद लगभग ६३% के होगा।

(२) पूर्वोत्तर मे दूसरी मुसलिम रियासत बने जिसमें मुसलमानों का औसद लगभग ५४% होगा।

---

(१) पश्चिमोत्तरीय रियासत की स्थिति (१९३१ के जनगणना के अनुसार)

	सम्पूर्णजनसंख्या	मुसलिम आबादी
(१) पन्जाब	२, ३५, ८०, ८५२,	१, ३३, ३२, ४६०,
(२) सिन्ध	३८, ८७, ०७०,	२८, ३०, ८००
(३) सीमाप्रान्त (Settled) स्थाई	२४, २५, ७६,	२२, २७, ३०३
(४) ” ” बृटिश नियन्त्रि	१३, ६७, २३१,	१३, १७, २३१
(५) बृटिश बिलोचिस्तान	४, ६३, ५ ८,	४, ०५, ३०६
(६) दिल्ली प्रान्त	६, ३६, २४६,	२, ०६, ९६०
	३, २३, ६०, ०६६	२, ०३, २० ०६३

मुसलिम औसद ६२, ७९%

---

(२) पूर्वोत्तर खण्ड जिसमें आसाम, बंगाल, और बिहार का पूर्निया जिला होगा किन्तु बंगाल के बाँकुरा और मिदनापूर जिले को छोड़कर।

गैर मुसलिम	२, ६१, ३४, ५२३——४६%
मुसलिम	३, ०८, ७६, ४२१——५४%
संपूर्ण संख्या	५, ७०, १० ९४ ४,

गैर मुसलिम संख्य में ८५०००००० अछूत (३२%) लगभग १५०००००० (६%) सीमान्तिक जातियां और ४ लाख ईसाई हैं। अर्थात १ करोड़ ४ लाख की संख्या निकाल देने पर १, ५७, ३४ ५२३ सवर्ण हिन्दू हैं।

(३) कमेटी यह संकेत करना अपना कर्त्तव्य समझती है कि मुसलमानों के हित में यह आवश्यक होगा कि उन देशी रियासतों में भी जहां उनका प्रभाव बाहुल्य हो उसे प्रकट करें। अस्तु इस दृष्टि से वे देशी रियासतें, चाहे छोटी अथवा बड़ी हों जिसके शासक मुसलमान हों मुसलिम वैधानिक योजना के अन्तर्गत सर्वशक्तिमान मुसलिम रियासतें मानी जांय। यह हमारी पहली मांग होनी चाहिये यह उचित होगा कि लीग इस पर जोर दे कि निजाम की रियासत का विस्तार होकर स्वतन्त्र हो और उसका निकास पश्चिमी समुद्र तट हो। ऐसा हो जाने से हिन्दुस्तानी मुसलमानों को बहुत बड़ी शक्ति का मार्ग खुल जायगा। कौन कह सकता है कि भविष्य में हैदराबाद ही उनकी शक्ति, शिष्टता और संस्कृति का केन्द्र न हो जायगा।

कमेटी देशी रियासतों के सम्बन्ध में यह विचार प्रकट करती है कि उनके लिये यह हितकर होगा कि वे भी मुसलिम रियासतों के संघ से सम्बन्ध स्थापित कर लें। यदि इस प्रकार का प्रबन्ध हो सके तो निम्नलिखित स्थिति होगी:—

उत्तरी मुसलिम खण्ड

नाम—	योग—	मुसलिम आबादी
१. वृटिश भारतीय प्रान्त उपरोक्त	३, २३, ६०, ०६३	२, ०३, २०, ०६३
२. सीमाप्रान्तीय रियासतें		
दिर, सवात, चितराल,	९०२०७५	८५२०००
३. विलोचिस्तान रियासतें		
कलात	३४२१०१	३३१२३४,
लास बेलास	६३००८	६१५००
४. सिन्ध (खैरपुर मीर)	२८७१८३	१८६५७७
५. पंजाब रियासतें		
बहावलपुर	९८४६१२	७९९१७६
कपूरथला	३१६७५७	१७९२५१

समस्त भारत के अनुपात से

समस्त भारत की जनगणना (१९३१)	३५, १५, २९, ५५७
मुसलिम जनसंख्या (")	७, ७६, ७८, २४५
पूर्वीय और पश्चिमोत्तरी सीमा	
की मुसलिम जनसंख्या (रियासतों सहित)	५, ७५, ४२, ७८७ या ७४-१७% को

(कमेटी अपने प्रस्तावों द्वारा देशभर के मुसलमानों को संरक्षण न देकर केवल ७४·१७% को ही संरक्षण देने की शिफारिश करती है।)

लीग के लाहौर प्रस्ताव से इस प्रकार की योजना में तत्कालिक प्रश्न के के हल करने के लिये समय का विचार करने का संकेत है (यद्यपि इस प्रकार की योजना की स्पष्ट रूप रेखा नहीं दी गई है।) इसमें यह तर्क भी है कि इनके लिये परिवर्त्तनकाल (transitional) में रक्षा, विदेश सम्बन्ध आयात कर इत्यादि समानसूत्र से संचालित होगा। ऐसी सहकारी समिति इस प्रस्ताव के मुक्त अर्थ मे भी आवश्यक होगी क्यों कि इस सिद्धान्त के अनुसार अल्पसंख्यकों के सरंक्षण के लिये क्रमिक सम्बन्ध होना आवश्यक होगा जो रियासतों और मुसलिम सरकार के बीच होगा जो रियासतें हिन्दू और मुसलिम प्रभाव क्षेत्र के अन्तर्गत होंगी। मुसलमानों के लिये संघ सरकार अरुचिकार है क्योंकि उन्हें भय है कि हिन्दू बहुमत होने के कारण उनका मुसलमानों पर भी आधिपत्य हो जायगा। यदि प्रस्ताव के सारांश से यह आवश्यक है कि बिना सहकारी समिति के जो समान हो यह सम्भव न हो सकेगा। किसी प्रकार एक ऐसा समझौता करना ही होगा जिससे मुसलमान केन्द्रीय सरकार में समानता से सम्मिलित होकर हिन्दुओं के साथ हों।

अस्तु इसी आशय से कमेटी ने यह प्रस्ताव किया कि वे रियासतें जो सर्वशक्तिमान हों ऐसा संयुक्त समझौता करेंगी जिससे समान सहकारी समिति अपनी रियासतों की ओर से (१) रक्षा, (२) विदेश सम्बन्ध (३) यातायात (४) आयात कर (५). अल्पसंख्यकों का संरक्षण और देशान्तर गमन

की समस्या का देख भाल करती रहेंगी। निम्नलिखित विषय भी उसी के अन्तर्गत होंगे.—

(अ) रक्षा: प्रत्येक पृथक रियासतें अपने व्यय पर सेना रखेंगी। इसकी शक्ति इसके स्थिति के अनुसार होगी। केन्द्रीय सरकार रियासत के राजनैतिक स्थिति के अनुसार सहायता देगी। साधारण समय में रियासत स्वयम् सैन्य संचालन करेगी। संकट काल में इसका संचालन केन्द्रीय नीति और निर्देश पर होगा।

(ब) जलसैन्य: यह पूर्णतया केन्द्र के आधीन होगा सिवा उन विषयों के जिनका उत्तरदायित्व रियासत पर हो। रियासतें सभी शेष विषयों का संचालन करेगी जिसका केन्द्र से सम्बन्ध न होगा। उन समितियों में जो केन्द्र और रियासतों के लिये समान होगी उन पर मुसलमानों की संख्या आधी होगी।

हारुन कमेटी में ६ सदस्य थे। इनकी रिपोर्ट प्रकाशित होने के पहले ही कलकत्ते के दैनिक पत्र स्टेट्समैन में प्रकाशित हो गई। इस कमेटी के एक सदस्य प्रोफेसर अफजल हुसेन कादरी भी थे जिन्होंने कहा कि यह रिपोर्ट अपनी समीक्षा में लाहौर प्रस्ताव से भिन्न मार्ग की ओर बढ़ गई है क्योंकि यह उन रियासतों के सम्मिलित करने की भी सलाह देती है जिनके लिये प्रस्ताव में संकेत नहीं था और यह सुझाव भी उपस्थित करती है कि एक दूसरी रियासतों का सम्बन्ध क्या होगा इतना ही नहीं आप किसी प्रकार की केन्द्रीय व्यवस्था के विरुद्ध हैं क्योंकि इसका अभिप्राय यह होगा कि आंशिक खंडिक रूप से भी इस मार्ग ग्रहण में संघ बन जायगा जिसका अर्थ हिन्दू राज होगा।*

डाक्टर सैयद अब्दुल लतीफ ने भी पश्चिमोत्तरी और पूर्वोत्तरी खण्ड जिसकी रिपोर्ट में चरचा की गई है विरोध करते हैं। यह सीमा निर्धारण पन्जाब, सिंध और यू. पी. के सदस्यों ने की है सर हारुन को डाक्टर लतीफ ने पत्र में लिखा कि लाहौर प्रस्ताव का उद्देश्य एक मजहबी खण्ड या रियासत बनाने को है जिनमें अधिकांश मुसलिम बहुमत हो। आपकी कमेटी के पंजाब और अलीगढ़ के सदस्य साम्राज्यवादी आकांक्षा के कारण काश्मीर से लेकर जैसलमेर

*डा. राजेन्द्रप्रसाद खण्डित भारत के आधार पर।

और वृहत्तर पंजाब की कल्पना कर रहे हैं जो पूर्व में अलीगढ़ तक होगा। इसमें मुसलिम बहुमत घट कर केवल ५.५% रह जायगा। इसी भाँति पूर्वोचारी खण्ड में, बंगाल आसाम और बिहार के जिलों को मिला लेने से मुसलिम बहुमत केवल ५४% रह जायगा। हमारे विचार से इस प्रकार की आयोजन लाहौर प्रस्ताव के विरुद्ध है क्यों कि इसमें ४६ और ४२% गैर मुसलिम बहुमत होगा इस प्रकार न तो आप उन्हें मुसलिम रियासतें ही कह सकेंगे और न वह मुसलिम खण्ड ही होगा।"

पटियाला	१६२५५२०	३६३९२०
नाभा	२८७५७४	५७३६३
फरीदकोट	१६४३६४	४९९१२
झिन्द	३२४६७६	४६००२
मलेरकोटला	८३०७२	३१४१७
लोहरू	२३३३८	३११९
पटाउदी	१८८७३	३११९
दूजाना	२८२१६	५९६६
चम्बा	१४६९७०	१०९३९
मंडी	२७०५६५	६३५१
सुकेत	५९४०९	७३३
कलसिया	५९९४८	२१७९७
(१) शिमला की पहाड़ी रियासतें	३३०८५०	१००१७
सिरमौर (नाहन)	१४८५६३	७०२०
विलासपुर	१००९९४	१४५९
काश्मीर	३६४६२४३	२८, १७, ६३६
यदि बीकानेर और जैसलमेर भी सम्मिलित हो जाय		
बीकानेर	९३६२१३	१, ४१, ५७८
जैसलमेर	७६२५५	२२११६
	४३५२६१५१	२६३३०१९०
		या ६९, ४९%
बीकानेर जैसलमेर छोड़कर		२, ६१, ६६, ५२६
		या ६१.५४%

कमेटी ने छानबीन कर पश्चिमोत्तरी खण्ड के बृटिश प्रान्तों के अल्पसंख्यकों की संख्या निकाली है उसका अनुपात निम्नलिखित है:—

अछूत	१४१३५३२ या ४. ६%
सिख	३१३६९६४ या ६. ७०%
सवर्ण हिन्दू	७०१६२७८ या २१. ६९%

इस प्रकार देशी रियासतों के आंकड़े निम्नलिखित हैं:—

सवर्ण हिन्दू	२४६४०९३.	या. २२. ३२%.
सिख	१०५८१४२	या. १०. ४२%.

नोट: सम्भवतः हिन्दू संख्या गणित की अशुद्धि है क्योंकि उसे २४. ५६. होना चाहिये तको २२. ३३%

पूर्वीय मुसलिम क्षेत्र

बंगाल की रियासतें	योग	मुसलमान
कूचबिहार और त्रिपुरा	९७३३१६	३१२४७६
आसाम रियासतें		
मनीपूर खसिया	६२५६०६	२४६००
बृटिश प्रान्त	५७०१०९४६	३०८७६४२१.
	५८६०९८६८	३, १२, १३, ४९७

उपरोक्त आंकड़े दिखाकर यत्न किया गया है कि पूर्व में या ५३. १५%. देशी रियासतों और प्रान्तों को मिलाकर मुसलिम रियासत बनाई जावे जिसका अनुपात इसी प्रकार होगा।

दोनों मुसलिमखण्डों का क्षेत्रफल

	बृटिशप्रान्तों का क्षेत्रफल	देशीरियासतों का क्षेत्रफल	योग
पूर्वीयखण्ड	२२५३५२ .	२, १३, ३७०	४, ३८, ७२२.
पश्चिमोत्तरीखण्ड	१२९६३७	१७, ७५४	१, ४७, ३९१
	३, ५४ ९८९	२, ३१, १२४	५, ८६, ११३.

राजाजी का सूत्र (C. R. Formula)

मुस्लिम लीग और कांग्रेस का साम्प्रदायिक मसले पर कोई समझौता न होने के कारण राजगोपालाचारी जी ने एक व्यवस्था की योजना की। यदि गान्धीजी और जिन्ना में इस पर मतैक्य हो तो दोनों नेताओं के उद्योग से लीग और कांग्रेस इसी आधार पर भविष्य में जिच दूर कर एक स्थाई व्यवस्था कर सकेगी। उसका उपाय निम्नलिखित है :—

(१) "नीचे लिखे शर्तों को यदि मुसलिम लीग स्वीकार कर ले तो स्वाधीन भारत के लिये एक ऐसी विधान व्यवस्था हो सकेगी जिससे परिवर्तन काल में एक सरकार बने और लीग कांग्रेस के स्वाधीनता प्राप्ति के आंदोलन में कंधा देकर उसे जोरदार बनाये ताकि जल्दी से जल्दी स्वाधीनता प्राप्त की जा सके।

(२) यह कि युद्ध समाप्ति पर एक कमीशन नियुक्त हो जो पश्चिमोत्तर और पूर्वीय समीप जिलों की सीमा निर्धारित करे जिसमें मुसलमान बहु-संख्यक हों। इस प्रकार निर्धारित क्षेत्र के अन्तर्गत वालिग जनमत के आधार पर उनकी सम्मति से यह निश्चय हो कि वह क्षेत्र भारतीय संघ से अलग हो। यदि बहुमत का यह निश्चय हो कि वे अलग सर्वशक्तिमान रियासत बनाना चाहते हैं तो उन्हें यह अधिकार दिया जाय और समीप के जिलों को यह स्वतन्त्रता हो कि वे चाहे जिसके साथ हो जांय, हिन्दुस्तान में या पाकिस्तान में"

(३) प्रत्येक दल को यह स्वतन्त्रता होगी की मत गणना के पूर्व अपने सिद्धान्तों का मुक्त प्रचार करें।

(४) अलहदगी ही निश्चित होने पर आपसी समझौते द्वारा रक्षा, वाणिज्य व्यवसाय और यातायात की समस्या का समनीति निर्धारण हो।

(५) किसी प्रकार की आबादी की अदला बदली स्वच्छन्दता पूर्वक और निर्विघ्न हो।

(६) यह शर्तें तभी पालन की जा सकेंगी जब बृटिश सरकार भारतीय शासन का पूर्ण उत्तरदायित्व भारतीयों को देदे।

इन्हीं शर्तों को समझौते का आधार बनाकर सितम्बर १९४४ में गांधीजी और जिन्ना में सम्मेलन हुआ। तीन सप्ताह के अथक परिश्रम और संशय निवारण पर भी बापू जिन्ना को न हिला सके। जिन्ना अपनी ज़िद पर डटे रहे। उनकी दृष्टि में गांधीजी द्वारा सोचा हुआ कोई भी उपाय मुसलमानों के लिये घातक है और उनका कांग्रेस से सहयोग कर भारत विधान बनाने का अर्थ यह होगा कि मुसलमानों का अस्तित्व ही लुप्त हो जायगा। इस प्रकार की बुद्धि के लिये जिन्ना की बलिहारी है। इसे जिन्ना और उनकी लीग किस प्रकार देखती है इसका पूरा विवरण जानने के उत्सुक पाठकों से निवेदन है कि वे लीग द्वारा प्रकाशित "जिन्ना-गांधी वार्तालाप" पढ़ें। इसको पढ़ लेने पर पाठकों से यह कहने की आवश्यकता नहीं रहेगी कि मुसलमानों की मनोवृत्ति कितनी दूषित है। उन्होंने जन आंदोलन और स्वतन्त्रता तथा श्वेत शोषण से भारत मुक्ति का कैसा मार्ग ग्रहण करने का निश्चय किया है। गांधीजी को इस प्रकार कलपित करने का साहस लीग के क्षुद्र पंट ही कर सकते हैं क्यों कि उनमें अपने गौरव और देश का अभिमान नहीं। जो कौम अपने मातृ-भूमि को दासत्व की श्रृंखला में जकड़ रखने में ही अपना गौरव समझती हैं क्या वह राष्ट्रीयता और स्वतन्त्रता का महत्व समझ सकती है। जिन्ना के आगे समझौते की किस प्रकार की वार्ता या प्रस्ताव इस प्रकार आता है जैसे मरु-भूमि में जल का। परतन्त्रता के वातावरण में पलकर, साम्प्रदायिक दूषण का आवरण धारण कर सचमुच लीग के समर्थकों की बुद्धि मरु भूमि बन गई है। इस मरु भूमि को हरा भरा बनाने का काम देश की स्वाधीनता ही कर सकती है। हम उत्सुकता से उस शुभ अवसर की प्रतीक्षा करते हैं जब श्वेत जाति की

छत्र छाया से मुक्त मुसलिम समाज अपना संकीर्ण दृष्टिकोण त्याग कर भारत के स्वतन्त्रता की आहुति में सक्रिय सहयोग करे।

× × × ×

सितम्बर १९४४ का महात्माजी का प्रस्ताव

"लीग और कांग्रेस द्वारा नियुक्त कमीशन सीमा निर्धारण करे। ऐसे क्षेत्र का मत संग्रह का लीग जनमत के आधार पर हो। यदि बहुमत अलहदगी के पक्ष में हो तो यह समझौता हो जायगा कि विदेशी शासन से मुक्ति होते ही दो स्वतन्त्र रियासतें बन जायं।

इसकी सन्धि हो जायगी कि अलाहदगी हो और विदेश सम्बन्ध, रक्षा, आन्तरिक यातायात, चुंगी, वाणिज्य-व्यवसाय, इत्यादि जिसमें दोनों का स्वार्थ होगा समनीति पर निर्धारित हों।

यह सन्धि पत्र यह भी एक शर्त रखें की दोनों रियासतों में अल्पसंख्यकों के संरक्षण की पूर्ण व्यवस्था हो।

इस शर्त को कांग्रेस और लीग को मान लेने पर दोनों आपस में समझौते से ऐसा कदम उठाये कि भारत शीघ्राति शीघ्र स्वतंत्रता प्राप्त कर सके।

लीग को इस बात की स्वतंत्रता होगी कि वह किसी भी सक्रिय आंदोलन से जिसे कांग्रेस करना चाहे अलग रहे।"

आश्चर्य है कि महात्माजी के ऐसे प्रस्ताव भी लीग का गोरी बहू की गठ बंधन से मुक्ति न करा सका।

× × × ×

जगतनारायण लाल का प्रस्ताव

जगतनारायण लाल का प्रस्ताव जो १९४२ की अप्रैल में अखिलभारतीय कांग्रेस के प्रयाग अधिवेशन में पेश किया गया था। प्रस्ताव इस प्रकार है:—

"अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की सम्मति में ऐसा कोई भी प्रस्ताव जो भारत की अखण्डता नष्ट करें न विचार करेगी जिससे चंद रियासतों या क्षेत्रों

को इस प्रकार की स्वतंत्रता दी जाय की वह भारतीय संघ अथवा संयुक्त भारत से अलग हो। इस प्रकार का कोई भी उद्योग भारत के भिन्न भिन्न प्रांतों, रियासतों के लिये घातक होगा। इसलिये कांग्रेस इस प्रकार के किसी भी प्रस्ताव को स्वीकार न करेगी"।

यह प्रस्ताव श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचारी के उस प्रस्ताव के विरोध में लाया गया जो कांग्रेस के दायरे में लीग को लाने के विचार से उन्होंने किया था। राजाजी ने लीग की नीति का अच्छा अध्ययन किया था क्रिप्स योजना दुबारा दी जाने पर इस प्रकार का प्रस्ताव पेश कर यह चाहते थे कि लीग भी कांग्रेस के समान ही बृटेन के विरुद्ध जन आन्दोलन मे सक्रिय सहयोग करे किन्तु उस समय हमारे नेतागण यह भूल रहे थे कि लीग को सन्तुष्ट करने की नीति एक दिन उन्हीं के मूलोच्छेद का सतत प्रयत्न करेगी शिमला आंदोलन ने यह धारणा स्पष्ट प्रकट कर दी। कांग्रेस की (Appeasement Policy) खुश करने की नीति के कारण लीग आज मुल्क की आजादी के आगे काठ डाल रही है।

× × × ×

देसाई लियाकत समझौता

देसाई लियाकत समझौते की चर्चा पुस्तक में की जा चुकी है। यह एक प्रकार का आपसी समझौता श्रीभूलाभाई देसाई और नवाब जादा लियाकत अलीखाँ में हुआ था जिसका ध्येय भारतीय गत्यवरोध का अंत करना था। उसका मूल निम्न लिखित हैं:—

(१) कांग्रेस और लीग निम्न लिखित आधार पर आंतरिक (Interim) राष्ट्रीय सरकार वर्तमान शासन विधान के अंतर्गत बनाना स्वीकार करती है।

(अ) वाइसराय के नवनिर्वाचित शासन परिषद के सदस्यों में ५०; ५० लीग और कांग्रेस के सदस्य हों।

(ब) इस प्रकार की सरकार में अछूत और सिखों के सत्वों की अवहेलना न की जाय।

(स) प्रधान सेनापति शासन परिषद् के (Exofficio) सदस्य हों।

(२) इस प्रकार निर्वाचित शासन परिषद् ऐसे किसी नियम अथवा आज्ञा का समर्थन न करेगी जिससे केंद्रीय धारा सभा के सदस्यों के मत का बहुत समर्थन न हो।

(३) पद ग्रहण करने के पश्चात् तत्काल ही यह परिषद् कांग्रेस कार्य्य-कारिणी समिति के बंदी सदस्य और अन्य कांग्रेसियों को जो जेलों में बंद हैं रिहा कर देगी।

(४) केंद्र में नई सरकार इस प्रकार बन जाने पर उन प्रांतों में जहां ९३ धारा के अनुसार गवर्नरी शासन चल रहा है उसका अंत कर संयुक्त मंत्रिमण्डल बनाया जाय जिसमें कांग्रेस और लीग का प्रतिनिधित्व हो।

(५) वाइसराय से निवेदन किया जाना चाहिये कि वे इस प्रकार के प्रस्ताव द्वारा देश को यह व्यवस्था स्वीकार करने के लिये आमन्त्रित करें।

'ज्ञान्स-डील'

एक और योजना जिसका यहाँ उल्लेख करना आवश्यक जान पड़ता है, वह है विश्व युवक संघ के भूतपूर्व अध्यक्ष और नेताजी सुभाषचन्द्र बसु के अनन्य सहयोगी डाक्टर ज्ञान श्रीवास्तव द्वारा प्रेषित 'ज्ञान्स डील' (Gyan's Deal) है जिसके सम्बन्ध में कहा जा सकता है कि नेताजी के अतिरिक्त क़ायदे आज़म, बीरसावरकर, राजाजी आदि का भी समर्थन प्राप्त है। सच पूछा जाय तो कैबिनेट-मिशन की १६ मई की घोषणा इसी पर आधारित मालूम होती है योजना के मुख्य अंग ये हैं।—

(१) ब्रिटिश भारत और देशी राज्यों का एक संघ-निर्माण हो जिसके अंतर्गत परराष्ट्र-विभाग, रक्षा, आर्थिक योजना, मुद्रा-प्रकाशन की व्यवस्था हो।

(२) देशी-राज्यों से बृटिश सरकार सब संधियों का अंतकर उन्हें अपना भविष्य चुनने की पूर्ण स्वतंत्रता दे। संघ में केवल वे ही राज्य सम्मिलित किये जाएँ जो प्रजा को, ब्रिटिश-भारतीय प्रजा के भाँति ही, स्वायत्त-शासन देने के लिए तैयार हों।

(३) भारत का मजहिबी आधार पर छ स्वायत्त-शासन प्राप्त राज्यों में विभाजन हो-(पहला) उत्तर-पच्छिम में मुसलिम-प्रधान क्षेत्रों का, (दूसरा) पूर्व में, वह भी बंगाल-आसाम के मुस्लिम-प्रधान क्षेत्रों का, (तीसरा) पूर्वी पंजाब में सिक्खों का, (चौथा) दक्षिण में इसाइयों का, (पाँचवा) बम्बई में पारसियों का और (छठाँ) शेष भारत हिन्दुओं का। जो राज्य सिक्खों, ईसाइयों और पारसियों के लिए बनाए जाएँ, उनमें या तो उनकी व्यवस्थापिका सभाओं में उन जातियों का बहुमत रक्खा जाए, अथवा उन्हें उस राज्य में अपने सहधर्मियों को बहु-

मत में आने का अवसर दिया जाए। इन राज्यों को आगे चलकर सांस्कृतिक और यदि संभव हो तो आर्थिक आधार पर, उपराज्यों में विभक्त कर दिया जाए, जिन्हें विधान बन जाने पर किसी विशेष राज्य से निकलकर दूसरे राज्य में जाने या अलग रहने का पूरा अधिकार प्राप्त हो।

(४) संघ के तीन अंग हों और उसका परिचालन सयुक्त राष्ट्र अमेरिका की तरह हो—व्यवस्थापन (Legislative) शासन (Executive) और न्याय (Judiciary)। व्यवस्थापिका सभा मे हिन्दू-प्रतिनिधियों की संख्या अन्य धर्मों के प्रतिनिधियों की संख्या के बराबर हो। कोई कानून, जिसपर किसी धर्म विशेष की आपत्ति हो और संघ न्यायालय उसे स्वीकार करती है, तब तक न बनाया जाय जब तक कि उस धर्म के बहुसंख्यक प्रतिनिधि बहुमत कर समर्थन नहीं करते अथवा उसके धर्मावलम्बी आम मतदान (Referendum) के समय अपनी स्वीकृति नहीं देते।

(५) संघ का अध्यक्ष बराबरी से एक हिन्दू, एक मुसलमान और एक किसी अन्य धर्म का हो।

(६) जब तक नया विधान नहीं बन जाता केन्द्र में जन-नेताओं की एक अन्तर्कालीन सरकार का संगठन हो; जिसे कि एक विधान-निर्मात्री सभा के सदस्य उपराज्यों द्वारा भेजे गए हों, जो कि पहले राज्यानुसार विभक्त हो उपराज्यों के लिए, उस उपराज्य के प्रतिनिधियों के सहमति से, विधान बनाएँ; फिर सब एकत्रित हों, उपरोक्त चौथे अंग का ध्यान रखते हुए, संघ का विधान बनाएँ।

तालिका १

खनिजों की उत्पत्ति १९४६

खनिज	बृटिश माल	पूर्वीखंड	पश्चिमोत्तर	दोनों खण्डों का जोड़	हिन्दुस्तान
१. कोयला (१९३९)	२७७६८७६१.	६६६८०००	१६००००	६८२८०६०	१३७५८०००
२. पेट्रोलियम	८७०८२३७१.	...	४३६७०००	४३७९०००	६४८४५०००
३. लोहा	२७४३६७५.	...	..	...	१३३७६०००
४. क्रोमाइट	४४१४९.	...	२१०००	२१०००	७०००
५. मेगजीन	६६७,६२९.	...	...	...	६२५०००

तालिका २

उस प्रकार के भूमि की जिस पर खेती जारी हो सके और ऊसर (हजार एकड़ों में)

खण्ड	खेती के अयोग्य	खेती के योग्य	ऊसर	खेती में	जंगल	जोड़
१. बृटिश भारत	१५५००४.	१५५३०२	४८६३८	२३१८१.	८६१७३	६७६००२.
२. पूर्वी खंड	५३४५.	२७८९	१६४०	१८४१६.	८२०	२६४५७
३. पश्चीमोत्तरी खंड	२३२५३.	२०१८८	७५८७	२२२२६.	२२७१	७५७१७
४. दोनो खंडों का योग	२८५९८	२२९७७	९५१७	३०७१७	३०९५.	१०५१७४.
हिन्दुस्तान	१२६४०६.	१३१३२५	३६१२१	१९११६८	८६७७८	५७३८२५

तालिका ३

१. ब्रूटिश भारत	१५५००४	१५४३०२	४८१३८	२३१८८५	८६१७३.	६७६००.
२. पूर्वी खण्ड	६६६२.	५९५०.	४६६१.	२४४६६.	४४५५	४६२५५.
३. पश्चिमोत्तरी खंड	२९३५०.	२२७३३.	८७३६	३४६३५.	३०४६	६८७८०.
४. योग–२ और ३ का	३६०४२.	२८६६३	१३४२७	५६४०१.	७५०१.	१४८०३५.
हिन्दुस्तान	११५६६.	१२५६३६	३५११.	१७२४८४	८१६७२	५३०९६७

तालिका ४

खाद्य पदार्थ (हजार एकड़ों में)

खण्ड	चावल	गेहूँ	बाजड़ी	चना दाल	योग	तेलहन	शक्कर	कपास	पाट
ब्रूटिश भारत	६६४५५	२५२५०	११४५६	१५७६६	२०४०३६	१७७६४	४२८५.	१५१५७	२५४०
पूर्वी खण्ड	१६७६८	१३२	...	...	१८२११	८६६.	२६६	...	१६६२
पश्चिमी खण्ड	११८२	८२५७	२०६६	२०७७	१७८३६	६२९	२६५	३०६२	...
दोनों का योग	१७६००	८३९०	२०६६	२०७७	३६०२५	१८२५	२६१	३०६२	१६६२.
हिन्दुस्तान	४५२४१	१६८६०.	६३८५	१३७९१.	१६७९८१	१५६६६	३७२२	१२२६५	५७८.

तालिका ५

सरकारी आमद—केन्द्रीय और प्रान्तीय मद से १९४३–१९४४ के आंकड़े।

प्रान्त	प्रान्तीय सरकार की आमदनी	प्रान्तीय मद से	केन्द्रीय सरकार की आय	केन्द्रीय सरकार से
१. मद्रास	२१३२	२१२२३०००००	६५३२१७४५.	युद्धकाल में अनेक
२. बम्बई	१७६६००००००	१७६६०००.०	२२५३४३२४७	नये कर लग जाने
३. बंगाल	१६०२००००००	१७५५००००००	२३७६०६५८३	से आय कई गुना
४. यू० पी०	२०२६००००००	२०१८०००००	४०५५३०३०.	बढ़गई है। आंक-
५. बिहार	६६७००००००	६३६०००००	१५४३७७८२	ड़े न मिलने के
६. सी० पी० व बरार	६४००००००	६३३०००००	३१४२६८२	कारण पुराने आं-
७. आसाम	३६४००००००	३७२००००००	१८७५५,६६७	कड़े दिये गये हैं,
८. उड़ीसा	२१२००००००	२१६००००००	५६७३४६.	यह १९४० के हैं।
९. पंजाब	६६६००००००	६३६००००००	११८०१३८५	
१०. सीमाप्रान्त	२०७००००००	२१५००००००	६२८२६४	
११. सिन्ध	४९६००००००	५०९००००००	५६६४६९१५	

तालिका ६

भारतवर्ष की मुख्य जातियाँ सन् १९४१ की जन गणना के अनुसार

(हजार में)

प्रान्त	हिन्दू	अछूत	मुसलिम	कृस्तान	सिख	योग
१. पंजाब	६३०२	१२५९	१६२१७	५०५	३७५७	२८४१९
२. सीमा प्रान्त	१८०	—	२७९८	११	५८	३०३८
३. सिन्ध	१८०	१९२	३२०८	५०	३१	४५३५
४. संयुक्तप्रान्त	३४०९५	१११	८४१६	१६०	२३	५५०२१
५. बिहार	२२१७४	४३४०	४७१६	३५	३१	३६३४०
६. उड़ीसा	५५९४	१२३८	१४६	२८	७०२	८७२९
७. बंगाल	१७६८०	७३७९	३३००५	१६६	१६	६०३०७
८. आसाम	३५३७	६७६	३४४२	४१	३	१०२०४
९. मध्यप्रान्त	९८८१	३०५१	७८४	५९	१५	१६८१४
१० बम्बई प्रान्त	१४६००	१८५५	१९२०	३७५	८	२०८५०
११. मद्रास प्रान्त	३४७३१	८०६८	३८९६	२०४७	८४	४९३४२
बृटिश भारत का योग	१५०८९०	३९९२१	७९३९९	३४८२	४१६५	२९५८०९

तालिका ७

पाकिस्तान की भाषायें

परिचमोत्तरी पाकिस्तान

	जनसंख्या	पश्चिमोतरी पंजाब	सरहदी पंजाबी	पश्तो	बलूची	पश्चिमीहिन्दी	राजस्थानी
पन्जाब	२३५८०८५२	६५९८३२५	१२१५८००१	९००२०	५९८०४	३४३१३९३	४२८८९४
सीमाप्रान्त	२४३५०७६	१०३४९५	६८०३१	१२७९४७१	—	१९२२ १	—
बिलोचिस्तान	४६३५०८	४४२८१	१९ ७३	२०६२९३	९७०९४	१६९३९	—
सिन्धी	३२३७५	हिन्दी	पहाड़ी	बंगाली			
पूर्वीपाकिस्तान		१६१ २१६	१३३१५१	४६३९३८०२			
बंगाल	५०११४००२	आसामी					
आसाम	८६२२२५१	१९९२८४६	१२३८३२	३९६०७१२			

इस तालिका से प्रकट होगा कि पश्चिमोतरी पाकिस्तान में भिन्न भिन्न भाषायें और जातियाँ है। अस्तु भाषा से राजनैतिक अथवा प्रान्तिक आधार नहीं हो सकता। किन्तु पूर्वी पाकिस्तान में भाषा और संस्कृति की एकता से १० करोड़ बंगाली भाषा भाषी हिन्दू और मुसलमान बसते हैं।

तालिका ८

प्रत्येक जिले में मुसलिम प्रतिशतः

वे जिले जिनमें ५० प्रतिशत या उससे अधिक ।	पंजाब प्रतिशत	वे जिले जिनमें मुसलमान ५० प्रतिशत से कम हैं ।	प्रतिशत
१. लाहौर	५६.६	१. हिसार	२७.६
२. स्यालकोट	६२.२.	२. रोहतक	१७ १.
३. गुजरानवाला	७०.७	३. गुड़गांव	३२.१.
४. शेखपुरा	८४.८	४. करनाल	३०.५.
५. गुजरात	६३.७	५. अम्बाला	३०.६.
६. शाहपुर	८२.८	६. शिमला	१५ ८.
७. झेलम	८९.	७. कांगड़ा	५.
८. रावलपिण्डी	८२.	८. होशियारपुर	३२.८
९. अटक	९१.	९. जालन्धर	४४.३
१०. मियांवली	८७.	१०. लुधियाना	३५.१.
११. मान्टगुमरी	१ ६६.	११. फिरोजपुर	४४.८
१२. जमालपुर	६२.५	१२. अमृतसर	४६.६
१३. झंग	८३.१	१३. गुरदासपुर	५०.
१४. मुजफ्फरगढ़	८६.५.		
१५. डेरागाज़ी खां	८६.१.		
१६. विलोचिस्तान	६६.१.		
१७. मुल्तान	८२.२.		

तालिका ६

मुसलिम प्रधान जिले	बंगाल	हिन्दू प्रधान जिले ।	प्र० श०
१. नदिया	६१.६.	१. वर्धमान	१८.६
२. मुर्शिदाबाद	५५.५.	२. वीरभूमि	२६.६
३. जैसूर	६२.	३. बाँकुड़ा	४.७
४. राजशाही	७५.७	४. मेदिनीपुर	७,५.
५. रङ्गपुर	७१.	५. हुगली	१७.
६. वागरा	८३.५.	६. हावड़ा	२१.
७. पाबना	७६.६	७. हावड़ा शहर	२१.३
८. मालदा	५४.३	८. २४ परगना	३४.६
९. ढाका	५९.८	९. ढाका शहर	४१.३
१०. मेमनसिंह	७६.६.	१०. कलकत्ता शहर	२५ ६
११. फरीदपूर	६५.१	११. कलकत्ता उप नगर	१६.
१२. बाकरगंज	७२.४	१२. खुलना	४९.
१३. टिपरा	७६.२.	१३. जलपाईगुड़ी	२३ ९
१४. नोआखाली	७६.५.	१४. दार्जिलिंग	२.३
१५. चिट्टागांव	७६.७	१५. दिनाजपुर	५०.

तालिका १०

प्रान्तीय धारासभाओं के चुनाव : १९३७ और

क्र० सं०	प्रान्तों के नाम	१९३७ कांग्रेस	लीग	दूसरे मुसलमान	अन्य पार्टियाँ	१९४६ कांग्रेस	लीग	दूसरे मुसलमान
१	आसाम	३०·५५	८·३३	२४·०७	३७·०३	५५·५५	२८·७	२·७७
२	सिन्ध	११·६६	०	५६·६६	३०%	३५%	४५%	१२३
३	सीमा प्रान्त	३८%	०	४४%	१८%	६०%	३४%	४%
४	पंजाब	७·४२	·५७	४८·५७	४३·४३	२६·१४	४२·८५	७·४२ [यूनियनिस्ट]
५	बिहार	६४·६७	०	२६·३१	९·२१	६५·१३	२२·३६	३·३८
६	यू० पी०	५८·७७	११·८४	१७·१	१२·३७	६७·१	२३·६८	३·०७
७	बम्बई	४६·१४	११·४२	५·७१	३३·७२	७३·१	१७·१४	०
८	मद्रास	७३·९५	५·११	८·३७	१२·५६	७६·२७	१३·०२	·४६
९	बङ्गाल	२१·६	१६%	३१·६	३०·९८	३४·८	४६%	२·८
१०	उड़ीसा	६०%	०	६·६६	३३·३३	७८·३३	६·६६	१·६६
११	सी० पी०	६२·५	०	१२·५०	२५%	८२·१४	११·६०	·८९
१२	योग स्थानों के अनुपात में	४५·०४	६·८१	२२·७१	२५·४३	५८·८	२७%	·१८

दूसरे मुसलमानों की सीटों का अनुपात कांग्रेस की मु० सी० को छोड़कर निकाला गया है।

तालिका ११

१९४६ में विभिन्न पार्टियों की प्रतिशत सफलता

१६४६ में							१६४६ में	
हिन्दू महासभा	कम्यूनिस्ट	रेडिकल डेमोक्रेट	हरिजन फेडरेशन	यूरोपियन	एंग्लो-इंडियन	पन्थिक सिख	यूनियनिस्ट	स्वतन्त्र
०	०	०	०	·६२	०	०	०	१२·०३
०	०	०	०	५%	०	०	०	१·६६
०	०	०	०	०	०	२%	०	३
०	०	०	०	·५७	·५७	१२·५७	११·२	४%
०	०	०	०	१·३१	·६५	०	०	·७२३
०	०	०	०	·८७	·४४	०	०	४·८२
·५७	१·१४	·५७	०	३·४२	१·१४	०	०	२·८५
०	·६२	०	०	३·२५	·९२	०	०	५·११
·४	१·६	०	०	६·६	१ ६	०	०	३·२
०	१·६६	०	०	०	०	०	०	३%
·८९	०	०	·८६	·८६	·८६	०	०	१·७८
·१८	·५६	·०६	२ ९६	२·६६	७·५	१ ४५	१·४५	४·५४

दूसरे मुसलमानों की सीटों का अनुपात कांग्रेस की मु० सी० को छोड़कर निकाला गया है।

तालिका १२

आसाम

मुसलिम प्रधान जिले	प्र० श०	हिन्दू प्रधान जिले	प्र०श०
१. सिलहट	५९.२.	१. कचार	३३.१.
		२. खालिया जालिया हिल	८.
		३. कारहिल	.३.
		४. लुसी हिल	.०६
		५. गोलपारा	४२.८.
		६. कामरूप	२४.३
		७. दरंग	११.३.
		८. नौ गाँव	३१.१.
		९. शिवसागर	४.६.
		१०. लक्ष्मीपुर	५.४.
		११. गारोहिल	५.२.
		१२. लाड़िया सीमा	१५.२.
		१३. कालीपारा	१.३.

तालिका १३

प्रान्तीय धारासभाओं के १९३७ और १९४६ के चुनाव में कांग्रेस की जीत

क्रम-संख्या	प्रान्त के नाम	कुल स्थान	१९३७ में कां० ने जीता	१९४६ में कां० ने जीता	१९४६ के चुनाव में जीत	१९३७ में मन्त्रिमण्डल	१९४६ में मन्त्रिमण्डल
१	आसाम	१०८	३३	६६	२७	कां० संयुक्त मंत्रि०	कांग्रेसी
२	सिन्ध	६०	७	७१	१४	लीगी तथा स्व०	लीगी
३	सीमाप्रान्त	५०	१९	३०	४१	कां०	कांग्रेसी
४	पन्जाब	१७५	१८	५१	३३	यूनियनिस्ट	कां० × सि० यू०
५	बिहार	१५२	९८	९९	१	कांग्रेसी	कांग्रेसी
६	यू० पी०	२२८	१३४	१५१	११	,,	,,
७	बम्बई	१७५	८६	१२८	४२	,,	,,
८	मद्रास	२१५	१५९	१६४	५	,,	,,
९	बङ्गाल	२५०	५४	८७	३३	स्वतन्त्र तथा लीगी	लीगी
१०	उड़ीसा	६०	३६	४७	११	कांग्रेसी	कांग्रेसी
११	मध्यप्रान्त	११२	७०	९२	२२	,,	,,
११	योग	१५८५	७१४	९३२	२,८	८ प्रांत कांग्रेसी	९ प्रांत कांग्रेसी

तालिका १४

प्रान्तीय एसेम्बलियों के चुनाव १९३७ और १९४६ में मुस्लिम क्षेत्रों के चुनाव का फल

क्रम-संख्या	प्रान्तों के नाम	कुल मुस्लिम स्थान	१९३७ में		१९४६ में		अन्तर	
			लीग	दूसरे मुसल०	लीग	दूसरे मुसल०	लीग	दूसरे मुसलमान
१	आसाम	३४	९	२६	३१	३	२२	२३
२	सिन्ध	३४	०	३४	२७	८	२७	२७
३	सीमाप्रांत	३६	०	३६	१७	२१	१७	१५
४	पंजाब	८६	१	८५	७५	१४	७४	७१
५	बिहार	४०	०	४०	३४	६	३४	३४
६	यू० पी०	६६	२७	३६	५४	१२	२७	२७
७	बम्बई	३०	२०	१०	३०	०	१९	१०
८	मद्रास	२९	११	१८	२८	१	१७	१७
९	बङ्गाल	११९	४०	७६	११५	७	७५	७२
१०	उड़ीसा	४	०	४	४	१	४	३
११	सी० पी०	१४	०	१४	१३	१	३१	११
११	योग	४९२	१०८	३८५	४२८	७४	३२०	३१२

तालिका १५

प्रान्तीय धारासभा के चुनाव (१९४६) में कांग्रेस की शानदार जीत

क्रम-संख्या	प्रान्तों के नाम	कुल स्थान	कांग्रेस खड़ा करती है	कांग्रेस निर्विरोध जीतती है	लड़कर जीतती है	प्रतिशत जीत कुल सीट के अनुपात में	कैफियत
१	आसाम	१०८	(६३)	१३	४७	५५.५५	६० प्रतिशत विरोधियों की जमानतें जब्त
२	सिन्ध	६०	२१	६	१५	३५%	,,
३	सीमा प्रान्त	५०	४०	७	२३	६०%	,,
४	पञ्जाब	१७५	७८	६	४२	२९.१३	,,
५	बिहार	१५२	११०	४४	५५	६५.१३	,,
६	यू० पी०	२२८	१७८	७२	७४	६७.१	,,
७	बम्बई	१७५	(१३४)	२४	७४	७३.१४	,,
८	मद्रास	२१५	१७४	६८	९६	७६.२७	,,
९	बङ्गाल	२५०	९०	१५	७२	४८	,,
१०	उड़ीसा	६०	५१	३४	१३	७८.३३	,,
११	सी० पी०	११२	(९४)	२८	७३	८२.१४	,,
११	योग	१२८५	८७६ + १५७ = १०३३	६१७	६१५	५८८	

तालिका १६

प्रान्तीय धारासभाओं के चुनाव (१९४६) में लीग की सफलता

क्रम-संख्या	प्रान्तों के नाम	कुल मुस्लिम सीटें	लीग खड़ा करती है	लीगी निर्विरोध	लड़कर जीतती है	प्रतिशत जीत : कुल ए० सीट के अनुपात मे	विवरण
१	आसाम	३४	३४	०	३	२८.७	
२	सिन्ध	३५	३५	१	२६	[illegible]%	लीग को कुल वोट मिले—१,८०,४२२ दूसरे मुसलमानों को वोट मिले — १,२६ ६२४
३	सीमाप्रान्त	३६	३८	१	६	२४%	पाकिस्तान के लिए—१,४५,४२० पाकिस्तान के विरोध में—२,७०,१३४
४	पञ्जाब	८६	८४	२	७३	४२.८५	
५	बिहार	४०	४०	२	३२	२२.३६	
६	यू० पी०	६६	६४	१	५३	२३.६८	
७	बम्बई	३०	३०	६	[illegible]४	१७.१४	
८	मद्रास	[illegible]९	२९	१३	५	१३.०२	१३ निर्विरोध में ६ विरोध सीटें ११९ सीटों में ७ हार गईं।
९	बङ्गाल	११९	१२२	१०	[illegible]०५	[illegible]६%	३ वि० सी० पीछे मिलीं।
१०	उड़ीसा	४	४	१	३	६.६६	
११	सी० पी०	१४	४	१	२	११.६०	
११	योग	४९२	४९२	३८	३१७	२७%	

तालिका १७

प्रान्तीय सभासभाओं की रचना

क्र० सं०	प्रान्तों के नाम	कुल स्थान	कुल साधारण स्थान	दलित जाति को सुरक्षित (कुल सा०स्था० और)	पिछड़े जिलों और जातियों के	सिख	मुसलमान	एंग्लो-इंडियन	योरपियन	भारतीय ईसाई	वाणिज्य व्यवसाय	जमींदार	विश्वविद्यालय	मजदूर	महिला: साधारण	महिला: सिख	महिला: मुसलमान	महिला: ए० ई०	महिला: भारतीय ईसाई
१	आसाम	१०८	४७	७	९	०	३४	०	१	१	११	०	०	४	१	०	०	०	०
२	सिन्ध	६०	१८	०	०	०	३३	०	२	०	२	२	०	१	१	०	१	०	०
३	सीमा प्रान्त	५०	९	०	०	३	३६	०	०	०	०	२	०	०	०	०	१	०	०
४	पञ्जाब	१७५	४२	८	०	३१	८४	१	१	२	१	५	१	३	१	१	२	०	०
५	बिहार	१५२	८६	१५	७	०	३९	१	२	१	४	४	१	३	३	०	१	०	०
६	यु० पी०	२२८	१४०	२०	०	०	६४	१	२	२	३	६	१	३	१	०	२	०	०
७	बम्बई	१७५	११४	१५	१	०	२९	२	३	३	७	२	१	७	५	०	१	०	०
८	मद्रास	२१५	१४६	३०	१	०	२८	२	३	८	६	६	१	६	६	०	१	०	१
९	बङ्गाल	२५०	७८	३०	०	०	११७	३	११	२	१९	५	२	८	२	०	२	१	०
१०	उड़ीसा	६०	४४	६	५	०	४	०	०	१	१	२	०	१	२	०	०	०	०
११	मध्य प्रान्त [C. P.]	११२	८४	२०	१	०	१४	१	१	०	२	३	१	२	३	०	०	०	०
११	योग	१५८५	८०८	१५१	२४	३४	४८२	११	२६	२०	५६	३७	८	३[illegible]	२८	१	१०	१	१

तालिका १८

प्रान्तीय धारासभाओं के चुनाव (१९४६) का परिणाम

क्रम-संख्या	प्रान्त के नाम	कुल स्थान	कुल मुस्लिम स्थान	कांग्रेस ने जीता	मुसलमान	मुस्लिम लीग ने जीता	राष्ट्रीय और गैर-लीगी ने	हिन्दू महासभा	कम्यूनिस्ट	रेडिकल डेमो०	हरिजन फेडरेशन (अम्बेडकर)	यूरोपियन	ऐंग्लो-इण्डियन	सिख पंथिक	यूनियनिस्ट	स्वतन्त्र	मन्त्रिमण्डल
	आसाम	१०८	३४	६०	०	३१	३	०	०	०	०	१	०	०	०	१२	कांग्रेसी
	सिन्ध	६०	३४	२१	०	२७	८	०	०	०	०	३	०	०	०	१	लीगी
	पंजाब	१७५	८६	५१	१	७५	१३	०	०	०	०	१	१	२२	२०	७	का × सि × यू०
	सीमाप्रांत	५०	३६	३०	१९	१७	२	०	०	०	०	०	०	१	०	०	कांग्रेसी
५	बिहार	१५२	४०	९९	१	३४	५	०	०	०	०	२	१	०	०	११	,,
६	यू० पी०	२२८	६६	१५३	४	५४	७	०	०	०	०	२	१	०	०	११	,,
७	बम्बई	१७५	३०	१२८	०	३०	०	१	२	१	०	६	२	०	०	५	,,
८	मद्रास	२१५	२९	१६४	०	२८	१	०	२	०	०	७	२	०	०	११	,,
९	बंगाल	२५०	११९	८७	०	११५	७	१	४	०	०	२४	४	०	०	१	लीगी
१०	उड़ीसा	६०	४	४७	०	४	१	०	१	०	०	०	०	०	०	३	कांग्रेसी नामजद
११	मध्यप्रांत	११२	१४	९२	०	११	१	१	०	०	१	१	१	०	०	२	,
११	योग	१५८५	४९२	९३२	२५	४२८	४८	३	९	१	१	४७	१२	१३	२०	७२	